विषय-सूची

पहला भाग

पहला भाग

प्रथम खण्ड

: १ :

धरती और मानव

करोडो वर्ष पूर्व इस धरती पर कोई मानव नही विचरता था। अरबो साल पहले इस धरती का कोई अस्तित्व न था—कम से कम उस रूप में जिसमें हम आज उसे देखते हैं। तो फिर क्या था? बस, आग का जलता, धधकता हुआ एक गोला था जिसे हम सूर्य कहते हैं। वह निरन्तर अपने अक्ष के इर्द-गिर्द घूमता रहता था। वैज्ञानिकों का विचार है कि लगभग १० अरब वर्ष पूर्व इस गोले से एक भाग टूट कर अलग हो गया। इसने हमारी पृथ्वी का रूप धारण किया। कालान्तर में पृथ्वी से भी एक भाग टूट कर अलग हो गया, उसे हम चांद कहते हैं। पृथ्वी सूर्य से अलग हुई थी, इसलिए दोनो में आकर्षण बना रहा। वह सूर्य के इर्द-गिर्द घूमती है। चांद पृथ्वी से अलग हुआ था, वह पृथ्वी के इर्द-गिर्द घूमता रहता है।

अब हमारा यह विशाल भूखण्ड उबलते, जलते हुए लावे का एक गोला-सा था, जो तूफान की-सी गति से सूर्य के चारो ओर घूमता था। कालान्तर में लावे की इस दुनिया का बाहरी भाग ठोस होने लगा। पिघले हुए गर्म माद्दे पर चट्टानो तथा मिट्टी की एक पपडी-सी जमने लगी परन्तु अभी तक वह बहुत मजबूत न हुई थी। अब भी धरती के पेट से लावे के खौलते हुए फव्वारे निरन्तर छूटते रहते थे। परन्तु अब वे धरती पर बराबर-बराबर तह न जमा पाते। वहीं उनके निकलने से ऊंचे-ऊंचे पर्वत बन जाते और वही धरती में विशाल गड्ढे धस जाते। इन गढो ने समय पाकर समुद्रो का रूप धारण किया।

वैज्ञानिको का कथन है कि हमारी इस धरा पर भयानक तूफान उठे, झक्कड़ चले। लाखों वर्ष तक खौलते हुए पानी की वर्षा होती रही। भूचाल, आए और बाढ़ें आई। अजीब हालत थी हमारी इस दुनिया की। इन तूफानो, बाढो और भूचालो ने धरती को अपना वर्तमान रूप धारण करने में सहायता की। परन्तु अभी तक यहाँ किसी प्राणी ने जन्म न लिया था। इस प्रलयकारी जलवायु में प्राणी भला रह भी कैसे सकता था?

प्राणी का जन्म —धरा पर प्राणी का प्रादुर्भाव एक आश्चर्यजनक रहस्य है। वैज्ञानिको ने इस रहस्य की गुत्थी को भी सुलझा लिया है। कई अरब वर्ष पूर्व धरती के प्रथम प्राणियों का जन्म तूफानी समुद्रो में हुआ। सर्वप्रथम बहुत ही नन्हें-नन्हें जीवो का जन्म हुआ। वह जीव कुछ ऐसे ही थे जैसे माइक्रोस्कोप द्वारा हम किसी छप्पड में से ली गई पानी की एक बूद में देखते हैं। धीरे-धीरे कुछ बडे जलकीट पैदा हुए। करोडो वर्षों के बाद कुछ नए प्रकार के जीवो का जन्म हुआ जैसे मछलिया इत्यादि। इन मछलियों के हड्डिया और दात

नी थे। धीरे-धीरे समुद्र के दलदली किनारों पर कुछ पौधे पैदा होने लगे। पौधों को धरती से खुराक मिली। चारों ओर हरे-भरे जंगल पनपने लगे।

अब समुद्रों के किनारों पर ऐसे करोड़ों जीव आ गए जो पानी तथा दलदल दोनों जगह रह सकते थे। कालान्तर में कुछ रेंगनेवाले और सरक कर चलने वाले जीवों की उत्पत्ति हुई जैसे सांप, छिपकली इत्यादि। इनमें कुछ उड़ भी सकते थे। कुछ उड़नेवाले जीव उड़ते समय एक गज से भी चौड़े होते थे।

जीव का जन्म हो चुका था परन्तु अभी तक धरती का जलवायु स्थिर नहीं हुआ था। ऐसे युग आए जब धरती पर हजारों साल तक भयंकर जाड़ा रहा। इस जाड़े में वही जीव बच पाये जो इतनी कड़ी सर्दी सह सकते थे। परोंवाले जीव इस परीक्षा में विशेष रूप से सफल हुए। ये जीव अपने अन्डों को पंखों की गर्मी पहुंचाते रहते थे। बच्चों के पैदा होने पर उनकी रक्षा करते थे। प्राणी के विकास में यह एक महत्वपूर्ण कड़ी थी क्योंकि प्राणी ने पहली बार अपना घर बनाना, बच्चों की रक्षा करना तथा उनकी क्षुधा-पूर्ति करने का पाठ पढ़ा।

पृथ्वी पर शीत और बढ़ी। जीवन और कड़ा हो गया। अब शायद अन्डे देनेवाले जीवों के लिए भी जिन्दा रहना मुश्किल हो गया। उन जीवों की सुरक्षा की अधिक सम्भावना थी जो जन्म से पूर्व मां के पेट में रहते थे। ऐसे जीवों को मैमल कहते हैं। मैमल अपनी मां का दूध पीते हैं। आज अधिकतर जानवर जो हम अपने आस-पास देखते हैं, मैमल ही हैं।

धीरे-धीरे मैमलों के परों ने मोटी बालोंवाली खाल का रूप धारण कर लिया। भिन्न-भिन्न प्रकार के मैमल पनपने लगे। इनमें कुछ बलवान थे और कुछ कमजोर। कमजोर मैमल तब ही जी सकते थे जब वे तेजी से भाग सकें अन्यथा बलवान मैमल उन्हें हड़प कर जाते थे। अब कुछ मैमलों की टांगें बड़ी मजबूत बन गईं। कुछ मैमलों ने पेड़ों पर चढ़ना सीख लिया। वे अपनी अगली दो टांगों को हाथों के रूप में इस्तेमाल करने लगे। पक्षियों की तरह उन्होंने भी दो टांगों पर चलना सीख लिया। इस प्रकार के मैमल कंगारू या बंदर जैसे कोई प्राणी थे।

में फौसिल कहते हैं। वे लोग जिन हथियारो का प्रयोग करते थे, वे भी मिले हैं। कन्दराओ की दीवारो पर उनके द्वारा बनाए गए चित्र पाये गए हैं। इन सब चीजो से हमें कुछ-कुछ अनुमान हो जाता है कि आदि मानव का जीवन कैसे व्यतीत होता होगा। चीन की राजधानी पीकिंग के पास कुछ गुफाएं मिली हैं। इन्हें चाऊ कऊ तिन की गुफाएं कहते हैं। यहाँ एक ऐसे मनुष्य के अवशेष मिले हैं जो हमारी तरह तन कर सीधा चलता था। वह आग का प्रयोग करता था और छोटे-मोटे औजारो का प्रयोग भी करता था। पास ही बड़े-बड़े रीछो, शेरों तथा अन्य प्रागैतिहासिक जानवरो के पिंजर मिले हैं। सम्भवतः पीकिंग के इस मानव ने अपने साथियो सहित इन जानवरो का शिकार किया होगा। इस प्रकार स्पेन की एक कन्दरा में इस युग के मानव द्वारा निर्मित चित्र मिले हैं। इनमें मोटी खाल और ऊनवाले जगली बैल जैसे जानवरो, जगली रीछो, हिरणो, घोड़ो तथा अन्य जानवरो के विविध तथा रगदार चित्र हैं। वे रग आज भी स्पष्ट तथा चमकदार हैं, यद्यपि ये चित्र कम से कम बीस हजार वर्ष पुराने हैं।

आप हैरान हो रहे होंगे कि भयकर जगली जानवरो से घिरा हुआ आदि मानव कैसे जीवन बिताता था। सचमुच उस समय के मानव की दशा दयनीय होगी। आज की तरह वह पक्के मकानो में पुलिस की सुरक्षा में नही रहता था। वह जगलो में नगा घूमता था—जो हाथ लग जाता खा लेता। वृक्षो के फल और पत्ते या जंगली जानवरो का मांस उसका आहार था। वह पशुओ की भाँति ही चीखता-चिल्लाता था। बोलना-चालना उसे अभी नही आया था। उसका न कोई घर था न ठिकाना। वर्षा हुई तो किसी गुफा में या किसी घने वृक्ष की छाया में बैठ गए। भयकर जगली जानवरो से घिरे हुए हमारे इस आदि मानव को हर समय मौत का भय लगा रहता था। पशुओं की तरह उसके पास न लम्बे-लम्बे दांत थे और न सीग। अपनी रक्षा हो तो कैसे?

परन्तु प्रभु ने उस पर एक कृपा की थी—उसे बुद्धि दे दी। इस बुद्धि के प्रयोग से मनुष्य ने आज सृष्टि की प्रत्येक वस्तु को अपने वश में कर लिया है। समूची प्रकृति मनुष्य के कदमों पर है—मनुष्य ने पहाड़ो को चीर डाला है, नदियो के रुख बदल दिये हैं, समुद्र की छाती पर वह शान से अपने जहाजो में सवार होकर चलता है और विस्तृत आकाश में उड़ते हुए विमान मानव की अद्भुत शक्ति के परिचायक हैं। अब तो उसने अपनी बुद्धि से एक बनावटी चाँद भी उड़ा लिया है।

लेकिन यह सब कुछ कैसे हुआ? यह एक-दो दिन में या सौ-दो सौ वर्ष में नही हुआ। ऐसा होने में लाखो वर्ष लग गए। आज जो उन्नति हम देख रहे हैं वह मनुष्य के लाखो साल के अथक प्रयास और तपस्या का फल है। परन्तु मनुष्य की तरक्की अभी खत्म नहीं हुई—अब मानव मगल नक्षत्र और चांद तक पहुचने की कोशिश में लगा हुआ है। तरक्की की यह दौड़ कब खत्म होगी, इस बारे में कुछ कहना असम्भव है।

शिकारी मानव तरक्की की ये मजिलें मानव ने बहुत धीरे-धीरे तय की हैं। पहला आदमी जैसा कि हम आगे बता चुके हैं, बहुत बेबस और मजबूर था। मजबूरी की हालत से निकलने के लिए उसने सबसे पहले लकड़ी का इस्तेमाल सीखा। वृक्षो की टहनिया तोड़कर उनसे शिकार करता था, उनकी सहायता से अपनी रक्षा की। करीब सवा लाख वर्ष पूर्व मनुष्य ने इस स्थिति में उन्नति की। सयोग से पत्थर के कोई दो टुकडे कभी टकरा गए होगे। उससे आग की चिनगारी निकली। इस तरह आग का आविष्कार हुआ। अब मनुष्य जगल से लकड़िया इकट्ठा कर लेता और उन्हें जला कर आग तापा करता। मास अब कच्चा

भी थे। धीरे-धीरे समुद्र के दलदली किनारों पर कुछ पौधे पैदा होने लगे। पौधों को धरती से खुराक मिली। चारों ओर हरे-भरे जंगल पनपने लगे।

अब समुद्रों के किनारों पर ऐसे करोडो जीव आ गए जो पानी तथा दलदल दोनों जगह रह सकते थे। कालान्तर में कुछ रेंगनेवाले और सरक कर चलने वाले जीवो की उत्पत्ति हुई जैसे साप, छिपकली इत्यादि। इनमें कुछ उड भी सकते थे। कुछ उडनेवाले जीव उडते समय एक गज से भी चौडे होते थे।

जीव का जन्म हो चुका था परन्तु अभी तक धरती का जलवायु स्थिर नहीं हुआ था। ऐसे युग आए जब धरती पर हजारो साल तक भयकर जाड़ा रहा। इस जाडे में वही जीव बच पाये जो इतनी कडी सर्दी सह सकते थे। परोंवाले जीव इस परीक्षा में विशेष रूप से सफल हुए। ये जीव अपने अण्डो को परो की गर्मी पहुँचाते रहते थे। बच्चो के पैदा होने पर उनकी रक्षा करते थे। प्राणी के विकास में यह एक महत्वपूर्ण कडी थी क्योंकि प्राणी ने पहली बार अपना घर बनाना, बच्चो की रक्षा करना तथा उनकी क्षुधा-पूर्ति करने का पाठ पढा।

पृथ्वी पर शीत और बढ़ी। जीवन और कडा हो गया। अब शायद अण्डे देनेवाले जीवो के लिए भी जिन्दा रहना मुश्किल हो गया। उन जीवो की सुरक्षा की अधिक सम्भावना थी जो जन्म से पूर्व मा के पेट में रहते थे। ऐसे जीवों को मैमल कहते हैं। मैमल अपनी मा का दूध पीते हैं। आज अधिकतर जानवर जो हम अपने आस-पास देखते हैं, मैमल ही हैं।

धीरे-धीरे मैमलो के परो ने मोटी बालोवाली खाल का रूप धारण कर लिया। भिन्न-भिन्न प्रकार के मैमल पनपने लगे। इनमें कुछ बलवान थे और कुछ कमजोर। कमजोर मैमल तब ही जी सकते थे जब वे तेजी से भाग सकें अन्यथा बलवान मैमल उन्हें हडप कर जाते थे। अत कुछ मैमलो की टागें बडी मजबूत बन गईं। कुछ मैमलों ने पेडों पर चढना सीख लिया। वे अपनी अगली दो टागों को हाथो के रूप में इस्तेमाल करने लगे। पक्षियों की तरह उन्होने भी दो टागो पर चलना सीख लिया। इस प्रकार के मैमल कागरू या बदर जैसे कोई प्राणी थे।

आत्म-रक्षा और डर की भावना ने प्राणी को बुद्धि दी। आवश्यकता पडने पर कुछ कमजोर मैमलो ने अपनी रक्षा के लिये बलवान शत्रु के विरुद्ध पत्थरो का प्रयोग किया। यही मैमल आदि मानव के पूर्वज थे। इस प्रकार धीरे-धीरे मानव का विकास हुआ। वह मानव बिलकुल हमारी-तुम्हारी तरह नही था। वह आधुनिक मानव से कुछ भिन्न था। हमारे जैसा प्रथम वास्तविक मानव शायद इस धरा पर आज से पाच लाख वर्ष पूर्व घूमा-फिरा था।

मानव का संघर्ष

पहला मानव . पहले मानव के बारे में हमें अधिक ज्ञान नहीं क्योंकि वह लिखना नहीं जानता था। आज से केवल दस हजार वर्ष पूर्व मनुष्य ने लिखना सीखा। शिलाओ पर खुदे हुए कुछ लेख अथवा पकाई हुई मिट्टी पर लिखी हुई कुछ बातें हमें उस समय की प्रामाणिक कहानी बताती हैं। परन्तु आप प्रश्न करेंगे कि इससे पूर्व के मनुष्य के बारे में हमें जानकारी कैसे प्राप्त हुई ? पुरातत्व-वेत्ताओ ने जमीन की गहरी खुदाई करके चट्टानो और कन्दराओ में प्राचीन मानव के पथराए हुए पिंजर और हड्डिया खोज निकाली हैं। इन पिंजरो को अंग्रेजी

में फौसिल कहते हैं। वे लोग जिन हथियारो का प्रयोग करते थे, वे भी मिले हैं। कन्दराओ की दीवारो पर उनके द्वारा बनाए गए चित्र पाये गए हैं। इन सब चीजो से हमें कुछ-कुछ अनुमान हो जाता है कि आदि मानव का जीवन कैसे व्यतीत होता होगा। चीन की राजधानी पीकिंग के पास कुछ गुफाएं मिली हैं। इन्हें चाऊ कऊ तिन की गुफाएं कहते हैं। यहाँ एक ऐसे मनुष्य के अवशेष मिले हैं जो हमारी तरह तन कर सीधा चलता था। वह आग का प्रयोग करता था और छोटे-मोटे औजारो का प्रयोग भी करता था। पास ही बडे-बडे रीछो, शेरो तथा अन्य प्रागैतिहासिक जानवरो के पिंजर मिले हैं। सम्भवत पीकिंग के इस मानव ने अपने साथियो सहित इन जानवरों का शिकार किया होगा। इस प्रकार स्पेन की एक कन्दरा में इस युग के मानव द्वारा निर्मित चित्र मिले हैं। इनमें मोटी खाल और ऊनवाले जगली बैल जैसे जानवरो, जगली रीछो, हिरणो, घोडो तथा अन्य जानवरो के विविध तथा रगदार चित्र हैं। वे रग आज भी स्पष्ट तथा चमकदार हैं, यद्यपि ये चित्र कम से कम बीस हजार वर्ष पुराने हैं।

आप हैरान हो रहे होगे कि भयकर जगली जानवरो से घिरा हुआ आदि मानव कैसे जीवन बिताता था। सचमुच उस समय के मानव की दशा दयनीय होगी। आज की तरह वह पक्के मकानो में पुलिस की सुरक्षा में नही रहता था। वह जगलो में नगा घूमता था—जो हाथ लग जाता खा लेता। वृक्षो के फल और पत्ते या जगली जानवरो का माँस उसका आहार था। वह पशुओ की भाँति ही चीखता-चिल्लाता था। बोलना-चालना उसे अभी नही आया था। उसका न कोई घर था न ठिकाना। वर्षा हुई तो किसी गुफा में या किसी घने वृक्ष की छाया में बैठ गए। भयकर जगली जानवरो से घिरे हुए हमारे इस आदि मानव को हर समय मौत का भय लगा रहता था। पशुओ की तरह उसके पास न लम्बे-लम्बे दात थे और न सींग। अपनी रक्षा हो तो कैसे ?

परन्तु प्रभु ने उस पर एक कृपा की थी—उसे बुद्धि दे दी। इस बुद्धि के प्रयोग से मनुष्य ने आज सृष्टि की प्रत्येक वस्तु को अपने वश में कर लिया है। समूची प्रकृति मनुष्य के कदमो पर है—मनुष्य ने पहाडो को चीर डाला है, नदियो के रुख बदल दिये हैं, समुद्र की छाती पर वह शान से अपने जहाजो में सवार होकर चलता है और विस्तृत आकाश में उडते हुए विमान मानव की अद्भुत शक्ति के परिचायक हैं। अब तो उसने अपनी बुद्धि से एक बनावटी चाँद भी उडा लिया है।

लेकिन यह सब कुछ कैसे हुआ ? यह एक-दो दिन में या सौ-दो सौ वर्ष में नही हुआ। ऐसा होने में लाखो वर्ष लग गए। आज जो उन्नति हम देख रहे हैं वह मनुष्य के लाखो साल के अथक प्रयास और तपस्या का फल है। परन्तु मनुष्य की तरक्की अभी खत्म नही हुई—अब मानव मगल नक्षत्र और चाद तक पहुचने की कोशिश में लगा हुआ है। तरक्की की यह दौड कब खत्म होगी, इस बारे में कुछ कहना असम्भव है।

शिकारी मानव · तरक्की की ये मजिलें मानव ने बहुत धीरे-धीरे तय की हैं। पहला आदमी जैसा कि हम आगे बता चुके हैं, बहुत बेबस और मजबूर था। मजबूरी की हालत से निकलने के लिए उसने सबसे पहले लकडी का इस्तेमाल सीखा। वृक्षो की टहनिया तोडकर उनसे शिकार करता था, उनकी सहायता से अपनी रक्षा की। करीब सवा लाख वर्ष पूर्व मनुष्य ने इस स्थिति से उन्नति की। सयोग से पत्थर के कोई दो टुकडे कभी टकरा गए होगे। उसमे आग की चिनगारी निकली। इस तरह आग का आविष्कार हुआ। अब मनुष्य जगल से लकडिया इकट्ठा कर लेता और उन्हें जला कर आग तापा करता। मास अब कच्चा

न खाया जाता था—उसे आग में भूना जाने लगा। लकड़ी के हथियारों से शिकार इतना आसान नहीं था। इसलिए पत्थरों को रगड़-रगड़ कर नोकदार हथियार बनाए गए और इन्हें काम में लाया जाने लगा। हड्डियों को भी हथियारों के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा। इस युग को पाषाण काल या पत्थर का युग कहते हैं।

पत्थर का युग आज से लगभग सवा लाख साल पहले शुरू हुआ और सात हजार वर्ष पूर्व तक रहा।

पाषाण काल का एक परिवार

चरवाहा मानव - लगभग दस हजार वर्ष पूर्व मनुष्य ने प्रगति की ओर कई लम्बे कदम उठाए थे। उसके जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। तत्कालीन मनुष्य ने पत्थर को रगड़कर सुन्दर, सुडौल तथा चिकने हथियार बनाए। हथियारों में लकड़ी की मूठें लगाईं।

इस समय एक महत्वपूर्ण घटना घटी। मनुष्य ने भेड़-बकरी पालना सीख लिया। वह कैसे और कब हुआ? यह कहना तो मुश्किल है। शायद किसी व्यक्ति को गाय, भैंस, भेड़ या बकरी के बच्चे मिल गए। उसने उन्हें मारा नहीं। पाल कर बड़ा किया। तब उसे इन पशुओं की उपयोगिता का ज्ञान हुआ। उसने उनकी खालों को पहना, मांस को खाया, और दूध को पिया। जंगल में शिकार की तलाश में मारे-मारे घूमने के स्थान पर उसे यह काम अच्छा प्रतीत हुआ। अब मानव भेड़-बकरियों के झुण्ड के झुण्ड लेकर घास की तलाश में जगह-जगह घूमता रहता। उसका स्थायी घर कोई न था। आज भी आपको संसार के कई भागों में इस प्रकार के खानाबदोश कबीले मिलेंगे। हमारे भारत में ऐसे कितने ही खानाबदोश कबीले पाये जाते हैं जैसे काश्मीर के गूजर।

पशुओं की रक्षा तथा खेमों की चौकीदारी के लिए आदमी ने कुत्ते को पाला। कुत्ता आज तक बड़ी वफ़ादारी से आदमी की दोस्ती निभा रहा है। वह शिकार में भी मनुष्य की सहायता करता था।

आदमी किसान कैसे बना? जब मानव शिकारी था तो वह जंगल से फल-फूल तोड़ कर खाया करता था। जंगल में अपने आप जो अनाज पैदा होता, उसे वह खा लेता। धीरे-धीरे उसे मालूम हुआ कि पके हुए अनाज को यदि वह खेत में बिखेर दे तो उससे कई गुना अधिक मात्रा में अन्न उत्पन्न हो सकता है। इस तरह वह साल भर के लिये पेट की समस्या से निश्चिन्त हो सकता है। इसलिए मनुष्य ने खेती करना शुरू किया। लकड़ी के किसी औजार से या सींगों से वह जमीन को खोद कर बीजों को बिखेर देता। समय पाकर उसने जमीन को जोतने के लिए हल का आविष्कार भी कर लिया।

आप जानते हैं कि खेतों में अनाज एक दिन में तो पैदा नहीं होता। कई महीने लगते हैं। इसलिए मनुष्य को एक स्थान पर स्थायी रूप से रहना पड़ा। उसने खानाबदोशी छोड़ दी। रहने के लिए लकड़ी की

झोपड़िया बना ली। कही-कही पत्थरो को इकट्ठा करके अपना निवासस्थान रचा। कुछ जगहो पर मनुष्य ने जमीन खोद कर भूमि के नीचे रहने की व्यवस्था कर ली। अब मनुष्य घर में परिवार सहित रहता था। उसने गाव बसा लिये।

घरो को बनाने के लिए मनुष्य को अच्छे औजारो की जरूरत थी। इसलिए उसने अपने औजारो को सुधारने की चेष्टा की। अभी तक मनुष्य के पास पत्थर के टेढ़े-मेढ़े औजार थे। परन्तु अब वह उनकी तेज धार बनाने लगा। उसने औजारो को रगने और उन्हें चमकदार बनाने की विधि भी सीख ली।

धातु युग

मनुष्य एक उन्नतिशील जीव है। वह कभी अपनी स्थिति से सन्तुष्ट नही रहता। उसे अपने पत्थर के औजारो से सन्तोष नही था। इसलिए मनुष्य ने धातुओ की खोज की। उसे सोना मिला। सोने से उसने अपनी स्त्रियो के जेवर बनाए। उसने तावे को ढाला परन्तु वह बहुत नर्म था। इस धातु से बर्छे और कुल्हाड़े नही बनाए जा सकते थे। फिर उसे मालूम हुआ कि तावे और टीन को मिलाने से मजबूत औजार बन सकते है। इस मिश्रित धातु को कांसा कहते हैं। धीरे-धीरे मनुष्य को लोहे का भी पता चल गया। अनुमान है कि मनुष्य ने लोहे का प्रयोग लगभग सात हजार वर्ष पूर्व सीखा।

उन्नति की दिशा में यह यात्रा मनुष्य ने लाखो वर्षों में तय की। उन दिनो धातुओ का प्रचलन बहुत कम था। लोगो के पास अधिकतर औजार पत्थर के ही होते थे।

खेतिहर मानव अपने शिकारी पूर्वजो की अपेक्षा बडे सुखी थे। उन्होने टोकरिया बनाना सीख लिया था। वे मिट्टी के वर्तन भी बनाना जानते थे। उन पर रोगन तथा चित्रकारी करते थे। अनाज को भरने के लिए उन्होने कोठे बना लिए। उन्होंने मन्दिर बनाए। मन्दिरो में वे अपने देवताओ की पूजा करते थे। मृत्यु के बाद मनुष्य के साथ उसके हथियार, अच्छे-अच्छे भोजन, सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण भी दबा देते थे। उनका विश्वास था कि अगली दुनिया में ये सब चीजें मृत व्यक्ति को मिल जाती हैं।

मानव का भ्रमण

आप पूछेंगे कि अब जब मनुष्य खेती करना सीख गया था तो वह एक स्थान पर टिका क्यो नही। वह जगह-जगह क्यो मारा-मारा फिरता रहा। इसका जवाब है—आवश्यकता ने उसे अपना निवास स्थान छोड़ने पर विवश कर दिया। दुनिया में समय-समय पर जलवायु के परिवर्तन होते रहे हैं। बर्फ ने सब से पहले मानव को उन इलाको से निकलने पर विवश किया जहाँ वह पहले रहता था। तत्पश्चात् पुन जलवायु सबधी परिवर्तन हुए। कुछ इलाके जो हरे-भरे जगलों तथा जगली जानवरो से भरे हुए थे, रेगिस्तान में बदल गए। न शिकार के लिए जगली जानवर रहे, न पशुओ के लिये घास। अत आवश्यकता ने मानव को एक बार फिर आगे बढ़ने के लिये विवश कर दिया।

लेकिन मानव जाति का भ्रमण रुका नही। दुनिया का प्राचीन इतिहास सहस्रो उदाहरणो से भरा पड़ा है जब लाखो की सख्या में लोग एक स्थान से उठकर दूसरे स्थान को चले गए। भारत में आर्यों ने हमला किया, उनके बाद हूँण, मगोल इत्यादि कितनी ही खानाबदोश जातिया आई और यहाँ बस गई। ऐसा क्यो हुआ ?

दुनिया में उस समय दो प्रकार की जातियां थीं। एक वे लोग थे जो खेती करना सीख गए थे तथा गांव और बस्तियां बसाकर स्थायी रूप से एक स्थान पर सुख-शांति से रहने लगे थे। दूसरे खानाबदोश लोग थे। वे अधिकतर पशु-पालन करते थे। वे ताजी घास और नए इलाकों की खोज में सदा एक स्थान से दूसरे स्थान को भटकते रहते थे। जब घास कम हो जाती और पशुओं की संख्या बढ़ जाती तो वे अपने उन पड़ोसियों पर टूट पड़ते जो शान्तिपूर्वक खेती द्वारा अपने जीवन का निर्वाह करते थे। चूंकि खानाबदोश जातियां संघर्ष-प्रिय थीं, इसलिए शान्तिप्रिय जातियां लड़ाई में उनके मुकाबले में टिक न पाती थीं।

आदि मानव की शासन-व्यवस्था

हम पहले बता चुके हैं कि शुरू-शुरू में जब आदमी का विकास हुआ तो वह बहुत कुछ जानवर से मिलता था। उसमें और जानवर में केवल बुद्धि का ही अन्तर था। धीरे-धीरे सहस्रों वर्षों में मानव ने उन्नति की। वह पहले से ज्यादा चतुर हो गया। पहले शायद वह अकेला ही जंगलों में मारा-मारा फिरता था और जो छोटा-मोटा शिकार हाथ लग जाता, उससे पेट भर लेता था। परन्तु थोड़ी देर बाद उसे इस बात का आभास हुआ कि इकट्ठे मिलकर रहने और शिकार करने से अधिक लाभ है। एक साथ रहकर वे अधिक शक्तिशाली हो जाते थे और जानवरों तथा अन्य शत्रुओं का ज्यादा अच्छी तरह सामना कर सकते थे।

आदमी की उन्नति की पहली सीढ़ी यह थी कि उसने झुण्ड बनाकर रहना सीख लिया। सर्वप्रथम शायद वह अपने परिवार के सदस्यों के साथ ही रहता था। परन्तु धीरे-धीरे परिवार की बहुत-सी शाखाएं हो गईं। इन शाखाओं के मिलने से एक जाति, कबीला या फिरका बना। इस प्रकार पहली बार जातियों की बुनियाद पड़ी। जब जाति पर संकट आता था तो सब सदस्य मिलकर शत्रु का मुकाबला करते थे। यदि कोई आदमी इस लड़ाई में जाति के अन्य सदस्यों से सहयोग नहीं करता था तो उसका बहिष्कार कर दिया जाता था।

स्पष्ट है कि जाति तब तक सामूहिक रूप से कोई उचित पग नहीं उठा सकती थी, जब तक कि उसे कोई उपयुक्त नेता न मिले। यदि हरेक आदमी अपनी मरजी से काम करता रहे तो जाति का संगठन बिखर जाएगा। इसलिए ये जातियां या कबीले अपना एक नेता चुन लिया करते थे। वह नेता कौन होता था? वही जो इस समुदाय या कबीले में सबसे ज्यादा शक्तिशाली तथा दृढ़ निश्चय का व्यक्ति होता था। यह नेता या सरदार अपने समुदाय में अनुशासन रखता था। वह देखता था कि उसकी जाति के लोग आपस में न लड़ने पाएं। यदि जाति के कुछ लोगों में मतभेद हो जाता तो वह उनका न्याय करता। इस तरह आदि मानव ने मिल-जुलकर रहना सीखा। निश्चय ही इस प्रकार रहना अकेले रहने से कहीं अच्छा था। शुरू शुरू की जातियां तो बड़े-बड़े परिवारों की तरह रही होंगी। सब लोग आपस में किसी न किसी प्रकार से रिश्ते में जुड़े होंगे। परन्तु धीरे-धीरे परिवार का क्षेत्र बढ़ा और जातियां भी बढ़ती गईं।

आदि मानव जब अकेला घूमता था तो उस पर भी जंगल का कानून ही चलता था। यह कहावत तो आपने सुनी होगी 'जिसकी लाठी उसकी भैंस'। मानव का मानव के रूप में कोई अस्तित्व नहीं था। वह भी एक प्रकार का जंगली जानवर था। परन्तु जब धीरे-धीरे उसने परिवार बनाया तो परिवार के सदस्यों के प्रति उसे मोह हुआ। अब वह परिवार के सदस्यों की रक्षा करता और इनके लिए जीता था। समय पाकर

परिवार ने कबीले और जाति का रूप धारण किया। अब वह अपने कबीले और जाति के लिए जीता और मरता था। कबीले के एक सदस्य की पीडा उसकी अपनी पीड़ा होती थी। इस प्रकार जिस देश में या जिस स्थान में वह कबीला रहता था, उसके लिए उसका मोह हुआ। वह अपने सरदार या नेता का हुक्म मानने लगा, आदर करने लगा। इस तरह उसमें अनुशासन की भावना आई। वह अपनी जगली प्रवृत्तियो को छोड कर मानवीय प्रवृत्तिया अपनाने लगा। अनुशासन में रहने से उसे सुख और शाति मिली। वह अपने आपको सुरक्षित अनुभव करने लगा। परन्तु एक दिन वह आदमी जिसे लोकतन्त्रात्मक ढग से स्वय लोगो ने जाति का नेता चुना था, जाति का राजा बन बैठा।

यह कैसे हुआ ? प्रारम्भ में हरेक चीज सारी जाति की होती थी, किसी की अलग नही। नेता या सरदार की निजी सम्पत्ति कोई नहीं होती थी। सरदार जाति की सारी सम्पत्ति की देख-रेख करता था। धीरे-धीरे उसके अधिकार बढे। उसने सोचा यह माल-असबाव जाति का नही, मेरा है। उसकी नियत बदल गई। लोगो ने भी धीरे-धीरे इस तथ्य को स्वीकार कर लिया। शुरू-शुरू में जब सरदार मर जाता तो सब लोगो की एक सभा होती जिसमें नया सरदार चुन लिया जाता। साधारणत वह नया सरदार पुराने सरदार के परिवार का ही कोई सदस्य होता था। परन्तु ऐसा होना जरूरी न था। कभी-कभी मरने से पहले बूढा सरदार कह दिया करता था कि अमुक व्यक्ति मेरा उत्तराधिकारी होगा, उसे ही मेरे मरने के बाद सरदार चुना जाए। यह कहना मुश्किल है कि लोगो को मरनेवाले नेता की यह ताकीद अच्छी लगी या बुरी। परन्तु उन्होंने मृत नेता की इच्छा का सम्मान किया। धीरे-धीरे यह परम्परा ही बन गई। सरदार मरने से पहले अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर जाता था जो आम तौर पर उसके परिवार का ही कोई सदस्य होता था।

जब सरदार की जगह मौरूसी हो गई अथवा बाप के बाद बेटे को मिलने लगी तो उसमें और राजा में कोई अन्तर नही रहा। वही राजा बन बैठा। उसके दिमाग में यह बात समा गई कि इस देश की सब चीजें मेरी हैं। स्वय ईश्वर ने मुझे इस देश का सर्वेसर्वा बनाकर भेजा है। राजा भूल गए कि लोगो ने उन्हें केवल इसलिए चुना था कि वे देश की खाने की चीजें और दूसरा सामान आम लोगो में न्यायपूर्वक बाट दें। वे यह भी भूल गए कि उन्हें इसलिए चुना गया था कि वे इस देश में सबसे अधिक अनुभवी व्यक्ति माने जाते थे। अब तो उनके दिमाग में एक ही बात समा गई—हम इस देश के मालिक है और शेष सब हमारे नौकर है। बात दर-असल उलटी थी। वे देश के नौकर थे और जनता मालिक।

कुछ भी हो, इन राजाओ ने अपनी शक्ति और सत्ता को बढाने के लिए नए-नए शहर आबाद किए, साम्राज्य स्थापित किए और सस्कृति को बढावा दिया। इन सस्कृतियो की कहानी हम अगले परिच्छेदो में कहेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) आदि मानव का विकास कैसे हुआ ?

(२) मानव को प्रगति पथ पर कौन कौन सी मन्जिलें तय करनी पड़ीं ?

(३) प्रारभिक मनुष्य का रहन-सहन कैसा था ? वे आपस में व्यवस्था कैसे बनाए रखते थे ?

(४) आदमी किसान कैसे बना ? किसान बनने से पूर्व वह कैसा जीवन निर्वाह करता था ?

विश्व
की
प्राचीन संस्कृतियाँ

: २ :
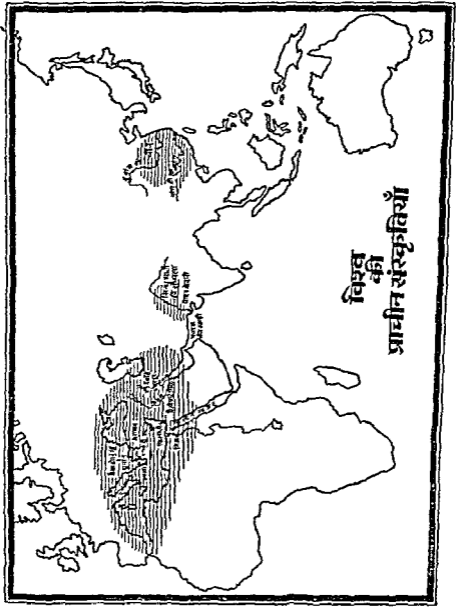
दुनिया की प्राचीन सभ्यताएं

मिस्र

सबसे पहले मनुष्य ने सभ्यता की नीव वहाँ रखी जहाँ बड़ी-बड़ी नदियाँ उपजाऊ मैदानो में से गुजरती थी। इसलिए सभ्यता के प्राचीनतम चिह्न उन्ही चार देशो में मिलते है जहाँ ऐसी नदिया बहती है। ये चार देश हैं—मिस्र, मैसोपटोमिया (ईराक), चीन और भारत। मिस्र में नील, मैसोपटोमिया में दजला और फरात, चीन में क्वागू और यान्सीक्याग तथा भारत में सिन्धु और गगा प्रसिद्ध नदिया बहती है। लोग इन नदियो के तटीय प्रदेशो में बस कर खेती करने लगे। उन्होने घर और मकान बनाए, गाव और नगर आबाद किए। इन देशो से सभ्यता की किरणें फूटकर दुनिया के अन्य देशो में फैल चुकी हैं। यह कहना कठिन है कि इन चार देशो में से कहाँ सबसे पहले सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ। सम्भवत सभ्यता की किरणें प्राय एक साथ ही इन देशो में फूटी। उनमें थोड़ा-बहुत आपसी सम्पर्क भी रहा था।

प्राचीन मिस्र की कहानी

मिस्र देश को 'नील का उपहार' भी कहते है। प्रति वर्ष गरमियो में महान् नील नदी में बाढ आती है जो नील की घाटी को एक चमकती हुई झील में परिवर्तित कर देती है। जब बाढ थमती है तो वह अपने पीछे काली मिट्टी की एक तह छोड जाती है जो भूमि को उपजाऊ बना देती है। मिस्र में वर्षा बहुत कम होती है। यदि नील नदी में प्रति वर्ष बाढ न आए तो मिस्र भी अपने पूर्व और पश्चिम के रेगिस्तानो की तरह केवल मात्र एक रेगिस्तान ही होता।

मिस्र की कहानी प्राय दस हजार वर्ष पुरानी है। विद्वानो का मत है कि कुछ खानाबदोश लोगो ने नील की घाटी की उर्वरता से आकर्षित होकर वहाँ आक्रमण किया। उन्होने यहाँ के पुराने रहनेवाले लोगो को जीत लिया। आक्रमणकारियो को यह स्थान बहुत पसन्द आया और वे अपना घुमक्कड जीवन छोड कर इस घाटी में सदा के लिए बस गए। सर्वप्रथम मिस्र दो भागो में बटा हुआ था—उत्तरी मिस्र तथा डेल्टा का प्रदेश। दोनो प्रदेशो के दो अलग-अलग बादशाह थे। परन्तु ३५०० वर्ष ई० पू० मेन्ज नामक एक बादशाह के आधीन मिस्र का एकीकरण हुआ।

नील नदी के किनारे पर बडे-बडे शहर आबाद हुए। कुछ लोगो का विचार है कि ये दुनिया के सबसे पहले नगर थे। हमें इन नगरो के बारे में काफी जानकारी प्राप्त है क्योकि उन शहरो के रहनेवालो ने लिखना सीख लिया था। लिखने की यह शैली चित्रो की शैली होती थी। प्रारम्भ में जिस चीज को लिखना होता था, उसका चित्र-सा बना दिया जाता था। उदाहरण के रूप में, यदि पूजा शब्द लिखना हो तो एक व्यक्ति को घुटने टेके हुए दिखा दिया जाता था। धीरे-धीरे यही चित्र किसी न किसी आवाज के सूचक बन गए। इस

प्रकार प्रत्येक शब्द का लिखना सम्भव हो गया। मिस्रियों ने स्याही का भी आविष्कार किया। यह स्याही पकाने के बर्तनों के साथ रह गई कालिख तथा गोंद से बनाई जाती थी। उन्होंने पैपिरस नाम के एक पौधे से कागज बनाना भी सीख लिया था। १८२२ से पूर्व प्राचीन मिस्रियों की लिखाई को पढ़ना सम्भव न था। १८२२ में चैम्पोलियन नामक एक फ्रांसीसी विद्वान मिस्रियों की लिखाई पढ़ने में सफल हुआ। इस प्रकार प्राचीन मिस्र के ज्ञान का खजाना हमारे हाथ लगा।

मिस्र के ये प्राचीन निवासी बहुत से देवताओं की पूजा करते थे। उनके देवताओं की पूरी संख्या जानी नहीं जा सकी। परन्तु अब तक २२०० देवताओं की गणना हो चुकी है। इन देवताओं में सबसे प्रमुख सूर्य देवता था। उसे वे 'रा' कहते थे। एक और प्रमुख देवता ओसिरीज था जो नील नदी का देवता माना जाता था। उसके बारे में विश्वास था कि मृत्यु के बाद वह लोगों का न्याय करता है। मिस्र के लोग अपने देवताओं की छोटी-बड़ी मूर्तियां बनाया करते थे। इन देवताओं के विचित्र रूप थे। उन्हें मनुष्यों के रूप में दिखाया जाता था जिन पर आश्चर्यजनक पशुओं के सिर लगे होते थे। उनका विश्वास था कि मरने के बाद प्रत्येक व्यक्ति को देवताओं के सामने अपने जीवन का लेखा-जोखा देना पड़ता है। उसके दिल को, मरने के बाद, देवता एक विशेष प्रकार के पंख से तोला करते थे। यदि उसका दिल पंख के मुकाबले में हल्का रहता तो वह पुण्यवान व्यक्ति होता था। पापी लोगों का दिल उस पंख से भारी होता था। एक विशेष प्रकार का देवता ऐसे लोगों को खा जाता था।
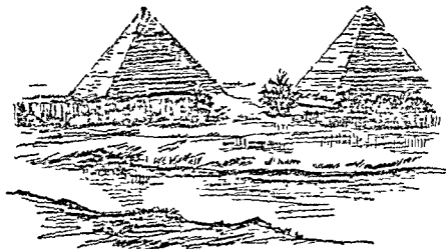
मिस्र के पिरामिड

मिस्र के इतिहास में एक समय ऐसा भी आया जब सम्राट आमेन होटप चतुर्थ ने इन नाना प्रकार के देवताओं की पूजा का राज्य भर में निषेध कर दिया। इन देवताओं के मन्दिर बन्द कर दिए गए। यह कट्टा

था कि सब लोग ऐटन देवता जो सूर्य देवता का ही दूसरा नाम था, की पूजा किया करें। वह थेब्ज नगर से, जो प्राचीन मन्दिरों का शहर था, अपनी राजधानी को तेल-एल-अमारना ले गया। परन्तु उसके मरने के तुरन्त बाद पुनः मिस्र में पुराने पशु-देवताओं की पूजा प्रचलित हो गई।

उस समय लोगों का विश्वास था कि मरने के बाद आदमी दूसरी दुनिया को जाता है। नई दुनिया में उसको वैसी ही चीजों की जरूरत होती है जैसी उसको इस दुनिया में चाहिएं। इसलिए वे उस जमाने के बड़े-बड़े लोगों की लाश के साथ हर प्रकार का सामान भी रख देते थे। लाश को रखने के लिए विशाल मीनार बनाए जाते थे जिन्हें पिरामिड कहते हैं। लाश को ऐसे मसाले लगा दिए जाते थे जिससे वह कभी खराब न हो। मिस्र के कुछ पुराने बादशाहों, जिन्हें फिरउन भी कहते हैं, की लाशें अब भी सुरक्षित अवस्था में ऐसे मीनारों में से मिली हैं। वहां पर कुर्सियां और मेजें, अस्त्र-शस्त्र, अच्छे-अच्छे कपड़े, भोजन, बच्चों के खिलौने इत्यादि कितनी ही चीजें रख दी जाती थीं। मिस्र का जलवायु खुश्क है। इन स्तूपों को इस ढंग से बन्द कर दिया जाता था कि हवा न आ पाये। इसलिए आजतक वे चीजें सुरक्षित मिली हैं। इनसे हमें पता चलता है कि उस जमाने में मिस्र के लोग कैसे रहते थे।

प्राचीन मिस्र की सफलताएँ

गिज़ा के स्थान पर मिस्र के ये मीनार अथवा पिरामिड दुनिया के सात आश्चर्यों में से एक कहे जाते हैं। वास्तव में यह मीनार उस जमाने के बादशाहों के मकबरे हैं। सबसे बड़ा मीनार ई० पू० ३७३३ में बना था। इसे चियप्स नामक एक फिरऊन अथवा सम्राट ने अपनी कब्र के लिए बनाया था। यह ४५० फीट ऊँचा है। इसको बनाने में कई वर्ष लगे और शायद एक लाख लोग इसके निर्माण में जुटे रहे। लगभग ५,००० साल तक यह स्तूप मनुष्य द्वारा बनाई गई दुनिया की सबसे बड़ी इमारत थी। स्तूप के अन्दर एक बहुत ही तंग रास्ता है जो उस गुप्त कमरे की ओर जाता है जहां बादशाह का शरीर विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के साथ रखा गया था। मिस्र के बहुत से राजाओं ने ऐसी कब्रें बनवाई थीं। आज भी उनमें से कितनी ही अपनी पुरानी शान के साथ खड़ी हैं।

सबसे बड़े पिरामिड के पास ही चैफरन नामक बादशाह का एक विशाल मीनार है। समीप ही स्फिंक्स नाम की एक आश्चर्यजनक यादगार है। यह पत्थर से घड़ा हुआ एक विशाल बुत है। इसका शरीर शेर का है और मुंह और सिर शायद स्वयं बादशाह चैफरन का। स्फिंक्स आज भी दुनिया का सबसे बड़ा बुत है। गिज़ा के इन मीनारों के पास कई और पुरानी कब्रें और मन्दिर हैं। आज वहां सर्वत्र उजाड़ है। परन्तु इन इमारतों के द्वार खुले हैं। कोई भी व्यक्ति वहां जाकर इनकी दीवारों पर खुदी हुई तस्वीरें इत्यादि देख सकता है। ये तस्वीरें प्राचीन मिस्र के जीवन को दरशाती हैं। इन चित्रों में बैलों की सहायता से खेतों में हल चलाते हुए किसान दिखाए गए हैं।

स्फिंक्स

पशुओं के झुण्ड हैं। कारीगरों को तांबे के औजार बनाते हुए और पत्थर के बर्तन बनाते हुए दिखाया गया है। सुनार सोने के जेवर तथा बर्तन बना रहे हैं। कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाते हुए दिखाई देते हैं और स्त्रियां कपड़े बुनती हुईं। इन तस्वीरों में जहाज बनानेवाले कारीगरों को भी दिखाया गया है। एक बाजार का दृश्य भी है जहां लोग चीजों की अदला-बदली कर रहे हैं। अभी तक मिस्र में रुपये पैसे का चलन नहीं हुआ था। कुछ और दीवारों पर परिवारों को आनन्द मनाते हुए दिखाया गया है। लोग अपने उद्यानों में खेलते, गाते, नाचते और नहाते हुए दिखाए गए हैं। छतों पर फूलों, पक्षियों, तितलियों, इत्यादि की तस्वीरें हैं। इन इमारतों के फर्श पर ऐसे चित्र हैं जहां बहते हुए पानी में मछलियों को अठखेलियां करते हुए दिखाया गया है। कार्नक और लक्सर के स्थान पर प्राचीन मिस्री मन्दिरों के खण्डहर उस जमाने की भवन निर्माण कला का सुन्दर उदाहरण है।

मिस्र के प्राचीन मन्दिरों की दीवारों पर अंकित एक चित्र

मिस्र के लोगों ने नक्षत्र विद्या का भी काफी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उन्होंने नक्षत्रों की गतिविधि का ऐसा अध्ययन किया था जिसके आधार पर उन्हें पहले ही पता चल जाता था कि नील नदी में बाढ़ कब आयेगी। प्रारम्भ में प्राचीन मिस्रवासी समय का अनुमान चाँद से लगाते थे। परन्तु ई० पू० ४,००० वर्ष तक उन्होंने ३६५ दिन का एक कैलण्डर बना लिया था। दिन को बारह-बारह घण्टे के दो भागों में बांट दिया था। रोमन सम्राट जूलियस सीजर ने मिस्र का यही कैलण्डर बाद में रोमन साम्राज्य में प्रचलित किया। आज भी थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ यही प्राचीन कैलण्डर दुनिया भर में प्रचलित है।

बाद में उनका व्यापारिक सम्पर्क क्रीट द्वीप के लोगो से भी हो गया। इस सम्पर्क द्वारा मिस्र की सभ्यता यूनान और रोम तक पहुची।

प्राचीन मिस्र के एक मंदिर के खण्डहर

मिस्र पर हजारो वर्षों तक कई वंशो ने राज्य किया। कभी-कभी मिस्र के शक्तिशाली राजाओं ने अन्य देशो को जीतने के लिए अपनी सेनाए भेजी और कभी-कभी बाहर से आक्रमणकारी मिस्र में आए। आक्रमणकारियो के सरदार मिस्र के राजाओं को हराकर वहा के राजा बन बैठे। परन्तु राजनीतिक उथल-पुथल ने शायद मिस्र के शहरो के दैनिक जीवन पर कोई विशेष प्रभाव नही डाला। मिस्र के कलाकार सुन्दर मूर्तिया तथा चित्र बनाते रहे और इनमें से कुछ लोग अपने समय की बातें हमारे लिए लिखकर छोड गए हैं।

मिस्र का पतन

ईसा पूर्व सातवी सदी में मिस्र की सैनिक शक्ति बहुत कम हो गई थी, इसलिए ईसा से ७०० वर्ष पूर्व असीरियन लोगो ने मिस्र पर कब्जा कर लिया। ईसा पूर्व ५२५ में ईरानी आये और ईसा पूर्व ३२५ में सिकन्दर महान। आखिरकार ईसा पूर्व ३० सन में मिस्र रोमन साम्राज्य का एक भाग बन गया। रोमन साम्राज्य के बारे में हम अगले किसी परिच्छेद में पढेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) मिस्र को "नील नदी का उपहार" कहते हैं, क्यो ?

(२) प्राचीन मिस्रियो के धर्म तथा उनके धार्मिक विश्वासों के बारे में आप क्या जानते है ?

(३) दुनिया की प्राचीनतम इमारतें कहा मिलती हैं। उन्हें किन लोगों ने और क्यों बनवाया था ?

(४) मिस्रियों ने लिखना कैसे सीखा ?

(५) प्राचीन मिस्र की सफलताओ का वर्णन करो। विश्व सभ्यता को मिस्र की क्या देन है ?

(६) संक्षिप्त नोट लिखो :—

(क) मिस्र के पिरामिड (ख) स्फिंक्स (ग) शैम्पोलियन

: ३ :

मैसोपटोमिया

ईराक में दो महान् नदियां बहती हैं। उनके नाम हैं दजला और फरात। अब ये नदिया एक स्थान पर मिल कर इकट्ठी समुद्र की ओर बढती हैं। परन्तु पुराने जमाने में कभी ये नदिया पृथक्-पृथक् समुद्र में गिरती थीं। चिरकाल तक इस देश का नाम मैसोपटोमिया रहा जिसका अर्थ है 'दो नदियों के बीच का प्रदेश।'

बहुत पुरानी बात है—कोई पाच हजार साल पहले की —जब इन दोनों नदियों के किनारों पर बडे-बडे शहर आबाद थे। इन शहरों की मजबूत दीवारें होती थीं जो शत्रुओ से उनकी रक्षा करती थी। घर ईंटो और पत्थरों के बने होते थे। घरो के आगन में सुन्दर उद्यान होते थे। लोग अच्छे-अच्छे कपड़े पहनते और सुन्दर आभूषण धारण करते थे। उस जमाने में मैसोपटोमिया के उत्तरी भाग को असीरिया कहते थे जबकि दक्षिणी भाग बैबीलोनिया कहलाता था। बैबीलोनिया आगे दो हिस्सों में विभक्त था। ऊपर का भाग समेर के नाम से प्रसिद्ध था जबकि निचला भाग अक्कड कहलाता था। मैसोपटोमिया में जिन लोगो ने सर्व प्रथम नगर आबाद किए उन्हें सुमेरियन कहते हैं और उनकी सभ्यता को सुमेरियन सभ्यता। बैबीलोन की महान् सभ्यता सुमेरियन सभ्यता का ही एक अग थी।

मैसोपटोमिया को बहुत-सी सभ्यताओ का जन्मस्थान और कब्रिस्तान कहते हैं। इसका कारण यह है कि दजला और फरात की उपजाऊ भूमि से आकर्षित होकर विभिन्न युगों में आक्रमणकारी आते रहे हैं। वे इन बस्तियों में आकर पहले लोगों को मार भगाते और स्वय बस जाते। यह काम कई हजार वर्ष तक चलता रहा और विभिन्न लोगो के मेल-जोल और विभिन्न सभ्यताओ के समागम से मैसोपटोमिया में एक ऊची सभ्यता पनपने लगी। इन शहरों पर बडे-बडे शक्तिशाली राजाओं ने राज्य किया। उन्होंने विशाल सेनाए रखी हुई थीं। उनके सिपाही ढाल, तीर और नेजों इत्यादि से लडते थे। मैसोपटोमिया के प्राचीन राजाओं ने बहुत से प्रदेशों को जीता और विशाल साम्राज्य की नींव डाली। कभी-कभी वे हारे हुए शत्रुओं को गुलाम बनाकर अपने देश में ले आया करते थे।

एक सुमेरियन महिला

मैसोपटोमिया के लोग सूर्य देवता की पूजा करते थे। इस देवता का नाम था मार्दुक। एक खुदे हुए चित्र में मार्दुक देवता को रात की भयकर देवी से लडते हुए दिखाया गया है।

पूजा के लिए वे बड़े-बडे ऊचे मन्दिर बनाते थे। मन्दिरो तक पहुंचने के लिए बहुत-सी सीढ़िया चढकर

जाना पड़ता था। उन लोगो का विश्वास था कि जितना ऊंचा मन्दिर होगा उतना ही हम ईश्वर के पास होंगे। पुजारियो ने नक्षत्र विद्या का काफी ज्ञान उपार्जित किया था। वे सालो, महीनों और रातो को गिन सकते थे। उन्हें कैलण्डर का भी ज्ञान था। वे ज्योतिष विद्या में भी विश्वास रखते थे और नक्षत्रो के आधार पर मनुष्य का अच्छा या बुरा भविष्य बताते थे।

बैबीलोनिया की कहानी

मैसोपटोमिया का सबसे बड़ा शहर था बैबीलोन। बैबीलोन का एक प्रसिद्ध सम्राट था जिसका नाम हमूरबी था। वह एक बहादुर योद्धा था जिसने अपने पौरुष से समूचे सुमेर और अक्कड़ को जीतकर बैबीलोनिया के विशाल साम्राज्य की नींव रखी। हमूरबी एक चतुर राजा था। आप जानते हैं उस जमाने में कोई लिखे हुए कानून नहीं होते थे। वह पहला सम्राट था जिसने जनसाधारण के लिए बहुत से कानून लिपिबद्ध किए। उसने इन कानूनो को पत्थरो पर खुदवा दिया। इनमें से एक पत्थर आज भी सुरक्षित है। इस पत्थर के एक कोने में सम्राट हमूरबी को सूर्य देवता शमश से यह कानून प्राप्त करते हुए दिखाया गया है। इस पत्थर पर

एक कब्र से प्राप्त चांदी की नाव

लगभग ३०० कानून लिखे हुए हैं। विभिन्न प्रकार के अपराधो के लिए सजाए निश्चित हैं। परिवार, व्यापार तथा नौकरो के प्रति व्यवहार के बारे में नियम भी लिपिबद्ध है। कुछ कानून तो बड़े कड़े हैं, जैसे, यदि कोई आदमी किसी का हाथ काट दे तो अपराधी का भी हाथ काटा जाए अथवा यदि कोई मकान मालिक की लापरवाही से गिर जाए और उसके नीचे आकर कोई व्यक्ति मर जाए तो मालिक मकान को भी मौत की सजा मिलती। परन्तु, कुछ अच्छे कानून भी थे जिनके अन्तर्गत विधवाओं, अनाथों और गरीब लोगों की सुरक्षा का प्रबन्ध किया गया था। हमूरबी के कानून उसके मरने के बाद दूसरे देशो में भी प्रयुक्त होने लगे।

हमूरबी ने जनसाधारण को सुरक्षा और कानून ही नहीं दिए। उसने अपनी राजधानी बैबीलोन को एक महान नगर बनाया। यहा खुली सड़कें, महल तथा मन्दिर बनवाए। इस नगर की दीवारें इतनी चौड़ी थीं कि उन पर पांच रथ एक साथ चल सकते थे। फरात नदी पर एक पुल बनवाया। इस नदी में बड़े-बड़े जहाज चलते थे। बैबीलोन दुनिया के अन्य भागो में भी अपनी समृद्धि के लिए प्रसिद्ध हो गया। हमूरबी के बहुत देर बाद बैबीलोन का एक और प्रसिद्ध सम्राट हुआ। उसका नाम था नेबूचेदनज़ार (ई०पू० ६०४ से ५६१ तक)। वह बड़ा शक्तिशाली सम्राट था। उसने फिलस्तीन के यहूदियों को हराया। उनमें से

कुछ को गुलाम बनाकर वह बैबीलोन ले आया। यहूदियों को अपनी मातृभूमि छोड़ने का इतना खेद हुआ कि उन्होंने कुछ वेदना-गीत लिखे हैं। इनमें से एक इस प्रकार आरम्भ होता है—"बैबीलोन में नदी के किनारे बैठकर हम जोओन को याद कर करके रोते हैं।" —जीओन यहूदियों के पवित्र शहर का नाम था जिसे आजकल यरुसलम कहते हैं। यहूदियों ने इस जमाने के बैबीलोन का पूरा-पूरा हाल लिखा है। यह विवरण अब भी बाईबल में सुरक्षित है।

असीरियन साम्राज्य

हम पहले बता चुके हैं कि मैसोपटोमिया के उत्तरी भाग को असीरिया कहते थे। यहां असीरियन नाम की एक बर्बर जाति, जो सीरिया के रेगिस्तानों से आई थी, बसी हुई थी। असीरिया में असूर तथा निनवा नाम के दो प्रसिद्ध नगर आबाद थे। निनवा ने तो एक समय बैबिलोन से भी अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की क्योंकि यह विशाल असीरियन साम्राज्य का केन्द्र था।

असीरिया के एक प्राचीन महल से निकली हुई परों वाले बैल की मूर्ति। इसका मुख मनुष्य का है।

ईसा से १३ शताब्दी पूर्व से लेकर सात शताब्दी पूर्व तक का काल सीरिया का उत्थान काल था। इन ५०० वर्षों में असीरिया के बादशाहों ने प्राचीन दुनिया के एक बहुत बड़े भाग पर अपना दबदबा बिठाया। असीरिया के कुछ पुराने सम्राट अपनी बर्बरता के लिए अब तक इतिहास में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने पड़ोसी देशों के बादशाहों के साथ भयंकर युद्ध किए। युद्ध में जो लोग पकड़े जाते थे उनकी निर्मम हत्या की जाती थी। उनकी खाल खिंचवा ली जाती, उन्हें अपंग बना दिया जाता था, जिन्दा जला दिया जाता था। असीरिया के बादशाहों ने अपने ये हृदयहीन कार्य बड़े गर्व से पत्थरों में खुदवा रखे थे। असीरिया के कुछ बादशाह इतने शक्तिशाली हो गए थे कि उन्होंने बैबीलोनिया, मिस्र, फिलस्तीन, सीरिया इत्यादि देशों को जीता। उनके शहरों को बर्बाद किया। असीरिया का आखिरी शक्तिशाली सम्राट असूरबनीपाल था (ई० पू० ६६८ से ६२५ तक)। उसने मिस्र, सीरिया और फिलस्तीन को जीता। परन्तु उसकी मौत के २० वर्ष बाद ही असीरियन साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। इसका मुख्य कारण यह था कि असीरियन स्वयं छोटे-छोटे कबीलों में बंटे हुए थे जो कई बार आपस में ही उलझ पड़ते थे। दूसरे असीरियनों की बर्बरता ने उन्हें प्राचीन दुनिया में बहुत बदनाम कर

रखा था। इसलिए असीरियनो के आधीन लोग उनके पंजे से मुक्त होने की ताक में थे। रोज-रोज की लडाइयों के कारण असीरियनो की शक्ति क्षीण हो रही थी। मौका पाते ही ईरान तथा बैबीलोन के शासकों
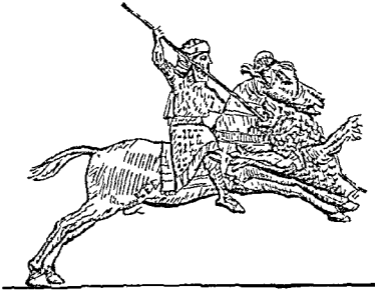
निनवा के महल में खुदा हुआ शिकार का एक चित्र

ने असीरिया पर चढाई कर दी। असीरिया का अन्तिम बादशाह साराकस दोनो देशो की सयुक्त शक्ति की ताब न ला सका। ईसा पूर्व ६१२ में निनवा नगर को तबाह-बर्बाद कर दिया गया। यह वैभवशाली नगर शीघ्र ही मैसोपटोमिया की रेत के नीचे दब गया। इस नगर के खण्डहर हजारो वर्ष तक भूमि की पेट में छिपे रहे। अन्त में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में दो पुरातत्व वेत्ताओ ने इस नगर को खोद निकाला।

असीरियन साम्राज्य का विश्व की सभ्यता को बडा लाभ प्राप्त हुआ। असीरियन लोगो ने मूर्तिकला को उन्नत किया। बैबीलोनिया की संस्कृति की अच्छी बातो को अपने विशाल साम्राज्य में फैला दिया।

अभ्यास के प्रश्न

(१) मैसोपटोमिया के उदय तथा पतन की कहानी लिखो ?

(२) मैसोपटोमिया को बहुत सी सभ्यताओं का जन्मस्थान और कब्रिस्तान कहते हैं, क्यों ?

(३) सुमेर लोग कौन थे ? मैसोपटोमिया की सभ्यता कैसे बनी ? सुमेर संस्कृति के बारे में आप क्या जानते हैं ?

(४) असीरियन लोग कौन थे ? उन्होंने साम्राज्य विस्तार कैसे किया ?

(५) बैबीलोनिया के वैभव का वर्णन करो ?

(६) सम्राट हमूरबी कौन था ? उसकी सभ्यता को क्या देन है ?

: ४ :

प्राचीन चीन

आप जानते हैं कि चीन में दुनिया के कुछ सबसे बड़े दरिया बहते हैं। इन दरियाओं के किनारों पर कई हजार वर्ष पूर्व एक प्रगतिशील सभ्यता का विकास हुआ था। वह सभ्यता मिस्र, मैसोपोटामिया और भारत की सभ्यता की तरह ही पुरानी या उससे भी पुरानी थी। सर्वप्रथम कुछ लोग जो अपने आपको 'काले बालों वाले लोग' कहते थे, चीन की ह्वांगहो अथवा पीत नदी के किनारे पर आबाद हुए। धीरे-धीरे वे याग्सी नदी की घाटी में फैल गए। वे अच्छे किसान थे। मिस्र की नील नदी की भाँति चीन की नदियों में भी भयंकर बाढ आया करती है। चीनियों ने नदियों के इस प्रकोप का सामना करना सीख लिया। वे चतुर लोग थे। उन्होंने नए-नए आविष्कार किए। इसलिये विश्व की सभ्यता को चीन की भरपूर देन है।

चीन जो चार हजार वर्ष पूर्व था वैसा ही आज से पचास वर्ष पूर्व भी था। इन चार हजार सालों में चीनियों के जीवन में कोई विशेष अन्तर नहीं आया था। कारण: चीन की भौगोलिक स्थिति ने इसे दुनिया से प्रायः अलग-थलग कर रखा था। पश्चिम, उत्तर-पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम की ओर से चीन रेगिस्तानों और ऊंचे-ऊंचे पर्वतों से घिरा हुआ है। पूर्व में प्रशान्त महासागर है। इन प्राकृतिक संरक्षणों के अतिरिक्त चीनियों ने पीकिंग के पूर्व में समुद्र के किनारे से तिब्बत तक १५०० मील लम्बी दीवार बना ली। यह दीवार चीन के सम्राट वागती ने ईसा से तीन शताब्दी पूर्व बनवाई थी। यह बीस फीट से भी अधिक चौड़ी है। कहीं कहीं तीस फीट से ज्यादा ऊंची है। इसे लाखों लोगों ने दस वर्ष में बनाया था। इस तरह चीन बाहरी हमलों से सुरक्षित हो गया। चीन बड़ा उपजाऊ प्रदेश था। अन्न काफी मात्रा में पैदा होता था। धातुएं भी प्रचुर थीं। अतः चीनी अपने भाग्य से सन्तुष्ट थे। उन्होंने अपने घर से बाहर फैलने की चेष्टा नहीं की।

चीन के इतिहास पर एक दृष्टि

प्राचीन चीन में बड़े-बड़े सम्राट हुए। परन्तु चीनियों के विचार में चीनी सभ्यता को विकसित करने वाले पांच मुख्य सम्राट थे। उनके नाम हैं—फू सी, शान नुग, वाग ती, याओ तथा शून। चीनी अपने राष्ट्रीय इतिहास में फू सी (२८५२ ई० पू० से २७३८ ई० पू०) को अपना प्रथम सम्राट मानते हैं। इससे पूर्व चीन छोटे-छोटे राज्यों में बँटा हुआ था। कहते हैं कि उसने लोगों को शिकार करना, मछलियां पकड़ना, भेड़ बकरियां पालना और पढ़ना-लिखना सिखाया। दूसरा मुख्य सम्राट शान नुग था। उसने हल का आविष्कार किया। लोगों को जड़ी-बूटियों से दवाइयां बनाना सिखाया और तोलने और नापने की विधि निकाली।

वाग ती एक महान् योद्धा सम्राट था। उसने चीन के विभिन्न भागों के सरदारों को परास्त करके संयुक्त चीन की नींव रखी। वह पहला व्यक्ति था जिसको महासम्राट की उपाधि प्राप्त हुई। यह उपाधि अगले दो हजार वर्ष तक पुनः किसी सम्राट के लिए प्रयुक्त नहीं हुई। वाग ती ने राज्य में सड़कों का जाल

बिछा दिया। नदियो द्वारा यात्रा के लिए उन में नावें डलवा दी। भार ढोने के लिए पहियेवाले छकडे का आविष्कार किया। उसकी महारानी लीसू ने सर्वप्रथम रेशम के कीडो से रेशम निकालने की विधि खोजी। चीन की दीवार भी उसने ही बनवाई थी।

याओ चौथा मुख्य सम्राट था। कहते है कि उसने सौ वर्ष राज्य किया। लोग उसके राज्य में बडे सुखी थे। अपने महल के द्वार पर उसने एक नक्कारा और लिखने की शिला रख दी थी। शिला पर कोई
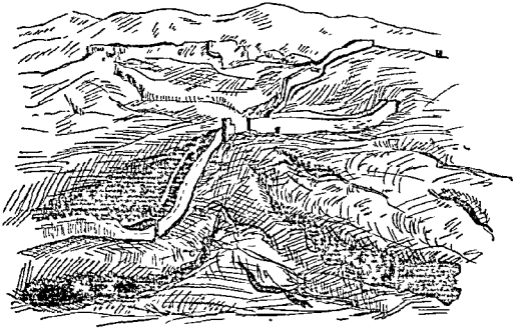
चीन की बड़ी दीवार

भी व्यक्ति अपनी फरियाद या सुझाव लिख सकता था। फिर नक्कारे को बजाया जाता और वह फरियाद महल के अन्दर पहुच जाती। सम्राट प्रत्येक प्रार्थना पर बड़े ध्यान से विचार करता था।

याओ के राज्य काल में चीन में भयकर आपत्ति आई। ह्वाग तथा अन्य नदियों में बाढ आ जाने से चारो ओर त्राहि-त्राहि मच गई। याओ ने अपने एक इजीनियर यू को बाढ नियन्त्रण के काम पर लगाया। वह इजीनियर नौ वर्ष तक काम करता रहा। उसने कही-कही नदियो की खुदाई करके उन्हें गहरा करा दिया और कही-कही उनका पाट चौडा करा दिया। उसने पानी को जमा करने के लिए झीलें बनवाई। नहरें खोदी। इस प्रकार वह चीन को बाढ के अभिशाप से बचाने में सफल हुआ। एक प्राचीन कहावत है—"यदि यू न होता तो हम सब मछलिया होते।" इस कहावत से प्राचीन चीन में यू की लोकप्रियता का अनुमान हो सकता है।

याओ ने अपने प्रधान मन्त्री यून को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। यून एक गरीब देहाती का लड़का था जो अपनी विद्वता और चतुराई के कारण सम्राट याओ के सम्पर्क में आया था। याओ यून के व्यवहार से इतना प्रभावित था कि उसने सारे चीन में उसे सद्व्यवहार के प्रचार के लिए भेजा। सम्राट बनने पर यून ने अपने कई परामर्शदाता नियुक्त किए जो धर्म, संगीत, न्याय, सार्वजनिक विकास, खेती-बाड़ी, जंगल, सड़क इत्यादि विभागों के अध्यक्ष थे। यून ने इन सब परामर्शदाताओं के ऊपर यू को उच्च सलाहकार नियुक्त किया। यू वही थे जिन्होंने चीन को बाढ़ के अभिशाप से बचाया था।

यून ने यू को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। सम्राट यू ने बहुत वर्ष तक न्यायपूर्वक राज्य किया। यू के मरने पर उसके पुत्र को सम्राट नियुक्त किया गया। अब तक तो चीन के सम्राट किसी बुद्धिमान और लोकप्रिय व्यक्ति को अपना उत्तराधिकारी बनाते आए थे। यू के बाद चीन में राजसिंहासन वंशानुगत हो गया।

यू ने सिया वंश का प्रारम्भ किया था। इस वंश ने चार सौ साल तक चीन पर राज्य किया। चीन के कुछ अन्य प्राचीन राजवंश जिन्होंने देर तक राज्य किया, ये थे—शांग वंश जिसने छः शताब्दी तक राज्य किया; चौ वंश जिसने ९०० साल राज्य किया (११२२ ई० पू० से २५५ ई० पू० तक) और हान वंश जिसने चार सौ से अधिक वर्ष तक (२०६ ई० पू० से ईसा पश्चात् २२१ वर्ष तक)।

चीन के प्राचीन विचारक

भारत की तरह चीन में भी महान् विचारक समय-समय पर पैदा होते रहे हैं। उनमें प्रमुख नाम ये हैं—लोओत्सी, कन्फ्यूशियस तथा मैनिशियस। लोओत्सी ने लोगों को त्याग का मार्ग दर्शाया। उनकी शिक्षा में कर्म के लिए कोई विशेष स्थान नहीं था। स्पष्ट है ऐसा मत जनसाधारण को स्वीकार नहीं हो सकता था। कुछ समय बाद लोओत्सी के अनुयायी उनको भूल गए।

महात्मा कन्फ्यूशियस

महात्मा कन्फ्यूशियस चीन का सबसे बड़ा विचारक था। वह (५५१ ई० पू० से ४७८ ई० पू०) चीन में प्रायः उन्हीं दिनों रहे जब भगवान बुद्ध भारत में धर्म-प्रचार कर रहे थे।

कन्फ्यूशियस एक उच्चकुल में पैदा हुए। परन्तु उनके पिता का बाल्यकाल में ही देहान्त हो गया था। गरीबी के बावजूद कन्फ्यूशियस ने ज्ञान अर्जित किया और विद्वान बना। ज्ञानोपार्जन के बाद कन्फ्यूशियस ने अपना एक विद्यालय खोला। इस विद्यालय में सबको गरीबी-अमीरी के भेद-भाव के बिना शिक्षा मिलती थी। आपने लोगों को चीन के प्राचीन इतिहास और काव्य की शिक्षा दी। उनकी शिक्षा का मूल सिद्धान्त सद्व्यवहार था। हमारा प्रत्येक कर्म ऐसा होना चाहिए जो दूसरों के लिए उदाहरण हो। उनका विश्वास था कि अपने महान् पूर्वजों के पदचिह्नों पर चल कर हम अपना जीवन सफल बना सकते हैं। चिरकाल तक शिक्षक रहने के बाद कन्फ्यूशियस को चीन के लू राज्य में न्यायमन्त्री बनाया गया। उनके प्रयास से राज्य में चोरी, फरेब और अत्याचार समाप्त होने लगा। चारों ओर कन्फ्यूशियस की स्तुति फैलने लगी। परन्तु वहां के शासक को उनकी यह लोकप्रियता अच्छी नहीं लगी। इसलिए महात्मा कन्फ्यूशियस को देश निकाला दे दिया गया।

महात्मा कन्फ्यूशियस ने चीन के प्रत्येक राज्य का भ्रमण किया। परन्तु कोई भी शासक उनकी

नीति पर चलने को तैयार न हुआ। वे भूखे-प्यासे देश का पर्यटन करते रहे। उन्होंने बडे साहस से अपने विचारो का प्रचार किया। एक चीनी शासक की काग ने उनसे राज्य को चोरो से मुक्त करने का उपाय पूछा। इस शासक ने बलपूर्वक राज्य के असली मालिक से राजसिंहासन छीना था। कन्फ्यूशियस ने उत्तर दिया—"श्रीमन्, यदि आप लोभी तथा लालची न होते तो लोग कभी चोरी न करते। यदि उन्हें धन दिया जाता तो भी नही।"

तेरह वर्ष तक घूमने के बाद वे लू लौट आए। वे अब ७० वर्ष के हो चुके थे। मरने से पूर्व उन्होंने खेद प्रकट किया कि चीन के किसी शासक ने उनकी नीति पर अमल नही किया। उनके हजारो कथनो में से यह कथन हमें सदा अपने सामने रखना चाहिए—"दूसरो के प्रति कभी ऐसा व्यवहार न करो जो आप नही चाहते आप से हो।"

कन्फ्यूशियस ने किसी नए धर्म की बुनियाद नही रखी। वे तो केवल लोगो के नैतिक उत्थान के लिए ही प्रयत्नशील थे। उन्होने चीन के प्राचीन इतिहास, काव्य, नीति सम्बन्धी पुस्तकों का सम्पादन तथा सकलन करके देश का भारी उपकार किया है। मैनिशियश महात्मा कन्फ्यूशियस के शिष्य थे। उन्होंने मुख्यत: अपने गुरु की शिक्षा का ही प्रतिपादन किया।

प्राचीन चीन की सफलताएँ

हम पहले ही बता चुके हैं कि चीनियो ने सिंचाई की उचित व्यवस्था द्वारा खेती को सुधारा। हान वश के राज्यकाल में पहाडो में जडी-बूटिया खोजते हुए किसी चीनी को चाय की पत्तियां मिल गईं। इस प्रकार चाय का आविष्कार हुआ। चीनी अच्छे कारीगर थे। वे सोने, चादी और लोहे का प्रयोग करते थे। कासे को ढालने का काम वह अत्युत्तम जानते थे। रेशम की खोज सर्वप्रथम चीन ने की। चीन का रेशम रोमन साम्राज्य में भी पहुचता था। प्राचीन मिस्रियो की भाति चीनियो ने भी एक चित्र-लिपि का आविष्कार किया। कालान्तर में दो-एक चित्रो को मिलाकर एक विचार को प्रकट किया जाने लगा। आज भी चीनी लिपि वैसी ही है जैसी कि प्राय ३ हजार वर्ष पूर्व थी। वह हिसाब के सकेतो की भांति है। प्रत्येक सकेत एक स्वतन्त्र शब्द अथवा विचार का द्योतक है। चीनी लिपि ऊपर से नीचे लिखी जाती है।

चीनी लकडी या बास की पतली सिलपो पर बास की तेज कलम के साथ अपनी किताबें लिखते थे। बाद में इस पर रग लगा कर उसे पकाई हुई मिट्टी की चक्कियो पर परिवर्तित कर दिया जाता था। कालान्तर में चीन में रेशम का कागज प्रयुक्त होने लगा। चीनियो ने सर्वप्रथम मुद्रण कला का आविष्कार किया। उन्होंने ही सबसे पहले नाविको के लिए कुतुबनुमा (काम्पैस) बनाया। चीनियो ने बारूद की भी सबसे पहले खोज की।

अभ्यास के प्रश्न

(१) चीन की प्राचीन सभ्यता का उदय कब हुआ? चीनी सभ्यता के मुख्य निर्माता कौन थे?

(२) महात्मा कन्फ्यूशियस कौन थे? उन्होंने क्या शिक्षा दी?

(३) प्राचीन चीन की सभ्यता के विभिन्न अंगों पर प्रकाश डालो? विज्ञान, कला और साहित्य में चीन ने क्या सफलताएं प्राप्त कीं?

(४) विश्व की सभ्यता को चीन की क्या देन है? भारत और चीन की सभ्यताओं में क्या समानता थी?

(५) चीन का राजनीतिक विकास कैसे हुआ?

: ५ :

भारत में सिन्धु घाटी की सभ्यता

जिस समय नील, दजला और फरात नदियो के किनारे वैभवशाली सभ्यताएं पनप रही थी, भारत में सिन्धु की घाटी में शायद उससे भी अधिक प्रगतिशील सभ्यता का विकास हो चुका था। भारत का अंग्रेजी नाम इंडिया भी तो सिन्धु या इण्डस का ही अपभ्रश है।

सबसे पहले भारत में भी पत्थर के जमाने के आदमी रहते थे। उनका रंग काला और बाल घुघराले थे। वे जगलो में रहते थे और शिकार करके अपना तथा अपने बाल-बच्चों का पेट पालते थे। कुछ हजार साल बाद यहा ऊची श्रेणी के मानव का विकास हुआ। वे लोग पत्थर के अच्छे-अच्छे औजार या हथियार बनाते थे। भेड बकरिया पालते और खेती-बाडी करते थे। वे अपने जमाने के कुछ अवशेष हमारे लिए छोड गए हैं—जैसे, पत्थर के औजार, मिट्टी के बर्तन, विशाल पत्थर के चक्र जिनमें वे अपने मुर्दे दबाते थे। उस जमाने की एक सोने की खान भी मिली है।

शायद आज से सात-आठ हजार वर्ष पूर्व बलोचिस्तान के रास्ते कुछ लोगो ने सिन्धु की घाटी में प्रवेश किया। उन्हें द्रविड या दस्यु कहते थे। उनमें से अधिकतर लोगो का रग काला और नाक चपटी थी। उन्होने भारत में रहनेवाले पहले लोगो को जगलो में मार भगाया और स्वय सिन्धु के मैदान में गाव और नगर बसा कर रहने लगे। उनके पास पशुओ के बडे-बडे झुण्ड थे। द्रविडो ने सर्वप्रथम भारत में चावल की खेती आरम्भ की। इस समय भी मद्रास और उसके आसपास के इलाको के रहनेवाले लोग द्रविड ही हैं। दक्षिण की तमिल, तेलगू, मलयालम तथा कन्नड भाषाएं द्रविड भाषाएं हैं।

मोहनजोदडो: एक सडक तथा इमारतो के खंडहर

द्रविडों ने सिन्धु की घाटी में बडे-बडे नगरों का निर्माण किया। इनमें से दो नगरो के खण्डहर पश्चिमी पाकिस्तान के हडप्पा तथा मोहनजोदडो नामक स्थानो पर भूमि को खोद कर निकाले गए हैं। अभी ऐसे कितने

ही नगर भूमि के नीचे दबे पड़े हैं। हाल ही में भारत में सतलुज के किनारे रोपड़ के स्थान पर खुदाई की गई है। वहां पर भी सिन्धु घाटी की सभ्यता जैसे अवशेष मिले हैं।

सिन्धु घाटी में लोग किस प्रकार रहते थे, उसका हाल हम आपको हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के खण्डहरों के आधार पर सुनाते हैं।

आज से पांच-छ हजार वर्ष पूर्व जब मिस्र के शक्तिशाली सम्राट बड़े-बड़े स्तूप या पिरामिड बना रहे थे, भारत के मोहनजोदड़ो नगर में बड़ी चहल-पहल थी। खुली सड़कें थीं, पक्की ईंटों के बने हुए कई छतों वाले बड़े-बड़े मकान थे। प्रत्येक घर में कुओं, गन्दी नालियों तथा स्नानगारों की व्यवस्था थी। कितने ही विशाल भवन बने हुए थे जिनके बड़े-बड़े स्तम्भ थे। ये भवन सम्भवत मन्दिर या महल थे।

इन नगरों की खुदाई से भारतीय इतिहास कई हजार वर्ष पीछे चला गया है। इन नगरों की सभ्यता अब तक ज्ञात दुनिया के किसी भाग की सभ्यता से कम पुरानी नहीं। हड़प्पा अमृतसर से १५० मील दूर रावी नदी के पुराने रास्ते पर स्थित है। मोहनजोदड़ो जिसका अर्थ है 'मुर्दों का टीला' सिन्ध के लारकाना प्रदेश में स्थित है। इस प्रदेश को आज भी 'सिन्ध का नखलिस्तान' अथवा उद्यान कहा जाता है।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो दोनों स्थानों पर खण्डहरों की कितनी ही तहें मिली हैं। ऐसा मालूम होता है कि ये शहर कई बार उजड़े और बसे।

हड़प्पा में सबसे रोचक अवशेष कब्रिस्तान और अन्न के एक विशाल भण्डार के मिले हैं। कब्रिस्तान से तत्कालीन लोगों के अगली दुनिया के बारे में विश्वासों की जानकारी मिलती है। अन्न भण्डार के दो बराबर-बराबर भाग हैं। इनमें छ बड़े-बड़े कमरे हैं। हर कमरे के साथ एक रास्ता है। इस भण्डार गृह में शायद जनता से कर के रूप में अन्न इकट्ठा करके जमा रखा जाता था। दुर्भिक्ष अथवा अन्य किसी मुसीबत के समय वह लोगों में बांटा जाता होगा। हड़प्पा में एक और रोचक चीज कर्मचारियों के निवास स्थान हैं। ये घर बड़े अच्छे ढंग से बने हुए हैं और मिस्र के पुरातन नगर तेल-अल-अमरना में खोदे गए घरों जैसे हैं।

मोहनजोदड़ो में जमीन की सात तहों तक खुदाई की गई है। एक के नीचे दूसरा तीन नगर खुदाई पर मिले हैं। इनमें सबसे निचला नगर अत्यधिक रोचक है।

मोहनजोदड़ो सुयोजित ढंग से बनाया गया नगर था। शहर की अधिकतर इमारतें पकाई हुई ईंटों की थीं। बाजार और गलियाँ खुले तथा सुयोजित थे। शहर के मध्य में स्तम्भों पर खड़ा एक विशाल सभा-मण्डप था। सम्भवत यहां सब नगरवासी इकट्ठे हुआ करते थे। घर हवादार थे। घरों के फर्श पक्के थे। स्नानागारों और गन्दे पानी की नालियों की उचित व्यवस्था थी। शहर में एक सार्वजनिक स्नानागार भी था जिसके साथ कई अन्य भवन संलग्न थे। नगर के मध्य में एक बहुत बड़ा तालाब भी मिला है। प्राचीन जमाने के अन्य तालाबों की तरह यह भी पक्की ईंटों का बना हुआ है। तालाब में उतरने के लिए चारों ओर सीढ़ियां बनी हुई हैं।

सिन्धु घाटी के इन निवासियों ने सभ्यता की दिशा में काफी उन्नति कर ली थी। वह खेती बाड़ी करना जानते थे। गेहूं, जौ, तथा कपास बोते थे। वे मांस और मछली खाते थे। भेड़, बकरियां, सूअर पालते थे। हाथी, ऊंट, भैंस इत्यादि जानवरों के अवशेष भी मिले हैं। मोहनजोदड़ो से जो मुहरें मिली हैं, उन पर रीछ, शेर और बन्दर के चित्र भी हैं। इस नगर में रहने वाले लोग सोना, चांदी, तांबा और सिक्का

इत्यादि धातुओं का प्रयोग जानते थे। लोग काफी समृद्ध प्रतीत होते हैं क्योंकि खुदाई के दौरान में सोने और चांदी के बहुत से आभूषण मिले हैं। कुछ आभूषण हाथी दांत के भी हैं और कुछ में भिन्न प्रकार के कीमती पत्थर लगे हुए हैं।

सिन्धु घाटी के निवासियों के मुख्य अस्त्र-शस्त्र तीर, कमान, खंजर, बर्छे और कुल्हाड़े इत्यादि थे। ऐसा लगता है कि वह तलवारें प्रयोग नहीं करते थे। कुम्हार मिट्टी के बहुत बढ़िया बर्तन बनाते थे। उनका हस्त-कौशल हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से प्राप्त विभिन्न प्रकार के खिलौनों से प्रगट है। जो खिलौने वहां मिले हैं उनमें गुड़ियां, छकड़े, सीटियां इत्यादि विशेष प्रकार से उल्लेखनीय हैं। वह ऊनी तथा सूती दोनों प्रकार के कपड़े प्रयोग करते थे। स्त्रियों और पुरुषों दोनों को आभूषण पहनना प्रिय था।

खुदाई के दौरान में बहुत सी मुहरें मिली हैं। ऐसा मालूम होता है कि यह मुहरें व्यापारियों के सामान को मुहरबन्द करने के काम आती थी। इनमें से कुछ वर्गाकार और कुछ गोल हैं। उनका आकार आध इंच से

मोहनजोदड़ो की मुहरें
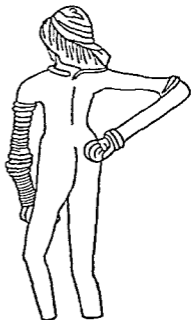
मोहनजोदड़ो की एक नर्तकी

लेकर ढाई इंच तक है। इन मुहरों पर एक अज्ञात लिपि में जो अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी कुछ लिखा हुआ है। यह मुहरें एशियामाईनर में मिली मुहरों से मिलती-जुलती हैं। इन मुहरों की खोज से यह सिद्ध हो जाता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता तथा मैसोपोटामिया की सुमेरियन सभ्यता में निकट सम्पर्क था। इन मुहरों की

भाषा अभी तक हमारे लिए एक पहेली है। विद्वान इस भाषा का रहस्य जानने का प्रयास कर रहे हैं। शायद कभी यह रहस्य खुल जाएगा और हम अपने इन पूर्वजो का इतिहास मुहरो की जबान से जान सकेंगे।

सिन्धु घाटी के निवासियो ने कला तथा सगतराशी में बडी उन्नति की थी। उनकी कला का सर्वोत्तम नमूना लाल पत्थर की मूर्ति का एक धड है जो मोहनजोदडो से प्राप्त हुआ है। हडप्पा से नग्न पुरुषो की दो प्रस्तर प्रतिमाए मिली हैं जिन्होने भारतीय कला के विकास पर एक नवीन प्रकाश डाला है।

इन खुदाइयो के आधार पर हम सिन्धु घाटी के लोगो के धार्मिक विचारो के बारे में भी कुछ परिणामो पर पहुच सके हैं। वे देवी माता की पूजा किया करते थे। देवी माता की मूर्ति शिव की मूर्ति से बहुत मिलती-जुलती है। ऐसे प्रमाण मिले है जिनसे मालूम होता है कि वे नागो, वृक्षो इत्यादि की पूजा भी करते थे। वे पुनर्जन्म और आवागमन में विश्वास रखते थे।

हडप्पा और मोहनजोदडो की खुदाइयो से यह प्रमाणित हो जाता है कि आर्यों के आगमन से पूर्व सिन्धु घाटी में एक ऊची सभ्यता का विकास हो चुका था। वह सभ्यता मैसोपटोमिया की सभ्यता से मिलती-जुलती थी। यह कहना कठिन है कि गगा के मैदानो में इस सभ्यता की किरणें फूटी थी या नही।

यहा हम एक अग्रेज विद्वान स्टार को उद्धृत करने का लोभ सवरण नही कर सकते। आपने लिखा है–'प्राचीन काल में इतना समय पहले कही भी कोई नागरिक सभ्यता इतनी समुन्नत न थी जितनी यह। प्राचीन काल में कोई स्थान ऐसा न था जहा लोग राजाओ, पुजारियो तथा युद्धो से इतने कम सताए गए हो। यह तथ्य इस बात से प्रमाणित हो जाता है कि हडप्पा और मोहनजोदडो में बहुत कम अस्त्र-शस्त्र और मन्दिर मिले हैं। पुरातन युग में शायद कही जीवन इतना सुरक्षित और सुचालित नही था जितना यहा।'

न जाने कैसे ये विशाल नगर दुनिया से लुप्त हो गए। शायद दरियाओ ने रुख बदल लिया और ये नगर बाढ के शिकार बन गए। शायद शत्रुओ ने उन्हें नष्ट कर दिया। कुछ भी हुआ हो, वे हजारो वर्षों तक लोगों की दृष्टि से छिपे रहे। आज हम भारतीयो को अपने इस गौरवमय अतीत पर गर्व है।

आपको यह सुनकर हैरानी होगी कि आज से ४० वर्ष पूर्व किसी को इस सभ्यता के बारे में तनिक भी जानकारी न थी। १९२१–२२ में कुछ पुरातत्व विशारदो ने मोहनजोदडो तथा हडप्पा नगर भूमि से खोदकर निकाले। इससे पहले भारतवर्ष का इतिहास आर्यों के आगमन से ही शुरू होता था। इस खोज के परिणाम स्वरूप हमारे देश का इतिहास एक हजार वर्ष पीछे चला गया।

अभ्यास के प्रश्न

(१) सिन्धु घाटी की सभ्यता किसे कहते हैं। यह किन लोगों की सभ्यता थी ?

(२) मोहनजोदडो और हडप्पा क्या हैं ? इतिहास में उनका क्या महत्व है ?

(३) सिन्धु घाटी में रहनेवाले लोगो की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशा पर प्रकाश डालो ?

(४) रिक्त स्थान भरो :—

(क) मोहनजोदडो............में स्थित है ? (ख) मोहनजोदडो में मिली मुहरो की भाषा.......।

(ग) सिन्धु घाटी की सभ्यता की खोज............में हुई थी।

: ६ :

यूनान

मिस्र और बैबीलोनिया के उदय और पतन की कहानी आपने पढ़ ली। अब हम आपको एक नन्हें से देश की गाथा सुनाएंगे जिसकी विश्व की सभ्यता तथा संस्कृति को महान् देन है। इस देश का नाम यूनान है। यहां ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों के मध्य छोटी-छोटी उपजाऊ घाटियां हैं जहां प्राचीन युग में कई जनतन्त्र फले फूले। यूनान से सलग्न ऐजियन समुद्र है जहां अनगिनत छोटे-छोटे द्वीप स्थित हैं।

यूनान के इतिहास के उदयकाल से पूर्व यहां किसी समय भूमध्य सागर के प्रदेशों में रहनेवाले लोग आकर बस गए। वे प्रगतिशील लोग थे। उन्होंने यूनान के पश्चिमी तट पर कई शहर आबाद किए। उनमें से एक शहर का नाम माइसेना था जो किसी समय समस्त भूमध्य प्रदेश में अग्रगण्य नगर बन गया था। यह प्रायः ईसा से १,४०० वर्ष पूर्व की बात है।

कालान्तर में अन्य देशों की भांति यूनान पर भी बर्बर कबीलों ने आक्रमण किए। उनमें से एक जाति का नाम ऐकियन था। इनका एक राजा आगामैमनन किसी समय माइसेना का सम्राट बन गया। उसे 'बादशाहों का बादशाह' कहा जाता था। यह सम्राट एक महान् योद्धा था। उसने यूनानियों की एक विशाल सेना के साथ एशियामाइनर के शक्तिशाली नगर ट्राय पर आक्रमण किया। एक लम्बी और भयंकर लड़ाई के उपरान्त यूनानियों की जीत हुई। ट्राय के वैभवशाली नगर को ध्वस्त कर दिया गया। कुछ समय पूर्व इस नगर के खण्डहर भूमि के नीचे से खोद कर निकाले गए थे। ये खण्डहर हमें ३,००० साल पूर्व की उस भयंकर लड़ाई की याद दिलाते हैं। यूनानियों को अपनी इस ट्राय-विजय पर बड़ा गर्व था। वास्तव में यह उनके इतिहास की प्रथम महत्वपूर्ण घटना थी। इस युद्ध की कहानी यूनान के प्राचीन अन्ध-कवि होमर ने कविता में लिपिबद्ध की है। कवि होमर की दो महान् रचनाएं हैं। एक का नाम 'इलियड' है और दूसरी का 'ओडेसी'। 'इलियड' में ट्राय युद्ध में यूनानियों की वीरता का रोचक वर्णन है। 'ओडेसी' में ट्राय विजय के बाद यूनानी वीरों के विभिन्न कारनामों की गाथा है। यूनानी इन दोनों काव्यों का वैसा ही आदर करते हैं जैसा हम महाभारत और रामायण का।

महाकवि होमर

इन सुन्दर काव्यों में अतिशयोक्ति सहित कुछ ऐतिहासिक तथ्यों का वर्णन किया गया है। कुछ यूनानी वीरों की अपूर्व वीरता और चतुराई का चित्रण है। एक कहानी के अनुसार यूनानी वीरों ने ट्राय नगर को १० वर्ष तक घेरे रखा। एक स्थिति ऐसी

आई जब घेरा उठा लेने के अतिरिक्त कोई चारा ही दिखाई न देता था। परन्तु आखिर में उन्हें एक चाल सूझी। यूनानियो ने एक बहुत विशाल घोडा बनाया जो इतिहास में 'ट्राय का लकड़ी का घोडा' कहलाता है। इस विशाल घोडे को अन्दर से खोखला करके उसमें सशस्त्र सिपाही भर दिए गए। घोडे को तट पर छोडकर यूनानी स्वयं अपने जहाजो में सवार हो कर समुद्र की ओर चल दिए। उन्होने ऐसा दिखावा किया जैसे वे यूनान लौट रहे हो। ट्राय के वीर खुशी-खुशी नगर के बाहर आए और उस घोडे को विजय का एक उपहार समझ कर नगर की दीवारो के अन्दर ले गए। रात को एक महान् विजयोत्सव हुआ। जब सब लोग खा-पीकर सो गए तो एकाएक घोडे के खोखले पेट में से छिने हुए यूनानी वीर निकले। उन्होने नगर को आग लगा दी और यूनानी सेना के लिए शहर के द्वार खोल दिए। यूनानी सेना भी इसी ताक में बैठी थी। रात के अन्धेरे में ट्राय पर यूनान का कब्जा हो गया। यूनानियो ने उसकी ईंट से ईंट बजा दी।

परन्तु शीघ्र ही यूनान को बुरे दिन देखने पडे। ऐचियन लोगो से भी अधिक खूंखार कबीलों ने यूनान पर आक्रमण किए। इनमें प्रमुख एक डोरियन जाति थी। इनके अस्त्र-शस्त्र लोहे के थे। वे भारी सख्या में समय-समय पर यूनान पर आक्रमण करते रहे। धीरे-धीरे उन्होने प्राय सारे यूनान पर कब्जा कर लिया। शहरों को घ्वस्त कर दिया और लोगों को गुलाम बना लिया। नए आक्रान्ताओं से केवल एक नगर बचा जिसका नाम ऐटिका था। बाद में इस नगर का नाम ही एथेन्स पडा।

यूनानियो के नगर राज्य

धीरे-धीरे यूनानियो ने एक नई शासन-व्यवस्था स्थापित की। उन्होने अपने प्रमुख नगरों में कुछ नगर राज्य स्थापित कर लिए। उस समय के मुख्य नगर राज्यो के नाम ये हैं—आरगोस, स्पार्टा, कोरिन्थ,

स्पार्टा के सैनिक

थेब्ज तथा एथेन्स। इन नगरो को यूनान की पहाडिया एक दूसरे से अलग करती थी। प्रत्येक नगर की अपनी

स्वाधीनता पर गर्व था। ऐसे नगर राज्य में पैदा होने वाला हर व्यक्ति, गुलामो को छोड़कर, वहां का नागरिक होता था। जो आदमी वहा पैदा न हुआ हो, वह विदेशी समझा जाता था। विभिन्न नगरो के लोगो में विवाह का निषेध था। एथेन्स के अतिरिक्त किसी भी नगर की जनसख्या कभी ५०,००० से अधिक नही थी। इनमें भी स्वतन्त्र नागरिक बहुत थोड़े होते थे। अधिकतर जनसख्या गुलामो की अथवा स्त्रियो और बच्चो की ही होती थी। इन नगरो के नागरिक बडा सीधा-सादा जीवन व्यतीत करते थे। स्वतन्त्र नागरिको के अधिकतर काम तो गुलाम ही कर दिया करते थे। उन्हें प्राय कोई काम-धन्धा नही था। वे खेल-कूद तथा व्यायाम में विशेष रुचि लेते थे।

आज हम विभिन्न देशों में जिस प्रकार का लोकतन्त्रात्मक शासन देखते हैं, वह यूनानियो की ही देन है। आज की निर्वाचित पार्लियामेण्टो की नीव सर्वप्रथम यूनानियो ने ही रखी थी। व्यापार के लिए यूनानियों ने सोने और चादी के सिक्के बनाए। उन पर अपने-अपने नगर की मोहर लगाई। यूनानी पहले लोग थे जिन्होंने यूरोप से लेकर भारत तक सबसे पहले सिक्को का प्रचलन किया।

इन नगर राज्यो के लोगो ने यूनान के बाहर भी कुछ बस्तिया बसाईं। कुछ बस्तियो के नाम ये हैं—बाइजेंटियम जो बाद में कास्टेन्टीनोपल के नाम से प्रसिद्ध हुई, इटली में नेपल्स, सिसली में सायराक्यूज और फ्रास में मार्सेल्ज।

ईरानियो का हमला

यूनान के इतिहास में एक महान घटना ईरान का आक्रमण था। ईरानी सम्राट डेरियस महान् किसी कारण यूनानी नगर राज्यो से रुष्ट हो गया। वह उस समय प्राचीन दुनिया के एक बहुत बडे हिस्से का स्वामी था। उसने मिस्र, बैबीलोनिया और एशिया माइनर को जीता था। डेरियस ने अपना एक दूत एथेन्स में यह कहलाकर भेजा कि वे उसकी अधीनता स्वीकार कर लें। अधीनता के प्रतीकात्मक रूप में वे कुछ मिट्टी और पानी उसे भिजवाए। एथेन्स के लोगों ने उसकी चुनौती स्वीकार कर ली और डेरियस के दूतो को कुए में धकेल दिया जहा उन्हें पानी और मिट्टी दोनो भरपूर मिल सकते थे। डेरियस के गुस्से का ठिकाना न रहा। ईसा से ४९२ वर्ष पूर्व उसने एक बहुत बडे बेडे में एक विशाल सेना यूनान भेजी। वह सेना एथेन्स से २६ मील दूर मेराथन के स्थान पर उतरी। एथेन्स का एक खिलाडी फिड्डीपाइडस एथेन्स से स्पार्टा तक सौ मील भागता हुआ मदद के लिए गया। नदियों और पहाडो को फादता हुआ वह चार दिन में वहा पहुचा। परन्तु वहा से उसे मदद न मिली। एथेन्स में केवल १०,०००नवयुवक थे। ईरान की सेना की सख्या एक लाख से भी अधिक थी। एथेन्स के लोग बडी वीरता से लडे और उन्होने ईरानियो को मार भगाया। उनके जहाजो को जलाकर राख कर दिया। फिड्डीपाइडस एक बार फिर मेराथन से एथेन्स भागता हुआ गया। उसने इन २६ मीलो का रास्ता चद घटो में तय किया। हाफता हुआ जब वह एथेन्स पहुचा तो नगरवासियो को विजय का शुभ सवाद सुनाने के तुरन्त बाद ही उसके प्राण निकल गए। तब से इस महान् खिलाडी की याद में विश्व की ओलम्पिक खेलो में एक लम्बी दौड होती है जिसे मेराथन दौड़ कहते हैं। आप में से अधिकाश ने इस दौड का नाम सुना होगा।

ईरानी भाग गए, परन्तु उन्होने अपनी हार को भुलाया नहीं। १२ साल बाद डेरियस का उत्तरा-

धिकारी ऐक्सरसिज स्वयं एक विशाल सेना लेकर यूनान पहुंचा। तत्कालीन यूनानी इतिहासकार हैरोडोट्स के अनुसार ईरान का सम्राट २० लाख सिपाहियों को लेकर आया था। इस बार एथेन्स की सहायता के लिए स्पार्टा के सैनिक भी आए। यूनानी अपूर्व वीरता के साथ लड़े, परन्तु ईरान की अनगिनत सेना के सामने वे ठहर न सके। ईरानियों ने यूनान के प्रायः सभी नगरों को जला दिया। एथेन्स को भी ध्वस्त कर दिया गया। परन्तु एथेन्स के वीरों ने अपना साहस नहीं छोड़ा। उन्होंने समुद्री लड़ाई में ईरानियों को बुरी तरह परास्त किया। ईरान का सम्राट समुद्र में भी अपनी विजय के बारे में इतना निश्चिन्त था कि वह एक ऊंची चट्टान पर लड़ाई का तमाशा देखने के लिये बैठ गया। परन्तु विजय के स्थान पर अपने बेड़े को तबाह होते देख कर उसके मन की जो दशा हुई होगी, उसका वर्णन एक प्रसिद्ध कवि ने इन शब्दों में किया है —

पत्थर की एक चट्टान पर बैठा एक सम्राट्
समुद्र में अपने विशाल पोतों को देख रहा था।
उसकी आंखों के सामने उसके सहस्रों जहाज खड़े थे।
इन जहाजों में दुनिया के प्रायः सभी जातियों के लोग थे।
ये सब सिपाही उसके अपने थे और उसके लिए जान देने को तैयार थे।
दिन चढ़ा तो उसने उन्हें गिना। यह सच था।
परन्तु सूरज डूबते ही उनका नामोनिशान भी नहीं था।

कहते हैं कि किसी भी लड़ाई में कभी एक दिन में इतने लोग नहीं मरे जितने यहाँ। ईरानियों को एक कड़वा सबक मिला। उन्होंने पुनः कभी यूनान की धरती पर कदम नहीं रखा।

एथेन्स का वैभव

ईरानियों पर इतनी बड़ी विजय प्राप्त करने के बाद एथेन्स सब यूनानी नगर राज्यों का नेता बन गया। एथेन्स ने सभी क्षेत्रों में भारी उन्नति की। ध्वस्त नगर के स्थान पर महान् नीतिज्ञ पैरिक्लज ने एक नए एथेन्स का निर्माण किया। शहर तथा बन्दरगाह की रक्षा के लिए दृढ़ दीवारें बना दी गईं। एथेन्स और बन्दरगाह के मध्य की सड़कों की रक्षा के लिए चार मील लम्बी और ६० फीट ऊंची दीवारें खड़ी की गईं। नगर में बड़े-बड़े भवनों का निर्माण किया गया, मन्दिर बनाए गए और एक सार्वजनिक पुस्तकालय बना। एक विशाल नाटक मण्डप बना। यहां नगरवासियों के मनोरंजन का प्रबन्ध होता था। शहर की सबसे सुन्दर इमारत का नाम पारथिनन था। यह एक मन्दिर था जिसके खण्डहर आज भी मौजूद हैं। उस युग के बड़े-बड़े कलाकारों ने इस मन्दिर के लिए मूर्तियां बनाईं और दीवारों पर संगतराशी की। ईरान ने योरोप को एक नए ढंग की निर्माण कला दी। परन्तु पैरिकलज जिसने नए एथेन्स का निर्माण किया था, लोगों की ईर्ष्या का शिकार हो गया। ईसा पूर्व ४२८ में उसका बड़ी निर्धनता की हालत में देहान्त हुआ।

यूनान के विचारक

एथेन्स की प्रसिद्धि इन विशाल इमारतों से ही नहीं थी। इसकी प्रसिद्धि का मुख्य कारण यह था कि उस जमाने में इस नगर में महान् विचारक तथा लेखक रहते थे। महात्मा सुकरात का नाम तो आपने सुना ही

होगा। नगे पाव ये महात्मा लोगों को उपदेश देते रहते थे। वे प्रत्येक व्यक्ति से प्रश्न करते, तर्क करते और उसे सदाचार का मार्ग दिखाते। परन्तु उन पर अभियोग लगाया गया कि वे एथेन्स के युवकों को पथभ्रष्ट कर रहे है। उन्हें अपने देवी-देवताओं के प्रति अश्रद्धा सिखा रहे हैं। महात्मा सुकरात को विषपान द्वारा मौत की सजा दी गई। कहते हैं कि सुकरात ने विष का प्याला मुस्कराते हुए पी लिया।

ईसा पूर्व ३९९ में महात्मा सुकरात के देहान्त के उपरान्त उनके एक शिष्य प्लेटो ने एथेन्स के एक उद्यान में अपना एक विद्यालय खोला जिसे अकादमी कहते थे। प्लेटो ने ५० वर्ष तक लोगों को शुद्धोपदेश दिया। उन्होंने एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी जिसका नाम है 'दि रिपब्लिक' (लोक राज्य)। लोग दूर-दूर से उनकी अकादमी में शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे। इनमें से एक शिष्य का नाम अरस्तू था जो बाद में संसार के एक विख्यात विचारक के रूप में प्रसिद्ध हुए। अरस्तू सिकन्दर महान के गुरु थे। इन्हीं की संगति के कारण सिकन्दर को कला, संगीत तथा काव्य के प्रति मोह हुआ।

उसी युग में एथेन्स में कुछ महान् कवि, लेखक तथा नाट्यकार हुए। हिप्पोक्रेटीज नाम का एक महान् डाक्टर हुआ। वह पहला चिकित्सक था जिसने जादू-टोनो को छोड़कर वैज्ञानिक ढंग से चिकित्सा आरम्भ की।

सिकन्दर महान्

यद्यपि यूनान के नगर राज्यों ने काफी उन्नति की थी, परन्तु वे बहुधा आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे। इन झगड़ों का लाभ मैकडोनिया के सम्राट फिलिप ने उठाया। मैकडोनिया बाल्कन के उत्तर में एक छोटा-सा देश था। उसने यूनानियों के नगर राज्यों को जीत कर अपने राज्य में शामिल कर लिया। यूनानी योद्धाओं की मदद से फिलिप ने ईरान विजय की एक योजना बनाई। यूनानी इसके लिये पहले से ही तैयार थे क्योंकि वे ईरान से एथेन्स के ध्वंस का बदला लेना चाहते थे।

जब फिलिप ईरान विजय के लिए चलने वाला था तो किसी राजद्रोही ने उसे मार डाला। अब ईरान को हराने का दायित्व उसके २० वर्षीय युवा पुत्र सिकन्दर महान् के कन्धों पर पड़ा।

१२ साल से भी कम समय में सिकन्दर ने ईरान को हराया। मिस्र को जीता बेबीलोन को परास्त किया और भारत में व्यास नदी तक जा पहुंचा। सिकन्दर इससे भी आगे बढ़ना चाहता था। वह वहां तक पहुंचना चाहता था जहां से सूरज निकलता है! परन्तु उसके सरदारों ने उसका साथ नहीं दिया। उन्हें अपने घरों से अलग हुए इतना समय हो चुका था। निदान सिकन्दर को लौटना पड़ा। पूर्व में सिकन्दर के आक्रमण का एक बड़ा लाभ हुआ। यूनान का ज्ञान, कला तथा संस्कृति पूर्व के देशों में भी फैलने लगी। सिकन्दर संकुचित हृदय नहीं था। उसने पूर्व के देशों की भी बहुत-सी अच्छी-अच्छी बातें ले लीं। उसने ईरान की एक राजकुमारी से विवाह किया।

ईसा से ३२३ साल पूर्व ३२ वर्ष की आयु में सिकन्दर महान् का देहान्त हो गया। सिकन्दर के मरते ही उसका साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। परन्तु सिकन्दर के आक्रमण से विभिन्न देशों में ज्ञान की जो ज्योति जली थी वह बुझी नहीं। महात्मा अरस्तू के इस महान् शिष्य ने विजित देशों में नगरों का पुनर्निर्माण किया। उसने यूनानी प्रचारकों तथा शिक्षकों को वहां बस जाने की सलाह दी। मिस्र में सिकन्दर ने अपने नाम से एक शहर बसाया जिसे आज भी सिकन्दरिया कहते हैं। सिकन्दरिया में उसने एक चिकित्सा का स्कूल खोला,

एक विद्यालय तथा एक विश्वविद्यालय भी आरम्भ किया। यहा दूर-दूर से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे। सिकन्दरिया में ही यूनानी विद्वान इयूक्लिड ने सर्वप्रथम रेखागणित की शिक्षा की नीव रखी।

सिकन्दर की विजय-यात्रा

वही आरचिमिडिस ने भौतिक विज्ञान की शिक्षा आरम्भ की। उसने ही सर्वप्रथम एक जहाज को उठाने के लिए क्रेन का आविष्कार किया। ग्रीक शिक्षक रोम में भी शिक्षा के प्रचार के लिए भेजे गए।

ओलम्पिक खेलों का नाम तो आपने सुना ही होगा। यह विश्व को यूनान की ही देन है। पुराने-जमाने में ओलम्पिक खेलें पश्चिमी यूनान में हर चार साल के बाद ओलम्पिया के मैदान में हुआ करती थी। ये खेलें कई हजार साल पहले शुरु हुई थीं। परन्तु ईसा पूर्व ७७६ में पहली बार उनका विवरण लिखा गया। आजकल दुनिया के सब देशों के खिलाडी एक स्थान पर इकट्ठे होकर ओलम्पिक खेलो में भाग लेते हैं। उस समय वे सभी अपने पारस्परिक विरोध भूल जाते हैं। आजकल विश्व ओलम्पिक खेलें हर चार वर्ष बाद होती हैं। अगली खेलें सन् १९६० में होंगी।

अभ्यास के प्रश्न

(१) प्राचीन यूनान की कहानी संक्षेप से लिखो ?

(२) प्राचीन यूनान के लोकतन्त्रों तथा आज के लोकतन्त्रों में क्या अन्तर है ?

(३) सिकन्दर महान् कौन था ? उसकी विजय यात्रा का दुनिया पर क्या प्रभाव पड़ा ?

(४) आधुनिक दुनिया किन किन बातों में यूनान की ऋणी है ?

(५) प्राचीन यूनान ने साहित्य, कला, विज्ञान, के क्षेत्र में क्या सफलताएं प्राप्त कीं।

: ७ :

रोम

कहते हैं, प्रकृति ने इटली को सौन्दर्य प्रदान किया तो रोम ने शक्ति। इटली का छोटा-सा प्रायद्वीप भूमध्यसागर के मध्य में एक जूते की तरह फंसा हुआ है। पहाड़ों, झीलों, नदियों व उपजाऊ घाटियों के इस देश में दुनिया की एक जबरदस्त संस्कृति ने जन्म लिया। इसे रोमन संस्कृति कहते हैं। इस संस्कृति ने आधुनिक योरोपियन संस्कृति का निर्माण किया।

बहुत पुराने जमाने में इटली में भी अन्य देशों की भांति पत्थर के जमाने के लोग रहते थे। परन्तु आज से प्राय तीन हजार वर्ष पूर्व कुछ हिन्द-आर्यन जातियों ने इटली पर आक्रमण किए। इनमें से एक का नाम इटैलिक जाति था जिससे इटली को अपना नाम मिला। लैटिन नामक एक और जाति किसी समय इटली आई। उन्होंने टाईबर नदी के मुहाने से ६ मील की दूरी पर ई० पू० ७५३ में महान् रोम नगर की नींव रखी। एक रोमन किंवदन्ती के अनुसार रोम को रोमुलस ने आबाद किया। वह रोम का वीर राजा था। चिरकाल तक राज करने के उपरान्त युद्ध का देवता मारस उसे स्वर्ग ले गया। देवताओं ने रोम को दुनिया पर राज्य करने का वरदान दिया। समय आया जब रोम पर इतरसकन जाति के राजाओं का राज्य हुआ। इस जाति के कुछ अच्छे राजा हुए। उनमें से एक ने रोम में जुपिटर देवता—रोमनों के सर्वश्रेष्ठ देवता—का मन्दिर बनवाया। एक और राजा ने रोम के चारों ओर दीवार खड़ी की। पर तारक्विन नाम का एक राजा बड़ा घमण्डी तथा जालिम था। ई० पू० ५०९ में रोम ने इस राजा के विरुद्ध विद्रोह करके उसे भगा दिया। रोमनों ने अब राजा न रखने का निश्चय किया। निर्वासित राजा ने कुछ पड़ोसी राज्यों की मदद से पुन रोम पर कब्जा करने की कोशिश की परन्तु रोमनों ने अपने एक वीर योद्धा होरेशियस के नेतृत्व में आक्रान्ताओं को मार भगाया। एक बार फिर ३९० ई० पू० रोम पर हमला हुआ। इस बार उत्तर की पहाड़ियों से गाल जाति के लोग आए। रोम को ध्वस्त कर दिया गया। परन्तु शत्रु राजधानी की उस पहाड़ी को जिस पर जुपिटर देवता और जूनो देवी का मन्दिर था, जीत न सके। वे गाल सात महीने तक घेरा डाल कर पड़े रहे। अन्त में रोमन योद्धा कामिलस ने गालों को खदेड़ दिया। इस युद्ध के बाद रोम को आस-पास के शत्रुओं से कई और युद्ध करने पड़े। परन्तु प्राय ३०० वर्ष ई० पू० तक रोम का दबदबा समूचे इटली में बैठ गया था। अब रोम का उदय काल आरम्भ होता है।

आधुनिक लोकतन्त्र का जन्म

बाहरी संघर्ष के इस काल में रोम में आन्तरिक संघर्ष भी जारी था। रोम के नागरिकों की दो श्रेणियां थीं। अमीर (पैट्रीशियन) और गरीब (प्लेबियन)। गरीब शहरी सेनेट (संसद) के सदस्य नहीं बन सकते थे और न ही कौंसल। कौंसिल राज्य के प्रशासक होते थे। अतः गरीब रोमन दुखी थे। उन्होंने

संघर्ष किया। संघर्ष के परिणामस्वरूप उन्हें सेनेट के सदस्य बनने तथा अन्य उच्च पद प्राप्त करने के अधिकार मिले। इससे पूर्व न्यायाधीश की इच्छा ही देश का कानून थी। देश में कोई लिखित कानून न थे। गरीब लोगो के आंदोलन के कारण जनता के न्यायालय स्थापित हुए जो इस बात का ध्यान रखते थे कि पॅलिबियन लोगों से कोई अन्याय होने न पाए। यही नही, पहली बार कानूनो को लिपिबद्ध करके रोम में कई स्थानों पर लटका दिया गया। इस प्रकार न्यायाधीशो की मनमानी रुक गई और एक आधुनिक ढग के लोकतन्त्र की नीव रखी गई।

कार्थेज से संघर्ष

उस जमाने में अफ्रीका के उत्तरी तट पर एक बहुत पुराना तथा समृद्ध नगर था। उसका नाम कार्थेज था। कार्थेजियन लोगों की बस्तियां अफ्रीका के तट तथा स्पेन तक फैली हुई थी। कार्सीका और सिसली के द्वीप उनके अधीन थे। वे सोने-चादी तथा हाथीदांत का व्यापार करते थे। जब तक रोमन इटली में ही लड़ते रहे, उनका कार्थेज से कोई झगडा नही हुआ। परन्तु इटली में निश्चिन्तता प्राप्त करने के बाद रोम ने भी व्यापार के प्रसार की चेष्टा की। विपरीत हितो के कारण दोनो में युद्ध छिड गया। यह युद्ध लगभग १०० वर्ष तक जारी रहा। कार्थेज का एक वीर सेनापति हैनीबाल फ्रास के रास्ते पहाडो को चीर कर इटली पहुचा। रोमनो को इस बात की तनिक भी आशा न थी कि इस मार्ग से भी उन पर आक्रमण हो सकता है। वह इटली में कई वर्ष रहा और उसने बार-बार रोमनो को हराया। परन्तु वह रोम पर कब्जा नही कर सका। रोम के एक सेनापति फेबियस ने उसे बडा परेशान किया। वह खुल कर हैनीबाल से नही लडता था। परन्तु उसकी सेनाओ पर इक्के-दुक्के हमले करता रहता था। आखिर हैनीबाल की सेना काफी नुकसान के बाद इटली से लौट गई। तदोपरान्त रोमन सेना ने कार्थेज पर भी हमला कर दिया। हैनीबाल को कार्थेज से भागना पडा और अन्त में वह विष खाकर मर गया। रोम ने कार्थेज को ही नही जीता। कालान्तर में स्पेन, यूनान और भूमध्यसागर के अन्य प्रदेशो को भी अपने अधीन कर लिया। परन्तु रोमनो को सदा यह डर लगा रहता था कि कही कार्थेजी पुन न उठ खडे हो। आखिर ई० पू० १४६ में रोमनो ने कार्थेज को तबाह करके वहा की भूमि पर हल चला दिया। इस प्रकार एक महान् नगर दुनिया के नक्शे से मिट गया। लाखो कार्थजी कत्ल कर दिए गए और हजारो को गुलाम बना कर बेच डाला गया

रोमन सैनिक

राजनीतिक सफलताओ के साथ-साथ रोमनो ने अन्य क्षेत्रों में भी सफलता प्राप्त की। रोमनों ने इटली में बड़ी मजबूत सड़कें बनवाईं। इटली में ही नहीं अपने सभी अधीन देशो में सड़कों का जाल बिछा दिया। २००० वर्ष पश्चात् भी आज इन सडको के कुछ भाग कहीं-कही दिखाई पड़ते हैं। रोम में विशाल भवन बने। रोमनो ने यूनानी ज्ञान तथा कला को अपना लिया। रोमन कवियो तथा नाट्यकारों ने यूनानियों की भांति कविता तथा नाटक रचे।

जूलियस सीजर

उसी जमाने में रोम में एक महान् सेनापति का जन्म हुआ। उसका नाम जूलियस सीजर था। सीजर ने अपने जीवन काल में रोमन साम्राज्य का बड़ा विस्तार किया। उसने ९ वर्ष गाल (फ्रास) में लड़ते हुए बिताए। स्पेन से लेकर जर्मनी में राईन नदी तक के इलाके में जूलियस सीजर ने सब जातियो को हराकर एकछत्र रोमन साम्राज्य कायम किया। फ्रास से वह समुद्र पार करके इगलैण्ड भी गया। वहा दो बार उसने स्थानीय लोगो को हराया। परन्तु उसे एकाएक वापिस फ्रास लौटना पडा। सीजर अब रोमनो का लोकप्रिय नेता था। परन्तु उसका एक प्रतिद्वन्द्वी भी था। उसका नाम पौम्पे था। सीजर ने पौम्पे को हरा दिया और स्वय रोमन साम्राज्य का सर्वेसर्वा बन गया। वह स्वय राजा नही बना क्योंकि रोम के लोग राजाओं से घृणा करते थे। परन्तु कुछ रोमन नेताओं को शक था कि जूलियस सीजर राजा बन जाएगा। अतः एक षडयन्त्र द्वारा ई० पू० ४४ के १५ मार्च को संसार के इस महान् विजेता की हत्या कर दी गई। यदि इस षडयन्त्र की कहानी आप पढना चाहें तो शेक्सपीयर का अमर नाटक 'जूलियस सीजर' पढिए।

सीजर एक कुशल शासक था। उसने रोमनो को अच्छे-अच्छे कानून दिए। उसने नई बस्तियां बसाईं। इटली की दलदलो को दुरुस्त करवाया। किसानों तथा गरीब लोगो की मदद की। अपने सैनिकों से उदारता का व्यवहार किया। रोमनों के लिए एक नया कैलेण्डर बनाया। उसमें एक महीने का नाम जूलियस रखा जो अब जुलाई कहलाता है। इस महीने वह स्वयं पैदा हुआ था। वह एक लेखक भी था। उसने उन जमाने की लड़ाइयों का इतिहास लिखा है।

सीजर की मौत के बाद रोमनों में आपसी सघर्ष शुरू हुए। सीजर के भतीजे ओक्टेवियन तथा उसके मित्र मार्क एन्टोनी ने हत्यारो से बदला ले लिया। बाद में ओक्टेवियन और मार्क एन्टोनी में झगड़ा हो गया। मार्क एन्टोनी ने मिस्र की रानी क्लियोपेट्रा से विवाह कर लिया था। ओक्टेवियन ने इसे नापसन्द किया। एन्टोनी की हार हुई और मिस्र ई० पू० ३० वर्ष रोमन साम्राज्य का एक अग बन गया। ओक्टेवियन सम्राट आगस्टस के नाम से पहला रोमन सम्राट बना। वह अब एक विशाल साम्राज्य का मालिक था जिसमें फ्रास, भूमध्यसागर के सब प्रदेश, मिस्र तथा पश्चिमी एशिया के प्रदेश भी शामिल थे।

सम्राट आगस्टस के बाद लगभग पाच शताब्दियों तक रोम में एक के बाद दूसरे सम्राट ने राज्य किया। यह कहना तो कठिन है कि सारे ही रोमन सम्राट शक्तिशाली तथा कुशल शासक थे। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इन ५०० वर्षों में रोमन साम्राज्य में शासन-व्यवस्था दुनिया के अन्य भागो के मुकाबले में अच्छी रही। जहां भी रोमनों का शासन था, वहां शांति और व्यवस्था थी। सारे साम्राज्य में प्रायः एक जैसे कानून लागू थे। ईसा के पश्चात् छठी शताब्दी में पूर्वी रोमन साम्राज्य के सम्राट् जस्टीनियन ने इन कानूनों की एक पुस्तक

बना दी। आज भी योरोपियन देशो के अधिकतर कानून रोमन न्याय विधान के आधार पर ही बने हुए हैं।

जिन देशो में रोमनो का शासन था, वहा उन्होंने लोगो को सभ्य बनाने की चेष्टा की। प्रत्येक प्रदेश में एक गवर्नर नियत किया जाता था जिसका कार्य उस प्रदेश में कानून और व्यवस्था बनाए रखना था। जो कर लगाए जाते थे, उससे शासन का खर्च चलता था और शेष राशि रोम के सम्राट को भेज दी जाती थी। इसके बदले में नागरिको को रोमन साम्राज्य का सरक्षण प्राप्त था। ईसवी सन् २१२ में रोमन साम्राज्य में रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को रोमन नागरिकता प्रदान कर दी गई।
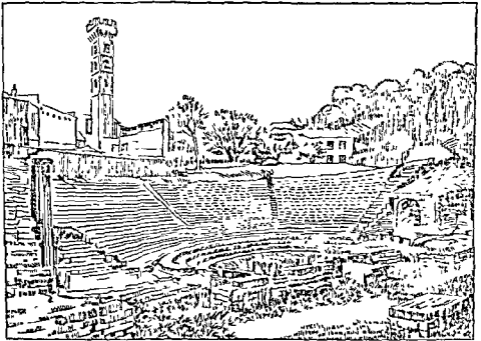
दो सहस्र वर्ष पुराना एक रोमन सभामडप। इसमें पचास हज़ार नागरिक बैठ सकते थे।

साम्राज्य भर में बडे-बडे सुयोजित नगर स्थापित हुए। विशाल भवनो, नाटक मण्डपो, स्नानागृहो तथा मण्डियो का निर्माण हुआ। साम्राज्य के सब भागो में रोमन भाषा तथा रोमन वेश-भूषा का प्रचार हुआ। एक नगर को दूसरे नगर से सडको द्वारा मिला दिया गया। इस प्रकार ससार के विभिन्न भागो में सभ्यता तथा ज्ञान का आदान-प्रदान हुआ।

ईसाई धर्म का उदय

प्राचीन रोमन विभिन्न देवी-देवताओं का पूजन करते थे। जुपिटर उनका मुख्य देवता था। वह रोम का रक्षक समझा जाता था। मिनरवा बुद्धि की देवी थी और मारस युद्ध का देवता था। प्राय: दो हजार वर्ष पूर्व रोमन साम्राज्य के प्रान्त फिलस्तीन में एक महापुरुष का जन्म हुआ जिन्हें दुनिया ईसा मसीह कहती है। ईसा एक यहूदी घराने में पैदा हुए थे। उन्होंने ईसाई धर्म की नींव रखी। उन्होंने अपने आपको ईश्वर का पैगम्बर घोषित किया। लोगों को एक ईश्वरवाद, भ्रातृभाव, क्षमा, स्नेह और अहिंसा का सन्देश दिया। उन्होंने कहा कि ईश्वर की दृष्टि में कोई छोटा या बड़ा नहीं। उस युग के कट्टर पंथियों को उनकी इस शिक्षा में अपने अस्तित्व को खतरा दिखाई दिया। अन्त में वहां के रोमन गवर्नर पोन्टीयस पाइलेट ने उन्हें फांसी की सजा दी। ईसा के बलिदान ने ईसाई धर्म में को बड़ा बल दिया। जब ईसा सूली पर लटके थे तो कुछ लोग उनका मजाक उड़ाने की चेष्टा करने लगे। ईसा ने केवल यह कहा—"दयामय प्रभु, इन्हें क्षमा करो। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।" मृत्यु के समय उनकी आयु केवल ३० वर्ष की थी। ईसामसीह पीड़ित जनता के लिए सहानुभूति तथा स्नेह का सन्देश लेकर आए थे। गरीब लोगों ने ईसा के धर्म का स्वागत किया और धीरे-धीरे ईसाई धर्म सारे रोमन साम्राज्य में फैलने लगा। रोम के शासकों को इस धर्म के प्रसार में राजनीतिक खतरा दिखाई दिया। इसलिए उन्होंने ईसाइयों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई की। उन्हें हर तरह से यातनायें दी गईं। परिणामस्वरूप ईसाई अपने घरबार छोड़ कर रोमन साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में फैल गए। इससे ईसाई धर्म रुकने के स्थान पर और भी फैलने लगे। ईसाई जहां भी जाते, जनता को ईसा का सन्देश सुना कर अपने धर्म में शामिल कर लेते थे। चौथी शताब्दी ईसवी के आरम्भ में ईसाई धर्म के अच्छे दिन आए। ३१३ ईसवी में रोमन सम्राट् कान्सटेन्टाइन ने ईसाई होने की घोषणा कर दी। इस प्रकार ईसाई धर्म के प्रसार के सब रास्ते खुल गए।

मिनरवा

ईसा मसीह

कला और सभ्यता

रोमन साम्राज्य के उदयकाल में ललित कलाओं ने काफी उन्नति की। रोमनों में एक विशेषता थी। उन्होंने जिन देशों को जीता, वहां की सभ्यताओं को तबाह नहीं किया। विजित देशों में यूनान और मिस्र बड़े प्रगतिशील देश भी थे। उनकी उन्नत सभ्यता से जो कुछ भी लिया जा सकता था, रोमनों ने उसे लेकर सारे

योरोप में फैला दिया। रोमनो ने यूनानी अध्यापको को शिक्षण कार्य पर लगाया। इसमें सन्देह नही कि आधुनिक योरोप की जातियो को सभ्य बनाने में रोम का बडा हाथ था।

सम्राट आगस्टस के पचास वर्षीय राज्यकाल में साहित्य को बडा प्रोत्साहन मिला। इस काल को लैटिन भाषा का स्वर्ण युग भी कहते हैं। गद्य तथा पद्य दोनो की ही उन्नति हुई। कुछ मुख्य साहित्यकारो के नाम ये है—इतिहासकार लिवी, तथा कवि वर्जिल और होरेस।

भवन निर्माण कला में भी रोमनो ने यूनानियों से बहुत कुछ सीख कर सारे योरोप में फैला दिया। बडे-बडे महल, सभा मण्डप, मन्दिर तथा अन्य स्मारक बने। आज भी इन भवनो के खण्डहर रोमन भवन निर्माण कला के उत्कर्ष की कहानी सुनाते है। मरने से पूर्व सम्राट आगस्टस ने स्वय कहा था, "मैंने ईंटो और पत्थरो का रोम पाया था परन्तु इसे सगमरमर का बना कर छोड रहा हू।" रोम में ईसवी सन् ४० में निर्मित एक विशाल सभा मण्डप के भग्नावशेष आज भी मिलते हैं। इस मण्डप में पचास हजार से अधिक नागरिक एक समय खेल-तमाशे देख सकते थे। सभा मण्डप में भारी भीड के सम्मुख अपराधियों, गुलामो इत्यादि को जगली जानवरो के सामने डाल दिया जाता था। जब जगली जानवर आदमी के टुकडे-टुकडे करते थे तो रोमन नागरिक अत्यन्त प्रसन्न होते थे!

रोमन साम्राज्य का पतन

स्पष्ट है कि इतना बडा साम्राज्य बहुत देर तक एक लडी में बाँधकर नही रखा जा सकता था। शताब्दियों के ऐश्वर्य तथा सम्पन्नता के कारण रोमनों में पतन के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। रोमनों में प्रमाद आता जा रहा था। वे विलासी हो गए। चौथी शताब्दी ईस्वी में साल में १७५ दिन खेल तमाशो के लिए निश्चित रखे जाते थे। गरीबो तथा दासो का बुरा हाल था। भारी करो के बोझ से जनता की पीठ टूट चुकी थी। इसलिए लोगों में असन्तोष, भ्रान्ति तथा गृह युद्ध की भावनाए जाग्रत होने लगी। आन्तरिक अध पतन के साथ-साथ बाहर से भी रोमन साम्राज्य को कई ओर से खतरो का सामना करना पडा। उत्तर से कई खूखार कबीले जैसे फ्रैंक, वैंडल, लोम्बार्ड गोथ आदि रोमन प्रदेशो पर हमले करने लगे। ये ईसाई धर्म को माननेवाले नही थे। उनका काम लूट-मार था। इनकी रोक-थाम करने के लिए सम्राट कान्स्टेनटाइन ने रोमन साम्राज्य को दो भागो में विभक्तकर दिया—एक पूर्वी और दूसरा पश्चिमी साम्राज्य। यूनान के प्राचीन नगर बाइजैंन्टीयम को पूर्वी साम्राज्य की राजधानी बनाया। अपने नाम पर इस नगर का नया नाम कान्स्टैन्टीनोपल रखा। पश्चिमी रोमन साम्राज्य की राजधानी रोम ही रही। कुछ समय पश्चात् दोनो साम्राज्यो के सम्राट भी दो हो गए। इमसे रोमन साम्राज्य की शक्ति और क्षीण हो गई।

इन बर्बर कबीलो के हमलो को रोका न जा सका। ४१० ईस्वी में गोथ कबीले के लोगो ने अपने सरदार अलारिक के नेतृत्व में रोम को तबाह कर दिया। गोथो के पश्चात् वैंडल लोगो ने ४५५ ईस्वी में एक बार फिर रोम को ध्वस्त किया। आक्रमणकारी हजारो रोमनो को गुलाम बना कर ले गए। ४७६ ईस्वी में रोम के सम्राट को गद्दी से उतार दिया गया। इस प्रकार पश्चिम में रोमन साम्राज्य का अन्त हुआ। परन्तु कान्स्टैंटीनोपल १४५३ ई० तक, जब इस पर तुर्कों का कब्जा हुआ, पूर्वी रोमन साम्राज्य का केन्द्र बना रहा।

विश्व को रोम की देन

यद्यपि पांचवीं शताब्दी में पश्चिमी रोमन साम्राज्य का अन्त हो गया परन्तु संसार आज भी रोमनों का कई बातों के लिए आभारी है।

प्राचीन काल में रोम एक समय विश्व के बहुत बड़े भू-भाग का शासक था। यूनानी, स्पेनी, मिस्री, फ्रांसीसी, सीरियन, यहूदी, तथा कितनी ही छोटी-बड़ी जातियों के लोग रोमन साम्राज्य की छत्रछाया में रह रहे थे। इस व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न जातियों का मेल-जोल हुआ। उन्होंने एक दूसरे से अच्छी बातें सीखीं। सब जगह एक से कानून चले और एक-सा शासन स्थापित हुआ। व्यापार तथा उद्योग की उन्नति हुई। पहली बार दुनिया में विश्व की एक सरकार के विचार का प्रादुर्भाव हुआ।

विश्व को एक राज्य देखने के स्वप्न के साथ-साथ विश्व में एक ही धर्म के विचार ने जन्म लिया। ईसाई धर्म सारे पश्चिमी योरोप का एकमात्र धर्म बन गया। एक धर्मावलम्बी होने के कारण पश्चिम के देशों की आध्यात्मिक एकता रोमन साम्राज्य के छिन्न-भिन्न हो जाने के बाद भी बनी रही।

रोमन क्रियाशील लोग थे। उन्होंने राज्य व्यवस्था के लिए नए-नए कानून बनाए। बाद में इन्हीं कानूनों के आधार पर योरोप के अधिकतर देशों ने अपने वैधानिक ढांचे खड़े किए।

रोम ने योरोप को लैटिन भाषा दी। यह भाषा समूचे पश्चिमी योरोप की कामचलाऊ भाषा बन गई। विजित देशों के साथ सम्पर्क बनाए रखने के लिए सड़कों का एक जाल बिछाया गया। जगह-जगह विशाल भवनों का निर्माण हुआ। रोमनों ने दुनिया को एक समुन्नत निर्माण कला दी।

अभ्यास के लिए प्रश्न

(१) रोम का उदय तथा पतन की कहानी ५०० शब्दों में लिखो।
(२) विश्व को रोम की क्या देन है?
(३) जूलियस सीजर कौन था? उसकी हत्या क्यों की गई?
(४) ईसाई धर्म के जन्म तथा प्रसार के बारे में आप क्या जानते हैं?

द्वितीय खण्ड

भारतीय इतिहास की रूपरेखा

: ८ :

भारत में आर्यों का आगमन और उनकी संस्कृति

पिछले परिच्छेदों में हमने बहुत ही पुराने जमाने का हाल लिखा था। इस जमाने को प्रागैतिहासिक काल कहते हैं, क्योंकि उसके बारे में हमारे पास कोई विश्वस्त प्रमाण नहीं है। खण्डहरों, पत्थरों और हड्डियों को देख कर हम उस जमाने की बातों के बारे में कुछ-कुछ जानकारी प्राप्त कर पाए हैं। परन्तु भारत में आर्यों के आगमन के साथ-साथ हम ऐसे काल में पहुंच जाते हैं जब इतिहास का आधार और अधिक विश्वसनीय हो जाता है। वेदों में हमें प्राचीन आर्यों का प्रामाणिक इतिहास मिलता है। उनके आधार पर हम कह सकते हैं कि हमारे ये पूर्वज कैसे रहते थे, क्या खाते-पीते थे और उनकी शासन-व्यवस्था कैसी थी।

इससे पहले हम बता चुके हैं कि आर्यों के आगमन से पूर्व भारत में एक प्रगतिशील संस्कृति विद्यमान थी। लोग बड़े सुखी और समृद्ध थे। वे मिस्र, मेसोपोटामिया तथा अन्य देशों के साथ जहाजों द्वारा व्यापार करते थे। उस जमाने में भारतवर्ष में जो लोग रहते थे, उन्हें द्रविड कहते थे।

आर्य कहाँ से आए ?

भारत में आर्यों का आगमन

आर्यों के मूल देश के बारे में विभिन्न विचार हैं। इतिहासकार आर्यों के मूल स्थान के बारे में पूर्ण रूप से सहमत नहीं हैं। काश्मीर और बैक्ट्रिया से मध्य-एशिया, मध्य-एशिया से मेसोपोटामिया, मेसोपोटामिया से उत्तरी ध्रुव प्रदेश, उत्तरी ध्रुव प्रदेश से उत्तरी और मध्य यूरोप और वहां से उस प्रदेश तक, जिसके विषय में कहा जाता है कि वह मध्य महासागर में विलुप्त हो गया था, कितने ही स्थानों को आर्यों का मूल देश बताया गया है। इसके अतिरिक्त कई पुराविदों ने पंजाब, अफ-

गानिस्तान, तिब्बत और पामीर के पठार का नाम भी आर्यों के मूल देश के रूप में लिया है। अधिकतर विद्वानों का यह मत है कि आर्य मध्य एशिया के मैदानों में कहीं रहते थे।

समय बीतता गया। मध्य-एशिया में जनसंख्या बढ़ने लगी। शायद वहां कभी भयंकर अकाल पड़ा। हरे-भरे खेत सूख गए। ईसा के जन्म से हजारों वर्ष पूर्व अन्न-संकट से मजबूर होकर आर्यों को नए-नए देशों की खोज में अपना घर-बार छोड़ना पड़ा। उनका एक भाग एशिया-माइनर से होता हुआ यूरोप चला गया। दूसरा भाग दक्षिण-पूर्व की तरफ चलता हुआ सिवा के उपजाऊ मैदानों में जा बसा। वहां से वे खोकन्द और बदख्शाँ की ओर मुड़ गए। तत्पश्चात् इन आर्यों के एक दल ने बैक्ट्रिया से चल कर हिन्दुकुश पर्वत को पार किया और वे अफगानिस्तान आ पहुंचे। वहां से वे काबुल, कुर्रम और गोमल की घाटियों से होते हुए पाकिस्तान के सीमाप्रान्त और तत्पश्चात् पंजाब में आए। वेदों में काबुल, कुर्रम और गोमल इन तीनों नदियों का उल्लेख है। आर्यों ने अपने इस नए देश का नाम 'सप्त-सिन्धु' (सात नदियों का देश) रखा। जब आर्य लोग और नीचे, गंगा और यमुना के मैदानों में आए तो उन्होंने उत्तरी भारत का नाम आर्यावर्त्त रखा। पुराने जमाने की दूसरी जातियों की तरह वे भी नदियों के किनारे के ही शहरों में आबाद हुए। बहुत दिनों तक आर्य लोग उत्तर में सिर्फ अफगानिस्तान और पंजाब में रहे। तब वे आगे बढ़े और उस भाग में पहुंचे जिसे अब हम उत्तर प्रदेश कहते हैं। इसी तरह बढ़ते हुए वे मध्य प्रदेश के विन्ध्य पर्वत तक पहुंच गए। उस जमाने में इन पहाड़ों को पार करना कठिन था क्योंकि वहां घने जंगल थे। इसलिए एक मुद्दत तक आर्य लोग विन्ध्य पर्वत के इस पार ही रहे। कुछ लोग विन्ध्य पर्वत के उस पार भी चले गए, लेकिन वे बहुत बड़ी संख्या में दक्षिण भारत नहीं जा सके।

अधिकांश इतिहासकार इस बात पर सहमत हैं कि भारत में आगमन से पूर्व भारतीय आर्यों का इतिहास महान एवं घटनापूर्ण था। वे मानव जाति के एक प्राचीन वंश से आए और आधुनिक ग्रीक, लैटिन, सेल्टिक और जर्मन जातियों के पुरखों के साथ बहुत देर तक रहे। यह बात इससे स्पष्ट है कि उस समय के आर्यों एवं यूरोपीय लोगों के द्वारा प्रतिदिन इस्तेमाल किए जाने वाले माता-पिता आदि वाचक शब्दों में असाधारण समानता दिखाई देती है।* यद्यपि भाषा की समानता से यह सिद्ध नहीं होता कि उनका परस्पर रक्त-सम्बन्ध भी था, पर इतना तो अवश्य सिद्ध होता है कि काफी समय तक वे लोग एक स्थान पर इकट्ठे रहे होंगे।

आर्यों के आगमन की तिथि

यूरोपीय विद्वानों की सम्मति में आर्य २००० वर्ष ई० पू० भारत में आए। भारतीय विद्वानों की यह धारणा है कि ईसा से कम से कम ५००० वर्ष पूर्व ऋग्वेद की रचना हुई। वे अपने पक्ष में ऋग्वेद में वर्णित ज्योतिष सम्बन्धी साक्षी प्रस्तुत करते हैं।

आर्यों के आगमन की कोई निश्चित तिथि नहीं बताई जा सकती। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि आर्य भारत में १५०० ई० पू० से पहले किसी समय आए थे।

---

* उदाहरणार्थ —संस्कृत	लैटिन	इंगलिश	जर्मन	ग्रीक
मातृ	मेटर	मदर	मुटर	मेटर
पितृ	पेटर	फादर	वेटर	पेटर

कुछ मंत्रों का संगीतमय पाठ होता था, उन्हीं का संग्रह सामवेद में है। प्रत्येक राग का अपना विशेष अभिप्राय या अपना प्रतीकात्मक अर्थ है।

(३) यजुर्वेद—यजुष शब्द यज्ञ करने के अर्थ में प्रयुक्त होता है, अतः यजुर्वेद प्रधानतः यज्ञ-विषयक मंत्रों का वेद है। यजुर्वेद का ऐतिहासिक महत्व यह है कि इसमें आर्यों के धार्मिक जीवन के बारे में परिवर्तित दृष्टिकोण का वर्णन है।

(४) अथर्ववेद—अथर्वन नामक ऋषि के द्वारा दृष्ट होने के कारण इसका नाम अथर्ववेद पड़ा। दीर्घ-काल तक अथर्ववेद को वेद के रूप में नहीं माना जाता था। यह ब्राह्मणों द्वारा की गई रचना है और इसमें ब्राह्मणों के महत्व और गरिमा पर बड़ा बल दिया गया है। इस वेद में कुछ ऋग्वेद के मंत्र हैं और कुछ प्रार्थनाएं हैं। आयुर्वेद का मूल भी अथर्ववेद में बताया गया है।

ऋग्वेद के काल के आर्यों का जीवन

ऋग्वेद काल के आर्यों का जीवन तत्कालीन साहित्य के आधार पर कुछ हद तक चित्रित किया जा सकता है। वेदों में इतिहास सम्बन्धी संकेत नाममात्र को ही हैं। परन्तु एक बात निश्चित है कि उस समय के आर्यों का जीवन बड़ा संघर्षपूर्ण था। आर्यों के कई समुदाय थे। वे प्रायः द्रविड़ों से या आपस में युद्ध करते रहते थे। आर्य अपने शत्रु को दस्यु अथवा अनास (नासिका रहित) कहते थे। ऋग्वेद काल के आर्यों की मुख्य जातियां ये थीं—पुरु, यदु, तुर्वश, अनु और द्रुह्यु। ये जातियां एक-दूसरे से लड़ने के लिए कभी-कभी भारत के मूल निवासियों से भी मिल जाती थीं। प्रारम्भिक वैदिक युग की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी दशराज्ञ युद्ध। इसमें भारत वंश के राजा सुदास ने विश्वामित्र के नेतृत्व में युद्ध करने वाले दस राजाओं के संघ को पराजित किया था। आर्य राजा और सरदार युद्ध में प्रायः रथों का प्रयोग करते थे। वे सैनिक व्यूह में खड़े होकर प्रायः पैदल युद्ध करते थे और कवच तथा शिरस्त्राण धारण करते थे। उनके हथियार ये थे—बाण (कभी-कभी विष से भरे हुए), तलवार, भाले, कुल्हाड़ी, बर्छियां इत्यादि। आर्य लोग घुड़सवारी करते थे।

राजनीतिक संगठन: राजनीतिक संगठन प्रायः परिवारों पर आधारित रहता था। कई परिवारों को मिला कर एक गोत्र बनता था। गोत्रों के समूह से एक वर्ग और वर्गों को मिलाकर एक जाति। विभिन्न

जातियो के राजनीतिक सगठन विभिन्न प्रकार के होते थे। उनमें से कुछ गणतन्त्र और कुछ राजतन्त्र थे। गणतन्त्र में गण अपना नेता चुनता था और राजतन्त्र में राजा का शासन होता था।

राजा : राजा प्राय वशानुगत होता था, यद्यपि कभी-कभी वह जाति द्वारा नेता भी निर्वाचित होता था। उसका मुख्य कार्य जाति की शत्रुओ से रक्षा करना तथा युद्ध के समय में नेतृत्व करना होता था। शान्ति-काल में राजा का क्या कार्य होता था, इस विषय में हमें नाम-मात्र की ही जानकारी है। *प्राय वह न्यायाधीश के रूप* में काम करता था और जाति की ओर से यज्ञ करता था। राजा की शक्तिया असीमित न थी, उसके अधिकार प्राय जनता की इच्छा द्वारा सीमित होते थे। ऐसा कोई प्रमाण नही कि राजा भूमि का स्वत्वाधिकारी समझा जाता रहा हो। हा, उसे प्रजा से कुछ धन अवश्य प्राप्त होता था।

वैदिक असेम्बलियाँ प्रारम्भिक आर्य प्रजातन्त्र के पुजारी थे। महत्वपूर्ण सार्वजनिक बातो पर वाद-विवाद करने के लिए कभी-कभी उनकी बैठकें होती थी। ऋग्वेद में सभा और समिति का विवरण मिलता है। इनके स्वरूप और कर्त्तव्यों के विषय में विद्वानों में बहुत मतभेद है। समिति सम्भवत सम्पूर्ण विश या जनता की सस्था थी और सभा उसकी अपेक्षा छोटी सस्था थी। इन सभा और समितियां में राज-मामलो पर वाद-विवाद होता था। वाद-विवाद का उद्देश्य यह होता था कि वे सर्व-सम्मति से किसी निश्चय पर पहुच सकें। अधिकाश ग्रामो में जनता की सम्मिलित चौपालें होती थी जहा ग्रामीण बैठकें करते थे। राज-नीतिक मामलो पर वाद-विवाद के बाद वे चौपालें क्रीडागृह (क्लबो) के रूप में काम में लाई जाती थी। समिति की बैठकें कभी-कभी होती थी और महत्वपूर्ण कार्यों के लिए ही बुलाई जाती थी—जैसे जाति के मुखिया के चुनाव के लिए। ऐसी बैठको में या तो जाति के प्रतिनिधि भाग लेते थे या जाति के सब सदस्य। सभा और समिति के रूप पर वेद के ये मत्र अच्छा प्रकाश डालते हैं।

> "हे सभा। हम तेरा नाम भली-भाति जानते हैं। तुझमें मनुष्य एकत्र होते हैं। तेरे जो भी सभासद हैं, वे सब सत्य बोलें।
>
> *"सभा और समिति प्रजापति की कन्याओ के समान हैं। ये दोनों एकसाथ मिल कर इस* राष्ट्र की रक्षा करें। इनमें जो भी आए, वे ज्ञान की बातें करें। इन सभाओ में एकत्र सब लोग ठीक-ठीक प्रवचन करें।"

सामाजिक अवस्था आर्यों का पारिवारिक जीवन बडा सुखमय था। परिवार का बडा व्यक्ति मुखिया होता था। प्राय एक विवाह की प्रथा थी, कुछ ऊचे घरानों में बहुविवाह भी प्रचलित थे। एक स्त्री के अनेक पति होने का, बाल-विवाह और सती प्रथा का कही वर्णन नही है। समाज में पुरुष का ऊचा दर्जा था। प्रारभिक आर्य विवाह सम्बन्ध की पवित्रता का पालन करते थे। उस समय विवाह सम्बन्ध अटूट था। प्राय विधवा-विवाह अनुमत न था पर विशेष अवस्था में इसकी अनुमति थी जैसे सन्तान-हीन विधवा अपने देवर से विवाह कर सकती थी।

पुरुषो का ऊचा स्थान होते हुए भी स्त्रियो को बहुत सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। साधारण जीवन के अतिरिक्त समाज के बौद्धिक और धार्मिक नेतृत्व में भी स्त्रियो का हाथ था। स्त्रियो के लिए शिक्षा के द्वार खुले हुए थे। जिन स्त्रियो मे धार्मिक साहित्य रचने की शक्ति थी उनको अपनी इस प्रवृत्ति के अनुसार

चलने में कोई रोक-टोक न थी। कई स्त्रिया इतनी विदुषी थी कि उनकी रचनाए पुरुषो का भाग ऋग्वेद संहिता में आज तक सम्मिलित हैं। विश्ववारा, अपाला, लोपामुद्रा, और घोषा आदि स्त्रियो ने मन्त्रो की रचना की और ऋषि की उच्च पदवी प्राप्त की।

साहस और वीरता में भी स्त्रिया कम न थी। अनेक स्त्रिया तो युद्ध-भूमि में जाकर पुरुषों की भांति शूरता दिखाती थी। विष्पला लडाई में गई थी, जब वह लडते-लडते घायल हो गई तब अश्विनो ने उसकी चिकित्सा की। नारी घर की स्वामिनी होती थी। मजदूरो और घर के नौकरों पर उसे पूरे अधिकार थे। उसे साम्राज्ञी कहा गया है। विवाह के विषय में कुमारियो को अपने विचार प्रकट करने का अधिकार था। दहेज देने की प्रथा थी। स्त्रिया पर्दा नहीं करती थीं।

दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि ऋग्वेद काल में व्यवसाय वंशानुगत नहीं हुए थे। ऊच-नीच का भेद न था। सारे ऋग्वेद में एक स्थान पर पुरुष सूक्त में, इसका आलंकारिक रूप में वर्णन मिलता है।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत बाहू राजन्य कृत ।
उरुस्तदस्य यद्वैश्य. पद्भ्या शूद्रोऽजायत ॥

ब्राह्मण इसका (परमात्मा या समाज का) मुह और क्षत्रिय भुजाए हैं—वैश्य जाघें और शूद्र पैर। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्ण-व्यवस्था पीछे विकसित हुई।

आर्थिक अवस्था : प्रारम्भिक आर्य खेती-बाडी करते थे। वे गावों में रहते थे। उनके घर लकडी और बास तथा खपरैल के बने होते थे। गाय, भैंस आदि पशु उनकी सम्पत्ति थे। उनके पास घोडे होते थे जिन्हें वे सवारी और रथो में जोतने के काम में लाते थे। घोडे सम्भवत: आर्य अपने साथ भारत में लाए थे। मोहनजोदडो से जो मुहरें मिली हैं उन पर प्राय सभी जानवरो के चित्र हैं। परन्तु घोडा कही भी दिखाई नहीं देता। उनके पास कुत्ते भी थे जो पशुओ की रक्षा और शिकार के काम में आते थे। आर्य गौ को पूजा की भावना से देखते थे। व्यापार सिक्कों द्वारा न होकर वस्तुओ द्वारा होता था जो अभी तक गावो में किसी न किसी रूप में चालू है। किसी व्यक्ति की सम्पत्ति और महत्व प्राय उसकी पशु-सख्या से आका जाता था।

कृषि उनका मुख्य पेशा था—परन्तु कृषि और पशु-पालन के अतिरिक्त कुछ उद्योग भी गौण रूप से किए जाते थे—जैसे बुनाई, रगाई और कशीदाकारी। खेल और आजीविका दोनो के साधन के रूप में शिकार खेला जाता था। बढईगीरी का काम, बहुत ऊचे दर्जे पर पहुचा था और मकान बनानेवाले, रथ बनानेवाले, लकडी पर खुदाई का काम करनेवाले और बाण बनानेवाले सब अपनी-अपनी कारीगरी के विशेषज्ञ होते थे। आर्य स्वर्ण, तांबे, चादी और लोहे का उपयोग जानते थे। प्रत्येक गाव में हल के फाल और दरातिया बनाने के लिए एक लुहार होता था। सुनार और चमडे का काम करने वाला भी प्रत्येक गाव का अपना-अपना होता था। गाव में एक वैद्य होता था जो जादू टोने (मन्त्र विष) और औषधियो के प्रयोग में प्रवीण होता था। ग्राम पुरोहित ग्रामीणों के आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक के रूप में कार्य करता था और ग्रामीण बच्चो को पढ़ाता था।

खान-पान : आर्य लोग मुख्यत शाकाहारी थे। फल, दूध और घी उनके मुख्य आहार थे। उनके प्रिय पान थे, सुरा (गेहू और जौ को सड़ा कर बनाया गया तरल पदार्थ) और सोमरस (सोम पौधे का रस)।

मनोरजन : प्रारभिक आर्य सुखमय एवं हास-विलास का जीवन व्यतीत करते थे। उनके मुख्य मनोरजन शिकार, रथो की दौड, सगीत, नृत्य तथा जूआ थे। वे अच्छे वस्त्र पहनने के शौकीन थे। पुरुष और स्त्रिया दोनो सुन्दर वेष-विन्यास को पसन्द करते थे। उनके कपड़े मुख्यतया ऊनी कपडो या जानवरो की खालो के होते थे। स्त्रिया प्राय स्वर्णाभूषण धारण करती थी। उस्तरे से हजामत करवाना भी प्रचलित था।

वरुण

धार्मिक अवस्था : प्रारभिक आर्य प्राकृतिक दृश्यो पर मुग्ध थे और प्रकृति की शक्ति की पूजा करते थे। प्रकृति की ऐसी प्रत्येक बात की वे पूजा करते थे जो उनकी कल्पना पर प्रभाव डाले या जिसे वे समझें कि उसमें कुछ भला या बुरा करने की शक्ति है। पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक की शक्तियों की वे यज्ञो के द्वारा पूजा करते थे। यज्ञो में प्राय घृत इत्यादि डाले जाते थे। कभी-कभी पशुओं की बलि भी दी जाती थी जिससे कि देवता प्रसन्न हो जाए।

ऋग्वेदीय देवताओ में मुख्य अग्नि, वायु और इन्द्र है। इन्द्र वर्षा का देवता था और राष्ट्रीय देवता के रूप में पूजा जाता था। ऋग्वेद में वर्णित मुख्य देवी ऊषा का बहुत कवित्वमयतया सुन्दर वर्णन है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) आर्यों के मूल देश के विषय में आप क्या जानते है ? विभिन्न मान्यताओ का उल्लेख करते हुए अपना निश्चित मत दीजिए।

(२) भारतीय संस्कृति के आदि स्रोत क्या है ?

अथवा

वैदिक साहित्य पर एक सारगर्भित निबन्ध लिखिए।

(३) वैदिक सस्कृति के बारे में आप क्या जानते है ?

(४) वैदिक कालीन राजनीतिक दशा का वर्णन कीजिए।

(५) वैदिक साहित्य के अध्ययन से आर्यों की जिस सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक सस्कृति का पता चलता है, उसका विवरण दीजिए।

: ९ :

उत्तरवैदिक काल

उत्तरवैदिक काल काबुल, कुर्रम और सिन्धु की घाटियों से गंगा और यमुना के मैदानों तथा उससे भी आगे आर्यों के फैलने का युग है। यह ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध धर्म के उदय से पहले का काल है। उत्तरवैदिक काल के इतिहास तथा उस ज़माने के लोगों के रहन-सहन इत्यादि के बारे में हमारी जानकारी मुख्यतः उत्तरवर्ती वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा सम्बद्ध धार्मिक साहित्य पर आधारित है। इस साहित्य में रामायण और महाभारत के महाकाव्य तथा १८ पुराण शामिल हैं।

प्राचीन आर्य साहित्य, जिसके आधार पर अभी हम उत्तरवैदिक युग के समाज का वर्णन करेंगे, दो भागों में बांटा जा सकता है—(१) श्रुति और (२) स्मृति। श्रुति शब्द का अर्थ है सुनना। इसमें वह सम्पूर्ण वैदिक साहित्य आ जाता है, जिसे हिन्दू ईश्वर-प्रणीत मानते हैं। हिन्दुओं का विश्वास है कि वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् प्राचीन ऋषियों ने ईश्वरीय प्रेरणा और प्रकाश से लिखे थे। स्मृति शब्द का अर्थ है स्मरण करने की शक्ति। इसमें वह साहित्य सम्मिलित है जो स्मरण किया जाता था, और मौखिक रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होता था।

स्मृति वाङमय के लेखक मनुष्य माने जाते हैं—इसमें रामायण, महाभारत, पुराण तथा कानून या धर्मशास्त्र की विविध पुस्तकें सम्मिलित हैं। स्मृति ग्रन्थ पचास के लगभग हैं। पर इनमें सबसे प्रामाणिक और प्राचीन मनुस्मृति है। हिन्दुओं की सामाजिक व्यवस्था बहुत कुछ मनुस्मृति पर ही आधारित है। मनु के बारे में कहा गया है कि "जो कुछ मनु ने प्रतिपादित किया, वह औषधि की भी औषधि है।"

हमारे महाकाव्य

रामायण और महाभारत हमारे दो महाकाव्य हैं। इनकी भाषा वेदों की भाषा से भिन्न है।

रामायण—हिन्दू रामायण को महाभारत से पूर्व का मानते हैं, परन्तु ऐतिहासिक सकेत महाभारत की कहानी को पूर्वतर बताते हैं। रामायण सात काण्डों में बड़ी वर्णनात्मक कविता है। इसमें लगभग २४,००० श्लोक हैं। कुछ विद्वानों की ऐसी भी राय है कि इसमें पांच काण्ड बाल्मीकि कृत हैं और प्रथम और अन्तिम पीछे से जोड़े गए हैं। महाकाव्य की वस्तुकथा में ऐतिहासिक अनुश्रुति और पौराणिक गाथाओं का सम्मिश्रण है। रामायण की कहानी से सब सुपरिचित हैं। अतः उसका विस्तार से वर्णन ज़रूरी नहीं। सूर्यवंशी राजा दशरथ कौशल राज्य के अधीश्वर थे। उनकी राजधानी अयोध्या थी। रामायण की कहानी उनके ज्येष्ठ पुत्र राम की कहानी है।

विभिन्न विद्वानों ने रामायण की कहानी की अपने ढंग से व्याख्या की है। कुछ विद्वान इसे ऋग्वेद में वर्णित इन्द्र और वृत्र के युद्ध से सम्बद्ध करते हैं। अन्य कुछ विद्वानों की सम्मति में यह एक अलंकारमयी

कथा है। इसमें दक्षिण और लंका पर विजय प्राप्ति के आर्यों के प्रथम प्रयत्न का वर्णन है। विन्सेंट स्मिथ जैसे कुछ यूरोपीय विद्वान इसे अस्पष्ट अनुश्रुति पर आश्रित काल्पनिक कृति समझते हैं। रामायण अनुश्रुति हो या ऐतिहासिक तथ्य, इसमें शक नहीं कि रामायण का भारतीय जीवन पर सदा एक महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है। तीन सहस्र से अधिक वर्ष हो गए, इस काव्य में वर्णित जीवन को भारतीय आदर्श मानते रहे हैं। आज भी राम को एक आदर्श पुत्र, एक आदर्श राजा और एक आदर्श पति माना जाता है। सीता पवित्रता तथा पातिव्रत्य में भारतीय स्त्रियों का आदर्श है। धार्मिक तथा साहित्यिक क्षेत्रों में रामायण दैवी स्फूर्ति का ही स्रोत नहीं है, इससे नवीन लेखकों को नए साहित्य-सर्जन के लिए सामग्री भी मिलती है। यह प्रत्येक भारतीय भाषा तथा विश्व की अधिकांश भाषाओं में अनूदित है।

महाभारत—रामायण की तरह महाभारत एक व्यक्ति की कृति नहीं है। यद्यपि महर्षि वेदव्यास को इसका लेखक माना जाता है, परन्तु विभिन्न समयों में इसमें परिवर्तन व परिवर्द्धन होते रहे हैं। प्रारम्भ में यह वर्तमान में उपलब्ध महाभारत का १० वा भाग था। परन्तु पीछे के परिवर्तनों से यह अब हिन्दू शिक्षाओं का विश्वकोष जैसा बन गया है। बाद के परिवर्धनों में भारतीय आर्यों की कई दन्तकथाएं, पौराणिक कहानियां और धार्मिक व दार्शनिक विषयों पर लम्बे विवाद हैं। इस समय महाभारत में लगभग एक लाख श्लोक हैं तथा १८ पर्व। महाभारत की कहानी ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। इसमें दो चन्द्रवंशी परिवारों —कौरवों और पाण्डवों के संघर्ष की कहानी है। पुरानी श्रुति के अनुसार यह महायुद्ध ३,१०२ ई० पू० हुआ था। अधिकांश विद्वान इसकी तिथि १,००० ई० पू० मानते हैं। परन्तु इस महाकाव्य का प्रारम्भ और विकास मोटे रूप से पांचवीं शताब्दी ई० पू० के लगभग हुआ था। महाभारत के बारे में कहा गया है कि वह सब दर्शनों का सार, स्मृति, इतिहास और चरित्र चित्रण की खान तथा पंचम वेद है। जीवन का कोई पहलू नहीं जिस पर इसमें विस्तार से विचार न किया गया हो।

श्री मद्भगवत गीता—महाभारत में गीता के १८ अध्याय भी आ जाते हैं। इसमें श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निष्काम कर्म का उपदेश दिया और कहा—कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। कर्म पर ही तेरा अधिकार है, फल पर कभी नहीं। गीता का लगभग सब यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

जर्मन विद्वान हम्बोल्ट के शब्दों में गीता 'बहुत सुन्दर है, सम्भवतः किसी भी ज्ञात भाषा में यही केवल सच्चा दार्शनिक गीत है। यद्यपि इसे लिखे शताब्दियां व्यतीत हो गई हैं, फिर भी यह उतनी ही प्रभावशाली और आकर्षक है जितनी कि उस समय जब यह लिखी गई।'

पौराणिक साहित्य

प्राचीन भारतीय साहित्य में पुराणों का बड़ा महत्व है। पुराणों की संख्या १८ है। पुराणों के साथ उपपुराण भी १८ हैं। पुराण शब्द का अर्थ है 'पुराना आख्यान'। इन ग्रन्थों में वह प्राचीन अनुश्रुति संकलित कर दी गई हैं जो गुरु-शिष्य या पिता-पुत्र परम्परा से ऋषियों के आश्रमों व सूत मागधों के कुलों में चली आ रही थी। ऐतिहासिक दृष्टि से पुराणों का बड़ा महत्व है। जिस प्रकार वेदों और ब्राह्मण-ग्रन्थों में याज्ञिक कर्मकाण्ड और जंगल में रहनेवाले ऋषियों की परम्परागत अनुश्रुति संकलित है, वैसे ही पुराणों में राजकुलों, विजे-

ताओं तथा अन्य आर्यवीरों की सफलताओं का रोचक वर्णन है। यह घटनाएं कुछ बढ़ा-चढ़ा कर कही गई हैं। अतः पुराणों से वास्तविक ऐतिहासिक घटना का पता लगाना कठिन हो जाता है।

ऋषि वेदव्यास १८ पुराणों के कर्ता माने जाते हैं। परन्तु उन्होंने केवल महाभारत युद्ध तक की अनुश्रुति को संकलित किया था। परन्तु पुराणों में तो महाभारत युद्ध के बाद की घटनाओं का भी वर्णन है। ऐसा मालूम होता है कि समय-समय पर ब्राह्मणों द्वारा पुराणों में नई-नई घटनाएं शामिल की जाती रहीं।

उत्तरवैदिक युग के जीवन पर एक दृष्टि

धर्म

उत्तर वैदिक काल में धर्म के क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। ब्राह्मणों ने कर्मकाण्ड की एक विस्तृत प्रणाली के विकास में अपनी सारी शक्तियां लगा दीं। इतिहासकार श्री मजूमदार लिखते हैं—"समालोचना ने सर्जनात्मक युग का और कठोर बाह्य नियमों ने ईश्वरीय प्रेरणा का स्थान ले लिया। ऋषियों की वह कवित्वमय वाणी न रही। प्राचीन ऋषि प्रकृति के सौन्दर्य में खो जाते थे। उनकी सर्जन शक्ति अपार थी। प्रकृति की शक्तियों को सम्बोधित कर उन्होंने जो लिखा वह अकृत्रिम व दिव्य है।"

कर्मकाण्ड—पुरोहित श्रेणी के महत्व को बढ़ाने के लिए ब्राह्मणों ने अपनी सारी शक्ति उलझी हुई कर्मकाण्ड प्रणाली के विकास में लगा दी। व्यक्तियों के लिए विविध नियम, अनुष्ठान आवश्यक कर दिए गए। उनमें रहस्यमय गूढ़ अभिप्राय आरोपित किए गए। विश्व के इतिहास में ऐसे उलझे हुए धार्मिक कर्मकाण्ड का वर्णन कहीं नहीं मिलता, जैसा कि ब्राह्मणों तथा तत्सबद्ध साहित्य में उपलब्ध है।

नए देवता—इस काल में आर्यों ने कई नए देवता अपना लिए। धीरे-धीरे इन देवताओं ने पुराने देवताओं को पीछे फेंक दिया। इन्द्र, वरुण और अग्नि के स्थान पर भारतीय आर्यों ने आधुनिक हिन्दू धर्म के त्रिदेव, (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) की पूजा शुरू की। आर्यों ने शिव और दुर्गा (शक्ति की देवी) की पूजा द्रविड़ों से ली। द्रविड़ों के धार्मिक विश्वास और क्रियाओं का भारतीय आर्यों पर बहुत प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार ऋग्वैदिक आर्यों का सीधा-सादा धर्म जटिल होकर कठोर अनुष्ठानों और सस्कारों की शृंखला में बुरी तरह बंध गया।

चार आश्रम

मुक्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य के जीवन काल को चार आश्रमों में बांटा गया

(१) ब्रह्मचर्याश्रम—पांच वर्ष की आयु होने पर बालक विद्याध्ययन के लिए ब्रह्मचर्याश्रम में प्रवेश करता था। यह काल सामान्यतः २५ वर्ष की आयु तक रहता था। इन वर्षों में ब्रह्मचारी सांसारिक भोग-विलास से दूर रह कर मन एकाग्र करके गुरु के घर में ज्ञानार्जन करता था। विद्यार्थी-काल की समाप्ति पर अधिकांश विद्यार्थी गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते थे। शुरू शुरू में लड़कियां भी ब्रह्मचर्याश्रम में प्रविष्ट होती थीं पर पीछे से यह पूर्ण रूप से निषिद्ध कर दिया गया।

(२) गृहस्थाश्रम—व्यक्ति के जीवन की दूसरी स्थिति होती थी। भारतीय आर्यों से प्राय यह

आशा की जाती थी कि वे २५ वर्ष की आयु हो जाने पर विवाह करें और घर बसाए। विवाह-सम्बन्ध को अत्यन्त पवित्र समझा जाता था।

(३) वानप्रस्थाश्रम—गृहस्थ में अपने कर्त्तव्यो को पूरा करने के बाद व्यक्ति से यह आशा की जाती थी कि वह ५० साल का होने पर एकान्त जगल में निश्रेयस की खोज में शान्त जीवन व्यतीत करे। उसे अपने भोजन के लिए भिक्षा मागनी पडती थी। दूसरो के दिए कपडे पहनने होते थे और सुख तथा दुख से निरपेक्ष रहना होता था।

(४) सन्यासाश्रम—सब मोह-बन्धनो से युक्त होकर व्यक्ति एकान्त वन में निवास करता था। वह गृहस्थो को परामर्श देता था तथा उनका पथप्रदर्शन करता था। उनसे भोजन की भिक्षा नही ले सकता था। उसे जो जगल में मिल जाता, उसी पर निर्वाह करता। साधारणतया ७५ साल की उमर में सन्यास ग्रहण करने की व्यवस्था थी।

समाज

स्त्रियों की स्थिति—उत्तरवैदिक काल में स्त्रियो की पहले जैसी ऊची स्थिति नही रही। तो भी सामान्यतया स्त्रियो का बडा मान था। कुछ स्त्रिया तो अपना सारा जीवन विद्या पढने में लगा देती थी। हिन्दू दार्शनिक जगत् में गार्गी और मैत्रेयी के नाम सुविख्यात हैं।

यद्यपि एक विवाह का आदर्श था, फिर भी बहु-विवाह भी प्राय होते थे, विशेष कर बडे लोगो में। विवाह के नियम बहुत कडे हो गए थे। बाल विवाह नही होता था। स्त्री अब भी पुरुष के साथ उसकी सम-भागिनी बन कर रहती थी।

इस काल के समाज में एक उल्लेखनीय घटना हुई। आर्यजाति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—चार श्रेणियो अथवा जातियो में बट गई। इस पर हम एक अलग अध्याय में विचार करेंगे।

राजनीति

प्रारम्भिक वैदिक आर्य अधिकाशत पजाब में रहते थे। उत्तर वैदिक काल में आर्य सस्कृति का केन्द्र पूर्व की तरफ चला गया था। मध्य देश या गगा और यमुना के बीच के प्रदेश को बहुत महत्व मिल गया था। द्रविडो तथा अन्य मूल निवासियो ने या तो शान्तिपूर्वक सिर झुका दिया या पर्वतो में अथवा दक्षिण में चले गए।

राजनीतिक सगठन—प्रारभिक गणतन्त्र प्रणाली के स्थान पर शक्तिशाली राजाओ का उदय हो रहा था। जनता की असेम्बलिया—सभा और समिति—बिल्कुल समाप्त नही हुई थी, पर राजाओ की शक्ति बढती जा रही थी। विविध आर्य जातियो में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता रहती थी। परिणाम स्वरूप पडोसी राजाओ में प्राय युद्ध होते रहते थे। उच्चता के लिए सघर्ष ने एक प्रकार की साम्राज्यवादी भावना को जन्म दिया था। राजनीतिक क्षेत्र में सार्वभौम साम्राज्य की विचारधारा प्रबल हो गई थी। प्रत्येक शक्तिशाली राजा का उद्देश्य चक्रवर्ती सम्राट् बनने का होता था।

राजा—सम्राट या राजा बहुधा वशानुगत होते थे, पर नए राजा के गद्दी पर बैठने के लिए जनता की स्वीकृति आवश्यक थी। राजा को पर्याप्त अधिकार थे, किन्तु वह निरकुश नही था। समाज के धर्म और आदर्शो के अनुसार ही वह शासन कर सकता था।

अधिकारी-वर्ग—राजा से लेकर छोटे से छोटे ग्रामीण अफ़सर तक छोटे बड़े अफ़सरों की सुसंगठित प्रणाली थी। राजस्व के अतिरिक्त राजा व्यापारियों से भी कर लेता था। उसे बेगार लेने का अधिकार था। प्रत्येक राज्य की राजधानी दुर्ग और खाई के द्वारा सुरक्षित होती थी। सेना में मुख्य रूप से क्षत्रिय होते थे। सेना के निम्न भाग थे—पदाति सेना, अश्वारोही सेना, गज, सारथि, धनुर्धारी, अस्त्र चलानेवाले और
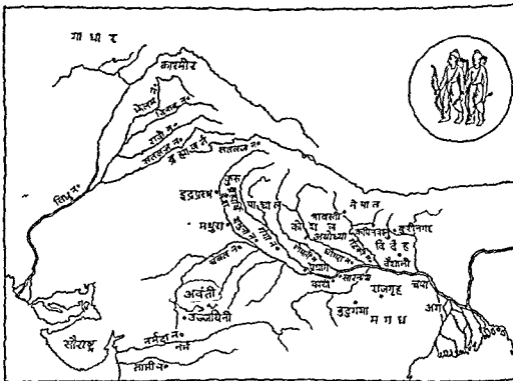
पत्थर फेंकनेवाले। राजा अपने अधिकारियों से बहुत अच्छा व्यवहार करता था और युद्धभूमि में मारे गए सैनिकों की विधवाओं को जमवरवृत्ति (पेन्शन) देता था। राजद्रोह बहुत भीषण अपराध माना जाता था। उसके लिए पुरोहित तक को प्राणदण्ड दिया जाता था।

ग्राम-व्यवस्था—शासन-व्यवस्था की इकाई अभी तक ग्राम ही था। ग्राम बहुत सुन्दर बने होते थे। वे समकोण चतुर्भुजाकार होते थे। वे प्राय नदियो के किनारे या दो नदियो के सगम पर बसे होते थे। ग्रामीण शासन व्यवस्था पूर्ण रूप से जनतन्त्रात्मक होती थी। प्रति वर्ष गाव की आर्य जनता सभा-मण्डपो में पाच की परिषद् को चुनने के लिए एकत्र होती थी। यह परिषद् ग्राम के दैनिक कार्यों को चलाती थी।

अर्थ-व्यवस्था—ऋग्वेद के समय से खेती में काफी उन्नति हुई थी। सिंचाई का अच्छा प्रवन्ध होने लगा था। पहले की अपेक्षा उद्योग धन्धे बढ़ गए थे। उद्योग के साथ-साथ व्यापार भी बढ गया था। बडे-बडे व्यापारी श्रेष्ठि कहलाते थे जिसका अपभ्रंश 'सेठ' आज भी प्रचलित है। व्यापार की सुविधा के लिए सिक्कों का प्रचलन भी हो गया था। पूर्व वैदिक काल जैसी ईमानदारी अब नहीं रही थी।

अभ्यास के प्रश्न

(१) उत्तरवैदिक काल के जीवन के बारे में हमारी जानकारी के कौन-कौन से सूत्र है ?

(२) पूर्व वैदिक काल के राजनीतिक तथा धार्मिक जीवन की तुलना उत्तरवैदिक काल के राजनीतिक तथा धार्मिक जीवन से करो ?

(३) उत्तरवैदिक काल के आर्यों के जीवन पर एक सारगर्भित निबन्ध लिखो।

(४) संक्षिप्त नोट लिखो : (क) रामायण, (ख) महाभारत, (ग) श्रीमद्भगवद्गीता (घ) पुराण (ङ) मनुस्मृति।

: १० :

आर्यों की वर्ण-व्यवस्था

पिछले अध्याय में हमने उत्तरवैदिक काल की एक विशेष घटना का संक्षेप से उल्लेख किया था। वह घटना थी आर्यों का विभिन्न वर्णों में बंट जाना। इसे वर्ण-व्यवस्था कहते हैं। चूंकि जात-पात ने भारत के समूचे इतिहास और समाज पर विशेष प्रभाव डाला है, इसलिए यहां हम इसका विस्तृत वर्णन करेंगे।

वर्ण-व्यवस्था एक ऐसी पद्धति है जो सारे संसार में किसी न किसी रूप में व्याप्त रही है। यह बात दूसरी है कि भारत में इसका रूप कुछ और ही प्रकार का हो गया है। प्रसिद्ध समाज-शास्त्रवेत्ता वार्ड ने यूरोपीय इतिहास में चार प्रकार के वर्ग बताए हैं, जो १८वीं शती में विद्यमान थे। इनमें प्रथम पादरी वर्ग, द्वितीय सैनिक वर्ग, तृतीय व्यापारी वर्ग और चतुर्थ श्रमिक वर्ग था। यही क्रमशः हमारे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण हैं। राजनीतिक दृष्टिकोण से वर्ण-व्यवस्था से भारत को बड़ी हानि पहुंचाई है। वर्ण-भेद ने हिन्दू समाज को तीन हजार छोटे-बड़े समुदायों में बांट दिया है। हर एक जातिविशेष अपनी-अपनी परम्परा के अनुसार अपना काम चलाती है। परस्पर मेल-जोल बहुत कम है।

उत्पत्ति और विकास

हिन्दू-आर्य लोग जब भारत में आए थे तो उनमें जाति-भेद नाम तक को न था। वे सब एक ही सूत्र में बंधे हुए थे। किन्तु उनकी संख्या बहुत थोड़ी थी, इसलिए उनको यह डर था कि कहीं भारत की द्रविड़ या अन्य बहुसंख्यक जातियों के विशाल जन-समुदाय में अपना अस्तित्व ही न खो बैठें। इसलिए भारत में आते ही आर्यों के सामने जो समस्या उत्पन्न हुई वह यही थी कि वे अपने रक्त की पवित्रता को कैसे बनाए रखें? इसके साथ-साथ वे यह भी नहीं चाहते थे कि इस देश के आदिवासी उनकी विशिष्ट सभ्यता व संस्कृति से वंचित रहें। इस प्रकार दो परस्पर-विरोधी भावनाओं से प्रभावित होकर आर्य पथ-प्रदर्शकों ने वर्ण-व्यवस्था की रचना की। वर्ण-व्यवस्था ही एक ऐसा साधन था जिसकी सहायता से वे यहां की आदिवासी जातियों को आर्य-सभ्यता की संस्कृति का अंग बना सकते थे और आर्य रक्त की पवित्रता को बनाए रख सकते थे।

ऋग्वेद के काल में एक ही भेदभाव माना जाता था। उसका आधार 'वर्ण' अर्थात् रंग होता था। आर्यों का रंग निखरा हुआ था और द्रविड़ों का, जिन्हें आर्य 'दस्यु' अर्थात् शत्रु कहते थे, रंग कुछ श्यामल-सा था। ऋग्वेद में केवल एक ही मंत्र आता है जिसमें जाति-पाति की ओर संकेत किया गया है। उसका अनुवाद इस प्रकार है। "उसका (स्रष्टा का) मुंह ब्राह्मण कहलाया, क्षत्रिय उसकी भुजाओं से उत्पन्न हुए और जंघाएं वैश्य कहलाईं, और पैर शूद्र।" इस प्रसिद्ध मंत्र का नाम पुरुषसूक्त है। वैदिक काल के उत्तरार्द्ध में आर्य लोग चार बड़ी-बड़ी जातियों में या वर्गों में बंट चुके थे। इस विभाजन की पृष्ठभूमि कुछ इस तरह की थी। वेदों की भाषा को पढ़ना और समझना आसान काम नहीं था। वेदों को पढ़ने और पढ़ाने के लिए एक

ऐसे वर्ग विशेष की आवश्यकता थी जो अपना सारा समय देकर वेदपाठ करें और लोगों को वेदो का अर्थ समझाएं। इसके अतिरिक्त यह बात भी थी कि आर्यों के धर्म में अब एक बड़ा भारी परिवर्तन आ गया था। पहले समय में प्रकृति की सीधे और सरल ढंग से पूजा होती थी। और अब यज्ञ-याग आदि प्रचलित हो गए। इन यज्ञो को विधिपूर्वक सम्पूर्ण करने के लिए पुरोहितो के एक विशेष वर्ग की जरूरत थी जो यह काम अच्छी तरह जानते हो। ये लोग जो वेदपाठ आदि अच्छी तरह जानते थे, ब्राह्मण कहलाए। ब्राह्मणो का पद समाज में सबसे ऊचा हो गया था। वे आर्यों के पथ-प्रदर्शक बन गए। ब्राह्मणो को अपने ऊचे स्थान से मोह हो गया। उन्होने इसे अपना एकाधिपत्य बना लिया।

जब आर्यों ने साम्राज्य विजय कर लिए तो शासक और योद्धा लोगो का महत्व बढा। धीरे-धीरे आर्य लोग सिन्धु के मैदानों में अपना झडा गाड कर गगा की ओर बढे। यहा पुरानी जातियो से उनका युद्ध हुआ। इसी सघर्ष के परिणाम स्वरूप उन्होने अपना राजनीतिक सगठन बदला। उन्होंने अपने आपको नई परिस्थिति के अनुकूल बना लिया। अब वे पहले की तरह अलग-अलग क्षेत्रो में बसने वाली जातिया न रहे थे। इनका स्थान अब बडे-बडे सुदृढ राज्यो ने ले लिया था। छोटी-मोटी जातियो के सरदारो से उनका राज्य और प्रभुत्व छिन गया तो उन्होने अपने आपको किसी महत्वाकाक्षी राजा की सेवा में समर्पित कर दिया और उसकी सेना में मिल गए। सब देशो में राजाओ और सैनिको को विशेष आदर सम्मान दिया जाता है। इसलिए यह क्षत्रिय लोग भी आर्यों द्वारा विशेष सम्मान के पात्र समझे जाते थे। क्षत्रियो ने देश की रक्षा का भार सभाल लिया। अतः अन्य लोग निश्चिन्त होकर दूसरे उद्योग-धन्धो में सलग्न हो गए और इस तरह कृषि, उद्योग, व्यापार और वाणिज्य ने खूब उन्नति की। ऐसा काम करने वाले लोग वैश्य कहलाए। उन्होंने इस समय के धनाढ्य लोगों के उपभोग की सामग्री जुटाने का कर्तव्य सभाला। इसके बाद दस्यु या अनार्य लोग रह जाते हैं। *यह लोग आर्यों की दासता के अधीन थे। किन्तु इनकी जातिया नष्ट नही हुई थी। आर्य लोग इनसे शूद्रो का* काम लेते थे। प्रारम्भिक अवस्था में जात-पात की प्रथा इतनी कडी नही थी। उदाहरणार्थ एक ब्राह्मण और एक क्षत्रिय में भेद इतना सूक्ष्म होता था कि कई क्षत्रिय विद्या के पढने-पढाने में ब्राह्मणो को पीछे छोड जाते थे। उधर कई ब्राह्मण क्षत्रियो की तरह लडाई के मैदान में अपना युद्ध-कौशल दिखाते थे। ब्राह्मण क्षत्रिय बन सकता था और कोई व्यक्ति क्षत्रिय के घर जन्म लेकर भी ब्राह्मणो के सारे काम कर सकता था। शूद्रो के अतिरिक्त सब वर्णों की ऐसी ही दशा थी। जात-पात का आधार जन्म नहीं, काम था और वर्ण-व्यवस्था का मूलाधार आर्थिक आवश्यकताए थी। विभिन्न जातियो में परस्पर मिल कर खाने पीने की खुली अनुमति थी। और द्विजो (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) में परस्पर ब्याह-शादियो की प्रथा भी साधारणतया प्रचलित थी। यह ठीक है कि इन अन्तर्जातीय विवाहो को बहुत से लोग पसन्द नही करते थे। किन्तु इन विवाहो की एकदम मनाही नही थी। वर्ण-व्यवस्था का मुख्याधार अर्थात् ब्राह्मणों का सर्वोपरि अधिकार अभी स्थापित नही हुआ था। क्षत्रियो के साथ उनकी प्रतिद्वन्द्विता बहुत देर तक चलती रही।

भेदभाव की कठोरता

परिस्थिति बदलती गई। भेदभाव जोर पकड गए। 'आर्य' और 'शूद्र' की पृथक्-पृथक् पहचान अधिक स्पष्ट हो गई। उत्तरवैदिक काल में ऐसी भी स्थिति उत्पन्न हो गई कि शूद्रो को हवन की पवित्र अग्नि

के निकट जाने से भी रोका जाने लगा। वे वेद पाठ के मौलिक अधिकार से वंचित कर दिए गए। शूद्र कोई धर्मग्रन्थ नहीं पढ़ सकते थे, न कोई यज्ञ-याग करवा सकते थे। शूद्रों को यह भी मनाही थी कि वे धर्मों को जान कर द्विजों से समता के भागी बन सकें। अब जात-पात का आधार जन्म होता चला जा रहा था। ब्राह्मणों ने अपनी स्थिति को बनाए रखने के लिए खान-पान और विवाह आदि के नए प्रतिबन्ध लगा दिए। गुप्तकाल में तो यह दशा हो गई थी कि एक जाति का दूसरी जाति में सम्मिलित होना न केवल वर्जित हो गया था किन्तु असम्भव भी। वर्ण-व्यवस्था में और भी उलझनें पैदा हो गईं। चारों वर्णों के भीतर छोटी बड़ी कई जातियां बन गईं।

मुसलमानों के राज्यकाल से पहले हिन्दू-धर्म एक लचकदार विचारधारा रखता था। इसी के बल-बूते पर हिन्दू समाज ने कई छोटी-छोटी जातियों को अपना अंग बना लिया था। ये जातियां बाहर से भारत पर आक्रमणकारी हुई थीं। हिन्दू समाज को यह सफलता वर्ण-व्यवस्था के ही कारण मिली।

इस्लाम को हिन्दू-समाज अपने भीतर सम्मिलित न कर सका। इसका कारण इस्लाम के समता-प्रधान सिद्धान्त हैं जिनमें समस्त मुसल्मानों को एक समान भाई मानने की शिक्षा दी गई है। आत्म-रक्षा के भाव से हिन्दुओं में वर्ण-व्यवस्था और भी कठोर हो गई। हिन्दुओं ने मुसलमानों को म्लेच्छ कहना शुरू कर दिया। हिन्दू मुसल्मानों को भारत से बाहर तो न निकाल सके, किन्तु हिन्दू समाज वैसे का वैसा बना रहा। अनेक राजनीतिक क्रान्तियां और उपद्रव हिन्दुओं की वर्ण-व्यवस्था में तनिक मात्र भी परिवर्तन न ला सके।

इतिहासकारों का यह अनुमान है कि वर्ण-व्यवस्था का अप्रत्यक्ष प्रभाव मुसलमानों पर भी पड़ा और मुसलमानों में भी जातिभेद प्रारम्भ हो गया।

वर्ण-व्यवस्था के गुण

वर्ण-व्यवस्था से हिन्दुओं ने अपने समाज तथा धर्म की रक्षा की है। इसी की सहायता से वे अन्य जातियों को हिन्दू समाज में सम्मिलित करने में सफल हुए हैं। मुसलमानों से पूर्व जितनी जातियां भारत में आईं वे सब कालान्तर में हिन्दू धर्म का एक अंग बन कर रह गईं।

विभिन्न सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों और जातियों को सदाचार, धार्मिक जीवन और सामाजिक नियंत्रण के सूत्र में बांधने का एक बड़ा कारण वर्ण-व्यवस्था ही रही है।

वर्ण-व्यवस्था के कारण हिन्दू समाज कला और विभिन्न उद्योग धन्धों में सन्तोषजनक उन्नति कर पाया है, क्योंकि वर्ण-व्यवस्था का आधार श्रम विभाग का सुविख्यात सिद्धान्त रहा है।

हिन्दू आदर्श, हिन्दू धर्म और हिन्दू सदाचार यदि आज युग-युगान्तरों के बाद भी पूर्ववत् उज्ज्वल हैं तो इसका मूल कारण वर्ण-व्यवस्था ही है। वर्ण-व्यवस्था का आधार रूढ़िप्रियता है।

हिन्दू समाज में एक और बड़ा गुण है जो वर्ण-व्यवस्था की देन है। वह है एक ही जात-बिरादरी में विपत्ति के समय परस्पर सहायता की प्रथा। आजकल सामर्थ्यहीन पीड़ितों की सहायता के लिए राष्ट्रीय सरकारें जो सुविशाल प्रबन्ध करती हैं, वह वर्ण-व्यवस्था ही प्रस्तुत कर देती थी क्योंकि जात-बिरादरी वाले एक दूसरे की मदद करना अपना कर्त्तव्य मानते थे।

वर्ण-व्यवस्था से आर्य हिन्दू लोग अपने जातीय रक्त की पवित्रता को अक्षुण्ण रख सके।

वर्ण-व्यवस्था के दोष

वर्ण-व्यवस्था ने हिन्दू समाज की प्रगति को रोक दिया। जो राष्ट्र पुरानी रूढियो के अनुसार विदेशी लोगो से खान-पान तक पर प्रतिबन्ध लगा दे वह दूसरे देशो में कला, विज्ञान और साहित्य को उन्नति से लाभ नही उठा सकता। उन्नति के लिए परस्पर सम्पर्क होना परमावश्यक है और वर्ण-व्यवस्था ऐसे सम्पर्क में सबसे बड़ी बाधा थी।

हिन्दू समाज को एक राष्ट्र नही कहा जा सकता। यह तो एक जाति समुदाय है। वर्ण-व्यवस्था ने सामूहिक और सयुक्त राष्ट्रीयता की भावना को पनपने नही दिया।

करोडो अछूतों के साथ दुर्व्यवहार हुआ। अत वे हिन्दू धर्म को छोड अन्य धर्मों के आश्रय में जाने लगे।

ब्राह्मणो और क्षत्रियो ने समाज की तमाम ऊची-ऊची पदवियो पर अपना एकमात्र आधिपत्य स्थापित कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि अन्य वर्णों में जन्म लेनेवाले लोग निम्नता के अभिशाप का शिकार हो गए। उनको उन्नति करने का और अपनी प्रतिभा को प्रगट करने का न तो अवसर प्राप्त हुआ और न ही कोई प्रोत्साहन मिला।

सामूहिक शक्ति का ह्रास होता चला गया।

वर्ण-व्यवस्था आधुनिक काल मे

पाश्चात्य देशो के साथ भारत के सम्पर्क के परिणामस्वरूप देश में वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध एक राष्ट्र-व्यापी आन्दोलन शुरू हो चुका है। रेल-यात्रा या मोटर बस की सवारी की हालत मे जात-पात और विशेषतया अस्पृश्यता के कडे नियमो का निभाना तो वैसे भी बहुत कठिन है। सरकार ने भी छूतछात को कानून द्वारा मनाही कर दी है। हमारे देश के विधान का एक निर्देशिक सिद्धान्त है कि छूतछात को दूर किया जाएगा।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में वर्ण-व्यवस्था का विकास कैसे हुआ ?
(२) वर्ण-व्यवस्था के गुण बताओ ?
(३) वर्ण व्यवस्था के क्या दोष थे ? वर्ण व्यवस्था ने भारत को क्या हानि पहुचाई।

: ११ :

महावीर और बुद्ध

आर्यों के आगमन से (लगभग २,००० वर्ष ई० पू०) महावीर और बुद्ध के जन्म (लगभग ५५० ई० पू०) तक, इन १४५० वर्षों में आर्य धर्म में महान् परिवर्तन हुए। आर्य धर्म प्रकृति पूजन के सीधे सादे धर्म के स्थान पर यज्ञ याग और कर्मकाण्ड का पेचीदा धर्म बन गया। केवल धनी लोग ही यज्ञ आदि करवा सकते थे क्योंकि इनमें दान-दक्षिणा की जरूरत होती थी और विद्वान् पण्डितों को बुलाना पड़ता था।

जनसाधारण एक बार फिर किसी सीधे सादे धर्म की खोज में थे जहाँ उन्हें शान्ति मिले। महावीर और बुद्ध ने उन्हें ऐसा धर्म दिया। लोग धड़ाधड़ जैन तथा बुद्ध धर्म को अपनाने लगे।

जैनमत

जैनमत के बारे में पाश्चात्य विद्वान यही समझते थे कि यह बुद्ध-मत की एक शाखा-विशेष का नाम है। परन्तु अब तो यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि जैन-मत अपने विशिष्ट रूप में गौतम बुद्ध से बहुत पहले चल रहा था। जैन परम्परा के अनुसार जैन मत एक शाश्वत और सनातन धर्म है जिसको विभिन्न 'तीर्थंकरों' या मनीषियों ने विभिन्न युगों में प्रतिपादन किया है। जैनियों का विश्वास है कि आज तक २४ तीर्थंकर हो चुके हैं जो सबके सब क्षत्रिय वंश में ही उत्पन्न हुए। सबसे पहले 'तीर्थंकर' का नाम 'ऋषभ' था और २४ वें तीर्थंकर स्वयं महावीर भगवान थे। जैनियों के पहले २२ तीर्थंकरों के विषय में इतिहासकार कुछ नहीं जानते। किन्तु २३ वें तीर्थंकर पार्श्व का उल्लेख इतिहास में आता है।

महावीर वर्धमान

वैशाली के निकटवर्ती एक बस्ती कुन्दग्राम में जैन-मत के २४ वें और अन्तिम सुप्रसिद्ध तीर्थंकर वर्धमान महावीर का जन्म ई० पूर्व ५९९ में हुआ। महावीर के बन्धु, बान्धव, सब पार्श्व के अनुयायी थे। इसलिए पार्श्व के उपदेशों का प्रभाव महावीर के जीवन पर निश्चित रूप से था।

विद्योपार्जन के उपरान्त महावीर ने विवाह किया और एक पुत्री का मुख भी देखा। किन्तु माता-पिता के देहावसान पर विरक्त हो गए और तीस वर्ष की तरुणावस्था में सत्य की खोज में उन्होंने संसार को त्याग दिया।

सन्यास के पहले तेरह महीने तो वर्धमान साधारण वेष में देशाटन करते रहे। फिर वे एकदम दिगम्बर हो गये और १२ वर्ष तक उन्होंने घोर तपस्या की। ४२ वर्ष की आयु में उनके अन्तःकरण में ज्योति का जागरण हुआ और वे वर्धमान से 'महावीर' हो गए। जीवन के दुःख और सुख पर विजय पानेवाले वर्धमान को संसार ने 'जिन' अर्थात 'विजेता' की उपाधि दी, और इसके अनुयायी जैन कहलाने लगे। ज्ञान-प्राप्ति के तीस साल बाद तक महावीर मगध, विदेह, कोसल (जिन्हें आजकल का बिहार और उत्तर प्रदेश कहा जाएगा) में अपने धर्म का प्रचार करते रहे। ई० पू० ५२७ में ७२ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हुआ।

जैनमत मुख्यत ब्राह्मणों के आधिपत्य के विरुद्ध एक विद्रोह था। उन्होंने ब्राह्मणों की परम्परागत पदवी को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। यह भी कहा कि जैन मत का द्वार आर्य और अनार्य सबके लिए खुला है।

(१) महावीर ने 'पार्श्व' के सिद्धान्तों में सवर्धन तथा सशोधन किया और ब्रह्मचर्य और वस्त्र-त्याग का विशेष प्रचार किया।

(२) जैन मत वेदों को ईश्वरीय ज्ञान नही मानता और न ही जैन लोग वैदिक रीतियों में विश्वास रखते हैं। बौद्धों अथवा साख्य शास्त्र के माननेवालो की तरह जैन मत का झुकाव नास्तिकता की ओर है। इसीलिए वह किसी को ससार का कर्त्ता, हर्ता नही मानता। ससार अनादि है, अनन्त है।

(३) जैनमत 'त्रिरत्नो' अर्थात् शुद्ध विचार, आचरण और ज्ञान को ही निर्वाण की साधना का उपाय मानता है।

(४) अहिंसा व्रत को जैनमत बहुत महत्व देता है। जैनियों की अहिंसा इतनी व्यापक है कि जिन पदार्थों को साधारणतया निष्प्राण माना जाता है, उन्हें भी किसी प्रकार की हानि न पहुचाने का आदेश जैन धर्म देता है। यही कारण है कि कट्टर जैन छना हुआ पानी पीते है और मुह पर कपडा बाध कर सास लेते हैं।

(५) जैनमत आवागमन और कर्म-विपाक के सिद्धान्तो को स्वीकार करता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से जैनमत वर्ण-व्यवस्था को नही मानता, किन्तु आजकल जैनमत जाति सम्बन्धी भेद-भाव से जकडा हुआ है।

(६) जैन मत तप, प्रायश्चित और त्याग की शिक्षा देता है। तप में यौगिक क्रिया और ध्यान भी शामिल है।

(७) जैनमत भिक्षु-प्रधान धर्म है। जैन-भिक्षुओं का जीवन साधारण लोगो की अपेक्षा अधिक कठिन होता है।

गौतम बुद्ध

कपिलवस्तु के शाक्यो द्वारा निर्वाचित राजा शुद्धोदन के पुत्र का नाम गौतम सिद्धार्थ था, जिन्हें ससार आज 'गौतम बुद्ध' कह कर स्मरण करता है। शाक्यो का राज उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के उत्तर में उस इलाके में था जिसे नेपाल की तराई कहते हैं।

गौतम का जन्म ईसा से पूर्व ५६७ में हुआ था। उनकी माता माया अपने पिता के घर से कपिलवस्तु को लौटती हुई लुम्बिनी गाव के समीप एक वाटिका में विश्राम कर रही थी कि इस दिव्य बालक का जन्म हुआ। इस घटना के लगभग तीन सौ साल पश्चात् सम्राट अशोक ने गौतम के जन्मस्थान पर स्तम्भ बनवाया और उस पर यह शिलालेख लगवाया 'यह भूमि शाक्यमुनि बुद्ध का जन्मस्थान है।' नेपाल में आजकल भी लुम्बिनी गाव के स्थान पर एक गाव बसा हुआ है।

सिद्धार्थ का विवाह अट्ठारह वर्ष की आयु में ही एक सुन्दर युवती यशोधरा से कर दिया गया था। गौतम को उसके पिता ने एक मनोरम उद्यान में बन्दी के समान रखा क्योंकि वह नहीं चाहता था कि ससार के दुखो का आभास-मात्र भी गौतम के जीवन पर अपनी कालिमा छोड जाए। किन्तु सासारिक विलास में गौतम का विरक्त मन उलझ न सका। उन्होंने एक बार एक बूढ़े को देखा जिसकी पीठ कुबडी

: ११ :

महावीर और बुद्ध

आर्यों के आगमन से (लगभग २,००० वर्ष ई० पू०) महावीर और बुद्ध के जन्म (लगभग ५५० ई० पू०) तक, इन १४५० वर्षों में आर्य धर्म में महान् परिवर्तन हुए। आर्य धर्म प्रकृति पूजन के सीधे सादे धर्म के स्थान पर यज्ञ याग और कर्मकाण्ड का पेचीदा धर्म बन गया। केवल धनी लोग ही यज्ञ आदि करवा सकते थे क्योंकि इनमें दान-दक्षिणा की जरूरत होती थी और विद्वान् पण्डितों को बुलाना पड़ता था।

जनसाधारण एक बार फिर किसी सीधे सादे धर्म की खोज में थे जहाँ उन्हें शान्ति मिले। महावीर और बुद्ध ने उन्हें ऐसा धर्म दिया। लोग धड़ाधड़ जैन तथा बुद्ध धर्म को अपनाने लगे।

जैनमत

जैनमत के बारे में पाश्चात्य विद्वान यही समझते थे कि यह बुद्ध-मत की एक शाखा-विशेष का नाम है। परन्तु अब तो यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि जैन-मत अपने विशिष्ट रूप में गौतम बुद्ध से बहुत पहले चल रहा था। जैन परम्परा के अनुसार जैन मत एक शाश्वत और सनातन धर्म है जिसको विभिन्न 'तीर्थकरों' या मनीषियों ने विभिन्न युगों में प्रतिपादन किया है। जैनियों का विश्वास है कि आज तक २४ तीर्थंकर हो चुके हैं जो सबके सब क्षत्रिय वंश में ही उत्पन्न हुए। सबसे पहले 'तीर्थंकर' का नाम 'ऋषभ' था और २४ वें तीर्थंकर स्वयं महावीर भगवान थे। जैनियों के पहले २२ तीर्थंकरों के विषय में इतिहासकार कुछ नहीं जानते। किन्तु २३ वें तीर्थंकर पार्श्व का उल्लेख इतिहास में आता है।

महावीर वर्धमान

वैशाली के निकटवर्ती एक बस्ती कुन्दग्राम में जैन-मत के २४ वें और अन्तिम सुप्रसिद्ध तीर्थंकर वर्धमान महावीर का जन्म ई० पूर्व ५९९ में हुआ। महावीर के बन्धु, बान्धव, सब पार्श्व के अनुयायी थे। इसलिए पार्श्व के उपदेशों का प्रभाव महावीर के जीवन पर निश्चित रूप से था।

विद्योपार्जन के उपरान्त महावीर ने विवाह किया और एक पुत्री का मुख भी देखा। किन्तु माता-पिता के देहावसान पर विरक्त हो गए और तीस वर्ष की तरुणावस्था में सत्य की खोज में उन्होंने संसार को त्याग दिया।

सन्यास के पहले तेरह महीने तो वर्धमान साधारण वेष में देशाटन करते रहे। फिर वे एकदम दिगम्बर हो गये और १२ वर्ष तक उन्होंने घोर तपस्या की। ४२ वर्ष की आयु में उनके अन्त करण में ज्योति का जागरण हुआ और वे वर्धमान से 'महावीर' हो गए। जीवन के दुख और सुख पर विजय पानेवाले वर्धमान को संसार ने 'जिन' अर्थात् 'विजेता' की उपाधि दी, और इसके अनुयायी जैन कहलाने लगे। ज्ञान-प्राप्ति के तीस साल बाद तक महावीर मगध, विदेह, कोसल (जिन्हें आजकल का बिहार और उत्तर प्रदेश कहा जाएगा) में अपने धर्म का प्रचार करते रहे। ई० पू० ५२७ में ७२ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हुआ।

जैनमत मुख्यतः ब्राह्मणो के आधिपत्य के विरुद्ध एक विद्रोह था। उन्होने ब्राह्मणो की परम्परागत पदवी को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। यह भी कहा कि जैन मत का द्वार आर्य और अनार्य सबके लिए खुला है।

(१) महावीर ने 'पार्श्व' के सिद्धान्तो में सवर्धन तथा सशोधन किया और ब्रह्मचर्य और वस्त्र-त्याग का विशेष प्रचार किया।

(२) जैन मत वेदो को ईश्वरीय ज्ञान नही मानता और न ही जैन लोग वैदिक रीतियो में विश्वास रखते है। बौद्धो अथवा साख्य शास्त्र के माननेवालो की तरह जैन मत का झुकाव नास्तिकता की ओर है। इसीलिए वह किसी को ससार का कर्त्ता, हर्ता नही मानता। संसार अनादि है, अनन्त है।

(३) जैनमत 'त्रिरत्नो' अर्थात् शुद्ध विचार, आचरण और ज्ञान को ही निर्वाण की साधना का उपाय मानता है।

(४) अहिंसा व्रत को जैनमत बहुत महत्त्व देता है। जैनियो की अहिंसा इतनी व्यापक है कि जिन पदार्थो को साधारणतया निष्प्राण माना जाता है, उन्हें भी किसी प्रकार की हानि न पहुचाने का आदेश जैन धर्म देता है। यही कारण है कि कट्टर जैन छना हुआ पानी पीते है और मुह पर कपडा वाध कर साम लेते है।

(५) जैनमत आवागमन और कर्म-विपाक के सिद्धान्तो को स्वीकार करता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से जैनमत वर्ण-व्यवस्था को नही मानता, किन्तु आजकल जैनमत जाति सम्बन्धी भेद-भाव से जकडा हुआ है।

(६) जैन मत तप, प्रायश्चित और त्याग की शिक्षा देता है। तप में यौगिक क्रिया और ध्यान भी शामिल है।

(७) जैनमत भिक्षु-प्रधान धर्म है। जैन-भिक्षुओ का जीवन साधारण लोगो की अपेक्षा अधिक कठिन होता है।

गौतम बुद्ध

कपिलवस्तु के शाक्यो द्वारा निर्वाचित राजा शुद्धोदन के पुत्र का नाम गौतम सिद्धार्थ था, जिन्हें ससार आज 'गौतम बुद्ध' कह कर स्मरण करता है। शाक्यो का राज उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के उत्तर में उस इलाके में था जिसे नेपाल की तराई कहते हैं।

गौतम का जन्म ईसा से पूर्व ५६७ में हुआ था। उनकी माता माया अपने पिता के घर से कपिलवस्तु को लौटती हुई लुम्बिनी गाव के समीप एक वाटिका में विश्राम कर रही थी कि इस दिव्य बालक का जन्म हुआ। इस घटना के लगभग तीन सौ साल पश्चात् सम्राट अशोक ने गौतम के जन्मस्थान पर स्तम्भ बनवाया और उस पर यह शिलालेख लगवाया 'यह भूमि शाक्यमुनि बुद्ध का जन्मस्थान है।' नेपाल में आजकल भी लुम्बिनी गाव के स्थान पर एक गाव बसा हुआ है।

सिद्धार्थ का विवाह अट्ठारह वर्ष की आयु में ही एक सुन्दर युवती यशोधरा से कर दिया गया था। गौतम को उसके पिता ने एक मनोरम उद्यान में बन्दी के समान रखा क्योकि वह नहीं चाहता था कि ससार के दुखो का आभास-मात्र भी गौतम के जीवन पर अपनी कालिमा छोड जाए। किन्तु सासारिक विलास में गौतम का विरक्त मन उलझ न सका। उन्होने एक बार एक बूढ़े को देखा जिसकी पीठ कुबडी होकर कमान

बन गई थी। उस बूढ़े ने कहा, "यौवन के बाद ऐसे दिन भी आते हैं।" एक अवसर पर गौतम ने देखा कि लोग शव को जलाने के लिए ले जा रहे थे। जीवन के इस दुखमय अन्त को देख कर सिद्धार्थ के मन पर चोट लगी। उन्होंने मानव जाति की मोक्ष में संसार को त्यागने का निश्चय कर लिया। इन्हीं दिनों यशोधरा ने एक पुत्र को जन्म दिया। जब उन्हें पुत्र के जन्म का समाचार मिला तो उन्होंने कहा—"मेरे बन्धन और भी सुदृढ़ हो रहे हैं।"

अभी पुत्र के जन्म को थोड़ा ही समय हुआ था कि गौतम ने गृह त्याग का निश्चय कर लिया। वह सामाजिक दुखों से मुक्ति का मार्ग ढूंढना चाहते थे। रात के अन्धेरे में एक दिन उन्होंने वैराग्य ले लिया। अपनी धर्मपत्नी और पुत्र पर एक बार प्रेम की दृष्टि डाल कर गौतम राजप्रासाद से बाहर निकल आए।

गौतम बुद्ध स्कूल में—अजन्ता का एक चित्र

वैराग्य लेते ही गौतम ने राजसी वेष को तिलांजलि दे दी और एक साधु बन कर घोर तपस्या आरम्भ कर दी। गया के समीप उरुवेला के जंगलों में वह पूरे छः साल तक घोर तपोमय जीवन व्यतीत करते रहे किन्तु उनका मन शान्त न हुआ। लम्बे और कठोर व्रतों और उपवासों से उनका शरीर दुर्बल हो गया। उन्होंने यह मार्ग भी छोड़ दिया। गौतम के शिष्यों और मित्रों ने उन्हें छोड़ दिया। हताश और निरुत्साह होकर गौतम नरंजर नदी के तट पर जाकर रहने लगे। एक बार जब गौतम ने पीपल के वृक्ष की छाया में समाधि लगाई

तो उनके अन्त करण में एक ज्योति सी जाग उठी। जब समाधि समाप्त हुई तो गौतम सिद्धार्थ सारे ससार का पथ-प्रदर्शक गौतम बुद्ध बन चुका था।

३५ वर्ष की आयु में गौतम ने निश्चय किया कि जिस ज्योति ने उनकी अन्तरात्मा को शात किया है, उसका आलोक वह अन्धकार में भटकती हुई दुनिया को दिखावेंगे। अपने जीवन के शेष ४४ साल उन्होने अपने सिद्धान्तो के प्रचार में अर्पण कर दिए। गौतम बुद्ध स्वय प्रचार कार्य करते थे। उन्होने देश-देशान्तरो में अपने शिष्यो को भी भेजा। गौतम बुद्ध का मुख्य प्रचार-क्षेत्र मगध में ही रहा, क्योकि वहा बहुत से क्षत्रिय वशो से उनके अच्छे सम्बन्ध थे। उनके पिता ने उनको कपिलवस्तु आने का निमत्रण दिया। तथागत भगवान् वहा गए और कई लोग इनके मत में प्रविष्ट हुए। इनके पिता, धर्मपत्नी और पुत्र तथा कई सगे सम्बन्धियो ने भी बौद्धमत की शरण ली।

गौतम बुद्ध ने प्रचार कार्य के साथ भिक्षुओं की एक नई सस्था अर्थात् 'सघ' चलाय। भगवान बुद्ध के देहावसान के बाद यह 'सघ' ससार में सबसे बडी धार्मिक सस्था बन गया।

अपना काम सफलतापूर्वक समाप्त करके ८० वर्ष की आयु में कुशीनगर (वर्तमान कुसीनारा जिला गोरखपुर) के स्थान पर गौतम बुद्ध ने प्राण त्याग किए।

महात्मा बुद्ध की शिक्षा

गौतम बुद्ध का इरादा कोई नया धर्म चलाने का नही था। वह उन बीसियो क्षत्रिय राजकुमारो में से एक थे जो निर्वाण प्राप्ति के लिए ससार का त्याग देते थे। उनका मुख्य लक्ष्य तो ससार से दुख को दूर करना था। जब उन्हें दुख को दूर करने का उपाय मिला तो उन्होने अपने शिष्यो से कहा—'मैने एक प्राचीन मार्ग खोजा है—वह मार्ग जिस पर विगत युगो के हमारे कई बुद्ध चल चुके हैं ।' इन शब्दो से बुद्ध के वास्तविक उद्देश्य स्पष्ट हो जाते हैं।

(१) भगवान् बुद्ध के धर्म में कोई विशेष नवीनता न थी। उन्होने कर्म-विपाक तथा आवागमन के प्राचीन सिद्धान्तो का लोगो की बोलचाल की भाषा में प्रतिपादन किया। उनकी सारी विचारधारा में ईश्वर का नाम तक नही था। उन्होने अहिंसा को धर्म का अग बना दिया।

(२) गौतम बुद्ध ने ससार को दुखमय और जीवन को व्ययपूर्ण देखा। वे ससार को कल्याण का मार्ग दिखाना चाहते थे। बौद्धो का मन्तव्य है कि जीवन पीडा का दूसरा नाम है, इस पीडा का कारण सासारिक सुख के लिए स्पृहा और जीवन लालसा है। यही लालसा जीवन-मरण का चक्र चलाती है। यह पीडा तभी समाप्त होगी जब प्राणिमात्र अष्टमार्ग का अनुसरण करेंगे। अष्टमार्ग यह है—सद्विचार, सद्भावना, सत्कार्य, सद्भाषण, सदाचार, सत्प्रयास, सत्चेतना और सत्-चिंतन।

(३) निर्वाण क्या है ? गौतम बुद्ध जन्म-मरण के चक्र से जीवन की मुक्ति को निर्वाण कहते थे। सबसे अच्छी मृत्यु वही है जबकि मरते समय स्पृहा न रहे। स्पृहा ही पुनर्जन्म का कारण होती है। गौतम बुद्ध न केवल कर्म-विपाक के सिद्धान्त को स्वीकार करते थे, बल्कि उन्होने तो इस सिद्धान्त को अपने प्रचार का विशेष आधार बनाया। उन्होने कहा—"जन्म एक अभिशाप है। पुनर्जन्म के बन्धनो से मुक्त होना सबसे

: १२ :

मौर्य्य सम्राज्य

मौर्य-युग भारतीय इतिहास में विशेष महत्व रखता है। मौर्य राजाओ ने डेढ़ शताब्दी तक भारतवर्ष पर राज किया। परन्तु इस काल में भारतीय सभ्यता, कला, विज्ञान तथा शिक्षा ने बडी उन्नति की। मौर्यकाल भारत में शान्ति, समृद्धि तथा प्रगति का काल था।

सिकन्दर महान

महान सिकन्दर का उल्लेख हम प्राचीन यूनान के अध्याय में कर चुके हैं। हमने बताया था कि युवा सिकन्दर यूनान से लेकर भारत तक, रास्ते के सब देशों को रौंदता हुआ ई० पू० ३२७ में अफगानिस्तान के रास्ते भारत आया। यहा उसे काफी प्रतिरोध का सामना करना पडा। सर्वप्रथम अफगानिस्तान तथा हिन्दुकुश पर्वत के कुछ कबीलों ने उसे रोका। फिर सिन्धु नदी को पार करके सिकन्दर ने तक्षशिला (टैक्सला) नगर में प्रवेश किया। तक्षशिला के राजा अम्भी ने अपने देश से द्रोह किया। सिकन्दर से लडने के स्थान पर वह उसके साथ मिल गया। यही नही, उसने सिकन्दर को आगे बढने में पूरी-पूरी सहायता दी। यहा कुछ देर विश्राम करने के उपरान्त सिकन्दर जेहलम नदी की ओर बढा। उस समय जेहलम और चनाब नदी के बीच एक शक्तिशाली राज्य था। यहा के राजा का नाम पुरु था, जिसे यूनानियो ने पोरस कहा है। पुरु बडा वीर तथा पराक्रमी राजा था। वह अम्भी की तरह कायर न था। सिकन्दर का मुकाबला करने के लिए उसने जेहलम के दूसरे किनारे पर अपनी सेना खड़ी कर दी। इस सेना में पैदल, घुडसवार, हाथी तथा रथ थे। यूनानियो ने पहले कभी हाथी नही देखा था। इसलिए हाथियों को देख कर वे काप उठे। कई दिनों तक सिकन्दर की सेना जेहलम के दूसरे किनारे पर खैम गाडे पडी रही। उन्हें नदी पार करने का साहस नहीं हुआ। एक दिन रात के अन्धेरे में २० मील ऊपर की तरफ जाकर सिकन्दर ने अपनी सेना के एक बडे हिस्से के साथ जेहलम नदी को पार किया और अकस्मात पुरु की सेना पर हमला बोल दिया। दुर्भाग्यवश उस रात वर्षा होने से फिसलन हो गई थी। भारतीय हाथी तथा रथ अच्छी तरह हरकत न कर सके। भारत के धनुर्धारी योद्धा धनुष न चला सके, क्योंकि जमीन गीली थी। धनुष चलाने के लिये उसका एक सिरा पाव से दबाना पड़ता था और पाव वर्षा के कारण जमीन पर टिक नहीं पाता था। फिर भी भारतीय सैनिक बड़ी वीरता से लडे। बहुत से यूनानी सिपाही मारे गए, परन्तु पुरु की सेना के हाथी भडक उठे और उन्होने पीछे मुड कर अपनी ही सेना को कुचलना शुरू कर दिया। इस प्रकार पुरु की सेना हार गई। पुरु बडी वीरता से लडा और उसे सात घाव आए। जब पुरु को पकड कर सिकन्दर के सामने लाया गया तो सिकन्दर ने पूछा—"तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया जाए?" पुरु ने उत्तर दिया—"जैसा राजा-राजाओ से करते हैं।" इस साहसपूर्ण उत्तर को सुन कर सिकन्दर बहुत खुश हुआ और पुरु को उसका राज्य लौटा दिया।

अब सिकन्दर दूसरे प्रदेशो को जीतने के लिए व्यास नदी की ओर बढा, परन्तु यूनानी सैनिक डर चुके थे। उन्होने राजा पुरु तथा उनके सैनिको की वीरता देख ली थी। इसके अलावा उन्होने सुन रखा था कि मगध में नद-वश का शक्तिशाली राज्य है। यूनानी सरदारो ने आगे बढने से इनकार कर दिया। निराश होकर सिकन्दर भारत से लौट गया। ३२ वर्ष की आयु में ई०पू० ३२३ में इस विश्वविजयी योद्धा को मृत्यु ने जीत लिया।

सिकन्दर के हमले का भारत पर कोई स्थायी प्रभाव न पडा। यह हमला एक आधी की तरह था जो आई और चली गई। सिकन्दर के मरने के बाद उसका साम्राज्य टुकडे-टुकडे हो गया। यूनानियो को भारत ने निकाल दिया गया और हमारे समाज, धर्म, कला या उद्योग पर उनका कोई प्रभाव न पडा। भारतीय सिकन्दर के हमले को पूर्णत भूल गए। प्राचीन भारतीय साहित्य में कही भी सिकन्दर के हमले का उल्लेख नही। भारत में सिकन्दर के आगमन के बारे में हमें यूनानी इतिहासकारो से ही पता चला है।

जिस समय सिकन्दर ने भारतवर्ष पर हमला किया, मगध पर नद-वश का राज्य था। इस वश का आखिरी राजा घननद बडा अत्याचारी था। प्रजा उससे दु खी तथा असन्तुष्ट थी। चन्द्रगुप्त घननद के सेनापति का पुत्र था। सिकन्दर के हमले के उपरान्त वह पजाब आ गया। यहाँ आकर उसने स्थानीय हिन्दू राजाओ की मदद से यूनानी शासकों को निकालने की चेष्टा की। इस प्रकार वह पंजाब में विदेशियो के विरुद्ध हो रहे राष्ट्रीय आन्दोलन का नेता बन गया। यूनानियो को हराकर वह पजाब का राजा बन गया। इस सारे काम में उसे एक चतुर ब्राह्मण चाणक्य से बडी मदद मिली। चाणक्य बाद में चन्द्रगुप्त का मन्त्री बन गया। ३२१ ई० पू० में चाणक्य की सलाह से चन्द्रगुप्त ने मगध पर हमला किया। नद राजा लडाई में काम आया और मगध की राजगद्दी पर चन्द्रगुप्त बैठा। उसने मौर्य-वश की स्थापना की, क्योंकि वह मौर्य-क्षत्रिय था।

चंद्रगुप्त मौर्य (ई० पू० ३२१—ई० पू० २८७)

भारत के इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य का बडा ऊचा स्थान है। वह पहला भारतीय सम्राट था जिसने देश को एकता की लडी में पिरो दिया।

चन्द्रगुप्त बडा वीर तथा पराक्रमी राजा था। चन्द्रगुप्त के गद्दी पर बैठने से पूर्व उत्तरी भारत के छोटे-छोटे राजाओं में आपसी फूट थी। चन्द्रगुप्त ने इसका लाभ उठाकर सिन्धु नदी तक के प्रदेशो को अपने अधीन कर लिया। इसके अतिरिक्त उसने मालवा, गुजरात, काठियावाड, इत्यादि इलाको को जीत लिया। चन्द्रगुप्त ने एक विशाल सेना लेकर विन्ध्य पर्वत को पार करके दक्षिण भारत में मद्रास, मैसूर इत्यादि प्रदेशो को भी अपने राज्य में मिला लिया। इस प्रकार वह भारत का एकछत्र सम्राट बन गया।

हम पहले बता चुके हैं कि चन्द्रगुप्त ने यूनानियो को पजाब से निकाल दिया था। सिकन्दर के एक सेनापति सेल्यूकस ने इस अपमान का बदला लेने की ठानी। ईसा से ३०५ वर्ष पूर्व सेल्यूकस ने एक विशाल सेना के साथ भारत पर हमला कर दिया। चन्द्रगुप्त पहले ही तैयार था। सेल्यूकस को मुहकी खानी पडी। सन्धि होने पर सेल्यूकस ने काबुल, हिरात, कन्धार तथा बिलोचिस्तान के इलाके मौर्य सम्राट को दे दिए। उसने अपनी पुत्री का विवाह भी चन्द्रगुप्त से कर दिया। चन्द्रगुप्त ने ५०० हाथी अपने ससुर को उपहार के रूप में दिये। सेल्यूकस ने मैगस्थनीज नामक अपना एक राजदूत पाटलिपुत्र में चन्द्रगुप्त के दरबार में भेजा। मैगस्थनीज ने मौर्य-काल के भारत का विस्तृत विवरण लिखा है।

चन्द्रगुप्त ने ३४ वर्ष तक राज्य किया। २८७ ई० पू० में इस प्रतापी सम्राट का देहान्त हो गया।

बिन्दुसार

चन्द्रगुप्त की मृत्यु के बाद उसका पुत्र बिन्दुसार राजसिंहासन पर बैठा। वह अपने पिता की तरह वीर तथा पराक्रमी था। उसने न केवल अपने पिता के राज्य को सुरक्षित रखा, बल्कि कई नए राज्य भी मौर्य-साम्राज्य में सम्मिलित किए। कलिंग को छोड कर सारा दक्षिण भारत मौर्य-साम्राज्य का अग बन चुका था। सम्राट बिन्दुसार ने विदेशी राजाओ से सम्बन्ध स्थापित किए। बिन्दुसार ने लगभग २५ साल तक भारतवर्ष पर राज्य किया। उसका राज्य काल शांति तथा समृद्धि का काल था। वह अपने पुत्र अशोक के लिए एक विशाल तथा वैभवशाली राज्य छोड गया।

सम्राट अशोक (ई० पू० २७३ से २३२ तक)

२७३ ई० पू० में सम्राट बिन्दुसार की मृत्यु पर उनका पुत्र अशोक मगध के सिंहासन पर बैठा। अशोक भी अपने बाप और दादा की भांति बडा वीर तथा पराक्रमी था। सिंहासन पर बैठने से पूर्व वह तक्षशिला तथा उज्जैन का प्रशासक अथवा वायसराय रह चुका था। इस प्रकार उसे शासन-प्रबन्ध का काफी अनुभव प्राप्त था।

राजगद्दी पर बैठने के कुछ समय बाद अशोक ने कलिंग पर हमला कर दिया। इस राज्य ने अभी तक मौर्य सम्राटो की अधीनता स्वीकार नहीं की थी। कलिंग की लड़ाई अशोक की पहली तथा अन्तिम लड़ाई सिद्ध हुई। कलिंग के लोग बडी वीरता से लडे, परन्तु जीत अशोक की हुई। इस लडाई में अशोक के अपने अनुमान के अनुसार एक लाख आदमी मारे गए, डेढ लाख पकडे गए और इनसे कई गुना ज्यादा लड़ाई के बाद अकाल तथा महामारी में मर गए। अशोक ने कलिंग को तो जीत लिया, परन्तु इसे इस विजय से हर्ष नहीं हुआ। वह सोचने लगा कि यदि वह अपने राज्य को बढ़ाने के लिए कलिंग पर चढ़ाई न करता तो इतने लोगों की हत्या न होती। उसे बडा पश्चाताप हुआ। अतः अशोक ने प्रण किया कि भविष्य में वह अपने स्वार्थ के लिए किसी देश पर चढाई नहीं करेगा।

बौद्ध-मत में प्रवेश

कलिंग युद्ध के बाद अशोक बौद्ध-धर्म की ओर आकर्षित हो गया था। मथुरा के एक बौद्ध भिक्षु उपगुप्त ने अशोक को बौद्ध बना लिया। बौद्ध-धर्म स्वीकार करने के बाद अशोक बौद्ध-तीर्थस्थानों की यात्रा के लिए चल पडा। अशोक ने लुम्बिनी की यात्रा की जहां भगवान् बुद्ध पैदा हुए थे। तदुपरान्त वह कपिलवस्तु गया जहां महात्मा बुद्ध का बचपन बीता था। उसने सारनाथ, बुद्ध गया इत्यादि तीर्थों की भी यात्रा की।

अशोक स्वयं पीले वस्त्र धारण करके भिक्षु बन गए। बौद्ध-धर्म के प्रचार के लिए उन्होंने राज्य के सारे साधनों का प्रयोग किया, परन्तु इसके साथ-साथ शासन-व्यवस्था को भी कमजोर होने नहीं दिया। अब अशोक के सामने केवल दो लक्ष्य थे—धर्म-प्रचार तथा जनता की सेवा।

बौद्ध बनने से पहले अशोक के सरकारी भोजनालय में प्रतिदिन हजारो पशुओं की हत्या की जाती थी। उसने यह हत्या बन्द करवा दी। राज्य में पशुओं की हत्या पर भी प्रतिबन्ध लगा दिए गए।

बौद्ध-धर्म का प्रचार

बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए अशोक ने महात्मा बुद्ध के उपदेश शिलाओं पर खुदवा दिए। ये शिला-लेख आज भी भारत के कुछ स्थानों में उपलब्ध हैं।

सरकारी अफसरों को आज्ञा थी कि वे जगह-जगह घूम कर जनता में धर्म तथा सदाचार का प्रचार करें। अशोक स्वयं भी राज्य का दौरा करके लोगों को धर्म की शिक्षा दिया करता था। उसने भारत के कोने-कोने में बौद्ध-भिक्षुओं को धर्म के प्रचार के लिए भेजा।
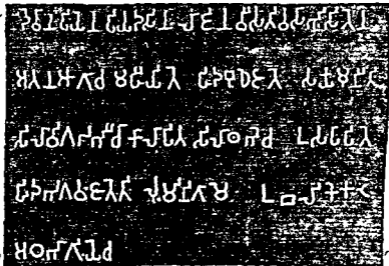
अशोक का एक शिलालेख

भारत के विभिन्न भागों में बुद्ध के सन्देश को पहुंचाने से ही अशोक को सन्तोष नहीं हुआ। उसने सीरिया, मिस्र, मैकडोनिया इत्यादि देशों के बादशाहों के पास अपने धार्मिक दूत भेजे। उसने अपने भाई महेंद्र तथा बहन संघ मित्रा को धर्म-प्रचार के लिए लंका भेजा।

बौद्ध-धर्म के प्रचार के लिए अशोक ने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र में बौद्ध विद्वानों तथा साधुओं का एक सम्मेलन किया।

अशोक की महानता

अशोक संसार में पहला सम्राट था जिसने शस्त्रों के स्थान पर धर्म तथा सेवा से जनता के हृदयों को जीता। चालीस साल तक अशोक ने भारत-भूमि पर राज्य किया। इस संक्षिप्त से समय में उसने बौद्ध धर्म को एक स्थानीय सम्प्रदाय से उठाकर विश्व-धर्म बना दिया। आज दुनिया की कुल आबादी का पांचवा भाग बौद्ध मत का अनुयायी है। इस बात का श्रेय अशोक को ही प्राप्त है। अशोक को दुनिया का एक महानतम

सम्राट समझा जाता है। विश्व के इतिहास में अशोक जैसा लोकप्रिय और सफल शासक मिलना कठिन है।

अशोक का शासन

अशोक अपनी प्रजा से बड़ा प्यार करता था। प्रजा जनों को वह अपने पुत्र के समान समझता था। अपने एक शिलालेख में अशोक ने लिखा है कि जिस प्रकार मैं अपने पुत्रों का इस लोक तथा परलोक में भला चाहता हूँ, उसी प्रकार मैं अपने प्रजाजनों का हित चाहता हू। अशोक ने इस वचन को पूरी तरह निभाया। उसके राज्य में प्रजा सुखी थी। राज्य के अधिकारियों को आदेश था कि वे अपने आपको जन-सेवक समझें।

अशोक स्तम्भ

अशोक बौद्ध था, परन्तु वह सब धर्मों का आदर करता था। वह ब्राह्मणों तथा जैनियों को भी दान दिया करता था।

लोगों की भलाई के लिए अशोक ने सड़कें बनवाईं। सड़कों के किनारों पर छायादार पेड़ लगवाये गए। मुसाफिरों की सुविधा के लिए आध-आध कोस के फासले पर कुए तथा धर्मशालाए भी बनवा दीं।

सम्राट अशोक ने बहुत से अस्पताल खोले जहा लोगों की मुफ्त चिकित्सा होती थी। पशुओं के लिए भी चिकित्सालय खोले गए।

अशोक शायद विश्व का सबसे महान् सम्राट था। उसने अपना सारा जीवन धर्म तथा जनता की सेवा में व्यतीत कर दिया। आज भी सारा ससार उसका आदर करता है। उसकी इसी महानता के कारण भारत सरकारने अपना राज-चिन्ह वही चुना है, जो अशोक का था, क्योंकि अशोक न्याय, धर्म तथा प्रेम का प्रतीक था।
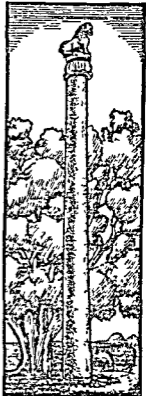
मौर्य्य साम्राज्य का अंत

दुर्भाग्यवश अशोक ने धर्म का जो साम्राज्य स्थापित किया था वह देर तक टिक न सका। उसके उत्तराधिकारी कमजोर तथा नालायक थे। अशोक के स्वर्गवास होने पर विशाल मौर्य-राज्य टुकड़े-टुकड़े हो गया। दूर-दूर के प्रान्त स्वतन्त्र होने लगे। १८५ ई० पू० में मौर्य-वंश के अन्तिम राजा बृहद्रथ को उसके मन्त्री पुष्य मित्र ने मार डाला और स्वयं मगध का राज्य संभाल लिया। इस प्रकार महान् मौर्य-वंश का अन्त हुआ।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में महान सिकन्दर की विजय यात्रा के बारे में आप क्या जानते हैं?
(२) चन्द्रगुप्त मौर्य कैसे राजा बना? उसके राज्यकाल में भारत का वर्णन करो।
(३) अशोक ने बौद्ध-मत क्यों स्वीकार किया? बौद्ध-धर्म के प्रचार के लिए सम्राट अशोक ने क्या किया?
(४) अशोक ने प्रजा की भलाई के लिए कौन-कौन से पग उठाए? अशोक क्यों महान् है?

: १३ :

भारतीय इतिहास का स्वर्ण-युग

भारत में गुप्त सम्राटों के दो सौ वर्षीय राज्य को भारतीय इतिहास का स्वर्ण-युग कहते हैं। यह युग-हिन्दू-धर्म, भारतीय कला, साहित्य, शिक्षा तथा व्यापार के पुनरुत्थान का युग है। गुप्तकाल में भारत ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति की। इसलिये इसे स्वर्ण-युग का नाम दिया जाता है।

मौर्य साम्राज्य के अन्त पर भारत छोटे-छोटे राज्यों में बंट गया था। मौर्य-काल में सारा देश एक शासन-सूत्र में बंधा हुआ था। परन्तु अब भारत को एक-लड़ी में पिरोकर रखनेवाली कोई शक्ति नहीं थी। मगध का राज्य बिल्कुल कमजोर हो चुका था। पहली शताब्दी ई० में भारत में कुशान जाति का एक प्रतापी राजा कनिष्क हुआ। कुशानजाति एक घूमने-फिरनेवाली खानाबदोश जाति थी जिसने पश्चिमोत्तर भारत में अपना राज्य स्थापित कर लिया था। कनिष्क की राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) थी। उसने अपने राज्य का बड़ा विस्तार किया। उसने मगध को जीत लिया। कनिष्क का साम्राज्य अफगानिस्तान, काश्मीर, सिन्ध, पंजाब, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी भारत में मालवा तक फैला हुआ था। चीन से युद्ध करके उसने काशगर, यारकन्द, और खोतान प्रान्तों पर कब्जा कर लिया। ख्यात है कि लगभग ४२ वर्ष तक राज करने के बाद वह प्रतापी राजा १२० ई० सन् में परलोक सिधार गया। कनिष्क बौद्ध-धर्म को माननेवाला था। बौद्धमत के प्रसार के लिए उसने बड़े यत्न किए। कनिष्क के बाद उसके उत्तराधिकारी कमजोर निकले और कुशान साम्राज्य के अन्त तथा गुप्त-राज्य के आरम्भ तक लगभग २०० वर्ष के भारतीय इतिहास का कुछ पता नहीं चलता।

चन्द्रगुप्त प्रथम (३२०–३३५ ई०)—चन्द्रगुप्त प्रथम राजा घटोत्कच का पुत्र था। उसीने वास्तव में भारत में गुप्त साम्राज्य की नींव रखी। पाटलिपुत्र के लिच्छवी वंश की राजकुमारी कुमारदेवी से विवाह करके उसने अपनी प्रतिष्ठा बढ़ा ली। चन्द्रगुप्त बड़ा वीर तथा पराक्रमी राजा था। उसने अपना राज्य पाटलिपुत्र से अयोध्या और प्रयाग तक फैला लिया और महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण की। ३२० ई० में उसने अपना गुप्त संवत् चलाया और ३३५ ईस्वी में वह प्रतापी राजा परलोक सिधार गया।

समुद्रगुप्त (३३५–३७५ ई०)—यदि चन्द्रगुप्त प्रथम ने गुप्त साम्राज्य की नींव रखी तो उसके पुत्र समुद्रगुप्त ने उसे वास्तविक चक्रवर्ती रूप दिया। वह एक कुशल शासक और वीर सेनापति ही न था, बल्कि एक कवि भी था। उसे गायन-विद्या से बड़ा लगाव था।

समुद्रगुप्त के बारे में अधिकांश जानकारी इलाहाबाद के पास अशोक के एक स्तम्भ पर समुद्रगुप्त की प्रशंसा में लिखी गई एक कविता से मिलती है। इस कविता में समुद्रगुप्त के राज्य तथा उसकी जीतों का वर्णन है।

समुद्रगुप्त ने प्रायः सारे भारतवर्ष को अपने अधीन कर लिया था। गद्दी पर बैठते ही वह विजय-यात्रा पर निकल पड़ा और एक के बाद दूसरे राज्य को जीतता हुआ वह भारत का चक्रवर्ती सम्राट बन गया। अपनी इन विजयों के उपलक्ष में समुद्रगुप्त ने अश्वमेध यज्ञ किया और ब्राह्मणों को हजारों गायें तथा स्वर्ण-मुद्रायें दान में दीं

समुद्रगुप्त का राज्य पूर्व में ब्रह्मपुत्र से लेकर पश्चिम मे यमुना तक और उत्तरमें हिमालय से शुरू होकर दक्षिण में नर्मदा तक फैला हुआ था। उसका राज्य तो बडा था ही, उसका राजनीतिक दबदबा भी दूर-दूर तक फैला हुआ था। नैपाल, आसाम, पूर्वी बगाल, कमाऊ, गढवाल इत्यादि सीमावर्ती राज्यों के राजा उसे अपना अधिपति मानते थे। राजपूताना तथा पजाब के लोकतत्रीय कबीले उसे भेंट देते थे। एशिया के कुछ देशो के साथ समुद्रगुप्त के कूटनीतिक सम्बन्ध थे। काबुलका राजा उसे भेंट भेजा करता था। लका के राजा ने उसके दरबार में अपना राजदूत भेज रखा था।

समुद्रगुप्त के सिक्के

कुछ विदेशी इतिहासकारो ने समुद्रगुप्त को उसकी विजयो के कारण भारत का नैपोलियन कहा है। जिस प्रकार नैपोलियन ने योरोप के बहुत से देश जीते थे, उसी प्रकार समुद्रगुप्त ने भारत के प्राय सभी राज्यो को या तो जीत लिया या उन राज्यो ने स्वय ही समुद्रगुप्त को भेंट देना स्वीकार कर लिया।

समुद्रगुप्त भारतीय इतिहास का एक अमर सम्राट है। वह एक महान् योद्धा और विजेता था। उसे साहित्य, कला तथा सगीत से बडा प्रेम था। वह कवियो का आदर करता था और स्वय भी कवि था। उसके समय के विद्वान् उसे 'कविराज' के नाम से पुकारते थे। कहते है कि वीणा बजाने में उस समय उसका कोई मुकाबला नही कर सकता था। समुद्रगुप्त ने जो सिक्के जारी किए उनमें से कुछ पर वह धनुष-बाण लिए खड़ा है और कुछ पर वीणा।

समुद्रगुप्त कट्टर ब्राह्मण-भक्त हिन्दू था। परन्तु दूसरे धर्मों से भी वह उदार व्यवहार करता था। उसके दरबार में उस समय के योग्यतम विद्वान थे जिनमें बौद्ध तथा हिन्दू दोनो ही शामिल थे। वह स्वय शास्त्रो का बहुत बडा ज्ञाता था। वह प्रजा से बडा प्यार करता और प्रजाजनो को सहायता के लिए सदा तत्पर रहता था।

३७५ ई० में समुद्रगुप्त के देहान्त पर उसका पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय जो इतिहास में विक्रमादित्य के नाम से अधिक प्रसिद्ध है, राजसिंहासन पर बैठा।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (३७५–४१४ ई०)—दुनिया इतिहास के बडे-बडे पराक्रमी सम्राटो को भूल चुकी है। परन्तु इस बात का श्रेय चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य को ही प्राप्त है कि हजारो वर्ष बीत जाने पर भी प्रत्येक हिन्दू घराने में विक्रमादित्य का नाम जाना-पहचाना है। उसकी बहादुरी, विद्वता तथा प्रजा-भक्ति की गाथाए आज भी माताए अपने बच्चों को सुनाया करती हैं। कहा जाता है कि वह वेष बदलकर प्रजा की शिकायतें मालूम करने के लिए घूमा करता था। जिस-जिस शिकायत का उसे पता चलता अगले दिन वह उसे दूर करने के आदेश जारी कर देता।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य अपने पिता की भाति बडा वीर योद्धा था। उसने मालवा, राजपूताना और सौराष्ट्र के विदेशी शक राजाओं को हराकर इन प्रदेशो को गुप्त साम्राज्य में शामिल किया। विदेशियों की

इस हार से भारत का राजनीतिक उद्धार पूरा हुआ। इन विजयों के उपलक्ष में उसने 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की। विक्रमादित्य का अर्थ है 'वीरता का सूर्य'।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने लगभग ३८ वर्ष तक भारत भूमि पर राज्य किया। इस काल में सर्वत्र शांति तथा समृद्धि रही। विदेशी इतिहासकारों का कहना है कि भारत में इतना अच्छा शासन-प्रबन्ध कभी नहीं रहा जितना विक्रमादित्य के राज में था। एक लोकप्रिय राजा, कुशल शासक और विद्वान नरेश के रूप में वह भारत का आदर्श सम्राट था। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य स्वयं वैष्णव-धर्म का अनुयायी था। उसका प्रधान सेनापति बौद्ध और उसके अधिकतर मंत्री शैव-धर्म के अनुयायी थे। इससे पता चलता है कि उसमें कितनी धार्मिक उदारता थी। शान्ति और समृद्धि के कारण, भारत में धर्म, साहित्य, कला तथा व्यापार सब क्षेत्रों में उन्नति होने लगी। विक्रमादित्य स्वयं विद्वान था और विद्वानों का आदर करता था। कहा जाता है कि उसके दरबार में नौ-रत्न थे जिनमें महाकवि कालिदास, वैद्य धन्वन्तरि इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं। विक्रमादित्य ने संस्कृत को राज-भाषा बना दिया और संस्कृत-साहित्य इस काल में अपनी उन्नति के शिखर पर पहुंच गया।

चन्द्रगुप्त ने अपनी राजधानी को पाटलिपुत्र से अयोध्या में बदल दिया, क्योंकि इतने विशाल राज्य का शासन चलाने के लिये राजधानी का किसी केन्द्रीय नगर में होना आवश्यक था। उज्जैन को एक प्रकार से अपनी उप-राजधानी बना लिया।

फाहियान

विक्रमादित्य के राज्यकाल में प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहियान भारत आया। उसने तत्कालीन भारत का हाल लिखा है। उसके लेखों से हमें उस समय के भारतवर्ष के बारे में बड़ी जानकारी प्राप्त होती है। वह इस देश में प्रायः १५ वर्ष तक (३९९ से ४१४ ई० तक) रहा। वह पेशावर, तक्षशिला, मथुरा, उज्जैन, गया और पाटलिपुत्र घूमता हुआ समुद्र के रास्ते चीन लौट गया। फाहियान ने पाटलिपुत्र तथा भारत के अन्य नगरों की बड़ी प्रशंसा की है। उसका कहना है कि इन नगरों में सुख और शांति का राज था। लोग खुशहाल थे। राजा प्रजा के सुख-दुख में शामिल होता था। घरों को खुला छोड़ देने पर भी चोरी न होती थी।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के उत्तराधिकारी

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के मरने के बाद उसके पुत्र कुमारगुप्त ने ४१४ ई० से ४५५ ईस्वी तक शासन किया। उसने गुप्त साम्राज्य को कमजोर नहीं होने दिया। कुमारगुप्त ने भी अपने पिता की भांति अश्वमेध यज्ञ किया। परन्तु उसके राज्य के अन्तिम वर्षों में हूणों ने भारत पर हमला करके गुप्त साम्राज्य को खतरे में डाल दिया। हूण मध्य एशिया के बर्बर कबीले थे। कुमारगुप्त के पुत्र स्कन्दगुप्त ने उन्हें मार भगाया। ४५५ ई० में स्कन्दगुप्त स्वयं सिंहासन पर बैठा। उसने ११ वर्ष तक राज किया। स्कन्दगुप्त ने कई बार हूणों को पराजित किया, परन्तु वे प्रत्येक हार के बाद अधिक संख्या में इकट्ठे होकर भारत पर हमला बोल देते थे। हूणों के साथ इतनी लड़ाइयों के कारण सरकारी खजाना खाली होने लगा। ४६७ ई० में स्कन्दगुप्त का देहान्त हो गया। उसकी मौत के साथ ही गुप्त साम्राज्य का सूर्य भी अस्त होने लगा।

स्वर्ण-युग क्यों ?

हम इस पाठ के आरम्भ में बता चुके हैं कि गुप्त-काल को भारतीय इतिहास का स्वर्ण-युग कहा जाता है, क्योंकि इस काल में भारत ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र—साहित्य, धर्म, शिक्षा, कला, विज्ञान इत्यादि में बड़ी उन्नति की। संस्कृत-साहित्य तो इस युग में अपनी उन्नति की चरमसीमा पर पहुंच गया। इसलिए गुप्तकाल को संस्कृत-साहित्य का स्वर्ण-युग भी कहते हैं।

गुप्त राजाओं ने संस्कृत को अपनी राज-भाषा घोषित कर दिया था। इसलिए संस्कृत को बड़ा प्रोत्साहन मिला। बौद्ध तथा जैनी विद्वानों ने भी प्राकृत तथा पाली भाषाओं को छोड़ कर संस्कृत में लिखना प्रारंभ कर दिया। इस काल में अधिकतर पुराण, महाभारत तथा रामायण पुन लिखे गए। देश के राजाओं कवियों, तथा विद्वानों की भाषा होने के कारण संस्कृत का मलाया, जावा, सुमात्रा, बाली, बोर्नियो आदि देशों में भी प्रचार हुआ।

संस्कृत की उन्नति

संस्कृत के महाकवि कालिदास इसी युग में हुए थे। उन्होंने संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ नाटक तथा काव्य लिखे हैं। रघुवंश, कुमारसंभव, मेघदूत, नामक काव्य तथा मालविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशी और अभिज्ञान-शकुन्तला नामक नाटक उनकी अमर कृतियां हैं। कालिदास के शकुन्तला नाटक का दुनिया की प्राय सभी बड़ी-बड़ी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। कालिदास को भारतीय 'शेक्सपीयर' भी कहा जाता है। शेक्सपीयर अंग्रेजी का सर्वश्रेष्ठ नाटककार था। कालिदास के अतिरिक्त किरातार्जुनीय के लेखक भारवि तथा मुद्राराक्षस के लेखक विशाखदत्त भी इसी युग में हुए। उपरोक्त दोनों नाटक संस्कृत की अति सुन्दर कृतियां हैं। भर्तृहरि ने अपने नीति, शृंगार और वैराग्यशतक भी इसी काल में लिखे। विष्णु शर्मा का 'पंचतंत्र' संस्कृत-साहित्य की महान रचना है। इसमें बच्चों को राजनीति और साधारण व्यवहार की शिक्षा देने के लिए बहुत-सी छोटी-छोटी कहानियां हैं। इस पुस्तक के दुनिया की ५० से अधिक भाषाओं में लगभग २०० अनुवाद हो चुके हैं। इस युग के अन्य साहित्यकारों में अश्वघोष हरिषेण, सुबन्धु तथा शूद्रक आदि के नाम अधिक विख्यात हैं। कुछ विद्वान् महाकवि भास को भी इस युग का कवि मानते हैं, परन्तु इस बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

शासन

चीनी यात्री फाहियान ने गुप्तकाल की शासन-प्रणाली की बड़ी प्रशंसा की है। उसने बताया है कि राजा प्रजा के जीवन में बहुत कम दखल देता था। प्रजा की सुविधा के लिये राजा ने सड़कें बनवा दी थी जो बिलकुल सुरक्षित थीं। यात्रियों के लिए विश्राम-गृह और औषधालय भी बने हुए थे। दण्ड कठोर न थे। पक्के अपराधियों को ज्यादा-से-ज्यादा दण्ड दिया जाता था यहां तक कि उनका बायां हाथ काट दिया जाता था।

व्यापार तथा उद्योग

गुप्त-काल में व्यापार तथा उद्योग-धन्धों ने बहुत उन्नति की। उस समय भारतवर्ष का रोम से बड़ा व्यापार होता था। यह व्यापार पश्चिमी तट के बन्दरगाहों द्वारा होता था। रोम के अतिरिक्त भारत से अरब, ईरान और मिस्र को भी बहुत-सी वस्तुएं भेजी जाती थीं।

हिन्दू-धर्म का उत्थान

गुप्त राजाओं के साथ हिन्दू-धर्म फिर उभरा और सारे भारतवर्ष पर छा गया। गुप्त सम्राट ब्राह्मणों का बड़ा आदर करते थे। उन्होंने हिन्दू देवी-देवताओं के बहुत से मन्दिर बनवाए। गुप्त सम्राटों ने बड़े-बड़े यज्ञ करके हिन्दू-धर्म को प्रोत्साहन दिया। हिन्दू धर्म के अनुयायी होने पर भी गुप्त राजा अन्य धर्मों का समान आदर करते थे।

विज्ञान

विज्ञान के क्षेत्र में भी गुप्त-काल में बड़ी उन्नति हुई—विशेष रूप से गणित, नक्षत्र-विद्या तथा आयुर्वेद में। आर्य भट्ट उस समय का सर्वप्रसिद्ध नक्षत्रविद्या विशेषज्ञ था। उसने ही सबसे पहले यह सिद्धान्त निकाला कि पृथ्वी अपनी धुरी के इर्द-गिर्द घूमती है, जबकि योरोप इस सिद्धान्त को १७ वीं शताब्दी में जाकर मालूम कर सका। आचार्य आर्यभट्ट ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का भी प्रतिपादन किया। आचार्य वराहमिहिर भी इसी काल में हुए। आप गणित और ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित थे। गणित में मूल्य आंकने की दशमलव पद्धति भी इसी युग की खोज है। पदार्थ रसायन तथा धातु विज्ञान में भी चतुर्मुखी उन्नति हुई। आयुर्वेद के आचार्य सुश्रुत, धन्वन्तरि तथा दृढ़बल भी इस युग में हुए।

संगीत, नृत्य तथा कला

साहित्य की भांति गुप्त राजा संगीत, नृत्य, चित्रकला, भवन-निर्माण कला इत्यादि के भी संरक्षक थे।

गुप्त काल की चित्रकारी

समुद्रगुप्त तो संगीत का बडा प्रेमी था। वह स्वयं वीणा बजाया करता था। संगीत के साथ-साथ नृत्य को भी प्रोत्साहन मिला। भारतीय चित्रकला तो उन्नति के शिखर पर पहुंच गई। अजन्ता की गुफाओं की दीवारो और छतो पर जो चित्र बने हुए हैं, वे गुप्त-काल के ही हैं। ये चित्र ससार में चित्रकला का बहुत ऊचा आदर्श माने जाते हैं। चित्रकला के साथ-साथ मूर्तिकला ने भी बडी उन्नति की। मन्दिरो में पूजा के लिये बडी सुन्दर मूर्तिया बनाई गई। मूर्तिया अधिकतर सारनाथ में बनती थी, जहा से गुप्तकाल की बहुत-सी मूर्तिया मिली है। गुप्त राजाओ ने बहुत से मन्दिर बनवाये जो उस समय की भवन-निर्माण-कला का ऊचा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। भीतरगाव (कानपुर) और देवगढ (झासी) में गुप्त काल के कुछ मन्दिरो के खण्डहर मिले हैं। गुप्त काल के कलाकारो की कुशलता का प्रतीक समुद्रगुप्त का लोहे का वह महान् स्तम्भ है जो आजकल दिल्ली में कुतुबद्दीन की मस्जिद में पडा है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) गुप्त काल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग क्यों कहते हैं ?
(२) गुप्तकाल में हिन्दू धर्म की क्या उन्नति हुई ?
(३) गुप्त काल की क्या विशेषता थी ? इस युग में भारत ने क्या क्या सफलताएं प्राप्त कीं ?
(४) फाहियान कौन था ? उसने भारत के बारे में क्या लिखा है ?
(५) गुप्त वश के बडे-बडे सम्राट कौन थे ?
(६) गुप्तकालीन भारत पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखो ?

: १४ :

विशाल भारत

आज से ५० वर्ष पूर्व हिन्दुओं में समुद्र यात्रा करना महापाप समझा जाता था। यदि आप किसी बड़े-बूढ़े से पूछें तो वह आपको इस बारे में कितनी ही रोचक बातें बताएगा। समुद्र यात्रा से लौटने पर लोगों का प्रायश्चित करना पड़ता था। फिर कहीं उन्हें बिरादरी में शामिल किया जाता था।

न जाने भारत में ऐसा अधःपतन क्यों, कब और कैसे हुआ। समाज में इस प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातें फैल जाने से हम दुनिया से कट गए। हमने अपने आपको सर्वगुण सम्पन्न समझ लिया और दुनिया से अलग-थलग रहने लगे। हमने अपने दिल और दिमाग को बँद कर लिया। परन्तु इस बीच में दुनिया की तरक्की रुकी नहीं। जब भारतीय दुनिया से अलग-थलग पड़े हुए थे, योरोप बहुत आगे बढ़ चुका था। इसलिए इस बात पर हैरानी नहीं होती कि मुट्ठी भर योरोपियनों ने सारे भारत को अपने पाँव तले रौंद डाला।

परन्तु भारत में सदा ऐसी स्थिति नहीं रही थी। हमारी प्राचीन परम्परायें तो बड़ी उज्ज्वल हैं। प्राचीन काल में विशेषकर गुप्त राजाओं के स्वर्ण युग में भारतीय व्यापार, कला और संस्कृति अपनी सीमाओं को लाँघ कर एशिया, अफ्रीका और योरोप के देशों तक फैल गई। भारतीय अपने घरबार त्याग कर दक्षिण-पूर्वी एशिया के अनजाने देशों में आबाद हुए। वहां उन्होंने न केवल भारतीय संस्कृति का प्रसार किया बल्कि अपने राज्य भी स्थापित किए। भारतीय कला, सभ्यता, धर्म और संस्कृति के इस प्रसार को विशाल भारत कहते हैं।

प्रसार के इस युग में हिन्दू सब दिशाओं में फैल गए। उत्तर में वे अफगानिस्तान और चीन गए, पूर्व में बर्मा और जापान, पश्चिम में अफ्रीका, यूनान तथा इटली और दक्षिण में लंका और इण्डोनेशिया। भारतीय संस्कृति के चिन्ह आज भी इन देशों में मिलते हैं।

कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी ओजस्वी भाषा में उस युग में भारतीय संस्कृति के प्रसार का वर्णन ऐसे किया है - "भारत की आत्मा का साक्षात् तो उस युग के संस्मरणों से होता है, जबकि भौतिक सीमाओं की उपेक्षा करके प्राचीन भारत से ज्योति निकली, जिसके आलोक से पूर्व क्षितिज प्रकाशमान हो उठा, समुद्र पार सुदूरवर्ती देशों ने भारत की आत्मा को अपनी ही समझ कर स्वीकार कर लिया।"

विभिन्न दिशाओं में भारतीय संस्कृति के इस प्रसार पर हम तीन शीर्षकों के अन्तर्गत विचार करेंगे।

१—पाश्चात्य प्रदेश

सिंध के मैदान और मोहनजोदड़ो के खण्डहरों से बहुत-सी ऐसी वस्तुएं मिली हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि पुराने समय में पश्चिमी और मध्य एशिया के साथ भारत का व्यापार सम्बन्ध था। ऋग्वेद में कई ऐसे श्लोक मिलते हैं, जिनमें वैदिककाल के आर्यों के साहस का प्रमाण मिलता है। पश्चिम में हमारा व्यापार बेबीलोनिया,

सीरिया और मिस्र जैसे देशो के साथ होता था। ईस्वी की पहली शती में यह व्यापार बहुत बढ गया था। रोम के इतिहासकार प्लाइनी ने इस बात पर खेद प्रकट किया है कि हिन्दुस्तान से ऐश्वर्य की सामग्री के आयात के परिणामस्वरूप रोम से बहुत-सा सोना हिन्दुस्तान को भेजा जाता है।

सम्राट अशोक ने पश्चिमी एशिया, उत्तरी अफ्रीका और दक्षिण पूर्वी योरोप में प्रचार कार्य के लिए बौद्ध प्रचारको को भेजा। इस प्रकार पश्चिमी देशो पर भारत की बौद्ध तथा ब्राह्मण विचारधाराओ का प्रभाव पड़ा और भारतीय दर्शन से उन्होंने बहुत कुछ सीखा। अरब बादशाह हारून अलरशीद ने अनेक भारतीय विद्वानो को अरब बुला कर वैद्यक, गणित, ज्योतिष-दर्शन आदि की पुस्तको का अरबी में अनुवाद कराया।

गुप्तकाल का एक भारतीय जहाज

बहुत पुराने इतिहास के अनुसार एक ईरानी बादशाह की सेना में हिन्दुस्तानी सिपाही भर्ती हुए थे। वे यूनान पर आक्रमण करने के लिये ईरानी सेना के साथ गए थे। सिकन्दर के आक्रमण के परिणामस्वरूप यूनान और भारत की सभ्यताओ में आपसी सम्पर्क और बढ़ा।

२—मध्य एशिया

मध्य एशिया में तो भारतीय संस्कृति का एकछत्र साम्राज्य रहा है। मध्य एशिया के प्रदेशो में केस्पियन सागर के तट से चीन की दीवार तक बुद्ध-धर्म का प्रचार हुआ।

खोतान के आसपास के देशो में भारतीय आबाद हो चुके थे। अफगानिस्तान से मंगोलिया तक के इलाको में सर ओरियेल स्टीन और अन्य पुरातत्व वेत्ताओ ने जो खोज की है, उससे प्रकट होता है कि भारतीय संस्कृति का प्रसार इस सारे प्रदेश में हुआ था। इन पुरातत्व वेत्ताओ को अपनी खोजो में बहुत से बौद्ध स्तूप, भिक्षुओ के आश्रम, बौद्ध और रूढिवादी हिन्दू धर्म के देवताओ की मूर्तिया, कई हस्तलिखित प्रतिया और भारतीय भाषाओ और लिपिओ में लिखे हुए ग्रंथ मिले हैं।

मध्य एशिया से बौद्धमत चीन में फैला और आज भी करोडो चीनी भगवान् बुद्ध का नाम श्रद्धा एव भक्ति से लेते हैं। चीन और भारत के सम्पर्क इतने गहरे रहे है कि दोनो देशो से यात्री, विद्वान्, राजदूत आदि जाते आते रहे है। और यह सिलसिला बहुत ही पुराने जमाने से चल रहा है। फाहियान के भारत में आने से पहले एक हिन्दुस्तानी यात्री बुद्धिभद्र चीन गया था। भारत से कई बुद्ध भिक्षु और भिक्षुणिया धर्म-प्रचार के लिए चीन गए।

चीन से बुद्ध धर्म कोरिया पहुंचा। और कोरिया से जापान में। आज भी इन देशों में बौद्धधर्म अधिकतर लोगों का धर्म है। इन देशों की संस्कृति के निर्माण में बौद्ध-धर्म का असाधारण प्रभाव स्पष्ट है।
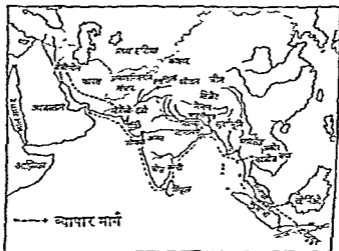
विशाल भारत

२—पूर्वी प्रदेश

वैसे तो भारतीय संस्कृति का प्रचार चारों दिशाओं में हुआ, लेकिन ब्रह्मा (बर्मा), मलाया, स्याम, हिन्द-चीन, जावा, सुमात्रा, बाली इत्यादि देशों में भारतीय संस्कृति विशेष रूप से फैली। समुद्र पार करने की भावना भारतीयों में कितनी प्रबल थी, इसका प्रमाण इन देशों की संस्कृति से मिलता है।

भारतीय जहाज बनाना जानते थे। पूर्व में दूर-दूर के देशों से उनका व्यापार था। उन्होंने कई राज्य और साम्राज्य स्थापित किए। वे जहां भी कहीं गए उन्होंने अपनी सभ्यता और संस्कृति का नाम उज्ज्वल किया। सबसे बड़ी बात यह है कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता का साम्राज्य स्थापित तो हुआ, लेकिन रक्तपात की एक भी घटना के बिना। इलियट ने लिखा है—"तैमूर या बाबर ने इतिहास के पन्नों को कई देशों के रक्त से रंग दिया है। इसके विपरीत हिन्दुओं का लंका, जावा, और कम्बोडिया आदि देशों में कई शताब्दियों तक राज रहा। किन्तु उन्होंने इन देशों को शान्ति और संस्कृति का ही वरदान दिया।" जहां भारतीय धर्म का प्रचार होता था, वहां भारतीय भाषा, कला, और भवन निर्माण शैली का प्रचार होना भी स्वाभाविक था। इस प्रकार भारत की संस्कृति समुद्रों तथा पहाड़ों की सीमाओं को पार करके एशिया के बहुत से देशों में फैल गई। भारतीयों ने इन देशों में सभ्यता की ज्योति जलाई। योरोप में जो काम प्राचीन यूनान ने किया था वही एशिया में भारत ने किया।

ईस्वी सन् के आरम्भ काल में ही जावा, सुमात्रा, कम्बोदिया में छोटे या बड़े हिन्दू राज्य स्थापित हो चुके थे। दूसरी से पाचवी शती ई० के बीच मलाया, कम्बोदिया, अनाम, बाली, बोर्नियो, और जावा में कई हिन्दू राज्य बन गए थे। इन देशों में शैव धर्म और रूढ़िवादी ब्राह्मणवाद का खूब प्रचार हुआ। बौद्ध धर्म के चिह्न भी पाए जाते है। यहा के आदिवासियो ने भारतीय सभ्यता को अपना लिया और १,००० साल तक इन देशों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता का साम्राज्य बना रहा।

पाचवी शताब्दी ईसवी तक भारतीय संस्कृति का प्रसार कहा तक हो चुका था, उसका अनुमान तत्कालीन चीनी लेखक फतन्ये के इन शब्दो से लगाया जा सकता है—"काबुल से लेकर दक्षिण-पश्चिमी समुद्र तट तक और वहा से पूर्व की ओर अनाम तक सब प्रदेश हिन्दु (सिन्धु) के अन्तर्गत हैं।" आज भी दक्षिण-पूर्वी एशिया के इन प्रदेशो में घूमते हुए ऐसे लगता है जैसे हम भारतवर्ष के ही किसी प्रदेश में हों। जगह-जगह भारतीय संस्कृति के अवशेष मिलते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) विशाल भारत का क्या अर्थ है ?

(२) संसार के किन-किन देशो में भारतीय सभ्यता की ज्योति जली ? विदेशों में भारतीय संस्कृति के विकास की कहानी संक्षेप में लिखो ?

(३) दक्षिण पूर्वी एशिया में भारतीय संस्कृति का क्या प्रभाव पड़ा ?

(४) मध्य एशिया में भारतीय संस्कृति के क्या अवशेष मिले हैं ?

: १५ :

इस्लाम का जन्म और भारत में प्रवेश

आज इस्लाम धर्म विश्व के प्रमुख धर्मों में एक है। विभाजन से पूर्व हमारे भारत में १० करोड मुसलमान थे। इस समय भी कोई चार करोड मुसलमान भारत में रहते हैं। एशिया महाद्वीप के बहुत से देशो में इस्लाम धर्म फैला हुआ है। इस्लाम धर्म का आदि प्रदेश अरब है। अरब एक रेगिस्तानी प्रदेश है। वहा पर कृषि और व्यापार के साधन अधिक नही थे। यहां के रहनेवाले अपना जीवन-निर्वाह मार-काट पर ही व्यतीत करते थे। कुछ लोग लूट तथा व्यापार के लिए इधर-उधर घूमते रहते थे।

इस्लाम धर्म से पूर्व यहा के निवासी यहूदी धर्म के अनुयायी थे। मक्का शरीफ़ में हजरत मुहम्मद साहब से पूर्व देवताओ की सैकडो मूर्तिया थी जिनकी पूजा की जाती थी।

हजरत मुहम्मद साहब—अरब में ५७० ई० में इस्लाम के प्रवर्तक का जन्म हुआ। उन्होने अरबवालो को समझाया कि वे मूर्ति-पूजा के चक्कर में न पडें। यह सब धोखा और आडम्बर है। बुतपरस्ती छोड कर सच्चे ईश्वर की पूजा करना ही हमारा धर्म होना चाहिए। अल्लाह (परमेश्वर) एक ही है और मुहम्मद उसका रसूल (पैगम्बर) है जो आप लोगो को एक ईश्वर (अल्लाह) के मानने का उपदेश दे रहे हैं। जो लोग अल्लाह और रसूल को मानेंगे वे ही सच्चे मुस्लिम कहलायेंगे।

हजरत साहिब की बातें मक्के वालो को नयी लगी और कुछ लोग तो उनके जानी दुश्मन हो गए। उन्हें दुखी होकर मक्का छोडना पडा और ६२२ ई० को वे मक्का से मदीना चले गए। इस साल से मुसलमानो का हिजरी सवत् शुरू होता है। मुहम्मद साहब अपने शिष्य बढाने लगे। मक्का के काबे का सरक्षक कुरेश कबीले का सरदार था। वह उन पर दमन चक्र चलाने लगा। मुहम्मद साहब ने इस कबीले को नष्ट करने का निश्चय किया और अपने अनुयायियो के साथ मक्का पर हमला किया। पहले पहल तो उन्हें मक्का जीतने में कठिनाई हुई किन्तु मक्का के गृह कलह ने स्वर्णावसर दिया और वे मक्का जीतने में सफल हुए। ६३ वर्ष की अवस्था में मुहम्मद साहब का स्वर्गवास हो गया।

इस्लाम के सिद्धान्त—हजरत साहब ने इस्लाम के सारे सिद्धातो को एक पुस्तक, जिसे कुरान कहते है, में एकत्रित किया। जैसे हिन्दू गीता को और ईसाई बाइबल को मानते हैं, इसी प्रकार मुसलमान कुरान को पाक मानते हैं। उसमें उन्होने कहा कि ईश्वर एक है। हर एक चीज ईश्वर की बनाई हुई है। सब जगह उसका नियन्त्रण है और वह सबको सुरक्षित रखता है। ईश्वर का न आदि है और न अन्त। न वह जन्म लेता है और न मरता है। ईश्वर द्वारा बनाए गए अल्लाह के बन्दे सब एक हैं। उन्होने हर एक मुसलमान के पाच फर्ज बताए—कलमा, जकात, नमाज, रमजान तथा हज्ज। जो व्यक्ति इस्लाम धर्म में प्रवेश करता था उसे कलमा पढ़ना पडता था। नमाज मुसलमानो की प्रार्थना है जो कि दिन में पाच बार पढी जाती है। नमाज की प्रार्थना अरबी भाषा में ही है। नमाज घर में भी किसी स्थान पर हो सकती है। जुम्मा की नमाज एक जगह मस्जिद

में ही होती है। मुहम्मद साहब ने कहा कि एक मस्जिद में शुक्रवार को तो कम से कम ४० आदमी नमाज पढ़ें ही। इसमें एक भावना निहित थी कि सप्ताह में एक दिन आसपास के मुसलमान भाई अपने सुख-दुख को इकट्ठे होकर कह सकेंगे और एक दूसरे का हाथ बंटा सकेंगे।

जकात एक तरह का दान का कर होता है। इस धन को रोगी तथा गरीबो में बाटा जाता है।

रमजान—साल भर में पूरा एक महीना रमजान का होता है। सारे दिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक भोजन नही किया जाता। सूर्योदय होते ही हर एक मुसलमान पानी पीना भी छोड देता है और सूर्य छिप जाने के बाद ही वह रोजा खोलता है। उन्होंने यह भी कहा कि हर एक मुसलमान का फर्ज है कि वह हज के लिये साल भर में एक बार मक्का मदीना जाए।

आगे चल कर यह धर्म दो भागो में विभाजित हो गया। सुन्नी और शिया। सुन्नी मुसलमान मुहम्मद साहब के पश्चात् उनके तीन खलीफाओ को भी उत्तराधिकारी मानते हैं किन्तु शिया लोग अली को ही मुहम्मद साहब का उत्तराधिकारी मानते है। शिया लोग १२ इमामो में भी विश्वास करते हैं। शिया लोगो का झण्डा काला है और सुन्नी लोगो का झण्डा सफेद रंग का।

इस्लाम के जन्म के बाद सौ साल में ही इस्लामी सेना ने सारा अरब, एशिया माईनर का अधिक भाग और मिस्र से लेकर मराको तक अफ्रीका का सारा उत्तरी तट जीत लिया। इस्लामी फौजें पश्चिम में स्पेन तक और पूर्व में भारतवर्ष तक पहुची। आगे के पृष्ठ पर विशाल इस्लामी साम्राज्य का नक्शा देखिये।

इस्लाम का भारत में प्रवेश—हजरत साहब की मृत्यु के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी खलीफाओ ने इस्लाम धर्म को फैलाने का यथा शक्ति प्रयन्न किया। जहा इस्लाम धर्म एशिया के समीपवर्ती देशो में फैला वहा भारत में भी आया।

अरब व्यापारी जब माल लेने भारत में आते थे तो वे भारत में व्यापार के साथ-साथ धर्म का प्रचार भी करते थे। दक्षिणी भारत के राजाओ ने इस्लाम धर्म के फैलाने मे सहायता की। उन्होंने मस्जिदें बनवा दी। राजाओ की सहायता से ये व्यापारी इस्लाम धर्म को फैलाने लगे।

लेकिन अभी तक इस धर्म को सत्य और प्रेम का ही सहारा था। आठवी शताब्दी में इसके खलीफाओ ने धर्म को तलवार के जोर पर फैलाना शुरु किया। सातवी शताब्दी में सिन्ध का राजा दाहिर था। उसके राज्य काल में कुछ लुटेरो ने अरब जहाजो को लूट लिया। खलीफा ने उस हानि को पूरा करने के लिए राजा पर जोर दिया और जब राजा ने कोई सतोषजनक उत्तर नही दिया तो खलीफा के दामाद मुहम्मद बिन कासिम ने सन् ७११ ई० में सिंध पर आक्रमण कर दिया। राजा दाहिर के घर में भी फूट थी। उस समय सिन्ध के बौद्ध भिक्षुक ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध थे। सिन्ध में ब्राह्मणो का राज्य था अत बौद्धो ने मुसलमानों का साथ दिया। सिन्ध के व्यापारी अरब व्यापारियो से काफी धन कमाते थे अत उन्होंने भी अरबो का साथ दिया। घर की इस फूट के कारण मुहम्मद बिन कासिम सिन्ध राज्य को जीतने में सफल हुआ और अरब का राज्य देवल और मुलतान तक फैल गया।

भारतीय सस्कृति पर इस्लामी सस्कृति की छाप

मुहम्मद बिन कासिम को आक्रमण से विजय तो अवश्य मिली किन्तु कोई विशेष लाभ नही हुआ।
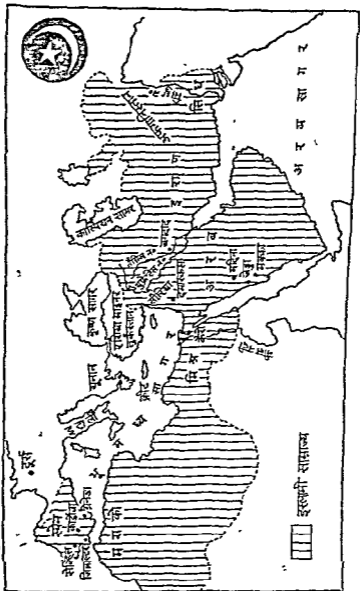
हाँ, समाज और संस्कृति की छाप एक दूसरे पर अवश्य पड़ी। भारतीय विज्ञान, दर्शन और वेद अरब में पहुचे। अरब विद्वानो ने भारतीय विज्ञान को हृदय से स्वीकार किया और धीरे-धीरे भारतीय विद्या अरबो द्वारा यूरोप में पहुची।

भारत से गणित के अक अरब में पहुच कर हिन्दसा कहलाए और यूरोप में पहुच कर अरेबिक न्युमरल्स (Arabic Numerals)। उस समय अरब से बहुत यात्री भारतवर्ष में आए थे। इनमें से एक यात्री सुलेमान ने तत्कालीन भारत की दशा का वर्णन इन शब्दो में किया है .

इस समय भारत का वस्त्र उद्योग उच्चकोटि का था। इस प्रकार के महीन वस्त्र और कहीं नहीं बनाए जाते थे। भारतीयों का आचार-विचार बड़ा ही सरल, सत्य और छल कपट रहित है। अतिथि सत्कार में यहाँ के व्यक्ति दूसरे देशो के सामने आदर्श हैं। भारत में सभी प्रकार के फल मिलते हैं किन्तु खजूर नहीं मिलते।

अरब के प्रसिद्ध कवि आदू ने भारत की वन्दना में एक राष्ट्रीय गीत लिखा था जिसका अर्थ है—अपने प्राणों की सौगन्ध यह वह भूमि है जहां पर पानी के बरसने से मोती और सोना उपजता है। यहाँ की कस्तूरी, कपूर, अम्बर और अगर की सुगन्ध मलीन से मलीन हृदय को पवित्र करती है। यहाँ के वीरों की तलवारें सदैव पैनी रहती हैं। उनको धार के लिए सिल्ली पर नहीं मनुष्यों के सिरो पर रगड़ा जाता है।

मुसलमानो के आक्रमण

भारत की अपार सम्पत्ति के बारे में प्रत्येक मुसलमान लालायित था और वह चाहता था कि किसी न किसी प्रकार इस सोने की चिड़िया को अपने अधिकार में करना चाहिए।

१० वीं शताब्दी में भारत की अवस्था बड़ी ही अस्त-व्यस्त हो चुकी थी। भारतवर्ष छोटे-छोटे टुकड़ो में बट कर रह गया था। छोटे-छोटे राजा आपस में लड़ते रहते थे। उन्हें समस्त भारत का कोई ध्यान नही था। यदि एक पड़ोसी राजा पर कोई दूसरा आक्रमण कर देता अथवा गृह कलह होती तो उसका पड़ोसी राज्य उसी में ही दीवाली मनाता। देश की यह फट भारत के नाश का कारण बनी और हम समय-समय पर पिटते रहे।

अफगानिस्तान में इस्लाम धर्म फैल चुका था। यहा पर तुर्क जाति का राज्य था। उनकी राजधानी गजनी थी। इसी तुर्क वश के एक व्यक्ति सुबुक्तगीन ने भारत पर आक्रमण किया। लगमान के स्थान पर पजाब के राजा जयपाल से उसकी सधि हो गई।

महमूद गजनवी—सुबुक्तगीन की मृत्यु के पश्चात् उसका बेटा महमूद अफगानिस्तान का अमीर बना। उसने सुल्तान की उपाधि ग्रहण की। इस महमूद को इतिहास में महमूद गजनवी कहा जाता है। महमूद गजनवी बड़ा ही लोभी व्यक्ति था। लूटमार के लिए उसने भारत पर १७ बार आक्रमण किया। इन आक्रमणो में उसने अपार धन लूटा और लाखो लोगों की हत्या की।

महमूद का पहला आक्रमण पजाब पर हुआ। यहाँ के राजा जयपाल ने इस आक्रमण के मुकाबिले की पूरी तैयारी की थी। किन्तु उसके भाग्य में विजय नही थी। पराजित होकर राजा जयपाल ने आत्म हत्या कर ली।

महमूद का छठा आक्रमण अनगपाल पर हुआ जो राजा जयपाल का पुत्र था। इस बार राजा अनगपाल का कई और हिन्दू राजाओ ने साथ दिया। इस युद्ध में प्रत्येक परिवार का एक एक सदस्य युद्ध क्षेत्र में आ गया। माओ और बहिनो ने अपने अपने आभूषण बेच दिए किन्तु किस्मत ने साथ नही दिया। जब विजय

सामने थी तो अनगपाल का हाथी बिगड़ गया और अपनी ही सेना को कुचलने लगा। सेना को विश्वास हो गया कि राजा अनगपाल भय के कारण भाग रहा है और महमूद की सेना निरुत्साह हो जाने के बावजूद भी विजयी हुई।

इस विजय के पश्चात् महमूद गजनवी का हौसला बढ़ गया। दिल्ली, और अजमेर के शासकों में इतना दम न रहा कि वे महमूद के आक्रमण को रोक सकते। महमूद ने भारत के प्रसिद्ध मंदिरों पर आक्रमण किए। कांगड़ा, बुन्देलखण्ड, मथुरा, कन्नौज इत्यादि स्थित बड़े-बड़े मन्दिरों की मूर्तियों को उसने स्वयं अपने हाथों से तोड़ा। यहां का अपार वैभव हीरे जवाहरात जो मंदिरों में बिखरे पड़े थे उठा कर गजनी ले गया।

सोमनाथ पर आक्रमण—महमूद गजनवी का सबसे प्रसिद्ध आक्रमण १०२६ ई० में सोमनाथ पर हुआ था। यह मन्दिर दक्षिणी गुजरात में समुद्र तट पर स्थित है। उस युग में सोमनाथ भारतीयों के लिए साक्षात भगवान का मन्दिर था। किवदंती है कि इस मंदिर की स्थापना भगवान चन्द्रदेव ने अपने को श्राप से बचाने के लिए की थी। शिवजी के स्नान के लिए प्रति दिन गंगाजी से जल आता था। मंदिर की पूजा के लिए समीपवर्ती राजाओं ने जागीरें दे रखी थीं।

सोमनाथ का मन्दिर

जिस समय महमूद गजनवी अपनी सेना को लेकर मंदिर के प्रांगण में घुसा तो वहां के राजा भीमदेव ने उससे दो-दो हाथ करने की चेष्टा की। परन्तु वहां के पुजारियों ने कहा कि आप रक्तपात न करें स्वयं आदि देव महादेव इसकी रक्षा करेंगे।

परन्तु राजा और पुजारियों की यह आशा धूल में मिल गई। सशस्त्र सैनिक पुजारी की आज्ञा को भगवान की आज्ञा मान कर हाथ पर हाथ धरे खड़े रहे। महमूद गजनवी असंख्य हीरे पन्ने तथा सोना चांदी लेकर वहां से विदा हुआ।

महमूद बड़ा लोभी था। कहते हैं जब वह मृत्यु शैय्या पर पड़ा हुआ था तो उसने आज्ञा दी कि उसके सब हीरे जवाहरात उसके सामने पेश किए जायं। उन्हें देख कर वह जी भरकर रोया क्योंकि उन्हें छोड़ कर वह अब इस दुनिया से जा रहा था!

सोमनाथ की विजय के पांच साल बाद सुलतान महमूद गजनवी मर गया। ११५० ई० में एक और तुर्क वंश गौर ने गजनी पर कब्जा कर लिया। गौर वंश के राजा मुहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किए जिनका

वृत्तान्त हम आगे देंगे। यहा यह बताना जरूरी है कि वास्तव में मुहम्मद गोरी ही भारत का प्रथम मुसलमान शासक था। उसने भारत में लूटमार ही नही की, सुदृढ शासन भी स्थापित किया।

पृथ्वीराज और मुहम्मद गोरी

पृथ्वीराज चौहान अजमेर का राजा था। इसके नाना राजा अनगपाल दिल्ली के शासक थे। राजा अनगपाल का अपने धेवते के प्रति विशेष प्रेम था। इसलिए उन्होने दिल्ली का राज्य भी पृथ्वीराज को दे दिया। इस कारण उनका दूसरा धेवता जयचन्द जो कन्नौज का राजा था, अनगपाल और पृथ्वीराज दोनो से ही ईर्ष्या करने लगा। पृथ्वीराज बचपन से ही वीर, सत्यभाषी और न्याय प्रिय था जबकि जयचन्द में कोई गुण नही था।

जयचन्द का द्वेष आगे चल कर और बढा क्योंकि पृथ्वीराज भरे स्वयवर से जयचन्द की पुत्री सयोगिता को उठा कर ले गया। जयचन्द ने पृथ्वीराज को अपमानित करने के लिए गजनी के शासक मुहम्मद गोरी को बुलाया और मुहम्मद गोरी से मिलकर अपने अपमान का बदला लेना चाहा।

आपस की लडाई में दोनो को कुछ नही मिला। मुहम्मद गोरी ने प्रथम पृथ्वीराज को पराजित किया और फिर जयचन्द को समाप्त कर स्वय यहा का शासक बन बैठा। यदि जयचन्द और पृथ्वीराज दोनो मिल कर मुहम्मद गोरी पर आक्रमण कर देते तो मुहम्मद गोरी किसी भी तरह भारत का शासक नही बन सकता था। जयचन्द और मुहम्मद गोरी की सधि से पूर्व मुहम्मद गोरी ने भारत पर जितने भी आक्रमण किए वह पराजित ही हुआ। ११९१ में उसकी तराईन के मैदान में पृथ्वीराज के हाथो हार हुई। पृथ्वीराज ने उसे क्षमा कर दिया। ११९२ में तराइन के दूसरे युद्ध में मुहम्मद गोरी की विजय हुई। उसने पृथ्वीराज को कत्ल करवा दिया। दिल्ली विजय के बाद मुहम्मद गोरी ने जयचन्द से कन्नौज छीन लिया। इस प्रकार जयचन्द को ईर्ष्या और द्वेष का उचित फल मिला!

दिल्ली और कन्नौज की विजय के पश्चात् मुहम्मद गोरी अपना सारा राज्य अपने विश्वासपात्र गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक को देकर गजनी लौट गया। कुतबुद्दीन ऐबक एक योग्य शासक था। मुहम्मद गोरी के जाने के पश्चात् उसने ग्वालियर, अहिलवाड, बिहार और बगाल पर अपना झण्डा फहराया। इस प्रकार गुलाम वंश का राज्य पजाब, सिंध और राजस्थान, सयुक्त प्रान्त, बिहार और बगाल कहने का तात्पर्य यह है कि समस्त उत्तरी भारत में पूर्व से लेकर पश्चिम तक फैल गया।

अभ्यास के प्रश्न

(१) इस्लाम के पैगम्बर के बारे में आप क्या जानते हैं? उनके आने से पूर्व अरब की क्या हालत थी?
(२) मुसलमानो ने सबसे पहले भारत पर कब और क्यो हमला किया?
(३) भारत का प्रथम मुस्लिम शासक कौन था—महमूद गजनवी या महम्मद गोरी? दोनो के दृष्टिकोण में क्या अन्तर था?
(४) महम्मद गोरी के बारे में आप क्या जानते है। उसने कौन कौन सी विजय प्राप्त की?

दिल्ली में सुलतानों का राज्य

(१२०६ ई० से १५२६ ई० तक)

पिछले अध्याय में हमने बताया था कि मुहम्मद गोरी ने अपने तुर्की गुलाम कुतबुद्दीन ऐबक को दिल्ली का शासन सौंप दिया। वह दिल्ली का पहला सुल्तान था। ऐबक के बाद मुगल शाहंशाह बाबर तक दिल्ली के तख्त पर जो बादशाह बैठे वे सुलतान कहलाते थे। इसलिए इस काल को भारतीय इतिहास में सुल्तान युग कहा जाता है। कुतबुद्दीन ऐबक ने १२०६ ई० से १२१० ई० तक राज किया। उसके अधिकतर उत्तराधिकारी गुलाम थे। गुलामों से उन्नति करते करते वे बादशाह बन गए। अतः इन सुलतानों के वंश को गुलाम वंश कहा जाता है। गुलाम वंश में दो प्रसिद्ध सुलतान हुए—अलतमश और बलबन। इन दोनों के बीच में एक स्त्री भी सुलतान बनी। वह अल्तमश की बेटी थी। उसका नाम रजिया सुल्ताना था। वह बहुत योग्य शासिका थी। परन्तु औरत होने के कारण उसे शीघ्र ही रास्ते से हटा दिया गया।

कुतुबमीनार, दिल्ली
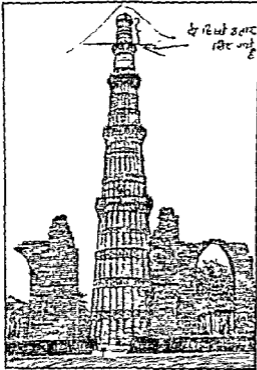
रजिया के बाद बलबन दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह भी एक गुलाम था जो एक भिश्ती के पद से उन्नति करके बादशाह बना था। उसे युद्ध तथा शासन का काफी अनुभव था। परन्तु उसे अपने राज्यकाल में चैन नहीं मिला। उसके राज्यकाल में उत्तर पश्चिमी सीमा की ओर से मंगोलों ने कई

बार हमले किए। इनमें से एक लडाई में बलबन का बेटा मारा गया। सुलतान इस गम से बच न सका और १२८७ में ८० वर्ष की आयु में उसका देहान्त हुआ।

गुलाम बादशाहों की यादगार के रूप में दिल्ली में कुतुबुद्दीन ऐबक का कुतुब मीनार और अलतमश का अलाई दरवाजा आज भी अपनी पुरानी शान से खडे हैं।

बलबन के राज्यकाल में भारत में मुस्लिम राज की नींव पक्की हो गई। परन्तु मुस्लिम बादशाहों में उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम नही था। जिसकी लाठी उसकी भैंस का ही नियम प्रचलित था। जो सबसे अधिक बलवान होता था वह बादशाह बन जाता। अत दिल्ली के तख्त पर एक के बाद दूसरे कई वशो के बादशाह बैठे। सबसे पहले खिलजी वश का राज शुरू हुआ। उसके बाद क्रमश तुगलक वश, सैयद वंश और लोधी वश के बादशाह हिन्दुस्तान के शासक बने। खिलजी तथा तुगलक वश के बादशाह तुर्क थे, सैयद अरब थे और लोधी अफगान। सुलतानो का राज १५२६ ई० तक रहा जब बाबर ने सुलतान इब्राहीम लोधी को हरा कर मुगल वश की स्थापना की। इस अध्याय में आप भारतीय इतिहास के कुछ प्रमुख सुलतानो के बारे में पढ़ेंगे। उनके नाम ये हैं—(१) अलाउद्दीन खिलजी, (१२९६–१३१६) (२) मुहम्मद तुगलक (१३२६–१३५१), (३) फिरोज तुगलक (१३५१—१३८८)।

अलाउद्दीन खिलजी—मध्य युग के इतिहास में अलाउद्दीन खिलजी एक महान शासक हुआ है। वह पहला मुसलमान बादशाह था जिसके अधीन प्राय सारा भारतवर्ष था। उसने दक्षिण भारत में भी अपना राज्य विस्तार किया। उसने देवगिरि को जीता। उसका सेनापति मलिक काफूर दक्षिण भारत को रौंदता हुआ रामेश्वरम् तक जा पहुचा। दक्षिण में उसने मैसूर और मदुरा के हिन्दू राज्य जीते। गुजरात और राजपूताना को विजय किया। अलाउद्दीन के राज्यकाल में उत्तर पश्चिमी सीमा से मगोल पजाब पर निरन्तर हमले कर रहे थे। अलाउद्दीन ने मगोलो को रोकने के लिए सीमा पर बहुत बडी फौज रखी। इस पर भारी खर्च बैठता था। अत अलाउद्दीन खिलजी ने सारे राज्य में हर चीज की कीमत नियत कर दी। जो व्यक्ति नियत दाम से अधिक मूल्य पर कोई चीज बेचता उसे कडी सजा दी जाती थी। जो व्यापारी जितना कम तोलता उसका उतना ही मास काट लिया जाता। इससे देश में हर चीज बडी सस्ती मिलने लगी। फौज को खिलाने पिलाने का खर्च बहुत कम हो गया।

अलाउद्दीन का राज्य प्रबन्ध—अलाउद्दीन खिलजी ने सरदारो के साथ मद्यपान और आमोद-प्रमोद इत्यादि की प्रथा को तोडा। अमीरो को आज्ञा थी कि वे जो भी विवाह करें वह सुलतान की सलाह लेकर करें। जनता से अधिक से अधिक रुपया करो के रूप में सुलतान ने अपने राजकोष में ले लिया। उसने स्वय मद्यपान का त्याग कर दिया और अन्य लोगो को भी मद्यपान से रोका। जितनी भी शराब दिल्ली में थी वह नालियों में फेंकवा दी गई। जो भी व्यक्ति मद्यपान करता था उसको शहर के बाहर गड्ढे में फेंक दिया जाता था। अमीर लोग न किसी को दावत दे सकते थे और न किसी के यहां आ जा सकते थे।

अलाउद्दीन खिलजी का गुप्तचर-विभाग बडा ही सुदृढ था। अलाउद्दीन खिलजी ने हिन्दू मुसलमान दोनो के साथ ही बडी क्रूरता से व्यवहार किया। काजी मगीसुद्दीन ने अलाउद्दीन खिलजी को इस बात के

लिए प्रेरित किया कि वह हिन्दुओं के साथ कठोर से कठोर व्यवहार करे। हिन्दुओं पर जजिया लगाया गया। दोआबा के हिन्दुओं को ५० प्रतिशत मालगुजारी देनी पड़ती थी। सुल्तान की आज्ञा के अनुसार कोई भी व्यक्ति न तो अच्छे वस्त्र पहन सकता था न अच्छा खा-पी सकता था। हिन्दुओं की अवस्था इतनी खराब हो गई कि उनकी स्त्रियों को उदर पालन के लिए मुसलमानों के घरों में नौकरानियों का काम करना पड़ा।

सैनिक सुधार—गद्दी पर बैठने के समय अलाउद्दीन ने तीन आवश्यक कार्य करने का निश्चय किया था। देश की बाहरी हमलों से रक्षा, देश की आन्तरिक रक्षा और राज्य का विस्तार। ये तीनों कार्य एक दूसरे से संबंधित थे और उनके लिए विशाल सेना की आवश्यकता थी। उसने सेना की बहुत सी त्रुटियों को दूर किया। जागीरदारों की सैनिक रखने की प्रथा को तोड़ा। इससे जागीरदारों की सेना पर सम्राट का सीधा अनुशासन हो गया। विद्रोह के समय जागीरदारों के सैनिक जागीरदार का साथ देते थे। अब वे सुल्तान का साथ देने लगे। सैनिकों को भूमि के बदले नकद वेतन दिया जाने लगा। देश में एक स्थायी राज्य सेना की व्यवस्था की गई। फौज में योग्यता के आधार पर सैनिक भरती होते थे। सेना के तीन विभाग थे। घोड़ों को दागने की प्रथा अलाउद्दीन खिलजी ने ही शुरू की थी। सुल्तान की सेना में ४,७५,००० सैनिक थे। राज्य के तमाम टूटे हुए किलों की मरम्मत करवाई गई और उनमें अपने विश्वास-पात्र सैनिकों की अध्यक्षता में सेना रखी।

आर्थिक सुधार—मालगुजारी की दरें बढ़ाने, जागीर प्रथा को नष्ट करने और हिन्दुओं पर मालगुजारी बढ़ाने से राज्य की आर्थिक अवस्था सुदृढ़ हो गई। मालगुजारी की दरें भी भूमि और उपज के हिसाब से लगाई जाती थीं। प्रायः २० प्रतिशत से ५० प्रतिशत तक मालगुजारी देनी पड़ती थी। बाजारों में प्रत्येक चीज के दाम निर्धारित थे। दैनिक जीवन के लिए प्रत्येक वस्तु बड़ी ही सस्ती मिलती थी। व्यापारियों पर कठोरता की जाती थी जिससे प्रत्येक चीज सस्ती और ठीक मिले। गुप्तचर विभाग बड़ी कड़ी दृष्टि से सब चीजों को देखा करता था। स्वयं अफसरों को इस बात का भय था कि यदि हमने रिश्वत लेकर किसी के साथ उदारता का व्यवहार किया तो हमारे जीवन की रक्षा नहीं। इस कठोरता के कारण राज्य में चारों ओर शान्ति स्थापित हो गई और प्रत्येक चीज बड़ी सुलभ मिलने लगी।

अलाउद्दीन का चरित्र—कुछ लोगों का विचार है कि अलाउद्दीन खिलजी रक्तपात चाहनेवाला था। उसमें दया या सहृदयता का नाम भी न था। सुल्तान पढ़ा लिखा नहीं था फिर भी विद्वानों का आदर करता था। अमीर खुसरो तथा हसन जैसे विद्वान लेखक उसके दरबार की शोभा बढ़ाते थे। उसने बहुत सी टूटी हुई मस्जिदों की मरम्मत करवाई। उसने दिल्ली के कुतबमीनार के समक्ष एक मीनार बनवानी चाही किन्तु वह अधूरी ही रही, पूरी न बन सकी। हिन्दुओं के प्रति वह बड़ा कठोर था। वह चाहता था कि हिन्दू सदैव निर्धन रहें जिससे कभी कोई हिन्दू सिर न उठा सके। यद्यपि अलाउद्दीन खिलजी मुस्लिम राज्य की स्थापना करना चाहता था परन्तु फिर भी वह काजियों और मौलवियों की अधिक परवाह नहीं करता था। रिश्वत और झूठ अलाउद्दीन खिलजी के राज्य में कहीं नहीं थी। किसानों के साथ छलकपट का व्यवहार नहीं होता था।

सुल्तान अलाउद्दीन का अन्तिम समय बड़ी कठिनाई में बीता। १३०६ ई० में उसके सबसे विश्वास-पात्र सरदार मलिक काफूर ने उसकी हत्या कर दी।

मुहम्मद तुगलक—अपने पिता गयासुद्दीन तुगलक की मृत्यु के पश्चात् मुहम्मद बिन तुगलक १३२६ में गद्दी पर बैठा। इतिहास में यह बड़ा ही निपुण, वीर और कला प्रेमी बादशाह समझा जाता है। जहा तक बुद्धि तथा प्रतिभा का सबध है समस्त मुस्लिम बादशाहो में उसकी टक्कर का कोई बादशाह नही था। स्वय सुलतान ललित कला, सस्कृत, ज्योतिष और गणित का माना हुआ विद्वान था। उसकी रचना शैली अद्वितीय थी। दान में तो वह कर्ण के समान था। अनुशासन के लिये उसका दण्ड विधान बहुत कडा था। परन्तु उसकी प्रतिभा असाधारण थी। कभी कभी वह ऐसी बातें करता जो उचित तो होती परन्तु समयानुकूल न थी। इसलिए उसके यह कृत्य मूर्खतापूर्ण लगते है। तत्कालीन इतिहासकार इब्ने-बतूता ने लिखा है—"यह बादशाह छोटे-छोटे अपराधो की बडी बडी सजाए देता है। वह दान देना और खून बहाना खूब जानता है। उसका दरवाजा कभी किसी ऐसे फकीर से खाली नही होता जिसे उसने मालामाल न किया हो और हर समय उसके दरवाजे पर कोई न कोई लाश पड़ी होती है जिसे बादशाह के हुक्म से कत्ल किया गया होता था।"

सुलतान के कार्य—सर्व प्रथम मुहम्मद तुगलक ने दोआबे पर लगान बढाया। परिणाम स्वरूप दोआबे में अकाल पड गया। सुलतान ने कृषको की सहायता के लिए कुए खुदवाए और किसानो को जहा तक हो सका अधिक से अधिक सहायता पहुचाई। उसने इस बात का प्रयास किया कि उसके राज्य में कोई भी किसान दुखी न हो।
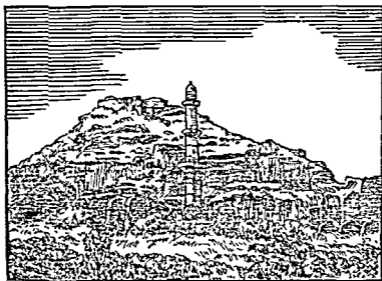
दौलताबाद

राजधानी का बदलना—सुलतान का राज्य उत्तर से लेकर दक्षिण तक बड़ा ही विस्तृत था। उसने

सोचा कि यदि दोनों प्रदेशों के मध्य में राजधानी बनाई जाए तो सुदृढ़ता के लिए अच्छा रहेगा। उसने दौलताबाद (देवगिरि) को केन्द्रीय राजधानी बनाया। साथ ही यह भी आज्ञा दी कि दिल्ली का प्रत्येक निवासी दौलताबाद पहुंचे। दौलताबाद में पहुंचने पर सुल्तान को अपनी गलती का आभास हुआ: अब उसने सब लोगों को वापिस चलने की आज्ञा दी। इस आने-जाने में हजारों लोगों ने अपनी जानें खोईं और खर्च भी बहुत पड़ा।

सिक्का परिवर्तन—इन कारणों से सुल्तान का राजकोष करीब करीब खाली हो चुका था। सम्राट चाहता था कि प्रत्येक व्यक्ति के पास धन हो इसलिये उसने सोने और चाँदी के स्थान पर तांबे के सिक्के चलाए। परन्तु टकसालों पर कोई नियन्त्रण नहीं रखा। इस प्रकार जनता ने जाली सिक्के ढालने प्रारम्भ कर दिए। विदेशी व्यापारियों ने इन सिक्कों को लेने से इनकार कर दिया था। विवश होकर सुल्तान को यह सिक्का सोने के सिक्के में बदलना पड़ा और इस प्रकार झूठे सिक्के भी बदलने पड़े। इस तरह राज्य का खजाना खाली हो गया। आधुनिक युग में जो कागज की करन्सी चलती है उसकी नींव सुल्तान मुहम्मद तुगलक ने ७०० वर्ष पूर्व रख दी थी।

मुहम्मद तुगलक के सिक्के

सुल्तान के मूर्खतापूर्ण कार्यों के कारण बड़े-बड़े सरदार और सूबेदार विद्रोही हो गये और उन्होंने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। दक्षिण में देवगिरी में स्वतन्त्र बहमनी राज्य स्थापित हो गया। बंगाल और लखनौती के राज्य भी स्वतंत्र हो गये। बड़े बड़े सरदार जो कि प्रबन्ध के लिये किसी प्रान्त के शासक थे अपने को केन्द्र से स्वतन्त्र समझ बैठे। स्थान स्थान पर विद्रोह हो रहे थे। स्वयं सुल्तान गुजरात और सिंध की ओर उपद्रव दबाने गया परन्तु वहां पर उसकी मृत्यु हो गई।

फिरोज तुगलक—सुल्तान ने अपने जीवन में ही अपने उत्तराधिकारी फिरोज तुगलक की नियुक्ति का निर्णय कर दिया था। फिरोज उसका चचेरा भाई था। गद्दी पर बैठते ही उसने हिन्दुओं से कठोरता के साथ व्यवहार किया और बलपूर्वक इस्लाम का प्रचार करने का प्रयास किया। प्रजा की भलाई के लिये स्कूल खुलवाए, मालगुजारी को कम किया और किसानों को खेती के लिए प्रोत्साहित किया। दिल्ली की शोभा बढ़ाने के लिये स्थान-स्थान पर बाग बगीचे लगवाए। सड़कें बनवाईं। विद्या प्रचार के लिए नए नए विद्यालय बनवाए। उसके दरबार में साहित्यिकों का मान था। जियाउद्दीन बर्नी तथा आफिक जैसे साहित्यकार उसके दरबार की शोभा बढ़ाते थे। स्वयं फिरोज तुगलक उच्च कोटि का लेखक था। फिरोजशाह मेरठ से अशोक का एक स्तम्भ उठवा कर दिल्ली ले आया। यह स्तम्भ अब फिरोजशाह की लाट कहलाता है और पुरानी दिल्ली में खड़ा है। फिरोज तुगलक के काल में लिखी गई तारीखे फिरोजशाही में लिखा है "दिल्ली के सारे राज्य में खुशहाली है। लोगों को सब तरह का आराम है और यहां पर अल्लाह की कृपा है।"

फिरोज तुगलक की मृत्यु के पश्चात् कोई भी उत्तराधिकारी ऐसा न था जो कि इतने बड़े राज्य को चला सके। समस्त राज्य छोटे छोटे राज्यों में विभाजित हो गया। अलाउद्दीन खिलजी ने उत्तर-पश्चिम की

ओर से आनेवाले हमलावरों को रोकने की जो व्यवस्था की थी वह छिन्न-भिन्न हो गई। दिल्ली के तख्त पर एक कमजोर बादशाह महमूद तुगलक बैठा हुआ था।

मध्य एशिया के प्रसिद्ध विजेता तैमूर ने यह सुअवसर देख कर १३९८ ई० में भारत पर आक्रमण किया। तैमूर के सिपाही पंजाब में मार-काट करते हुए दिल्ली आये और दिल्ली का सुलतान तैमूर को रोकने में असमर्थ रहा। तैमूर ने दिल्ली को दिल खोल कर लूटा। स्त्री और बच्चों को मौत के घाट उतार दिया। तैमूर धन का इच्छुक था। राज्य का नहीं। धन ही उसका सब कुछ था। दिल्ली को लूटने के पश्चात् उसने उत्तर प्रदेश का कुछ भाग लूटा और कांगड़ा होता हुआ वापस चला गया।

लौटते समय तैमूर खिजर खां सैयद नामक एक व्यक्ति को जीते हुए प्रदेश का गवर्नर नियुक्त कर गया था। १४१४ ई० में इस व्यक्ति ने दिल्ली पर कब्जा करके सैयद वंश की नींव रखी। १४५१ में बहलोल लोधी ने सैयद वंश के बादशाह को गद्दी से हटाकर लोधी वंश की स्थापना की। १५२६ में बाबर ने भारत पर हमला किया। उस समय दिल्ली पर इब्राहीम लोधी का राज था। पानीपत के मैदान में घमासान युद्ध हुआ। इब्राहीम लोधी लड़ाई में काम आया। बाबर ने दिल्ली और आगरा पर कब्जा करके मुगल वंश की स्थापना की।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत के इतिहास में सुलतान युग कौन सा है। तीन प्रमुख सुलतानों के नाम बताओ?

(२) अलाउद्दीन खिलजी के राज्य-प्रबन्ध के बारे में आप क्या जानते हैं। उसका चरित्र कैसा था?

(३) गुलाम बादशाह कौन थे। दो प्रमुख गुलाम बादशाहों के नाम बताओ?

(४) संक्षिप्त नोट लिखो :—
रजिया सुलतान, तैमूर, फिरोज तुगलक, अलतमश, बलबन।

(५) महम्मद तुगलक कौन था? उसका राज्यकाल किन बातों के लिए प्रसिद्ध है।

: १७ :

मुस्लिम काल में धार्मिक जागृति

भक्ति लहर

हिन्दू धर्म और इस्लाम के परस्पर मेल से दूरवर्ती परिणामों का निकलना स्वाभाविक था। भक्ति की लहर उसी का एक परिणाम थी।

'भक्ति-मार्ग' के नेताओं ने इस्लाम के सम्पर्क से प्रोत्साहन पाया और हिन्दू-परम्परा से एकेश्वरवाद के सिद्धान्तों का उद्धरण देकर उनका प्रचार किया। सर जान मार्शल का कथन है कि मानवता के इतिहास में दो व्यापक और समुन्नत किन्तु दो भिन्न सभ्यताओं के परस्पर मेल का ऐसा दृश्य कहीं नहीं मिलता है। रामानुज, रामानन्द, चैतन्य, कबीर, नानक और नामदेव आदि सन्तों की शिक्षा में हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म के आधारभूत सिद्धान्तों का सुन्दर सम्मिश्रण था।

सोमनाथ का मन्दिर ध्वस्त हो जाने के पश्चात् हिन्दुओं में मूर्ति पूजा के प्रति कुछ विश्वास-सा उठ गया। उस समय के बाद साधु सन्तों में यह भावना जागृत हुई कि बड़े बड़े मठ और मन्दिरों की स्थापना करके भगवान को प्राप्ति नहीं हो सकती। यदि मठ मन्दिरों में भगवान की शक्ति होती तो वे अपनी रक्षा क्यों नहीं करते ? और जब वे अपनी ही रक्षा नहीं कर सकते तो दूसरों की क्या सहायता करेंगे। इसलिये बहुत से सुधारक एक ईश्वर की भक्ति में विश्वास करने लगे। भक्ति मार्ग के सुधारकों ने राम तथा कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानकर उनकी उपासना प्रारम्भ की।

भक्ति-लहर के पहले प्रवर्तक

'भक्ति की लहर' के सबसे पहले प्रवर्तक आचार्य रामानुज हुए। रामानुज का जन्म दक्षिण में सन् १०१६ ई० में काजीवरम में हुआ था। रामानुज शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित ब्रह्मात्मैक्यवाद के सिद्धान्त से सन्तुष्ट नहीं थे। उन्होंने वैष्णव मत के आधार पर एकेश्वरवाद का प्रचार किया। उनका मन्तव्य था कि ईश्वर किसी शून्यता का नाम नहीं, किन्तु प्रेम और सौन्दर्य की मूर्ति को ही ईश्वर कहते हैं। सब कोई उसी से प्रकाश पाकर चमकते हैं। चोल वंश के शैव राजाओं ने रामानुज आचार्य के प्रचार को रोकना चाहा, रामानुज मैसूर चले गए। रामानुज ने बहुत से ग्रन्थ लिखे और उन्होंने अपने विचारों के प्रचार के लिए ७०० आश्रमों की स्थापना की।

रामानन्द (१४००—१४७० ई०): रामानुज के शिष्यों की पाचवीं पीढ़ी में रामानन्द गुरु थे। रामानन्द प्रयाग के एक ब्राह्मण थे और तुगलक बादशाहों के काल में इन्होंने प्रचार कार्य किया। हिन्दू धर्म में कई सुधारों का उन्होंने प्रचार किया। इनके शिष्यों में सन्त कबीर थे, जो शूद्र थे, धन्ना एक जाट था, और रविदास

एक चर्मकार। रामानन्द का देहान्त १४७० ई० में बनारस में हुआ। रामानन्द ने उत्तरी भारत में वैष्णव धर्म का प्रचार किया और सीता-राम की पूजा आरम्भ की।

कबीर : रामानन्द के सबसे उत्साही शिष्य का नाम सन्त कबीर (१४४०-१५१८) था। सन्त कबीर की माता एक हिन्दू विधवा थी। उनका पालन-पोषण एक मुसलमान जुलाहे ने किया। सन्त कबीर जात-पात के अनथक विरोधियों में से थे। आपने मूर्तिपूजा, यज्ञ और वर्ण-व्यवस्था की घोर निन्दा की। कबीर के अनुयायियों को कबीर-पन्थी कहते हैं। मध्य-भारत, गुजरात और दक्षिण में कबीरपन्थी बड़ी संख्या में रहते हैं।

कबीर

सन्त कबीर ने हिन्दुओं तथा मुसलमानों दोनों के आडम्बरपूर्ण धर्म की आलोचना की। हिन्दुओं की मूर्ति पूजा के बारे में आपने कहा—

पाहन पूजे हरि मिले, मैं तो पूजूं पहाड़।
दुनिया ऐसी बावरी पाथर पूजन जाय।
घर की चाकी कोई न पूजे जिहिका पीसा खाय॥

मुसलमानों की 'बाग' प्रणाली के बारे में सन्त कबीर ने अपने विचार इस तरह व्यक्त किए हैं —

कंकर पत्थर जोड़ कर मस्जिद लई बनाय।
ता चढ़ मुल्ला बाग दे क्या बहरा हुआ खुदाय॥

राम और रहीम को एक ही ईश्वर के दो रूप बताते हुए कबीरजी ने कहा—

काशी फिर काबा भया रामा भया रहीम।
× × ×
दुई जगदीश कहा ते आए कहु कौने भरमाया।
अल्ला रामा करीमा कैसे हरि हजरत नाम धराया॥

तुलसीदास (१५३२-१६२३) हिन्दी साहित्य में कन्नौज के ब्राह्मण सन्त तुलसीदास का नाम किसी से छिपा नहीं। आप रामभक्त थे। रामचरितमानस के रूप में आपने रामायण का अद्भुत महाकाव्य लिखा है जो वाल्मीकि कृत रामायण से भी श्रेष्ठ है। तुलसीदास ने किसी नए सम्प्रदाय की नींव नहीं डाली।

वल्लभाचार्य : वैष्णव-धर्म की एक शाखा का नाम कृष्ण भक्ति शाखा था। १६ वीं शताब्दी में वल्लभाचार्य हुए जिन्होंने कृष्णभक्ति का प्रचार किया। वल्लभाचार्य का जन्म १४८५ में तलिंगाना में हुआ था। मथुरा, वृन्दावन का भ्रमण करके वल्लभाचार्य ने अन्त में बनारस में रहने लगे। वल्लभाचार्य ने राधाकृष्ण की भक्ति का प्रचार किया।

चैतन्य महाप्रभु (१४८५-१५३३) वैष्णव धर्म के सबसे बड़े प्रचारक का नाम चैतन्य महाप्रभु था। महाप्रभु का जन्म नदिया (बंगाल) में १४८५ में हुआ और मृत्यु १५३३ ई० में हुई। चैतन्य महाप्रभु

ने कीर्तन की प्रथा चलाई। आप एक बंगाली सन्त थे। आपने बंगाल और उड़ीसा में प्रचार कार्य किया। चैतन्य महाप्रभु के शिष्यों में हिन्दू भी थे और मुसलमान भी। चैतन्य महाप्रभु ने अविवाहित रहनेवाले भिक्षुओं का सम्प्रदाय स्थापित किया जो वैष्णव धर्म का प्रचार किया करते थे।

नानकदेव : हिन्दुओं और मुसलमानों को पंजाब में एकता के सूत्र में बांधनेवाले श्री गुरु नानकदेव जी १४६९ ई० में तलवण्डी के स्थान पर एक क्षत्रिय परिवार में पैदा हुए। बाबा नानक ने एकेश्वरवाद का प्रचार किया और वर्ण व्यवस्था की घोर निन्दा की। आप सिख धर्म के संस्थापक थे।

गुरुनानक

दक्षिण में दादू ने सबसे पहले भक्ति-मार्ग का प्रचार किया। दादू का जन्म अहमदाबाद में १५४४ में हुआ था। दादू ने मूर्तिपूजा का खण्डन किया। दादू बड़े अच्छे कवि थे। उनके बाद गरीबदास और माधोदास ने राजपूताना में दादू पंथ का प्रचार किया। महाराष्ट्र में भक्ति-लहर के नेता नामदेव, तुकाराम और रामदास थे। उन्होंने मनुष्य-मात्र से प्रेम और ईश्वर में विश्वास का प्रचार किया। उन्होंने अपने चेलों को यही उपदेश दिया कि वे राम और रहीम के भेद को मिटा दें। उत्तरीय भारत में रविदास ने जो कि चर्मकार थे, वैष्णव धर्म का प्रचार किया। मीराबाई की कृष्ण-भक्ति के गीत आज तक भारत के नगर-नगर और डगर-डगर में गाए जाते हैं। बंगाल में ऐसे आन्दोलन शुरू हुए कि हिन्दुओं ने मुसलमानों के सन्तों की पूजा शुरू की और मुसलमानों ने हिन्दू देवताओं की पूजा शुरू कर दी।

मीराबाई

भक्ति लहर के परिणाम

भक्ति लहर और धार्मिक पुनरुत्थान के परिणाम बड़े गहरे निकले। छोटी जातियों का दर्जा समाज में

की जगह सहिष्णुता ने ले ली। इस्लाम का बलपूर्वक प्रचार रुक

गया। हिन्दू-धर्म में नया जीवन उत्पन्न हुआ। पंजाब में सिखों की उन्नति हुई, महाराष्ट्र में मराठे उठे। हिन्दू-धर्म एक देश-व्यापी धर्म बन गया। प्रयाग, हरिद्वार, काशी और पुरी आदि तीर्थों की यात्रा फिर से शुरू हो गई। इससे देश में पुन एकता की भावना जागृत हुई। भक्ति लहर का एक परिणाम यह हुआ कि जन-साधारण की भाषा में साहित्य सृजन हुआ। हिन्दी भाषा का विकास भक्ति लहर का ही परिणाम है। नामदेव नानक, कबीर, और रामानन्द ने हिन्दी भाषा द्वारा प्रचार किया।

साहित्य—इस काल में देश ने साहित्यिक दृष्टि से बडी उन्नति की। राजनीतिक उथल-पुथल इस उन्नति को रोक नहीं सकी। कई सुलतानों ने फारसी और अरबी साहित्य को बडा प्रोत्साहन दिया। मध्य एशिया में मंगोलों के बार-बार होनेवाले आक्रमणों के कारण कई विद्वानों ने हिन्दुस्तान के सुलतानों के दरबार में आश्रय पाया। इसी काल में अलबरूनी ने 'तहकीके हिन्द' नामक पुस्तक लिखी, जिससे महमूद गजनवी के काल के हिन्दुस्तान की स्थिति का पता चलता है। मिनहाजुद्दीन ने "तबकात-ए-नासिरी' पुस्तक लिखी जिसमें गुलाम वंश की जानकारी मिलती है। खिलजीवंश के काल में अमीर खुसरो, निजामुद्दीन औलिया और मीर हसन देहलवी ने बहुत कुछ लिखा। जियाउद्दीन बर्नी ने फिरोज तुगलक के समय में 'तारीखे फिरोज शाही' नामक किताब लिखी। कई मुसलमान विद्वानों ने संस्कृत का खूब अध्ययन किया। अलबरूनी ने ज्योतिष और दर्शन शास्त्रों का संस्कृत से अरबी में अनुवाद किया। बंगाल के हुसैनी शासकों ने रामायण और महा-भारत का बंगला में अनुवाद किया।

इसी काल में भक्ति, दर्शन, न्याय आदि पर कई पुस्तकें लिखी गईं। 'ब्रह्मसूत्र' में रामानुज ने भक्ति के सिद्धान्तों का विश्लेषण किया। 'गीतगोविन्द' में जयदेव ने कृष्णभक्ति की व्याख्या की है। हिन्दी भाषा का विकास भक्ति लहर की ही देन है। चन्द बरदाई, अमीर खुसरो लाला गोरख नाथ और मलिक मुहम्मद जायसी जैसे विख्यात भक्ति-कवि इसी युग में हुए। मीराबाई ने इसी भाषा में कृष्णभक्ति के मधुर गीत लिखे और गाए। देश की अन्य भाषाओं में सुन्दर भक्ति साहित्य का सृजन हुआ।

अभ्यास के प्रश्न

(१) 'भक्ति लहर' का क्या अर्थ है। यह कैसे शुरु हुई।

(२) 'भक्ति लहर' के प्रमुख प्रवर्तक कौन थे? उनका संक्षिप्त जीवन लिखो?

(३) कबीर के जीवन चरित्र तथा शिक्षाओं के बारे में एक संक्षिप्त निबंध लिखो।

(४) संक्षिप्त नोट लिखो :—
रामानन्द, तुलसी दास, चैतन्य महाप्रभु, नानक देव, मीराबाई।

(५) 'भक्ति लहर' का क्या परिणाम निकला? 'भक्ति लहर' पर इस्लाम का क्या प्रभाव पडा?

: १८ :

भारत में मुगल राज्य

बाबर

१५२६ ई० में भारत में बाबर के आगमन के साथ देश के राजनीतिक क्षितिज पर एक नए सूर्य का उदय हुआ। भारतीय इतिहास के एक नए युग का प्रारम्भ हुआ।

पिछले अध्याय में हमने भारत पर तैमूर के हमले का उल्लेख किया था। वह एक तुर्क बादशाह था। इससे पहले मंगोल बहुधा भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा से हमले करते रहे थे। लोगों ने तुर्कों को भी मंगोल समझा और उनके लिए मंगोल का अपभ्रंश मुगल शब्द प्रयुक्त होने लगा। तैमूर के हमले के बाद दिल्ली की सलतनत में अव्यवस्था छा गई थी। इस अव्यवस्था का लाभ तैमूर के ही एक उत्तराधिकारी बाबर ने उठाया। पानीपत के मैदान में विजय प्राप्त करने के बाद सारा भारत बाबर के कदमों पर था। दिल्ली में अपने प्रवेश के बारे में बाबर ने अपनी जीवनी में स्वयं लिखा है—"२८ रजब को (१० मई) बृहस्पतिवार के रोज मध्याह्नोत्तर की नमाज के समय मैंने आगरे में सुलतान इब्राहीम लोधी के महल में निवास ग्रहण किया।" इस दिन से भारत और स्वयं बाबर के जीवन में एक नये युग का प्रारम्भ हुआ। इससे पहले फुटबाल की तरह बाबर इधर से उधर मारा मारा फिरता था। इतिहासकार फरिश्ता के अनुसार उसने कभी एक जगह पर दो रमजान नहीं मनाए थे।

बाबर का प्रारम्भिक जीवन:—बाबर का जन्म २४ फरवरी सन् १४८३ ई० में फरगाना की राजधानी में हुआ। उसके पिता उमरशेख का राज्य मध्य एशिया में एक समृद्धशाली राज्य गिना जाता था। बाबर का अर्थ है शेर। बाबर की धमनियों में तैमूर और चंगेज खां का रक्त प्रवाहित था। उसने अरबी, तुर्की एवं फारसी की अच्छी शिक्षा प्राप्त की थी। बाबर एक अच्छा लेखक तथा कवि था। उसने अपने अनुभवों के आधार पर एक डायरी लिखी है।

बाबर ने पिता की मृत्यु के पश्चात् समरकन्द पर तीन बार चढ़ाई की। वह हर बार समरकन्द जीत लेता था परन्तु कुछ समय पश्चात् समरकन्द फिर स्वतन्त्र हो जाता था। जब वह समरकन्द को पूर्णतः अपने अधिकार में करने में सफल न हुआ तो उसका ध्यान भारत की ओर गया।

बाबर ने भारत पर पांच बार आक्रमण किया। पहला आक्रमण सन् १५१९ ई० में बाजौर और भेरा पर किया दूसरा और तीसरा अभियान पेशावर और सियालकोट पर किया। चौथा आक्रमण बाबर ने पंजाब पर किया जिसे उसने पंजाब के गवर्नर दौलतखां के निमंत्रण पर स्वीकार किया था। बाबर का अन्तिम और पांचवां आक्रमण सन् १५२५ ई० में हुआ और पानीपत के मैदान में २१ अप्रैल सन् १५२६ ई० को इब्राहीम लोधी से उसे दो-दो हाथ करने पड़े। इस युद्ध में १५,००० अफगान काम आए और इब्राहीम लोधी मारा गया। इस विजय से बाबर केवल दिल्ली और आगरा का ही स्वामी बना था, समस्त भारत का नहीं। समस्त भारत का स्वामी

बनने के लिये अभी उसे मेवाड के राणासागा से टक्कर लेनी थी। भारतवर्ष में राणा सागा और सुलतान महमूद लोधी दोनो ने ही सोचा था कि बाबर अन्य आक्रमणकारियो की तरह लूट मार करके यहा से कुछ समय

पश्चात् चला जाएगा। किन्तु जब बाबर नही गया तो राणासागा को उससे युद्ध करना पडा। १६ मार्च सन् १५२७ ई० को खानवा के युद्ध में राणासागा और बाबर की टक्कर हुई। देश के बहुत से मुस्लिम और हिन्दू राजपूत शासक राणासागा के साथ थे। युद्ध की अवस्था को देख कर ज्ञात होता था कि राजपूतो की विजय अवश्य होगी किन्तु उस समय बाबर ने अपनी सेना में जहाद का मन्त्र फूका। अपने सिपाहियो का हौसला टूटते देख कर बाबरने कहा—"यदि हम जीत गए तो भारत जैसे भूभाग के स्वामी बनेंगे और मारे गए तो जन्नत में जाएगे।" इसके साथ सार्वजनिक रूप से बाबर ने अपने जीवन की सबसे अमूल्य वस्तु शराब को त्यागा। मुगल तोपचियो ने दूने साहस के साथ गोला बारूद दागा। राजपूत सेना में खलबली मच गयी। राजपूतो के पास तोपखाना नहीं था। राजपूत हार गए और इस प्रकार भारत में मुगलवश की नीव पक्की हो गई।

बाबर

बाबर की मृत्यु:—बाबर की मृत्यु भी इतिहास की एक रोचक घटना है। बाबर के साथ उसका बडा पुत्र हुमायू सदैव युद्ध क्षेत्र में साथ रहता था। इस कारण उसका स्वास्थ्य दिन प्रति दिन बिगडता गया। सन् १५३० ई० में हुमायू अधिक बीमार हुआ। जब किसी उपचार से उसे स्वास्थ्य लाभ होने की आशा नही रही तो बाबर ने हुमायू के पलग के ४ चक्कर काट करके कहा, "हे प्रभु, तुम इसकी जान के बदले मेरे प्राण ले लो।" सच्चे दिल से की हुई बाबर की यह प्रार्थना स्वीकार हुई। बाबर ने अपनी मृत्यु से पूर्व हुमायू से कहा कि वह भारतीय प्रजा और अपने तीनो भाइयो को पुत्रो के समान समझे। सन् १५३० ई० में बाबर की मृत्यु हुई और उसके बडे पुत्र हुमायू ने गद्दी सम्भाली।

हुमायूं (१५३० से १५५६ ई० तक)

हुमायू को एक अभागा बादशाह कहा जाता है क्योकि किस्मत ने कभी उसका साथ नहीं दिया। वह फुटबाल की तरह ठोकरें ही खाता रहा।

हुमायू बाबर का सबसे बडा बेटा था। उसके तीन छोटे भाई थे—कामरान, असकरी और हिंडल। बाबर अपना समस्त साम्राज्य इन चार भाइयो में बाट देना चाहता था। अफगानिस्तान, जो सेना की भर्ती के लिये सबसे अच्छा प्रदेश था, असकरी के हिस्से आया। हुमायू भाइयो के प्रति बडा उदार था। उसने न केवल उदारता से साम्राज्य बाट दिया बल्कि उनसे बडे प्रेम का व्यवहार भी किया। परन्तु तीनो भाइयो ने किसी न किसी समय उसे दगा दिया। अभागे हुमायू को तीन मोर्चों पर एक साथ लडना पडा। (१) अपने भाइयो से अपने उत्तराधिकार के लिए लड़ाई (२) गुजरात के बहादुर शाह के विरुद्ध और (३) बगाल और बिहार के प्रबल अफगान शासक शेरशाह सूर के विरुद्ध। अपने शासन काल के प्रारम्भ में हुमायू ने बहादुर शाह को हरा कर गुजरात को मुगल राज्य में शामिल कर लिया। असकरी, हिंडल और कामरान ने हुमायू

को काफी कष्ट दिया परन्तु अन्ततोगत्वा हुमायू उन्हें पराजित करने में सफल हुआ। परन्तु शेरशाह सूर हुमायू के लिए एक कडवी गोली सिद्ध हुआ। चौसा के स्थान पर हुमायू को शेरशाह के हाथो पराजय का मुह देखना पडा। निरुत्साह होकर हुमायू ने गगा में कूद कर आत्महत्या करनी चाही परन्तु एक भिश्ती ने उसकी प्राणरक्षा की।

दिल्ली की गद्दी पर शेरशाह का अधिकार हो चुका था, हुमायू ने आगरा से अपने परिवार को लिया और सरहिन्द की ओर कूच किया। जोधपुर के नरेश तथा सरहिंद में उसके भाइयो ने उसकी सहायता नही की। निराश भटकता हुआ हुमायू अमरकोट होता हुआ फारिस के शाह के पास पहुचा। फारिस के शाह ने उसकी सहायता की परन्तु इसके बदले में हुमायू को सुन्नी से शिया मुसलमान बनना पडा।

हुमायू

पुन राज्य प्राप्ति —पन्द्रह वर्ष भटकने के बाद फारिस के बादशाह से सहायता पाकर हुमायू ने कधार और काबुल को जीता। उस समय कामरान वहा का शासक था। पहले तो कामरान ने अपने भाई हुमायू का काफी विरोध किया किन्तु अन्त में वह पराजित हुआ। हुमायू ने उसकी आखें निकलवाकर उसे मक्का भिजवा दिया। इधर शेरशाह के उत्तराधिकारी दुर्बल हो चुके थे। उनमें इतनी योग्यता नही थी कि वे इस राज्य को चलाते। सन् १५५५ ई० में लाहौर के स्थान पर हुमायू और सिकदर सूर की फौजो में युद्ध हुआ। हुमायू की विशाल फौज देख कर सिकदर सूर बिना युद्ध किये ही भाग गया। इस प्रकार सन् १५५५ ई० में हुमायू पुन दिल्ली का सम्राट बना।

हुमायू का जीवन सदैव ही दुर्घटनाओ का जीवन रहा है। उसे कभी भी शाति नही मिली। एक बार जब वह अपने पुस्तकालय की सीढियो से उतर रहा था तो अचानक उसका पैर फिसल गया। इस कारण १५५६ ई० में उसकी मृत्यु हुई। मृत्यु के पश्चात् उसका नाबालिग बेटा जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर गद्दी पर बैठा और देखरेख का कार्य उसके विश्वासपात्र सेनापति बैरमखा के सुपुर्द हुआ।

हुमायू का चरित्र —हुमायू उच्च कोटि का कवि, ज्योतिषी तथा गणित-शास्त्री था। रात्रि में उसके यहा विद्वानो की सभा होती थी जिसमें दर्शन जैसे गम्भीर विषयो पर भी वादविवाद होता था। इतिहासकार लेनपूल ने हुमायू के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि "उसका चरित्र आकर्षक था परन्तु प्रभावशाली नहीं। वह अपने युग का सभ्य व्यक्ति था। विद्वान था पुस्तकों का प्रेमी था। विद्वानों का आदर करता था, उदारता, दयालुता उसकी नस नस में भरी हुई थी। वह दृढ धार्मिक था।" नमाज के लिये वह अपने सब काम छोड देता था। इतने गुणो के साथ उसमें कुछ अवगुण भी थे। वह आवश्यकता से अधिक नरम था और यह नरमी उसके लिए बहुत महगी सिद्ध हुई, बडे बडे सरदार उसकी नरमी का अनुचित लाभ उठाते रहे। वह सप्ताह में ५ दिन कला और साहित्य के रसास्वादन में लगाता था और केवल एक दिन राज्य कार्यों में जबकि उसे दत्तचित्त होकर राजनीतिक कार्य करने की जरूरत थी।

हुमायू का मुख्य शत्रु शेरशाह एक अफगान सरदार था। अपने दृढ सकल्प तथा वीरता से शेरशाह ने हुमायू को भारत से भागने पर विवश कर दिया था। शेरशाह दिल्ली के तख्त पर केवल ५ वर्ष बैठा, परन्तु इस सक्षिप्त समय में उसने इतिहास पर अपनी स्थायी छाप छोडी है।

शेरशाह सूर (१५४० से १५४५ ई०)

शेरशाह का बचपन का नाम फरीद था। उसका जन्म पंजाब के होशियारपुर नाम के जिले में हुआ था। इसके पिता का नाम हसन और दादा का नाम इब्राहीम था। हसन और इब्राहीम दोनो पजाब छोड कर बिहार के नवाब जमाल खा के पास नौकर हो गए थे। कुछ ही दिन बाद जब वह दिल्ली सुलतान के यहा नौकर हुए तो सुलतान सिकंदर लोधी ने हसन की सेवाओं से प्रसन्न होकर टाडा और खवासपुर की जागीरें दे दी। फरीदको बचपन में माता-पिता का अधिक प्यार नही मिल सका क्योकि हसन की ४ स्त्रिया थी और उसका सबसे छोटी बेगम पर विशेष प्रेम था जो फरीद को फूटी आख भी नही देख सकती थी। इसलिये फरीद जौनपुर में शिक्षा प्राप्त करने के लिए चला गया। वहा पर उसने कुछ ही दिनो में सिकदर नामा गुलिस्ता बोस्तां आदि फारसी की प्रसिद्ध पुस्तकें कण्ठस्थ कर ली। जब हसन को फरीद की योग्यता का पता चला तो उसने फरीद को बुला लिया और जागीर का प्रबन्ध उसको सौंप दिया। २१ वर्ष की आयु तक फरीद ने जागीर का प्रबन्ध किया और सबसे पहले उसने किसानो का उद्धार किया।

शेरशाह

उसने खेतो की पैमाइश करके मालगुजारी की व्यवस्था की। राज्य के विद्रोही जमीदारो पर नियन्त्रण कर शाति स्थापित की। इस कारण वह जागीर के किसानो में बडा लोकप्रिय हो गया। जनता में फरीद को सम्मान मिलने के कारण उसकी माता फिर उससे जल उठी और फरीद को पुन अपना घर छोडना पडा।

घर छोड कर फरीद बिहार के नवाब के पास नौकर हो गया। इस नौकरी में उसने एक शेर बबर को मारा। उसकी बहादुरी से खुश होकर नवाब बहारखा ने उसे शेरखा की उपाधि प्रदान की परन्तु वह यहा पर भी कुछ ही दिन रहा और कुछ समय बाद बाबर के यहा जाकर नौकर हो गया। बाबर ने शेर खा की योग्यता को पहचाना। उसे इस नवयुवक से खतरा अनुभव हुआ। अत उसने अपने प्रधान मन्त्री को उस पर कडी नजर रखने का आदेश दिया।

बाबर की सन्देहात्मक दृष्टि ने शेरखा को पुन बिहार जाने को विवश कर दिया और एक बार फिर वह बहारखां के यहा नौकर हो गया। यहा पर उसने बहारखा के पुत्र जलाल खा को शिक्षा-दीक्षा दी। बहार खां की मृत्यु के पश्चात् नवाब की विधवा बेगम दादने शेरखा को अपना प्रतिनिधि बनाया। शेरखा ने यह

अधिकार पाकर बिहार का शासन सभाला और अधिकारियो को अपनी ओर मिला कर बिहार का राज्य अपने अधिकार में कर लिया। शीघ्र ही शेरखा ने समस्त अफगान शक्ति को सघटित किया। हुमायू को दो बार परास्त किया। घबराहट में हुमायू हिन्दुस्तान छोड कर काबुल चला गया और शेरशाह भारत का सम्राट बना। शेरशाह अल्पकाल के लिए ही भारत का शासक रहा परन्तु एक कुशल प्रबन्धक के रूप में भारतीय इतिहास में उसका बहुत ऊँचा स्थान है।

शेरशाह एक कुशल प्रबन्धक —प्रो० श्रीराम शर्मा ने लिखा है कि शेरशाह की प्रशसा उसकी वीरता के कारण ही नहीं अपितु उसके लोक व्यवहार के कारण भी की जाती है। शेरशाह में इग्लैण्ड के हेनरी सप्तम, जर्मनी के फ्रेड्रीक विलियम प्रथम और इटली के मेकावेली और कुछ अशो में भारत के कौटिल्य और अशोक के गुण भी विद्यमान थे।

कानून ने कहा है कि, "शेरखा पहला मुसलमान बादशाह था जिसने प्रजा के प्रति भलाई का व्यवहार किया।" उसने हिन्दू और मुसलमान दोनो को समान दृष्टि से देखा। स्वय शेरशाह कहा करता था कि 'बड़े मनुष्य के लिए यही आवश्यक है कि वह उद्यमशील रहे। सम्राट को चाहिए कि वह अपनी प्रतिष्ठा के महत्व को और अपनी ऊची पदवियों को ध्यान में रखते हुए राज्य के कार्य तथा समस्याओं को छोटा और बडा नहीं समझे।' शेरशाह स्वय इस सिद्धान्त का पालन करता था। इसी कारण बडे से बडा सरदार भी शेरशाह से डरता था। उनमें इतना साहस नहीं था कि वे शेरशाह की आज्ञा के विरुद्ध कोई कार्य कर सकें। शेरशाह ने हिन्दुओ पर अत्याचार नहीं किए। उसने हिन्दुओ को उच्चपद दिए। अकबर के समय जो राजा टोडरमल इतने प्रसिद्ध हुए, वे शेरशाह के ही एक अधिकारी थे।

शासन सुधार —शेरशाह ने सर्वप्रथम प्रान्तीय शासन प्रणाली की व्यवस्था की। बडे बडे प्रान्तो को छोटे प्रान्तों में विभाजित किया। छोटे प्रान्तों को जिलो में बाटा और फिर जिलो को परगनो में विभाजित किया। इस प्रकार केन्द्र से लेकर ग्राम तक शेरशाह ने पूरी श्रृखला मिला दी और प्रान्तो में दिन प्रति दिन होने वाले झगडे समाप्त हो गए।

सैनिक सुधार —शेरशाह की सेना में डेढ लाख घुडसवार, २५,००० पैदल सिपाही थे। इसके साथ ही बड बडे दुर्गों में भी शेरशाह की फौज रहती थी। सैनिको का भरती करना, उनको वेतन देना, सैनिको की पदोन्नति देने तक के कार्य में शेरशाह एकछत्र स्वामी होता था। प्रत्येक सैनिक और उसके घोडे का पूर्ण रेकार्ड रखा जाता था। वेतन देते समय उसका रेकार्ड देखा जाता था। इस तरह सेना पर शेरशाह का कडा नियन्त्रण था।

भूमि सुधार —मुसलमान बादशाहो में शेरशाह ही एक ऐसा बादशाह था जिसने किसानो की आर्थिक अवस्था पर विचार किया। उसने यह अनुभव बचपन में ही, जब कि वह अपने पिता की जागीर सहसराम का प्रबन्धक था, प्राप्त किया था। बादशाह बनने पर उसने अपने प्रमुख सरदार अहमदखा से कहा कि वह भूमि की पैमाइश कराये। उपज के अनुसार प्रत्येक खण्ड को विभाजित किया गया और प्रत्येक खण्ड की पैमाइश करवाई गई।

शेरशाह ने किसानो से कितनी मालगुजारी ली इस बारे में भिन्न-भिन्न धारणाए हैं। अधिकार

इतिहासकारो के अनुसार वह उपज का तीसरा भाग लेता था और यह किसानो की इच्छा थी कि वे मालगुजारी नकद दें या अनाज के रूप में। मालगुजारी देने के लिए बादशाह और किसानो के बीच में कबूलियत नाम का प्रमाण-पत्र भी भरा जाता था। मालगुजारी वसूल करने वालो पर जो भी व्यय होता था वह भी किसानो से ही प्राप्त किया जाता था। सरकारी कर्मचारियों को आज्ञा थी कि वे मालगुजारी के लिए किसानो के साथ नम्रता से व्यवहार करें। सेना को आदेश था कि वे कूच के समय किसी भी खेत को नष्ट न करें। यदि परिस्थितिवश फौज के लिये यह आवश्यक होता था कि वह किसानो के खेत में से गुजरे तो बादशाह किसान को उसका मुआवजा देता था। किसानो की भलाई के लिए वह सदा चेष्टा करता था। उसने स्वय लिखा है—"किसानों का क्या दोष है। उन्हें तो समय के हाकिम की आज्ञा का पालन करना होना है। यदि मैं उन्हें कष्ट दू तो वे घर-बार छोड कर जगलो में भाग जाएगे। देश तबाह हो जायगा।"

सामाजिक सुधार—शेरशाह ने कुल मिलाकर ३०,००० मील लम्बी सडकें बनवाईं। उस समय की परिस्थितियो के अनुसार यह शेरशाह का एक महान कार्य था। उसकी बनवाई हुई चार सडकें प्रमुख है। सडके आजम जिसको आजकल हम जी० टी० रोड कहते है बगाल के नगर सुनार गाव से गुजरती हुई लाहौर तक पहुचती है। दूसरी आगरा से बुरहानपुर तक, तीसरी आगरे से चित्तौड़गढ़ तक जानेवाली और चौथी लाहौर से मुलतान तक जानेवाली सडक थी। उसने सडक के दोनो ओर छायादार वृक्ष लगवाए।

थोडे-थोडे फासिले पर सराय बनवाई और सरायो में हिन्दू मुसलमान दोनो के रहने के लिये अलग-अलग व्यवस्था की। सराय में जलपान, बिस्तर और भोजन यहा तक कि घोडो के चारे तक की व्यवस्था थी। शेरशाह ने समस्त सरायो में डाक पहुचाने के लिए ३४०० घोडे रखे हुए थे। इस व्यवस्था के कारण ही प्रत्येक प्रान्त की खबरें बादशाह के पास नित्य प्रति पहुच जाया करती थी। शेरशाह ने बहुत सी धार्मिक सस्थाए भी स्थापित की। निर्धनो और अपाहिजो के लिए लगरो की व्यवस्था की। इन लगरो में रोजाना हजारो व्यक्तियों को खाना खिलाया जाता था। बादशाह ने खैरात घर बनवाए, बगीचे लगवाए और स्वास्थ्य शिक्षा के लिए बहुत से अस्पताल और स्कूल खोले।

पुलिस और न्यायालय में सुधार—गाव का मुखिया अपने यहा न्याय के प्रति उत्तरदायी होता था। यदि किसी गाव में कोई चोरी अथवा हत्या हो जाए और अपराधी का पता नही चले तो उस गाव के मुखिया को ही अपराधी माना जाता था। ऐसी व्यवस्था के कारण मुखिया सदैव आख खोले कान साफ किये काम करते थे। शेरशाह ने पुलिस के अन्दर जहा शरीफ आदमी भरती किये वहा साथ ही साथ चोर और डाकुओ को भी पुलिस में भरती किया। ये चोर और डाकू अपराधियो का शीघ्र ही पता लगाने में समर्थ होते थे। साम्राज्य में सब जगह शांति और सुरक्षा का साम्राज्य था। अब्बास खाँ ने लिखा है कि शेरशाह के शुशासन ने ऐसा वातावरण प्रस्तुत कर दिया था कि एक निर्बल बुढ़िया भी जो कि मरने के किनारे है, अपने सिर पर आभूषणों की गठरी लिये बेरोकटोक देश के एक छोर से दूसरे छोर तक जा सकती थी।

आर्थिक अवस्था—राजकोष को बढाने के लिए सुलतान ने सबसे पहले व्यापार को बढाया। व्यापारियो के धन माल की रक्षा की, उनकी वस्तुओ का उचित दाम दिलवाया। व्यापारियो की जो चीज बिक

जाती थी उस पर चुंगी की व्यवस्था थी मार्ग माल पर चुंगी नहीं लगती थी। प्रांत से बाहर जानेवाले माल पर निर्धारित कर लगाया जाता था। सिक्कों का प्रचलन किया। जिस प्रकार हमारे यहां इस वक्त भारत में रुपये आने पैसे के सिक्के हैं उसी प्रकार ही शेरशाह ने अशर्फी, रुपये व अन्य छोटे-छोटे सिक्के बनवाए। शेरशाह ने सर्व प्रथम इन सिक्कों पर हिन्दी का प्रयोग किया। हिन्दी में सिक्कों पर श्री शेरशाह लिखा था।

शेरशाह के सिक्के

शेरशाह का भवन निर्माण :—शेरशाह ने अपनी जागीर सहसराम में अपने जीवनकाल में ही अपना मकबरा बनवा लिया था। महान इतिहासकार कनिंघम ने लिखा है कि यह मकबरा ताजमहल से अधिक सुन्दर है उससे कम नहीं। बाहर से यह मुस्लिम इमारत मालूम होती है और अन्दर से इसमें हिन्दूकला की छाप है। शेरशाह ने दिल्ली में पुराना किला भी बनवाया।
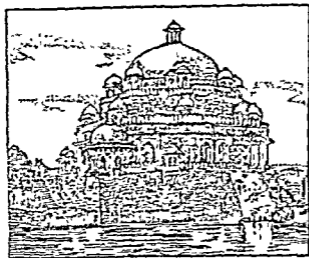
शेरशाह का मकबरा

संक्षेप से हम कह सकते हैं कि मध्य युग के मुसलमान बादशाहों में शेरशाह सूर एक अत्यन्त सफल, न्यायप्रिय, उदार, कर्मठ और प्रजावत्सल बादशाह था।

अभ्यास के प्रश्न

(१) बाबर का जीवन चरित्र लिखो। उसने भारत में मुगल राज्य कैसे स्थापित किया ?

(२) हुमायूं को अभागा बादशाह क्यों कहते हैं ? उसके चरित्र के बारे में आप क्या जानते हैं ?

(३) शेरशाह सूर का भारतीय इतिहास में क्या स्थान है। उसके शासन प्रबन्ध के बारे में आप क्या जानते हैं ?

(४) शेरशाह सूर के जीवन पर एक संक्षिप्त निबंध लिखो।

: १९ :

अकबर महान

कस्तूरी की महक :—जब हुमायूं प्राण-रक्षा के लिए भारत से भाग रहा था तो उसे सिन्ध में अमरकोट के स्थान पर ठहरना पड़ा। यहां पर १५ अक्तूबर १५४२ को उसके घर एक पुत्ररत्न ने जन्म लिया। हुमायूं के हिन्दू निजी सचिव जौहर ने इस घटना के बारे में लिखा है—"भाग्य ने थोड़ी देर के लिये सम्राट पर अनुकम्पा की। उसके घर पुत्र पैदा हुआ जिसने इतिहास पर अपनी न मिटनेवाली छाप छोड़ी है।" इस समय हुमायूं के पास पुत्र-जन्म पर हर्ष मनाने के लिए थोड़ी सी कस्तूरी के अतिरिक्त कुछ नहीं था। यह कस्तूरी उसने चीनी की एक प्लेट में रख कर ऊंचे स्वर से प्रार्थना की—'अल्लाह, इस कस्तूरी की महक की तरह मेरे बेटे का यश भी दुनिया के कोने-कोने में फैल जाए।' आप देखेंगे कि हुमायूं की यह प्रार्थना भगवान ने सुन ली और उसका बेटा भारत का एक महान शासक बना।

जिस समय जलालुद्दीन अकबर गद्दी पर बैठा उस समय उसकी अवस्था १३ वर्ष की थी और राजकाज का सारा भार उसके विश्वासपात्र सेनापति बैरमखां पर था। हिन्दुस्तान को बाबर ने जीता और हुमायूं ने खो दिया। हुमायूं अपने बेटे अकबर के लिए दोबारा भारत जीत ही रहा था कि वह मर गया। अकबर को अपने पिता का शेष काम पूरा करना था।

शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् उस समय के बड़े-बड़े प्रान्त काश्मीर, मालवा, गुजरात, बंगाल और उड़ीसा स्वतन्त्र हो गए थे। अभी अकबर अपने सेनापति बैरमखां के साथ दिल्ली के सिंहासन पर पहुंच नहीं पाया था कि आदिलशाह के सेनापति हेमू ने आगरा और दिल्ली पर अधिकार प्राप्त कर पुनः हिन्दू राज्य की स्थापना का प्रयास किया। अकबर से सहानुभूति रखनेवाले व्यक्तियों ने उसे सलाह दी कि वह इस अवस्था में दिल्ली न जाए किन्तु बैरमखां ने एक नहीं मानी और वह मुगल फौज लेकर पानीपत के मैदान में आ गया।

पानीपत की दूसरी लड़ाई में घमासान युद्ध हुआ। मुगल सिपाहियों के एक तीर से हेमू की आंख फूट गई और वह मूर्छित होकर गिर पड़ा। उसके गिरते ही बैरमखां ने उसका सिर काट डाला। पानीपत की इस विजय से दिल्ली और आगरे पर अकबर का पूर्ण अधिकार हो गया। उधर बंगाल में सिकन्दर सूर ने आदिलशाह को मारा और स्वयं अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। यह १५५६ की घटना है।

अकबर और बैरमखां :—बैरमखां मुगल साम्राज्य का सच्चा शुभचिंतक था। इसी कारण हुमायूं ने उसे खानखाना की उपाधि प्रदान की थी। अकबर की शिक्षा-दीक्षा भी बैरमखां ने ही की थी। यदि बैरमखां चाहता तो सरलता के साथ अकबर को मार कर स्वयं गद्दी सम्भाल सकता था किन्तु उसने अकबर को गद्दी पर बैठा कर अपनी पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय दिया था।

१८ वर्ष की अवस्था में अकबर राजकाज चलाने में स्वयं चतुर हो गया था इसलिए बैरमखां ने राजकाज के अधिकांश मामलों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा। अकबर के चाटुकारों ने उसे बैरमखां के विरुद्ध उकसाया। इस कारण अकबर और बैरमखां दोनों में अनबन हो गई। बैरमखां ने अकबर को राज्य देकर

कहा कि मुझे मक्का जाने की इजाजत दी जाए किन्तु अकबर को उसकी नीति में कुछ सन्देह था। जब बैरमखां को इस बात का पता चला तो उसने बादशाह के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। बैरमखां की हार हुई। अकबर ने उसे क्षमा कर दिया। परन्तु थोड़े दिनों बाद ही बैरम-खां के किसी शत्रु ने उसकी हत्या कर दी।

अकबर

अकबर का राज्य विस्तार:—अपने पूर्वजों की मर्यादा के अनुसार अकबर ने भी अब राज्य विस्तार की ओर ध्यान दिया। १५६० ई० में उसने मालवा पर कब्जा किया। तदोपरान्त उसने राजपूताने की ओर ध्यान दिया। अकबर ने भलीभाँति समझ लिया कि राजपूतों की सहायता के बिना वह इस देश पर सफलता से शासन नहीं कर सकता। इस-लिए सन् १५६२ ई० में उसने अजमेर के राजा भारमल की पुत्री से विवाह किया और उसके पुत्रों भगवानदास और मानसिंह को ऊँचे पद दिए। जैसलमेर के राजा ने भी अपनी कन्या का विवाह अकबर से कर दिया। धीरे-धीरे जयपुर, जोधपुर बीकानेर, और बूंदी के राजाओं ने भी अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। परन्तु उदय-पुर में अकबर को वीर शिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह का सामना करना पड़ा। राणा प्रताप ने अन्तिम दम तक अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की। राजस्थान की गौरवगाथा लिखने वाले कर्नल टाड ने महाराणा प्रताप के बारे में लिखा है—'बिना धन और साधनों के, कठिन से कठिन परिस्थिति में भी

इस राजपूत वीर ने अपनी मां के दूध को लाज नहीं लगने दी।" १५७३ में अकबर ने गुजरात को जीता। कहते हैं, नौ दिन में अकबर फतेहपुर से अहमदाबाद जा पहुंचा और इस समृद्ध राज्य को मुगल साम्राज्य में शामिल किया। तदोपरान्त अकबर ने बंगाल और बिहार को जीता। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अकबर की मृत्यु के समय मुगल साम्राज्य पश्चिम में अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान और गुजरात से लेकर पूर्व में बंगाल तक फैला हुआ था और उत्तर में काश्मीर से लेकर दक्षिण में खानदेश तक।

अकबर का अन्त :—मुगल इतिहास में शासन के उत्तराधिकारी का निर्णय प्राय तलवार से ही होता था क्योकि यह तो नियम नही था कि बडा भाई ही गद्दी पर बैठे। इसलिए जब अकबर दक्षिण में गया तो उसके पीछे सलीम ने पिता के विरुद्ध बगावत कर दी। उसने अपने दोनो भाईयो दानयाल और मुराद को मरवा दिया। जब सन् १६०४ ई० में अकबर दक्षिण विजय करके दिल्ली आया तब शहजादा सलीम ने उससे क्षमा माग ली। यद्यपि अकबर सलीम के इस बर्ताव से बडा दुखी था और वह उसे क्षमा भी नही करना चाहता था किन्तु सलीम उसका अकेला पुत्र शेप रह गया था। इसलिए इच्छा न होते हुए भी उसे क्षमा करना पडा।

बीरबल पहले ही लडाई में मारा जा चुका था। बादशाह के लिए न कोई विनोद था न कोई प्रसन्नता। अकबर महलो में ही पडा रहता और सन् १६०५ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के पश्चात् शहजादा सलीम जहागीर के नाम से बादशाह बना।

अकबर की राज्य व्यवस्था :—अकबर ने शासन-प्रबन्ध के लिए समस्त राज्य को १५ सूबो में बाटा जिनके नाम ये है —

१ काबुल, २ लाहौर, ३ मुलतान, ४ दिल्ली, ५ आगरा, ६ अवध, (वर्तमान अयोध्या या फैजाबाद), ७ इलाहाबाद, ८, अजमेर, ९ गुजरात, १० मालवा, ११ बिहार, १२ बगाल, १३. खानदेश, १४ बरार, १५ अहमदनगर।

जैसा कि उसके जीवन से ज्ञात होता है उसका अधिकाश समय युद्ध में ही व्यतीत हुआ। किन्तु उसने जान लिया था कि भारत में केवल सैनिक राज्य नही चल सकता। उसे लोकप्रिय राज्य बनाना आवश्यक है। इसलिये उसने जब भी समय मिला शाति और व्यवस्था स्थापित की और प्रजा की भलाई के बहुत ही कार्य किये। अकबर एक निरकुश शासक था फिर भी उसने प्रजा पर कोई अत्याचार नही किया। राज्य-प्रशासन को कई विभागो में बाटा। अकबर के यहा ऊचे ऊचे पद योग्यता पर दिये जाते थे, हिन्दू और मुसलमान के भेद से नही। उसके नौ रत्नो में राजा मानसिंह (सेनापति), राजा टोडरमल (शासन, कानून तथा भूमि प्रबध के विशेषज्ञ) और बीरबल (नीति शास्त्र के पडित) थे। इसलिए हिन्दू भी अक्बर का विरोध नही करते थे। अक्बर ने राजकाज को ९ विभागो में बाट रखा था और प्रत्येक विभाग बादशाह के दरबार के ९ रत्नो में से एक रत्न के पास था।

न्याय व्यवस्था :—बादशाह ही राज्य का सबसे बडा न्यायाधिकारी होता था। छोटे-छोटे मुकद्मे काजी और पण्डितों द्वारा निपटाए जाते थे। छोटी अदालतो की अपील बादशाह के पास तक की जा सकती थी। न्याय के लिए बादशाह का एक दिन नियत था जिस दिन प्रत्येक आदमी बादशाह के पास अपनी फरियाद लेकर पहुच सकता था। धार्मिक मकद्मो का निर्णय हिन्दुओं की मनुस्मृति और मुसलमानो के

कुशन के अनुसार होता था। फौजदारी तथा मालगुजारी के फैसले दोनों जातियों के लिए समान रूप से होते थे।

मालगुजारी तथा आर्थिक व्यवस्था :—शेरशाह के समय में ही मालगुजारी की व्यवस्था ठीक प्रकार से चल रही थी। शेरशाह के प्रधान अधिकारी राजा टोडरमल थे। शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् वे अकबर के दरबार में आ गए और उन्होंने मालगुजारी व्यवस्था शेरशाह की भांति जारी की। किसानों को १० वर्षों के लिए भूमि दी जाती थी और भूमि कर की दर निश्चित थी।

अकबर के सिक्के

सामाजिक सुधार :—अकबर विशाल हृदय व्यक्ति था। वह सब धर्मों के ईश्वर को एक मानता था। उसने कभी भी राज्य के बल पर धर्म का प्रचार नहीं किया। अकबर के रंगमहल में जितनी भी हिन्दू स्त्रियां थीं वे भी धर्म कर्म में स्वतंत्र थीं। फतहपुर सीकरी के महलों से ज्ञात होता है कि जोधाबाई जो सलीम की माता थी पूर्णतः हिन्दू धर्म को निभाती थी। अकबर भी उसके भवन में मद्यपान करके नहीं जा सकता था।

दीनेइलाही :—अकबर, बाबर और हुमायूं की भांति विद्वान नहीं था क्योंकि बचपन में उसकी शिक्षा-दीक्षा का कोई उचित प्रबन्ध नहीं हो सका था। उसने जितना भी ज्ञान प्राप्त किया वह सत्संग से प्राप्त किया पुस्तकों से नहीं। सर्व प्रथम उसने इस्लाम धर्म के विद्वानों और इस्लाम के कट्टर पन्थियों की सभा बुलाई। किन्तु उस सभा में धार्मिक विचार-विमर्श होने के बजाए असभ्यता पाई जाने लगी। अकबर का धर्म के ठेकेदारों पर से विश्वास उठ गया। अकबर सभी धर्मों को जानना चाहता था इसलिए उसने प्रत्येक सम्प्रदाय की सभा बुलाई और सब सम्प्रदायों के नेताओं ने अपने अपने मत की अकबर के सम्मुख पुष्टि की। अकबर पर जैन, पारसी और ईसाई धर्मों का विशेष प्रभाव पड़ा। इन धार्मिक सभाओं का प्रभाव यह हुआ कि उस पर मुल्लाओं का धार्मिक रंग नहीं चढ़ सका और वह जान गया कि किस मत में कितनी वास्तविकता है।

अकबर ने सब धर्मों के अच्छे सिद्धान्तों को एकत्रित करके एक धर्म चलाया जिसका नाम था दीनेइलाही। इस धर्म का कोई विशेष पैगम्बर नहीं था। जब लोग आपस में मिलते थे तो अल्लाहोअकबर और जल्लेजलालहू कहते थे। दीनेइलाही को मानने वाले न स्वयं मांसाहारी थे और न उनसे सबंध रखते थे। दीनेइलाही का प्रचार भी अकबर ने सरकारी रूप में नहीं किया। जिस व्यक्ति ने प्रसन्नता से अपनाना चाहा उसने अपनाया। समस्त राज्य में केवल १०८ व्यक्तियों ने ही दीनेइलाही को अपनाया था। इस कारण अकबर का चलाया हुआ दीनेइलाही उसकी मौत के साथ ही खत्म हो गया।

अकबर के ९ रत्न :—अन्य बादशाहों की तरह अकबर की भी एक विशेष सभा थी जिसमें ९ रत्न थे।

१ मुल्ला दोप्याजा, २ हकीम हुक्काम (प्रधान पाकशाला), ३. अब्दुर्रहीम खानखाना (कवि, शासक और सेनापति), ४. अबुल फजल (इतिहासकार-सूफी), ५. अबुल फैजी, (लेखक और कवि) ६

मिर्जा तानसेन(संगीताचार्य), ७, राजा मानसिंह(कुशल शासक और सेनापति), ८ राजा टोडरमल(शासक कानून तथा भूमि प्रबन्ध के विशेषज्ञ) ९. राजा बीरबल(हास्याचार्य तथा नीतिशास्त्र के पंडित)।

सामाजिक सुधार —जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि राजपूतो में कन्याओ की उत्पत्ति को अपशकुन समझा जाता था। अकबर ने प्रयास किया कि राजपूत लोग कन्याओ को भी पुत्र की तरह प्रेम करें। उसने सती प्रथा को बन्द करने के लिए प्रयास किया और विधवा विवाह पर भी बल दिया। हिन्दुओ के यज्ञो में पशु बलि आदि प्रथाओ को अवैध घोषित किया। अकबर ने हिन्दू, ईसाई और मुसलमान तीनो धर्म की स्त्रियो से विवाह किया था। वेश्यायें नगर के बाहर रहती थी। राजधानी में मनुष्य मद्यपान कर सकता था किन्तु सीमा में। जब वे मद्यपान करके अधिक उद्दण्ड होते थे तो उन्हें कठोर से कठोर सजाए भी दी जाती थी। सभी व्यक्ति अपने धर्म कार्य में स्वतन्त्र थे।

अकबर मुगल बादशाहो में एक ऐसा बादशाह था जिसने कभी दाढी नही रखी। वह तिलक लगाता और गले में माला पहनता था। हिन्दू और बौद्ध भिक्षुओ को खुले दिल से दान देता था। उसने हिन्दू यात्रियो से जजिया टैक्स लेना बंद कर दिया। गोवध निषेध कर दिया। उसने तानसेन जैसे संगीतज्ञो तथा जसवन्त व दासवान जैसे हिन्दू चित्रकारो को प्रोत्साहन दिया। उसने आगरे के पास फतेहपुर सीकरी का ऐतिहासिक नगर बनवाया। यहा अकबर के गुरु शेख चिश्ती रहते थे। फतेहपुर सीकरी की स्थापत्य कला हिन्दू तथा मुस्लिम स्थापत्य कला का सुन्दर सम्मिश्रण प्रस्तुत करती है।

शिक्षा तथा साहित्य—यद्यपि सम्राट अशिक्षित था फिर भी उसने प्रजा में शिक्षा प्रचार के लिए पूर्ण रूप से व्यवस्था की। विद्यालय और महाविद्यालय की व्यवस्था की जिसमें उच्चकोटि के विद्वान और चरित्रवान शिक्षाचार्य शिक्षा देते थे। सैनिक तथा व्यापारिक शिक्षा की व्यवस्था होती थी। फारसी उस समय की राज्य भाषा थी, जो सबको पढनी पडती थी। अकबर के दरबार में साहित्यकारो का आदर होता था। हिन्दी के कवि रहीम, महाकवि गंग तथा नरहरि उसके दरबार की शोभा थे। उसके शासनकाल में ही गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित्र-मानस की रचना की। मीराबाई ने कृष्ण भक्ति के पद और सूरदास ने सूरसागर लिखा। आचार्य केशवदास ने भी तुलसीदास के समान रामचंद्रिका लिखी। मुसलमानो में अबुलफजल ने दो ऐतिहासिक पुस्तकें 'अकबरनामा तथा 'आईने अक्वरी' लिखी। इन पुस्तको द्वारा उस काल के इतिहास का पता चलता है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारतीय इतिहास में अकबर का क्या स्थान है। उसे 'महान्' क्यो कहते है ?

(२) अकबर का राज्य कहाँ से कहाँ तक फैला हुआ था। उसने किन किन प्रदेशों को जीता ?

(३) अकबर का शासन प्रबन्ध कैसा था ?

(४) अकबर के राज्यकाल में साहित्य, कला और शिक्षा की उन्नति का वर्णन करो ?

(५) संक्षिप्त नोट लिखो —

(क) अकबर के नवरत्न (ख) महाराणा प्रताप (ग) अबुल फजल (घ) टोडरमल (ङ) बीरबल।

हासिल करने के लिए उसे अपने दो भाइयों मुराद और शहरयार के रक्त से हाथ धोने पड़े। गद्दी पर बैठते ही उसने अपने सब पुरुष रिश्तेदारों को नृशंसतापूर्वक मरवा दिया।

शाहजहाँ

शाहजहाँ एक भारतीय अधिक था मुगल कम, उसकी माँ और दादी राजपूत थीं। वह एक कट्टर मुसल्मान था परन्तु धार्मिक मामलों में सर्कीर्ण न था। उसमें उसके पूर्वज अकबर के कई गुण विद्यमान थे। यद्यपि वह कभी कभी क्रोध में आ जाता था परन्तु साधारणतया उसने एक अच्छे पिता, अच्छे पति और अच्छे मित्र जैसा ही व्यवहार किया। उसे अपने बेटों में बहुत विश्वास था परन्तु वे इस विश्वास के पात्र सिद्ध नहीं हुए। अपनी प्रिय पत्नी मुमताजमहल की मृत्यु के बाद उसने स्मारक के रूप में ताजमहल का निर्माण किया जो उसके अपार प्रेम तथा कलाप्रियता की कहानी आज भी कह रहा है। आगरे में यमुना नदी के किनारे ताजमहल एक तसवीर की तरह खड़ा है। स्वयं शाहजहाँ भी अपनी प्रिय पत्नी के पास ही एक कब्र में दबे पड़े हैं।

शाहजहाँ एक कुशल सेनापति था। अपने बाप के राज्यकाल में उसने अहमदनगर को मुगल साम्राज्य में शामिल किया। महाराणा प्रताप के बेटे अमर सिंह को पराजित किया। जो काम करने में अकबर असफल रहा था उसे शाहजहाँ ने कर दिखाया। शाहजहाँ ने स्वयं दक्खन जाकर गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्यों को घुटने टेकने पर विवश कर दिया। अपने बेटे औरंगजेब को दक्षिण का गवर्नर नियुक्त किया।

मुमताजमहल

मुगलों का स्वर्णकाल—शाहजहाँ के तीस वर्षीय राज्यकाल को मुगलों का स्वर्णकाल कहा जाता है क्योंकि इस काल में प्रजा सुखी थी। राजकोष भरा हुआ था। कला और साहित्य की उन्नति हुई। तत्कालीन इतिहासकार मुहम्मद हाशिम ने लिखा है कि शान्ति, सुप्रबन्ध और वित्त व्यवस्था में भारत का कोई भी सम्राट शाहजहाँ की तुलना में नहीं ठहर सकता। शाहजहाँ को वास्तुकला से विशेष प्रेम था। वैसे तो शाहजहाँ ने बहुत-सी इमारतों का निर्माण करवाया था किन्तु उन सब में ताजमहल प्रमुख है। ताजमहल के निर्माण में ईरानी, तुर्की और भारतीय कला का सम्मिश्रण है। ताज का मुख्य कलाकार उस्ताद ईसा था। उसके निरीक्षण में २०,००० कारीगरों ने जो एशिया के विभिन्न स्थानों से आए थे, ताजमहल का निर्माण किया।

शाहजहाँ ने आगरे में मोती मस्जिद और दिल्ली में लाल किले का निर्माण करवाया था। लाल किले के भव्य भवन 'दरबारेआम' और 'दरबारे-खास' शाहजहाँ की सूझबूझ की दाद देते हैं। शाहजहाँ ने अपने लिए एक विशेष सिंहासन तख्ते ताऊस' तैयार करवाया था। यदि हमें ताजमहल में उत्कृष्ट स्थापत्य कला के दर्शन होते हैं तो दिल्ली के लाल किले में उस युग की चित्रकारी भी दिखाई देती है। स्वयं सम्राट

उच्च कोटि का गायक था। वह बहुत सा समय गीत गाने और सुनने में व्यतीत करता था। उसके अन्त पुर में गायिकाए भी थी। शाहजहा प्रकृति का पुजारी था। लाहौर और दिल्ली के शालीमार बाग उस समय के सर्वश्रेष्ठ उद्यान थे। शाहजहा ने प्रत्येक इमारत के साथ एक सुन्दर बाग लगवाया है। शाहजहा अपने बडे बूढो की जीवनिया सुनने में विशेष रुचि लेता था। उसने अपने बारे में एक पुस्तक 'बादशाह नामा' अमीन कजनवी से लिखवायी थी। प्रसिद्ध इतिहासकार मीर अब्दुल कासिम ईरानी, जियाउद्दीन और शेख मीर लाहौरी उसी के युग में हुए थे। शिक्षा के लिये उसने दिल्ली की जामा मस्जिद के समीप एक शाही कालेज की स्थापना की थी।
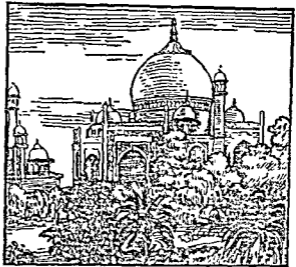
ताजमहल

शाहजहा का अन्त —इस महान बादशाह का बडा दुखद अन्त हुआ। शाहजहा के चार बेटे थे—दारा, शुजा, औरगजेब और मुराद। चारो ही दिल्ली का बादशाह बनना चाहते थे, शाहजहा ने चारो को दूरवर्ती प्रातो के हाकिम नियुक्त कर रखा था। परन्तु शाहजहा की बीमारी की खबर सुनते ही चारो एक दूसरे पर चढ दौडे। अन्तिम विजय कुटिल राजनीतिज्ञ औरगजेब की हुई। औरगजेब ने अपने सब भाइयो को एक एक करके खत्म कर दिया। परन्तु शाहजहा बीमारी से बच निकला। औरगजेब ने उसे आगरे के किले में नजरबद कर दिया जहा वह २२ जनवरी १६६६ को ८ वर्ष बाद मरा। कैद में शाहजहा का जीवन बडे कष्ट से गुजरा। कहा जाता है कि शाहजहा ने एक बार औरगजेब से प्रार्थना की कि वह कुछ बच्चे उसे पढाने के लिए भेज दिया करे जिसमे उसका दिल बहलता रहे। औरगजेब ने यह प्रार्थना नही मानी और कहा—"अभी बूढे का जी हकूमत से नही भरा।"

औरंगजेब

बाप को जेल में बद करके और तीन भाइयो के रक्त से हाथ धोकर १६५९ में औरगजेब ने आलमगीर की उपाधि ग्रहण करके अपना राज्याभिषेक किया। यह एक कुकृत्य था। परन्तु मुगल परम्परा ही ऐसी थी। स्वय शाहजहा ने गद्दी पर बैठने मे पूर्व अपने भाइयो से ऐसा सलूक किया था। जहागीर ने अपने बाप के विरुद्ध विद्रोह किया परन्तु जब स्वय जहागीर के बडे बेटे खुसरो ने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह किया तो जहागीर ने उसकी आंखें निकलवा दी थी।

यदि हम औरंगजेब के जीवन के इस पहलू की ओर ध्यान न दें तो हम देखेंगे कि औरंगजेब में भी बड़े गुण थे। वह एक कट्टरपंथी धार्मिक व्यक्ति था। एक बार जब भीषण युद्ध हो रहा था तो नमाज का समय हो गया। औरंगजेब ने घोड़े से उतर कर कपड़ा बिछा कर नमाज अदा की और फिर लड़ाई में जुट गया। उसके शत्रु हैरान रह गए। वह एक दरवेश अथवा फकीर की तरह रहता था। अपने निजी खर्च के लिए वह सरकारी खजाने से कुछ भी न लेता था। वह कुरान लिख कर और टोपियां सीकर अपना निर्वाह करता था। वह प्रजावत्सल बादशाह था। स्वयं औरंगजेब ने लिखा है—"एक बादशाह के रूप में मुझे अपने बारे में नहीं सोचना, मुझे केवल अपनी प्रजा की समृद्धि का ध्यान रखना है।"

परन्तु उसकी सारी श्रेष्ठ बातें धार्मिक संकीर्णता के आवरण में छिप जाती हैं। उसे इस्लाम से इतना अधिक मोह था कि वह हिन्दुओं, सिखों तथा शिया मुसलमानों से घृणा करने लगा। उसने हिन्दुओं पर जजिया कर लगाया और उसे कड़ाई से वसूल किया। इससे सारे भारतवर्ष में असन्तोष फैल गया। राजपूत जो मुगल साम्राज्य के बाहुबल थे औरंगजेब से रुष्ट हो गए। उसने हिन्दुओं के मन्दिर बर्बाद कर दिए। नए मन्दिरों का निर्माण रोक दिया। परिणामस्वरूप पंजाब में सिखों ने, उत्तर प्रदेश में जाटों और सतनामियों ने, राजस्थान में राजपूतों ने और दक्षिण में मराठों ने मुगल सत्ता के विरुद्ध तलवार उठाई। जब तक औरंगजेब जिन्दा रहा, वह इन विद्रोहों को दबाने में सफल रहा। परन्तु निरन्तर संघर्ष के कारण मुगल साम्राज्य इतना कमजोर हो चुका था कि औरंगजेब की मौत के बाद वह देर तक कायम न रह सका।

औरंगजेब

औरंगजेब के राज्यकाल में हमने मुगल साम्राज्य को उन्नति के शिखर को छूते और अवनति होते, दोनों रूप में देखा। औरंगजेब की राज्य सीमा सब मुगल बादशाहों से बड़ी थी। उसका राज्य उत्तर में कश्मीर से दक्षिण में मैसूर तक फैल गया था और पश्चिम में बिलोचिस्तान से पूर्व में आसाम तक।

परन्तु औरंगजेब के अन्तिम दिनो में मराठो ने मुगल शक्ति को खोखला कर दिया। १७०७ में उसने ८८ वर्ष की उम्र में प्राण त्यागे। उसका शव खुलदाबाद (दौलताबाद के पास) एक साधारण सी कब्र में दबा पडा है।

औरंगजेब ने मरने से पहले भलीभांति समझ लिया था कि मुगल सत्ता अब देर तक टिक न सकेगी। उसके बेटो में भी राजशक्ति के लिए सघर्ष शुरू हो चुका था। दुखी बाप ने अपने बेटे आजम को लिखा, "मैंने देश और देश की जनता के लिए अच्छा काम नही किया। मैंने एक विफल जीवन व्यतीत किया है। मैं इस दुनिया में खाली हाथ आया था परन्तु जाते हुए अपने गुनाहो का बोझ ले जा रहा हू। मैं नही जानता अल्लाह मुझे क्या सजा देगा। परन्तु मुझे विश्वास है कि अल्लाह मेरे गुनाहो को माफ कर देंगे। मुझे अपने कृत्यो पर खेद है . अलविदा अलविदा।" इस प्रकार भारत का आखिरी महान मुसलमान बादशाह गुनाहो के पश्चाताप की आग में धधकता इस दुनिया से रुखसत हुआ।

मुगल वंश का पतन

औरंगजेब के उत्तराधिकारी

सन् १७०७ में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगलो का शासन गृह-कलह का एक खिलौना बनकर ही रह गया। यद्यपि औरंगजेब ने अपने मरने से पूर्व ही राज्य का विभाजन कर दिया था किन्तु चारो शाहजादो ने—मौअजम, आजम, कामबख्श और अकबर—बादशाह की वसीयत पर ध्यान न देकर २० जून, १७०७को लडाई छेड दी। मौअजम ने तीनो शाहजादो को परास्त किया और वह बहादुरशाह के नाम से गद्दी पर बैठा। बहादुरशाह ने कोई ऐसा विशेष कार्य नही किया जिससे कि साम्राज्य में सुदृढता और शाति स्थापित हो सकती।

उसकी मृत्यु के पश्चात् केवल एक वर्ष के लिए ही जहादारशाह गद्दी पर बैठा। सन् १७१३ में भारतवर्ष का बादशाह फर्रुखसियर बना। इसने ६ वर्ष तक शासन किया किन्तु इन ६ वर्षो में वह राज्य में शान्ति स्थापित नही कर सका। सन् १७२० में बहादुरशाह के पोते मुहम्मदशाह को गद्दी पर बैठाया गया। साम्राज्य की अवस्था को सम्भालने में वह भी असफल रहा।

नादिरशाह का आक्रमण

सन् १७२९ में बादशाह मुहम्मदशाह के राज्य काल में ईरान के तुर्क बादशाह नादिरशाह ने भारत पर हमला किया। नादिरशाह का मुहम्मदशाह प्रथम से समझौता हो गया। मुहम्मदशाह ने नादिरशाह को दिल्ली जाकर ५० लाख रुपया उसकी फौज के खर्च के रूप में अदा करने का वादा किया। नादिरशाह के स्वागत के लिये दिल्ली में जोर-शोर से तैयारिया हुईं। प्रत्येक मस्जिद में उसके नाम का खुतबा पढ़ा गया। यकायक शहर में दगा हो जाने के कारण कुछ ईरानी सिपाही जो नादिरशाह के साथ आए थे, मारे गए। नगर में अफवाह फैल गई कि नादिरशाह मारा गया है। नादिरशाह ने इस अपमान के बदले समस्त नगर को लूटने की आज्ञा दे दी। आठ घण्टे तक दिल्ली की गलियो और बाजारो में नादिरशाह के सिपाही कत्लेआम करते रहे। नादिरशाह जब दिल्ली से लौटा तो वह यहा के समस्त जवाहरात, मोती तथा मयूर सिंहासन (तख्ते-ताऊस) अपने साथ ले गया।

अहमदशाह अब्दाली के हमले

भारत से लौटने के आठ साल बाद नादिरशाह की हत्या कर दी गई। उसका प्रधान सेनापति अहमदशाह अब्दाली जिसे अहमदशाह दुर्रानी भी कहते हैं, ईरान का बादशाह बना। १७४८ से लेकर १७६१ तक उसने भारत पर पांच हमले किए। प्रत्येक हमले में पंजाब बुरी तरह तबाह होता था। इसलिए पंजाब में अभी तक एक कहावत प्रचलित है—'खादा पीता लाहे दा, बाकी अहमदशाहे दा।' अर्थात् जो खाना पीना है खा पी लो, बाकी अहमदशाह ने लूटकर तो ले ही जाना है।

इन घटनापूर्ण चौदह वर्षों में दिल्ली के तख्त पर तीन बादशाह बैठे—अहमदशाह (१७४८–५४), आलमगीर द्वितीय (१७५४–१७५९) तथा शाहआलम तृतीय (१७५९–१८०६)। इन वर्षों में राज्य में अराजकता-सी छाई रही। खजाना खाली हो गया। सेना की ओर कोई ध्यान न दिया जाता था। खानदानी सरदारों का अनादर होता था। अहमदशाह को गद्दी से उतार कर उसकी आंखें निकलवा दी गईं और जेल में बन्द कर दिया गया। उसके उत्तराधिकारी आलमगीर द्वितीय का इससे भी अधिक बुरा हाल हुआ। १७५९ में उसे कत्ल करके उसका नंगा शरीर यमुना के किनारे फिंकवा दिया गया। दिल्ली का राज्य दिल्ली के इर्द-गिर्द तक ही सीमित रह गया। मराठे दिल्ली की राजसत्ता को बारबार चैलेंज कर रहे थे। इधर अब्दाली भी बार-बार लूटमार मचाने भारत आ जाता था। सन् १७५९ में आलमगीर द्वितीय वजीर के षड्यन्त्रों का शिकार हो गया और उसकी मृत्यु के पश्चात् शाहआलम द्वितीय गद्दी पर बैठा। इसका राज्य १८०६ तक रहा। किन्तु इस बीच में अंग्रेज और मराठे भारत के भाग्यविधाता बने रहे। दिल्ली का राजा केवल नाममात्र का बादशाह था। शाहआलम की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र अकबर को १८०६ में दिल्ली का बादशाह बनाया गया जो १८३७ तक दिल्ली पर राज्य करता रहा। इसके राज्यकाल में सैनिक शक्ति पहले की अपेक्षा और भी अधिक निर्बल हो गई। सन् १८३७ में उसकी मृत्यु पर बहादुरशाह 'ज़फ़र' दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह दिल्ली का आखिरी मुगल बादशाह था। वह १८५७ तक जब भारत का स्वतन्त्रता संग्राम हुआ, दिल्ली का बादशाह रहा।

अभ्यास के प्रश्न

(१) जहांगीर बादशाह कैसे बना ? उसका चरित्र कैसा था ?
(२) शाहजहां का राज्य काल मुगलों का स्वर्णकाल समझा जाता है। क्यों ?
(३) शाहजहां के जीवन के बारे में एक संक्षिप्त निबंध लिखो ?
(४) नूरजहां कौन थी ? इतिहास में वह क्यों प्रसिद्ध है ?
(५) औरंगज़ेब किस प्रकार दिल्ली की गद्दी पर बैठा। उसके चरित्र का मूल्यांकन करो ?
(६) मुगल वंश का अन्त किस प्रकार हुआ और क्यों ?
(७) संक्षिप्त नोट लिखो :—
ताजमहल, मुमताज बेगम, नूरजहां, बहादुर शाह 'ज़फ़र'।

मध्य युग में योरोप

मध्ययुग में योरोप के विचार तथा समाज पर मुख्य रूप से दो घटनाएं हुईं : (१) ईसाई धर्म तथा ईसाई धर्म का अभ्युदय, (२) मध्य तथा पश्चिमी योरोप में बर्बर ट्यूटन कबीलों के आक्रमण । ईसाई धर्म के अभ्युदय से योरोप को भारी लाभ हुआ । रोम में पोप के नेतृत्व में ईसाइयत ने योरोपियन लोगों को एक धर्म की लड़ी में पिरो दिया । धर्म ने लोगों को पूर्ण नैतिक अनाचार से बचाया और निराशा तथा अन्धकार के उन दिनों में भी समाज के ढांचे को बिल्कुल छिन्न भिन्न होने से बचाए रखा ।

ट्यूटन कबीलों के आक्रमणों ने योरोप का राजनीतिक मानचित्र बदल डाला । विशाल रोमन साम्राज्य टूट गया । उसके स्थान पर छोटे बड़े कई नए राज्यों का जन्म हुआ । आठवीं शताब्दी में राजनीतिक स्थिति थोड़ी देर के लिए स्थिर बनी । पोप (रोम में ईसाइयों का धर्मगुरु) ने फ्रांस के राजा चार्ल्स महान को पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट घोषित कर दिया । चार्ल्स के मरने के तुरन्त बाद उसका साम्राज्य बंट गया । परन्तु चार्ल्स के सम्राट बन जाने से एक परम्परा बनी जिसने बाद में सारे योरोप के इतिहास पर प्रभाव डाला । वह परम्परा यह थी—पोप लोगों के धार्मिक जीवन का व्यवस्थापक होगा और सम्राट राजनीतिक जीवन का । नियम तो स्थिर हो गया परन्तु कभी कभी पोप तथा सम्राटों के प्रतिकूल हित होने के कारण दोनों में झगड़ा भी हो जाता था ।

सामन्तवाद का जन्म

मध्यकाल में योरोपियन जनसाधारण के जीवन का अभिशाप था सामन्तवाद (Feudalism) । इसमें सन्देह नहीं कि उस युग में सामन्तवाद से कुछ भी लाभ थे । इसने बर्बर कबीलों की लूट-मार रोक दी । शासन व्यवस्था को बनाए रखने में कुछ सहायता की । परन्तु इसके दुर्गुण गुणों से बहुत ज्यादा थे । उन्हें जानने से पूर्व आपको सामन्तवाद की मोटी मोटी बातें जान लेना चाहिए ।

रोमन सभ्यता के अध्याय में हम आपको बता चुके हैं कि ४७६ ई० में पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन हुआ । यह साम्राज्य टुकड़े टुकड़े हो गया । जगह जगह छोटे छोटे राज्य या जागीरें स्थापित हो गई । वह कैसे ? मान लीजिए एक राजा या राजकुमार ने किसी अन्य राज्य को जीता । जो प्रदेश उसके हाथ लगा, उसका कुछ भाग अपने पास रखने के बाद शेष इलाका वह अपने सरदारों में इनाम के रूप में बांट देता था। जिन लोगों को भूमि मिलती थी, वे लार्ड या नोबल (Noble) कहलाते थे । जिस राजा से यह लार्ड जमीन हासिल करता था, उसका वह वैसल (Vassal) अथवा असामी कहलाता था । प्रत्येक वैसल को अपने स्वामी के लिए युद्ध की अवस्था में सैनिकों की एक टुकड़ी लेकर लड़ने के लिए आना पड़ता था । एक लार्ड अपने प्रदेश में एक किला-सा बना लेता था जिसमें वह राजा की तरह रहता था । इस किले को कैसल

मध्य-युग का सरदार

(Castle) कहते थे। यह केवल उसका घर ही नहीं था अपितु लड़ाई की अवस्था में किले का काम भी देता था। इसे साधारणतः किसी ऊँची पहाड़ी पर बनाया जाता था जिससे शत्रु आसानी से यहां पहुँच न सके। चारों ओर पानी से भरी हुई एक खाई होती थी।

शान्ति के दिनों में लार्ड की प्रजा जमीनों में खेतीबाड़ी करती थी परन्तु युद्ध-काल में वे सब किले में चले जाते और अन्दर से डटकर मुकाबला करते। लार्ड और उसके घराने इस छोटे से राज्य में मौज उड़ाते थे। परन्तु जनसाधारण जो लार्ड की भूमि—जिसे मैनोर (Manor) कहते थे—में खेती करते थे, उनकी दशा गुलामों जैसी हो थी। लार्ड उन्हें भूमि से उतना ही हिस्सा देता जिससे वे जैसे-तैसे जिन्दा रह सकें और जरूरत पड़ने पर उसके लिए लड़ सकें। परन्तु उनके प्रति उसका व्यवहार पालतू पशुओं से अच्छा नहीं था। ये लोग टूटी-फूटी झोपड़ियों में रहते थे। उनके रहने के स्थान गाय और घोड़ों को बांधने के स्थानों से भी बुरे थे। इन श्रमजीवी लोगों को सर्फ (Serf) अथवा दास कहा जाता था। यदि कोई सर्फ भाग जाए तो पकड़े जाने की अवस्था में उसे गर्म हुए लोहे की सीख से दागा जाता था। उसके हाथ काट दिए जाते थे। क्या कहेंगे आप ऐसी प्रणाली के बारे में ?

सामन्तवाद का अन्त

स्पष्ट है कि ये बातें सदा के लिए नहीं चल सकती थीं। सामन्तवाद ने योरोप में भी एक प्रकार की जात-पात की नींव रख दी। इसमें केवल दो ही श्रेणियां थीं—स्वामी और दास। बीच का कोई रास्ता नहीं था। राजा जनता से कट गया था। उसका जनता से कोई सीधा सम्पर्क नहीं था। वह किसी लार्ड से आवश्यकता पड़ने पर सेना और धन की मांग कर सकता था। परन्तु लोगों के जीवन पर लार्ड का ही एकछत्र शासन था। लार्ड के फैसले के विरुद्ध कोई अपील न थी।

इस व्यवस्था में राजाओं की शक्ति बड़ी सीमित हो गई। इसलिए वे इसे समाप्त करने का अवसर ढूंढने लगे। जनसाधारण तो लार्डों के शोषण से दुखी थे ही। धीरे धीरे दोनों ने मिलकर सामन्तवाद पर चोटें लगाईं। घटनाचक्र ने भी सामन्तवाद के विनाश में सहायता की। यरुशलम के पवित्र तीर्थस्थान के लिए ईसाइयों और मुसलमानों में जो धर्म युद्ध हुए, उनमें बहुत से सामन्त शामिल हुए। इस पर उनका भारी व्यय हुआ। बहुत से सामन्तों ने कर्जा चुकाने के लिए अपनी जागीरें बेच दीं।

सामन्तवाद को खत्म करने में सबसे ज्यादा सहायता सिक्कों के अधिक प्रचलन से मिली। सामन्त लोग लड़ाई के समय आदमी देने के स्थान पर राजा को रुपया देने लगे। सामन्तों के असामियों को भी अपने स्वामी को रुपया देना अधिक सुविधाजनक लगा। जब राजा के खजाने में रुपया आया तो उसने अपनी निजी सेना भर्ती कर ली। वह सामन्तों पर सैनिक सहायता के लिए आश्रित न रहा। सामन्त भी युद्ध की अपेक्षा खेतीबाड़ी में अधिक रुचि लेने लगे। उनकी यौद्धिक प्रवृत्तियां प्रायः समाप्त हो गईं। इसलिए सामन्तों को कुचलने का काम आसान हो गया। इसके साथ युद्ध के तरीकों में भारी परिवर्तन हुआ। गोला बारूद के आविष्कार से सामन्तों के किले और ज़िरा-बख्तर बेकार हो गए।

चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी में योरोप में एक भयंकर प्लेग फैली। लाखों लोग मर गए। खेतों

पर काम करने के लिए मजदूरों की कमी पड़ने लगी। इसलिए मजदूरों की आर्थिक स्थिति सुधर गई। बहुतों ने कुछ धन देकर सामन्तों से अपनी 'स्वाधीनता' खरीद ली। इस तोड़ते हुए सामन्तवाद को योरोप में शिक्षा के प्रसार ने आखिरी घाव लगाए। छपाई तथा कागज के आविष्कार ने जागृति के एक नए युग का श्रीगणेश किया जहां सामन्तवाद के लिए कोई स्थान न था। सामन्तवाद अपनी मौत आप मरने लगा।

पूर्व में हलचल

मध्य-युग में योरोप की भांति पूर्वी संसार में भी काफी हलचल रही। आठवीं शताब्दी में जब चार्ल्स महान योरोप में ईसाई साम्राज्य का पुनर्गठन कर रहा था, अरब में एक नए धर्म का उदय हुआ। इसने योरोप के पूर्व और पश्चिम में ईसाई धर्म के प्रसार को रोक दिया। एक नई संस्कृति—मुस्लिम संस्कृति का उदय हुआ। इस्लाम आंधी की-सी तेजी से फैलने लगा। चीन से लेकर स्पेन तक मुस्लिम फौजें दनदनाने लगीं। ईसाइयों का पवित्र तीर्थ यरुशलम मुसलमानों के हाथ पड़ गया। इसलिए मध्य-युग में थोड़े-थोड़े समय बाद ईसाइयों और मुसलमानों में भयंकर युद्ध होते रहे। इन्हें धर्मयुद्ध (Crusades) कहते हैं।

समय की इस हलचल से मध्य एशिया कैसे बच सकता था। पिछले अध्यायों में आपने पढ़ा कि किस प्रकार पांचवीं शताब्दी में मध्य एशिया से बर्बर हूणों के गिरोह भारत पर आक्रमण करने लगे थे। स्कन्दगुप्त ने उन्हें रोका। परन्तु यह एक ऐसी बाढ़ थी जो रुक न सकती थी। हूण भारत के कुछ हिस्सों में स्थायी रूप से बस गए और धीरे-धीरे विराट हिन्दूधर्म का ही अंग बन कर रह गए। देश में कोई राजनीतिक स्थिरता नहीं थी। चारों ओर अराजकता का जोर था। सातवीं शताब्दी में कन्नौज का हर्षवर्धन कई युद्धों के उपरान्त भारत में एक सुदृढ़ शासन स्थापित करने में सफल हुआ। परन्तु हर्ष के मरते ही पुनः अराजकता छा गई। अराजकता के बावजूद भारत ने मध्ययुग में अपनी संस्कृति के झण्डे दुनिया के विभिन्न देशों में गाड़ दिए। साइबेरिया के बर्फीले इलाकों से लेकर पूर्व में जावा और सुमात्रा तक भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विस्तार हुआ। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के इस विस्तार की कहानी आपने विशाल भारत शीर्षक के अन्तर्गत एक अध्याय में पढ़ी होगी। उत्तर भारत पर मुस्लिम अधिकार हो जाने से भारत में एक नई और मिली-जुली संस्कृति का विकास हुआ जिसने भारत में एक नए युग की नींव रखी।

इसी समय मध्य एशिया में मंगोलों के रूप में एक आंधी उठी। शीघ्र ही यह आंधी तूफान बन कर पश्चिमी एशिया, चीन और योरोप पर छा गई। चंगेजखां, हलाकू और बाबर मंगोलों के ही वंशज थे। भारत के मुगल बादशाह बाबर, हुमायूँ, अकबर, शाहजहां इत्यादि—मंगोलों की ही एक शाखा से संबंध रखते थे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) सामन्तवाद क्या था? सामन्तवाद के विकास और पतन के कारण बताओ।
(२) इतिहास को किन तीन युगों में बांटा जाता है?
(३) मध्य-युग की क्या विशेषता थी? मध्य युग पर ५०० शब्द का एक निबन्ध लिखो।
(४) संक्षिप्त नोट लिखो :—
चार्ल्स महान, सामन्तवाद, पोप, मंगोल, धर्मयुद्ध।

: २२ :

मानव खोज के पथ पर

पिछले अध्याय में हमने योरोप के मध्य-युग के इतिहास पर एक नजर डाली थी। हमने देखा कि इस युग में लोगो का जीवन मख्य रूप से दो बातो पर आधारित था। धर्म और युद्ध। चर्च के रूप में धर्म ने लोगो के मस्तिष्क को बुरी तरह से जकड डाला था सोचने या कहने की कोई आजादी न थी। यदि कोई धर्म के प्रचलित रूप के विरुद्ध आवाज उठाता तो उसे पथभ्रष्ट कह कर पादरी लोग जिन्दा जला देते थे या अन्य किसी प्रकार से उसकी हत्या कर दी जाती। यूनान और रोम के स्वच्छन्द वातावरण और लोकतन्त्रात्मक परम्पराओ को लोग भूल चुके थे।

तीन सौ साल तक (५०० से ८०० ई० तक) योरोप में ऐसा समय रहा जिसे अन्ध-काल कहते है। इस काल में सभ्यता प्राय जड हो गई। प्रगति बिलकुल रुकी रही। परन्तु ग्यारहवी शताब्दी के अन्त में ईसाइयो और मुसलमानो में धर्मयुद्ध शुरु हुए। हमने पिछले अध्याय में बताया था कि ईसाइयो के धर्मस्थान यरुशलम पर मुसलमानो का कब्जा हो गया था। मुसलमान यरुशलम में तीर्थयात्रा पर जानेवाले ईसाइयो को बहुत तग किया करते थे। इन यात्रियो ने अपनी विपदा की गाथा वापिस योरोप आकर लोगो को सुनाई। ईसाई इस बात से भडक उठे। रोम में उस समय ईसाइयो का धर्मगुरू अरबेन नामक एक पोप था। उसने दुनिया भर के ईसाइयो से अपील की कि वे ईसा मसीह की जन्मभूमि फिलस्तीन को मुसलमानो से स्वतन्त्र कराने के लिए धर्मयुद्ध करें। योरोप के कोने कोने से ईसाई धर्मयुद्ध के लिए चले। थोडे थोडे समय बाद कितने ही धर्मयुद्ध हुए। इनमें ईसाइयो की जीत तो न हो सकी परन्तु योरोप पर पूर्वीय ज्ञान के द्वार खुल गए। फिलस्तीन से लेकर भारत तक के पूर्वी देशो से कान्स्टैन्टीनोपल द्वारा व्यापार होने लगा। इसलिए इन देशो के बारे में योरोप में जिज्ञासा होना स्वाभाविक ही था।

मध्य काल के अन्तिम दिनो में योरोप में बडे बडे व्यापारिक नगर स्थापित हो गए थे। इन नगरो में समृद्ध व्यापारी रहते थे। वे अपने शहरो का शासन आप चलाते थे। ऐसे कुछ नगर बैल्जियम और हालैण्ड में बने तो कुछ राईन नदी के किनारे जर्मनी में। वेनिस और जेनेवा पहले ही प्रसिद्ध थे। इन नगरो में एक नई मध्यवर्गीय श्रेणी का विकास हुआ। उन्होने व्यापार के लिए जहाज बनाए और इस तरह आधुनिक युग की व्यापारिक सभ्यता की नीव रखी। शताब्दियो से योरोप की आखो पर अन्धकार का जो पर्दा पडा हुआ था, वह अब धीरे-धीरे हटने लगा।

रोमन साम्राज्य के भग होने के बाद कालान्तर में नए, स्वतन्त्र और शक्तिशाली राज्यो का जन्म हुआ जैसे, फ्रास, इगलैण्ड इत्यादि। जनसाधारण ने स्वतन्त्र रूप से सोचना शुरू किया कि सरकार कोई ऐसी ईश्वरीय सस्था नही जिसकी आलोचना न हो सके। चर्च कोई ऐसा सगठन नहीं जिसमें कोई अवगुण न हो। आलोचना की यह भावना बाद में धार्मिक सुधारआन्दोलन (Reformation) के रूप में प्रगट हुई। यह सुधार आन्दो-

ल्न ईसाई चर्च की कुरीतियों के विरुद्ध विद्रोह की एक लहर था। एक जर्मन पादरी मार्टन लूथर (१४८३-१५४६) ने यह आन्दोलन शुरू किया। वह कहता था कि लोगों को बाईबिल अपनी मातृभाषा में पढ़नी चाहिये। ईसा में विश्वास से मुक्ति मिलती है न कि चर्च में। उसने धार्मिक मामलों में पोप की सर्वोपरि सत्ता को मानने से इनकार कर दिया। लूथर के अनुयायी प्रोटेस्टैन्ट कहलाए क्योंकि वे चर्च की शिक्षा के विरुद्ध प्रोटेस्ट अथवा रोष प्रकट करते थे। परम्परागत ईसाई धर्म को मानने वाले रोमन कैथोलिक कहलाए।

मार्टिन लूथर

इन बातों से स्पष्ट है कि मध्य-युग के अन्तिम दिनों में योरोप में एक नए ढंग की सभ्यता का जन्म हो रहा था। लोग धर्म और युद्ध के अतिरिक्त कुछ और बातों में भी रुचि ले रहे थे जैसे शिक्षा, व्यापार, आविष्कार, खोज, इत्यादि। योरोप में एक नई आत्मा का संचार हो रहा था। इस नई लहर को (Renaissance) अथवा पुनर्जागृति का नाम दिया जाता है।

पुनर्जागृति

पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी को नई जागृति का युग कहा जाता है। इस युग में सब क्षेत्रों में योरोप ने प्रगति की। नई जागृति कैसे शुरू हुई, इसके कुछ कारणों का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। परन्तु एक घटना ने नई जागृति की इस लहर के फैलने में बड़ी सहायता की। वह घटना थी १४५३ में कान्स्टैन्टीनोपल का पतन। हम पहले बता चुके हैं कि कान्स्टैन्टीनोपल ३९५ ई० से पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी था। कई शताब्दियों से वह योरोप में विद्यार्जन का मुख्य केन्द्र था। इसके पुस्तकालय ज्ञान के मूल्यवान खजानों से भरे हुए थे। परन्तु बर्बर मंगोलों ने इस नगर पर कब्जा कर लिया। यहां पर पठन-पाठन करने वाले विद्यार्थी तथा अध्यापक शरण के लिए योरोप के विभिन्न भागों में फैल गए। ये लोग अपने साथ पुस्तकें भी ले गए। उन्होंने लोगों को यूनानी तथा लैटिन भाषाओं के अमूल्य साहित्य से अवगत कराया। इससे विद्या-प्रचार बढ़ा।

इटली में विशेष रूप से इन विद्वानों का स्वागत हुआ। इटली में पहले ही कुछ विख्यात साहित्यकार पैदा हो चुके थे जैसे डैंटे, पैट्रार्क और बोकाशियो। डैंटे १३ वीं शताब्दी में हुए। वे विख्यात कवि थे जिनका मुकाबला यूनानी कवि होमर और अंग्रेज कवि शैक्सपीयर से किया जाता है। पैट्रार्क और बोकाशियो चौदहवीं शताब्दी के साहित्यकार हैं। पहला कवि था और दूसरा कथाकार। अपनी साहित्यिक परम्परा के अनुकूल इटली के लोगों ने कान्स्टैन्टीनोपल के विद्वानों का हृदय से स्वागत किया। यहां यूनान के महाकाव्यों के अनुवाद हुए। लोगों ने प्राचीन पुस्तकें पढ़ कर उनके बारे में नई नई पुस्तकें लिखीं। इटली के बड़े बड़े नगरों में विश्व-

विद्यालय स्थापित हुए जहां योरोप के कोने कोने से लोग विद्या प्राप्ति के लिए आने लगे। ज्ञान अब पादरियों तक ही सीमित नहीं रहा। जनसाधारण भी उसका रसास्वादन करने लगे।

विद्या के प्रसार में मुद्रण-कला ने बड़ी सहायता की। पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य तक योरोप में पुस्तकें छपने लगी थीं। जर्मनी में जान गुटनबर्ग और इगलैण्ड में कैक्सटन ने छापेखाने लगाए। लोगों को सस्ते दामों पर सब प्रकार के ग्रंथ उपलब्ध होने लगे। इस तरह सारा योरोप एक नई करवट लेने लगा।

लिओनार्डो चित्र बनाते हुए

यह जागृति साहित्य के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रही, कला और विज्ञान के क्षेत्र में भी लोगों ने बहुत कुछ सीखा। मध्य काल की कला में कोई आकर्षण नहीं रहा था। परन्तु अब प्राचीन यूनान के प्रभाव के अधीन चित्रकारों ने बहुत सुन्दर चित्र बनाए, मूर्तिकारों ने उच्चकोटि के बुत घड़े और भवन-निर्माताओं ने नए ढंग के भवन निर्माण किए। लोगों के जीवन में एक बार फिर रंगीनी आ रही थी। उन्होंने कविता लिखी, चित्र बनाए, चिकित्सा सीखी, नक्षत्र विद्या का अध्ययन किया, संगीत तथा नृत्य में रुचि दिखाई। उस युग की एक आश्चर्यजनक बात यह थी कि एक ही व्यक्ति भिन्न भिन्न कलाएं जानता था। इस सर्व-गुण सम्पन्नता का एक अच्छा उदाहरण लिओनार्डो डा विन्सी (Leonardo de Vinci १४५२ से १५१९) थे। यह महापुरुष एक साथ चित्रकार, संगीतकार, गणित विशारद तथा आविष्कारक था। उनकी चित्रकला आज भी लोगों को प्रेरणा देती है। वे अच्छे गायक थे। उन्होंने भाप का इंजन तथा हवाई जहाज बनाने की चेष्टा की। हैरानी होती है कि एक आदमी एक साथ इतने काम कैसे कर सकता था।

इटली के माईकलएंजलो (Michelangelo) भी ऐसे ही एक रत्न थे। वे एक साथ कवि, मूर्तिकार, चित्रकार तथा भवन-निर्माता थे। योरोप के प्राय सभी देशों में ऐसे कलाकारों ने जन्म लिया। इस तरह कला के क्षेत्र में एक नए युग का अभ्युदय हुआ। रेफेल (Raphael) भी उस युग के महान् इटैलियन चित्रकार थे। आज भी उनके चित्र विश्व के सर्वश्रेष्ठ चित्रों में शामिल किए जाते हैं।

माइकेल एंजलो

नई जागृति के काल में लोगों ने विज्ञान में भी रुचि ली, विशेष रूप से नक्षत्र विद्या में। उस जमाने में

लोगों का विश्वास था कि धरती ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। सूर्य धरती के चारों ओर घूमता है परन्तु कोपरनि (१४७३–१५४३) नामक एक चतुर पोल ने घोषणा की कि यह धारणा मिथ्या है। उसने कहा कि ध सूर्य के गिर्द घूमती है। अपने इस मत की पुष्टि के लिए उसने एक पुस्तक भी लिखी। प्रायः उसी समय गैल (१५६४–१६४२) नामक एक इटैलियन वैज्ञानिक भी इसी समस्या का अध्ययन कर रहा था। उसने कई बातें प्रतिपादित की। उसने नक्षत्रों के अध्ययन के लिए एक टैलीस्कोप का आविष्कार किया। माईक्रोस को सुधारा। उसने खोज की कि आकाश में आंख से दिखनेवाले नक्षत्रों के अतिरिक्त और भी कितने ही न हैं। चाद पर पर्वत हैं। बृहस्पति नक्षत्र के चारों ओर छोटे-छोटे वैसे ही घूमते हैं जैसे चाद हमारी धरती के गिर्द घूमता है, इत्या तदोपरान्त उसने एक पुस्तक लिखी जिसमें सिद्ध किया कि धरती के चारों ओर घूमती है जिससे दिन और रात होते हैं। गैलीलो इस स्पष्ट घोषणा को कुछ लोगो ने पसन्द नहीं किया क्योंकि बाइबिल की धारणाओं के विपरीत थी। गैलीलो को कैद कर लि गया। आखिर उसे यह कहकर क्षमा मागनी पड़ी कि मैंने जो लिखा उसमें मेरा विश्वास नहीं है।

नक्षत्रों का अध्ययन करते हुए गैलीलो

नव-जागरण के इस काल में मध्य युग की हर एक च मिटती जा रही थी। सामन्तवाद के स्थान पर नए राष्ट्र उभर थे। पोप की सत्ता समाप्त हो रही थी। प्रत्येक देश अपना राष्ट्र चर्च स्थापित कर रहा था। लैटिन भाषा का एकाधिकार खत्म रहा था। उसके स्थान पर राष्ट्रीय भाषाएं तथा उनके साहित्य को भी प्रोत्साहन मिलने लगा। लोगो ने स्वतन्त्र से सोचना शुरू किया। इस युग के विचारकों ने जनता को सोचने की शक्ति प्रदान की। अज्ञान और अन विश्वास मिटने लगा। हर प्रश्न पर लोग पूछने लगे क्यों और कैसे? पुर्नजागृति का यही मूलमन्त्र था।

खोज का युग

पुर्नजागृति के युग में साहित्य, कला और विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति हुई। परन्तु विश्व व इस युग की सबसे बड़ी देन है नए देशों की खोज। हम पहले कह चुके हैं कि मध्य-काल के अन्तिम दिनो लोगों में जिज्ञासा की एक अद्भुत भावना का सचार हो चुका था। कुछ लोगों ने तो इटली के विश्वविद्याल में जाकर शिक्षा द्वारा अपनी इस जिज्ञासा को शान्त कर लिया और कुछ लोग समुद्र की छाती को चीर कर न देशों की खोज पर निकल पड़े।

चिरकाल से भारत तथा योरोप में व्यापार हो रहा था। परन्तु टेढ़े-मेढ़े रास्तो से। पूर्व के म मसाले, सुन्दर वस्त्र, गलीचे इत्यादि अरब जहाजों द्वारा ईरान की खाड़ी या लाल समुद्र तक पहुंचते थे। वहा यह सामान काफिलो द्वारा भूमध्य सागर के बन्दरगाहो तक पहुंचाया जाता था। इटैलियन व्यापारी इस माल को खरीद कर सारे योरोप में भेजते थे। परन्तु योरोप में किसी को भारत की भौगोलिक स्थिति मालूम नहीं थी। भारत के बारे में योरोप में विचित्र धारणाएं प्रचलित थीं।

तेरहवी शताब्दी में मार्कोपोलो (१२५०–१३२३) नामक एक साहसी इटैलियन यात्री भूमि के रास्ते चीन गया। वहा उसने चीनी सम्राट कुबलाइ खान की नौकरी की। २० साल तक मार्कोपोलो चीन में रहा। यहा से उसने केन्द्रीय तथा दक्षिण-पश्चिमी एशिया के कई अन्य भागो की यात्रा की। इटली वापस लौटने पर मार्कोपोलो ने अपनी इस अद्भुत यात्रा का वृतान्त लिखा और पूर्व के इन देशो की दौलत का वर्णन किया। मार्कोपोलो का वृतान्त पढ कर बहुत से लोगो के मन में इन देशो की यात्रा की इच्छा जागृत हुई। पन्द्रहवी शताब्दी तक लोगो का विश्वास था कि धरती एक प्लेट की भांति गोलाकार है जिसके चारो ओर समुद्र है। लोगो के पास छोटे-छोटे जहाज थे जो खुले समुद्रो में नही जा सकते थे। १४१७ में एक फ्रांसीसी पादरी ने दुनिया का जो पहला नक्शा तैयार किया वह कुछ इस प्रकार था।
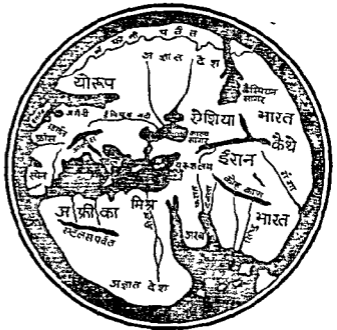
दुनिया का प्रथम मानचित्र

आज इस नक्शे को देख कर आप हँसेंगे। परन्तु उस जमाने में विश्व के भूगोल के बारे में योरोप का इतना ही ज्ञान था।

परन्तु उस समय एक घटना हुई जिसने लोगो को तुरन्त ही खोज के रास्ते पर चलने के लिए बाधित कर दिया। तुर्को ने १४५३ ई० में कान्स्टेंटीनोपल पर कब्जा कर लिया था। इसलिए भारत से व्यापार के पुराने सभी रास्ते बन्द हो गए। योरोप को भारत तथा चीन से ऐश्वर्य की सामग्री तथा गर्म मसाले मगवाने की जरूरत थी। इसलिए इन देशो को जाने के लिए नए रास्ते खोजे जाने लगे। साहसी नाविको को इनाम के लालच दिए गए। इसी दौरान में कोम्पास (कुतुबनुमा) का आविष्कार हो गया। इस यन्त्र की सहायता से नाविक समुद्र में दिशा ज्ञान रख सकते थे।

नई दुनिया की खोज में पुर्तगालियो ने पहल की। पुर्तगाल के सम्राट ने हाल ही में स्पेन से मुसलमानो

को निकालने में महायता की थी। पुर्तगाल ने उत्तरी अफ्रीका के कुछ भाग पर भी कब्जा कर लिया था। अब पुर्तगालियों ने सारे अफ्रीका महाद्वीप की खोज का निश्चय किया। खोज के इन अभियानो में वहा के एक राजकुमार हेनरी ने बड़ी रुचि ली। इसलिए उसे "हैनरी नाविक" के नाम से याद किया जाता है। १४८६ में एक पुर्तगाली नाविक बारथलम्यू डायज अफ्रीका के दक्षिणी तट पर पहुंचने में सफल हुआ। परन्तु तूफानों के कारण वह आगे भारत न पहुच सका।

कोलम्बस का नाम तो आप में से बहुतों ने सुना होगा। वह एक साहसी इटैलियन नाविक था। वह भी भारत का नया रास्ता ढूढने में लगा हुआ था। उसका विचार था कि यदि वह अटलांटिक समुद्र पार कर जाए तो वह भारत पहुच सकता है। यह रास्ता, वह समझता था, अफ्रीका के मार्ग से आसान होगा। उसने पुर्तगाल के राजा से सहायता मांगी। इगलैण्ड के सम्राट से मदद की प्रार्थना की। परन्तु दोनो ने इनकार कर दिया। आखिर स्पेन के राजा ने कोलम्बस को तीन छोटे छोटे जहाज देकर भारत की खोज पर रवाना किया। ७० दिन की निराशापूर्ण यात्रा के बाद उसे भूमि दिखाई दी। वह खुशी से फूला नही समाया। उसने सोचा कि वह भारत का नया रास्ता ढूढने में सफल हो गया है। मरने तक उसका यही विश्वास था कि उसने भारत की खोज की है। परन्तु उसे क्या खबर थी कि उसने अमेरिका का नया महाद्वीप—एक नई दुनिया की खोज की है। अमेरिका की खोज १२ अक्तूबर १४९२ के दिन हुई। क्या आप जानते हैं कोलम्बस को अपनी इस महान सफलता का क्या फल मिला? उसे स्पेन के सम्राट के हुक्म से जंजीरो में जकड कर स्पेन लाया गया। वह एक अज्ञात व्यक्ति के रूप में बडी गरीबी की हालत में मरा।

जब पुर्तगाल में कोलम्बस की सफल यात्रा का समाचार पहुचा तो वहा के राजा ने पुन नाविकों को नए देशों की खोज करने के लिए बेडे देकर रवाना किया। इन बेडो में से एक का नेता वास्कोडेगामा था। १४९८ में वह अफ्रीका घूमकर आशा अन्तरीप के रास्ते भारत में कालीकट की बन्दरगाह पर उतरा। कई सप्ताह तक वास्कोडेगामा का जहाज अटलांटिक महासागर में दक्षिण की ओर घूमता रहा। अफ्रीका के दक्षिणी कोने से जब वे उत्तर की ओर बढे तो उन्हें एक अरब नाविक मिला। वह वास्कोडेगामा तथा उसके साथियों को दक्षिण भारत की बन्दरगाह कालीकट ले आया। वास्कोडेगामा को कालीकट के राजा के पास ले आया गया। राजा ने पूछा, आप क्या करने इस देश में आए हैं? वास्कोडेगामा ने उत्तर दिया "हम कुछ ईसाइयो को ढूढने तथा गर्म मसाले खरीदने आए हैं?" वास्कोडेगामा यह देख कर हैरान रह गया कि कालीकट के बन्दरगाह में देश-देशान्तरो से आए हुए जहाज खडे हैं। वहा एक ओर तो लका तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया के अन्य देशो से आए हुए जहाज खडे थे तो दूसरी ओर पश्चिम से मिस्र, अरब और ईरान से आए हुए जहाज थे।

अरब व्यापारी पुर्तगाल के जहाजों को देखकर आग बबूला हो उठे। वे भारत के व्यापार में किसी का हस्तक्षेप नहीं चाहते थे। उन्होने पुर्तगालियों को खदेडने की बडी कोशिश की। परन्तु असफल रहे। पुर्तगाल ने अपने कुछ और जहाजी बेडे भेज दिए। अन्ततोगत्वा पुर्तगाली भारत के बन्दरगाह गोवा में अपने पाव जमाने में सफल हुए।

पुर्तगाली भारत में ही नहीं रुके। वे पूर्व की ओर फिर आगे बढे। उन्होने वर्तमान इण्डोनेशिया के कई द्वीपों की खोज की। पुर्तगाली भारत के इस नए रास्ते को गुप्त रखना चाहते थे परन्तु यह कैसे हो

सकता था। शीघ्र ही अंग्रेज, फ्रांसीसी तथा डच लोगों ने भी इस रास्ते का पता लगा लिया। इन सब जातियों ने भारत तथा पूर्व के अन्य देशों में अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये। धीरे-धीरे व्यापार की प्रतिद्वन्द्विता ने राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता का रूप धारण किया। आखिरकार अंग्रेज पुर्तगालियों, डचों तथा फ्रांसीसियों को हरा कर भारत में अपना एकछत्र शासन स्थापित करने में सफल हुए। खोज के इस युग के कुछ अन्य विख्यात यात्रियों के नाम ये हैं—अंग्रेज नाविक जान कैबट] तथा स्पेन द्वारा भेजा गया यात्री मैगेलेन। मैगेलेन पहला आदमी था जिसने सारी दुनिया का चक्कर लगाया अमेरिका की खोज ने योरोपियन जातियों के लिए एक नए स्वर्ग के द्वार खोल दिए। योरोपियन लोग धड़ाधड़ वहाँ जाकर आबाद होने लगे। भारत के नये समुद्री मार्ग की खोज से एशिया और योरोप में व्यापार बढ़ा। योरोपियन जातियों को पूर्व की दौलत लूटने को अभूतपूर्व अवसर मिला।

वास्कोडेगामा कालीकट के राजा के दरबार में

अभ्यास के प्रश्न

(१) योरोपियन पुनर्जागृति (Renaissance) का क्या अर्थ है। उसके मुख्य कारण बताओ?

(२) मार्कोपोलो के बारे में आप क्या जानते हैं?

(३) पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में योरोपियन साहित्य, कला और विज्ञान में क्या उन्नति हुई?

(४) गैलीलो कौन था? उसने किन नई बातों का प्रतिपादन किया?

(५) भारत का समुद्री रास्ता सर्वप्रथम किसने खोजा और कैसे? वह रास्ता क्या था?

(६) खोज का युग कौन सा था? उस युग की विशेषताएं बताओ?

(७) संक्षिप्त नोट लिखो —
लियनार्डो डी विन्सी, कोलम्बस, धार्मिक सुधार आन्दोलन, मार्टिन लूथर।

इंगलैण्ड में लोकसत्तावाद का उदय

पिछले अध्यायों में आपने मध्य-युग की एक झलक देखी। इस युग में जनसाधारण के जीवन का आधार मुख्यतः दो बातें थी—धर्म या युद्ध। इससे बाहर मनुष्य कुछ सोचता ही न था। राजनीतिक क्षेत्र में एक तरह की अराजकता फैली हुई थी। राजा के अधिकार बड़े सीमित थे। उसकी कोई निजी फौज न थी। फौज या धन के लिये वह सामन्तों पर निर्भर था। इसके अतिरिक्त चर्च अथवा गिरजाघर स्वतन्त्र इकाइयां थे। उनकी विशाल जागीरें थीं जिन पर राजा का कोई नियन्त्रण न था। पादरी लोग रोम के पोप का आदेश मानते थे। राजा की कोई पूछ न थी।

राष्ट्रीय भावना का जन्म

मध्य-युग से आधुनिक युग में प्रवेश करते ही हम योरोपीय जीवन में एक विशेष अन्तर देखते हैं। वह है लोगों में राष्ट्रीय भावना का संचार। हमारे आधुनिक युग की विशेषता राष्ट्रीयता ही है। योरोप का भावी इतिहास इसी धुरी के इर्द-गिर्द घूमता है। राष्ट्रीयता का अर्थ है अपने देश या राष्ट्र के प्रति अगाध भक्ति तथा मोह की भावना का पैदा होना। आधुनिक युग के प्रारंभ के साथ-साथ योरोप में शक्तिशाली राज्यों का उदय हुआ जैसे इंग्लैण्ड, फ्रांस, हालैण्ड, बैलजियम, स्पेन इत्यादि। लोग अपने आपको अंग्रेज, फ्रांसीसी, डच या स्पेनी समझने लगे। इससे पहले लोगों की राजभक्ति अपने सामन्त या जागीरदार तक ही सीमित थी। आप पूछेंगे यह परिवर्तन कैसे और क्यों हुआ ? तो सुनिए। इतिहास की प्रत्येक घटना किसी आनेवाली घटना की सूचक होती है। योरोप में धर्मयुद्ध हुए। धर्मयुद्धों ने योरोप की भिन्न-भिन्न भाषाएं बोलने वाले लोगों को एक जगह इकट्ठा कर दिया। मानवों के इस विशाल समुद्र में लोगों का अपनी अपनी भाषा और अपनी अपनी संस्कृति के प्रति मोह जागा। इससे राष्ट्रीयता का अंकुर फूटा। इसके अतिरिक्त धार्मिक सुधार आन्दोलन के अन्तर्गत योरोप दो कैम्पों में बंट गया था। कुछ देशों ने मार्टिन लूथर के नए धर्म को अपनाया और वहां अधिकतर लोग प्रोटेस्टैण्ट हो गए जैसे जर्मनी। फ्रांस, स्पेन इत्यादि देश रोमन कैथोलिक ही बने रहे। दो धार्मिक कैम्पों में बट जाने से देशों में आपसी द्वेष बढ़ा। लड़ाइयां हुई। इसलिए अपने अपने राष्ट्र के प्रति मोह भी बढ़ा।

राजाओं की शक्ति बढ़ी

राष्ट्र के प्रति लोगों के मोह ने यह रूप लिया कि देश की शक्ति बढ़ाई जाए। वह कैसे ? उस जमाने में वह तभी सम्भव था यदि देश के राजा की शक्ति बढ़े। चुनांचे, यही हुआ। प्रत्येक देश में राजाओं ने अपनी शक्ति बढ़ानी शुरू की। जनसाधारण ने उनका साथ दिया। इतिहास की इस महत्वपूर्ण घटना का अध्ययन हम इंगलैण्ड के तत्कालीन इतिहास की पृष्ठभूमि में करेंगे।

पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त में इग्लैण्ड में एक युद्ध हुआ जिसे गुलाबो का युद्ध (War of Roses) कहते हैं। यह लड़ाई देर तक जारी रही। अन्त में हैनरी सप्तम नामक एक व्यक्ति इगलैण्ड की गद्दी पर बैठा। हैनरी बडा चतुर शासक था। अपनी शक्ति को बढ़ाने के लिए उसने कई सामन्तो की जागीरें छीन ली। शेष पर भारी कर लगाए। सामन्तो की निजी सेनाओ को भग कर दिया; उनके किले नष्ट कर दिए गए। इन्ही के बल बूते पर सामन्त लोग राजा को आखें दिखाया करते थे। प्राय इसी समय गोला-बारूद का आविष्कार हो गया। गोला-बारूद से राजा की सेना के सम्मुख सामन्तो की तलवारें बेकार थी। सामन्तवाद इगलैण्ड में दम तोडने लगा। राजा की सत्ता सुदृढ़ हुई। लोग सामन्तो के हाथो दुखी थे। इसलिए सामतो के दमन में उन्होने राजा का हाथ बटाया।

हैनरी सप्तम के पुत्र हैनरी अष्टम ने अपने बाप का अधूरा काम पूरा किया। उसने रोम के पोप से झगडा करके धार्मिक क्षेत्र में अपनी शक्ति बढ़ाई। गिरजाघरो और मठो की जायदादें जब्त कर ली। पोप के स्थान पर वह स्वय इग्लैण्ड के चर्च का अध्यक्ष बन गया। पादरियो की शक्ति कम हो जाने से राजा की शक्ति बढी। वह अब प्राय निरकुश हो चुका था। हैनरी अष्टम के उत्तराधिकारी धार्मिक झगडो में उलझे रहे। परन्तु जब १५५८ में हैनरी अष्टम की लडकी एलिजाबेथ इग्लैण्ड की राजगद्दी पर बैठी तो उसने पुन अपनी राजसत्ता को बहुत बढाया। व्यापार को प्रोत्साहन दिया। स्पेन जैसे शक्तिशाली राज्य के विशाल बेडे को हरा कर इगलैण्ड को नौसेना की नीव रखी। इग्लैण्ड समुद्रो पर छा गया। साहित्य और कला की अभूतपूर्व उन्नति हुई। अग्रेजी का विख्यात कवि शेक्सपीयर इसी जमाने में हुआ था। इग्लैण्ड के इतिहास में एलिजाबेथ को वही स्थान प्राप्त है, जो भारत के इतिहास में अकबर महान को।

लोकसत्ता की ओर

इसमें सन्देह नही कि पन्द्रहवी और सोलहवी शताब्दी के दो सौ साल शक्तिशाली राजाओ के युग थे। परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यही काल नई जागृति का काल भी था। विद्या के प्रसार ने लोगो में जिज्ञासा उत्पन्न कर दी थी। मध्य-युग की जडता समाप्त हो चुकी थी, लोग हर बात को ईश्वरीय विधान समझ कर सिर नहीं झुकाते थे। वे पूछते थे क्यो और कैसे?

एलिजाबेथ बहुत लोकप्रिय थी। उसके जमाने में इग्लैण्ड ने बडी उन्नति की। लोग बडे समृद्ध तथा खुशहाल थे। परन्तु उसकी मृत्यु के बाद स्टुअर्ट वश का जेम्स प्रथम इगलैण्ड की गद्दी पर बैठा। वह कोई सफल शासक न था। उसका उत्तराधिकारी चार्ल्स प्रथम स्वेच्छाचारी राजा था। वह राजा की शक्ति पर कोई अकुश नही मानता था। वह कहता था कि राजा धरती पर ईश्वर का प्रतिनिधि है। उसकी आज्ञा न मानने का वही पाप है जो भगवान के विधानो के उल्लघन का। परन्तु नई जागृति के परिणामस्वरूप लोग तर्क करने लगे थे। वे अपने अधिकारो की माग करते थे। वे राजा की बात मानने को तैयार नही थे।

अग्रेज लोग परम्परा से लोकतन्त्रवादी रहे हैं। आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि १२१५ ई० में ही अग्रेजो ने अपने एक राजा जान के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा उठाया था। जान अयोग्य शासक था। करो द्वारा लोगो का खून चूसता था। प्रजा ने विद्रोह किया। आखिर जान को प्रजा का कहना मानना पडा। विवश

होकर उसने प्रजा के एक अधिकार पत्र पर हस्ताक्षर किए। इस अधिकार पत्र को मैगना कार्टा (Magna Carta) कहते हैं। इस अधिकार पत्र द्वारा सामन्तों तथा आम लोगों को पार्लियामेंट में प्रतिनिधित्व मिला। मैगना कार्टा से पहले भी इगलैण्ड में पार्लियामेंट किसी न किसी रूप में काम करती थी। इसे कानून बनाने के थोड़े बहुत अधिकार प्राप्त थे। परन्तु मैगना कार्टा ने पार्लियामेंट के अधिकारों को खूब बढ़ाया।

चार्ल्स प्रथम घमण्डी राजा था। उसने पार्लियामेंट की उपेक्षा की। पार्लियामेंट अपने अधिकारों को छोड़ने को तैयार न थी। इसलिए राजा चार्ल्स प्रथम और पार्लियामेंट के समर्थकों में युद्ध छिड़ गया। इसमें राजा की हार हुई। १६४९ ई० में चार्ल्स को उसके महल के सामने फांसी पर लटका दिया गया। तदोपरान्त दस साल तक इगलैण्ड में कोई राजा नहीं रहा। इस काल में पार्लियामेंट की फौजों के सेनापति क्रामवेल ने डिक्टेटर के रूप में इगलैण्ड पर राज किया। क्रामवेल की मौत के थोड़ी देर बाद स्टुअर्ट वंश के दो राजा गद्दी पर बैठे। चार्ल्स द्वितीय और जेम्स द्वितीय। दोनों ने पुन निरकुश शासन चलाना चाहा। परन्तु पार्लियामेंट झुकने को तैयार न थी। राजा जेम्स द्वितीय कैथोलिक धर्म को माननेवाला था जबकि इगलैण्ड के अधिकतर लोग प्रोटेस्टैण्ट धर्म अपना चुके थे। जन राजा और पार्लियामेंट में मतभेद बढ़ता ही गया। आखिर जेम्स द्वितीय को गद्दी छोड़नी पड़ी। पार्लियामेंट ने १६८८ ई० में जेम्स द्वितीय की लड़की मेरी और दामाद विलियम औरेंज को इगलैण्ड की गद्दी पर बिठा दिया। १६८८ की इस क्रान्ति को 'शानदार' क्रान्ति या रक्तहीन क्रांति कहते हैं क्योंकि रक्त की एक बूंद बहाए बिना इगलैण्ड में ऐसी महान् घटना हो गई जिसने आनेवाले लोकसत्तावाद के लिए मार्ग साफ कर दिया। आधुनिक ढंग की शासन प्रणाली की नींव रखी गई। इस क्रान्ति द्वारा इगलैण्ड में राजाओं के ईश्वरीय प्रतिनिधि होने के दावे को सदा के लिए खत्म कर दिया गया। भविष्य में राजा पार्लियामेंट की सलाह के बिना कोई कदम नहीं उठा सकता था। पार्लियामेंट को कानून बनाने के बहुत से अधिकार मिल गए। उस हद तक राजा की शक्ति सीमित हो गई।

सम्राट जॉन मैगना कार्टा पर हस्ताक्षर करते हुए

परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि १६८८ में इगलैण्ड में आज जैसी लोकतन्त्र प्रणाली स्थापित हो गई। यह तो श्रीगणेश था एक सर्वप्रभुत्व सम्पन्न पार्लियामेंट का। जनसाधारण को अभी वोट का हक नहीं मिला

था। वोट का यह हक आम लोगों ने लम्बे संघर्ष के बाद हासिल किया। इस प्रकार धीरे-धीरे इंगलैण्ड में वैधानिक राजतन्त्र की स्थापना हुई। वैधानिक राजतन्त्र का अर्थ है राजा के नाम पर पार्लियामेंट का शासन। इंगलैण्ड में सब काम राजा के नाम पर होता है परन्तु अधिकार पार्लियामेंट के हाथ में है। इंगलैण्ड का प्रधान मन्त्री देश का वास्तविक शासक है। वह अपने सब कार्यों के लिए पार्लियामेंट को उत्तरदायी है। पार्लियामेंट उसे बना या बिगाड़ सकती है। राजा केवल प्रतीकात्म रूप से देश की सर्वोपरि सत्ता है।

निरंकुश राजाओं के विरुद्ध आन्दोलन को उस जमाने के कुछ विचारकों से भी प्रेरणा मिली। इनमें प्रमुख ये हैं—जान लाक (*John Locke* १६३२ से १७०४), मोन्टेस्क (*Montesquieu* १६८९–१७५५), रूसो (Rousseau १७१२–१७७८), और बैन्थम (Bentham १७४८–१८३२)। लाक ने सिद्ध किया कि प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतन्त्रता और सम्पत्ति पर प्राकृतिक हक है। राज्य का अस्तित्व केवल इसलिए है कि मनुष्य उपरोक्त अधिकारों का उपभोग कर सके। उसने सिद्ध किया कि लोगों को राजसत्ता के विरुद्ध विद्रोह का भी हक है। अन्य विचारकों ने भी मानव जाति के अधिकारों की पुष्टि की।

स्पष्ट है कि विचारों की इस क्रान्ति के सामने निरंकुश राजसत्तावाद नहीं ठहर सकता था। इसलिए इंगलैंड तेजी से लोकसत्तावाद की ओर अग्रसर होने लगा। इंगलैंड की औद्योगिक क्रान्ति और फ्रांस की राज्य क्रान्ति ने लोकसत्ता आन्दोलन को बल दिया। यह कैसे? यह हम अगले अध्यायों में पढ़ेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) इंगलैंड में निरंकुश राजसत्ता की स्थापना कैसे हुई?
(२) इंगलैंड में राजा तथा पार्लियामेंट में संघर्ष क्यों हुआ? उसमें अन्तिम जीत किसकी हुई?
(३) ब्रिटेन में लोकसत्तावाद के विकास पर एक निबन्ध लिखो।
(४) वैधानिक राजतन्त्र क्या है? इंगलैंड के वैधानिक राजतन्त्र की व्याख्या करो?

✓ : २४ :

फ्रांस की राज्यक्रान्ति

पिछले अध्याय में आपने पढ़ा कि इंगलैण्ड में राजा के पंर काट दिए गए थे। पार्लियामेंट ने उसकी शक्ति सीमित कर दी थी। परन्तु फ्रांस में राजा अभी तक निरंकुश था। फ्रांस के तट से केवल ४० मील दूर इंगलैण्ड में प्रजा का शासन स्थापित हो चुका था। इंगलैण्ड में लोकसत्ता का यह उदय फ्रांस पर प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकता था। राजाओं के विरुद्ध रोष की यह भावना आखिर एक ऐसी क्रान्ति के रूप में प्रगट हुई जिसने दुनिया के इतिहास पर प्रभाव डाला। इस क्रान्ति का प्रारम्भ १४ जुलाई १७८९ को हुआ।

राज्य-क्रान्ति क्यों ?

क्रान्ति कोई एक दिन में नहीं हो जाती। उसके कारण इतिहास की घटनाओं में निहित होते हैं। यह क्रांति क्यों हुई ? इसे जानने लिए हमें फ्रांस के पिछले तीन सौ सालों के इतिहास पर दृष्टि डालनी होगी।

फ्रांस की राज्य क्रान्ति से पूर्व ३०० साल से फ्रांस पर निरंकुश राजा राज्य कर रहे थे। निरंकुश राजाओं की अन्तिम कड़ी में लुई पन्द्रहवाँ और लुई सोलहवें आते हैं। ये दोनों राजा स्वेच्छाचारी थे। उनके राज्य में फ्रांस का बुरी तरह अधःपतन हुआ। लुई सोलहवें का दरबार क्रूर, नीच और अत्याचारी लोगों से भरा रहता था। स्वयं सम्राट वरसाई में अपने भव्य प्रासाद में रहता था। महलों में राजा के परिवार की सेवा के लिए १५,००० नौकर थे।

राजा तथा उसका परिवार लोगों से, जो उसके लिए करों द्वारा ऐश्वर्य के साधन जुटाते थे, बुरी तरह कट चुका था। इसका एक रोचक उदाहरण है। लुई की महारानी का नाम मेरी एन्टोने था। कहते हैं जब विद्रोहियों का जुलूस 'रोटी, रोटी' पुकारता हुआ महल के बाहर आया तो महारानी ने पूछा कि ये लोग क्या मांगते हैं ? किसी ने बताया कि यह रोटी मांगते हैं ? इसमें क्या मुश्किल है ? महारानी ने पूछा। रोटी है नहीं—उसे बताया गया। महारानी ने तुरन्त उत्तर दिया—"रोटी नहीं तो यह केक क्यों नहीं खा लेते।" जनता की आवश्यकताओं के बारे में इन लोगों के अज्ञान की यह हालत थी।

फ्रांसीसी समाज में सर्वत्र असमानता का बोलबाला था। राजा, उसके सामन्त, तथा पादरी लोग उच्च वर्ग में थे। वे प्रायः करों से मुक्त थे और अपनी मनमानी करते थे। उच्च वर्ग समाज का केवल एक प्रतिशत भाग था। राज्य की समूची आय जो मेहनतकश किसानों से आती थी, इन व्यसनी लोगों पर खर्च हो जाती थी। इसलिए राजा धन के लिए परेशान रहता था। किसानों और मजदूरों से बेगार भी ली जाती थी

यही नहीं, कानून के सामने भी कोई समानता नहीं थी। देश में न कोई निश्चित कानून थे, न कोई निश्चित शासन व्यवस्था। किसी को भी बिना अपराध उम्र भर के लिए पेरिस की बेस्टील जेल में डाला जा सकता था। देश के विभिन्न भागों में एक ही अपराध के लिए विभिन्न दण्ड नियत थे। उच्च वर्ग के अपराधियों के लिए जेलों में भी नौकर उपलब्ध थे।

चिन्गारी

शोषण की इस चक्की में जनता बुरी तरह पिस रही थी। लोग दुखी और असन्तुष्ट थे। बस एक चिन्गारी की जरूरत थी जिससे सारा फ्रांस भड़क सकता था। इस चिन्गारी का काम अमेरिका के सफल स्वातन्त्र्य संग्राम तथा फ्रांसीसी दार्शनिकों के विचारों ने किया। अमेरिका, जो आज इतना शक्तिशाली देश है, किसी समय इंगलैण्ड का एक उपनिवेश होता था। वहां इंगलैण्ड के राजा का सिक्का चलता था। अंग्रेज शासकों ने अमेरिका में भारी कर लगा रखे थे परन्तु वहां के लोगों को ब्रिटिश पार्लियामेंट में कोई प्रतिनिधित्व हासिल न था। आखिर तंग आकर अमेरिकावासियों ने ४ जुलाई, १७७६ को अमेरिका के स्वतन्त्र होने की घोषणा कर दी। इंगलैण्ड ने युद्ध किया परन्तु अमेरिकावासियों की जीत हुई। अमेरिका ने इंगलैण्ड के राजा की अधीनता का जुआ उतार फेंका और अपने विजयी नेता जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व में एक नए लोकतन्त्र की नींव रखी। अमेरिकन क्रान्ति ने अप्रत्यक्ष रूप से दुनिया को दिखा दिया कि राजाओं के बिना भी शासन ठीक ढंग से चलाया जा सकता है। इंगलैण्ड के विरुद्ध अमेरिकनों की मदद के लिए बहुत से फ्रांसीसी वहां गए हुए थे। जब वे फ्रांस वापस लौटे तो वे लोकतन्त्र की भावनाओं से ओत-प्रोत थे। उन्हें अमेरिकन क्रान्ति ने एक नई राह दिखा दी थी। यही कारण है कि जब क्रान्तिकारियों ने सर्वप्रथम पैरिस में बेस्टील की जेल पर कब्जा किया तो डी लाफेट नामक एक फ्रांसीसी क्रान्तिकारी ने जेल की चाबियां जार्ज वाशिंगटन को उपहार के रूप में भेजीं। इसका अर्थ था—देखो, हमने भी तुम्हारी तरह राजा के चंगुल से छुटकारा पा लिया है।

इसी युग में फ्रांस ने कुछ महान् दार्शनिक पैदा किए जैसे मान्टेस्क, वाल्टेयर और रूसो। इन विद्वानों ने अपनी रचनाओं द्वारा जनता में क्रांतिकारी भावनाएं भर दीं। मान्टेस्क ने राजा तथा चर्च की कटु आलोचना की और बताया कि शासन-व्यवस्था सुचारु रूप से चल सकती है यदि प्रबन्ध-कारिणी, व्यवस्थापिका तथा न्यायकारिणी शक्तियां अपने-अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र हों। वाल्टेयर ने धार्मिक सहिष्णुता, निष्पक्षता तथा पवित्रता का मार्ग दिखाया। रूसो ने स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातृत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उसने बतलाया कि राजा को जनता ने सत्ता सौंपी है न कि ईश्वर ने। उनका यह वाक्य तो क्रान्तिकारियों के लिए पथ-प्रदर्शक सिद्ध हुआ—"मनुष्य के पास खोने के लिये जंजीरों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।" इसलिए लोग अपनी जंजीरें तोड़ने के लिये तैयार हो गए।

रूसो

क्रांति का प्रारम्भ

क्रान्ति के लिये जमीन तैयार थी। युद्धों से फ्रांस की कमर टूट चुकी थी। एक भयंकर आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया। १७७८ ई० में फ्रांस में भारी दुर्भिक्ष पड़ा जिसने रही सही कसर पूरी कर दी। व्यापार ठप्प हो गया, दस्तकारियां मिटने लगीं। राज्य में अधिक धन एकत्र करने और कर बढ़ाने के लिए राजा लुई सोलहवें ने फ्रांस की पार्लियामेंट को जिसे स्टेट्स जनरल कहते थे, बुलाया। स्टेट्स जनरल की बैठक डेढ़ सौ साल बाद हो रही थी। स्टेट्स जनरल ने राष्ट्रीय असेम्बली का नाम ग्रहण किया। असेम्बली ने फ्रांस के

शासन में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने चाहे। देश के शासन में अन्याय तथा असमानता दूर करनी चाही। परन्तु राजा लुई को यह मजूर न था। पेरिस के भूखे लोग अब अधिक प्रतीक्षा के लिए तैयार नहीं थे। इनकी एक भीड़ ने १४ जुलाई, १७८९ को बेस्टील की जेल पर कब्जा कर लिया। पहरेदारों के सिर काट कर बांसों पर लटका दिए और पेरिस की गलियों में उनका जुलूस निकाला। इस तरह फ्रांस की राज्यक्रान्ति का प्रारम्भ हुआ।

राजा लुई तथा उसकी सुन्दरी महारानी वरसाई के महल में रहते थे। राजा के सब दरबारी उसे छोड़ कर भाग गए। लोग 'रोटी, रोटी' चिल्लाते हुए वरसाई पहुचे। राजा और रानी दोनों को कैद कर लिया गया। तदोपरान्त राष्ट्रीय असेम्बली ने देश का विधान तैयार किया। राजा के अधिकार सीमित कर दिए गए। सामन्तशाही का अन्त कर दिया गया। मानव के अधिकारों की घोषणा की गई। परन्तु १७९२ में प्रशिया और आस्ट्रिया ने फ्रांस के राजा का पक्ष लेकर फ्रांस पर हमला किया। फ्रांसीसी क्रान्तिकारियों की जीत हुई। एक नई असेम्बली को बुलाया गया जिसे नेशनल कन्वेन्शन कहते हैं। इस कन्वेन्शन ने राजा को पदच्युत करके फ्रांस को लोकतन्त्र घोषित कर दिया। परन्तु राजा के विरुद्ध लोगों का गुस्सा अभी ठंडा नहीं हुआ था। वे राजा को खत्म करना चाहते थे। लोगों के सिर काटने के लिये किसी फ्रांसीसी ने नए ढंग की एक मशीन बनाई थी जिसे गिलोटीन कहते हैं। गिलोटीन द्वारा राजा और रानी दोनों के सिर काट दिए गए। राजा और रानी के मर जाने पर भी लोगों को शांति न हुई। फ्रांस भर में सामन्तों के घरों पर हमले हुए। हजारों लोगों को फांसी पर चढ़ा दिया गया। जिस पर तनिक भी राजा का पक्षपाती होने का शक होता था, उसे तुरन्त खत्म कर दिया जाता था। इस तरह फ्रांस में चारों ओर अराजकता छा गई। अराजकता के दिनों में क्रान्तिकारियों के नेता मार्ट, डैंटन और राब्ज पिरे थे। डैंटन को राब्ज पिरे की आज्ञा से फांसी दे दी गई। मार्ट की हत्या कर दी गई। १७९४ में राब्जपिरे को भी अपने किए का फल मिला। लोगों ने उसे भी गिलोटीन पर चढ़ा दिया।

अनुमान लगाइए, कैसा जमाना था वह। लोग एक तरह से पागल हो गए थे। पेरिस के प्रसिद्ध गिरजे में उन्होंने एक सुन्दर स्त्री की प्रतिमा रख दी जिसे वे तर्क की देवी कहते थे। ईसा की मूर्तियां तथा चित्र हटा कर क्रान्तिकारी नेताओं के चित्र सजा दिए गए। रविवार खत्म कर दिया गया। सप्ताह को १० दिन का बना दिया गया और हर दसवें दिन छुट्टी होती थी। क्रांतिकारियों ने नया सवत भी चलाया जो फ्रांस के प्रथम लोकतन्त्र से जो १७९२ में स्थापित हुआ, शुरू होना था। १७९२ उनके सवत् का पहला वर्ष था।

राब्ज पिरे की मौत के बाद फ्रांस में कुछ व्यवस्था स्थापित हुई। अक्तूबर १७९५ में फ्रांस का शासन पांच डायरेक्टरों के हाथ सौंप दिया गया। इन्हें फ्रांस में पुन व्यवस्था स्थापित करने का उत्तरदायित्व दिया गया। वे इसमें असफल रहे। १७९९ में पांच सदस्यों की इस समिति को समाप्त करके तीन व्यक्तियों की एक कौंसिल बनाई गई। नेपोलियन बोनापार्ट उस कौंसिल का अध्यक्ष बना। अन्य दो सदस्य उसके मनोनीत व्यक्ति थे। इस प्रकार शासन की सारी सत्ता नेपोलियन के हाथ चली गई। साढ़े पांच इंच लम्बा नेपोलियन एक महान योद्धा और कुशल शासक था। उसने योरोप के इतिहास को पलट दिया।

इस प्रकार लाखों लोगों की हत्या के उपरान्त, फ्रांस की यह क्रांति नेपोलियन ने खत्म की। क्रान्ति का

इतिहास लूटमार, हत्या, अग्निकाण्ड से भरा पड़ा है। परन्तु क्रान्ति की यह कहानी वीर नेपोलियन के वृतान्त के बिना अधूरी ही रहेगी।

नेपोलियन बोनापार्ट

नेपोलियन १७६९ में फ्रांस के एक छोटे से द्वीप कार्सिका में पैदा हुआ था। क्रान्ति शुरू होने के बाद वह लोकतन्त्रीय सेना में कैप्टन नियुक्त हुआ। उसने बड़ी कुशलता से पेरिस में झगड़े पर उतारू एक भीड़ को तितर बितर किया। इस तरह नेपोलियन की धाक बैठ गई। तत्पश्चात् उसने एल्पस पर्वत पार करके इटली को जीता, मिस्र पर कब्जा किया। नेपोलियन विश्वविजय के स्वप्न ले रहा था, मिस्र से आगे बढ़ कर वह भारत भी जाना चाहता था। परन्तु अंग्रेज नौ सेनापति नेलसन ने उसकी योजना विफल कर दी। मिस्र में नेलसन ने उसका बेड़ा तबाह कर दिया और नेपोलियन बड़ी कठिनाई से वापस फ्रांस पहुंचा।

नेपोलियन बोनापार्ट

मिस्र से लौट कर उसने प्रथम कौंसल के रूप में फ्रांस की राज-सत्ता अपने हाथ में ले ली। परन्तु कुछ देर बाद वह फ्रांस और इटली का सम्राट बन बैठा।

नेपोलियन जानता था कि इंगलैण्ड को जीते बिना उसकी विश्व-विजय का स्वप्न अधूरा रहेगा। इंगलैण्ट पर हमला करने के लिए नेपोलियन ने एक विशाल बेड़ा तैयार किया। परन्तु एक बार फिर अंग्रेज नौ सेनापति नेलसन ने ट्रैफालगर के स्थान पर नेपोलियन का बेड़ा नष्ट कर दिया। इंगलैण्ड की ओर से निराश होकर नेपो-लियन स्पैन, प्रशिया, आस्ट्रिया की ओर बढ़ा। इन सब देशों का उसने जीत लिया। सारा यूरोप अब उसके कदमों में था। इस समय नेपोलियन ने रूस पर हमला करने की भूल की। रूस विशाल देश है। कड़ा जाड़ा था। फिर भी नेपोलियन मास्को तक जा पहुंचा। परन्तु रूसियों ने शहर को नष्ट कर दिया था और अन्न को जला दिया था। नेपोलियन की सेना रूसी बर्फों को चीरती हुई भारी नुकसान के साथ वापस पेरिस पहुंची। परन्तु भाग्य अब उसका साथ छोड़ चुका था। सारा योरोप इस आततायी को खत्म करने पर तुला हुआ था। १८१३ में लिपजिग के स्थान पर रूस, आस्ट्रिया, प्रशिया और स्वीडन ने मिलकर नेपोलियन को हराया। १८१५ में वाटरलू के स्थान पर अंग्रेज जनरल ड्यूक आफ वेलिंगटन ने उसे बुरी तरह हराया। नेपोलियन बन्दी बनाकर सेंट हेलिना के छोटे से द्वीप में नजरबन्द कर दिया गया। नजरबंदी की अवस्था में १८२१ में इस महान् सेनापति की मृत्यु हो गई। इस प्रकार फ्रांस की राज्य क्रान्ति का अन्त हुआ।

फ्रांस की राज्यक्रांति के परिणाम

नेपोलियन की हार के बाद कई सालों तक फ्रांस नेपोलियन के युद्धों की पीड़ा सहता रहा। व्यापार और उद्योग प्रायः ठप्प हो गए। खेती-बाड़ी का बुरा हाल था।

क्रान्ति के कारण निरंकुश शासन की बहुत-सी त्रुटियां दूर हो गईं। फ्रांस में ही नहीं, योरोप के अन्य

देशों में भी। परन्तु नेपोलियन स्वयं सम्राट बन बैठा था। वह भी 'सम्राटों का सम्राट'। ऐसा मालूम होता था कि फ्रांस की क्रान्ति में जो खून बहा, वह व्यर्थ ही रहा। परन्तु नेपोलियन की तानाशाही और लूई राजाओं की तानाशाही में बड़ा अन्तर था। लूई राजा 'दैवी अधिकारों' से राज्य करते थे। वे कहते थे कि हम पृथ्वी पर ईश्वर के प्रतिनिधि हैं। परन्तु नेपोलियन जनता के नाम पर राज्य करता था, जिसने उसे सम्राट पद दिया था।

नेपोलियन की फौजें जहां जहां भी गईं, उन्होंने स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व की विचारधारा का सन्देश फैलाया। इसमें सन्देह नहीं कि लिपजिग के स्थान पर योरोप के लोगों ने नेपोलियन से लोहा लिया। परन्तु यह युद्ध तानाशाह नेपोलियन के विरुद्ध था न कि फ्रांसीसी क्रान्ति के उच्च आदर्शों के विरुद्ध। इन आदर्शों के थोड़ी देर बाद दुनिया के अन्य देशों ने भी अपनाने की चेष्टा की।

फ्रांस की क्रान्ति का एक विशेष लाभ हुआ। योरोप के राजाओं ने बदलते हुए समय को पहचान लिया। इसलिये जनता की मांगों के विरुद्ध उन का प्रतिरोध उत्तरोत्तर कम होता गया।

फ्रांस की क्रान्ति में भारी खून बहा, लूटमार हुई। परन्तु उसने एक नए और बेहतर योरोप की नींव रखी। पुराने राजा फिर अपनी अपनी गद्दियों पर बहाल हो गए। परन्तु इतिहास अपनी राह बना चुका था। अर्थात् आनेवाला समय लोकसत्ता का समय होगा न कि निरंकुश राजसत्ता का।

अभ्यास के प्रश्न

(१)　फ्रांस की राज्यक्रांति से पूर्व योरोप की क्या दशा थी ?
(२)　फ्रांस की राज्यक्रान्ति क्यों हुई ? विस्तार से बताओ ?
(३)　फ्रांसीसी दार्शनिकों का फ्रांस की राज्यक्रान्ति में क्या हाथ था ?
(४)　फ्रांस की राज्यक्रान्ति का यूरोप पर क्या प्रभाव पड़ा ?
(५)　नेपोलियन बोनापार्ट कौन था ? उसने यूरोप के इतिहास को कैसे पलटा ?
(६)　नेपोलियन बोनापार्ट की हार क्यों हुई ?

व्यक्तिवाद औद्योगिक क्रान्ति की बौद्धिक देन है। व्यक्तिवाद का अर्थ यह है कि व्यक्ति को सरकार के हस्तक्षेप के बिना कोई भी काम करने का अधिकार है। आर्थिक क्षेत्र में कोई रोकटोक नहीं होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में व्यक्तिवाद पूंजीपतियों के लिए मनमानी करने का हक मांगता था। इगलैण्ड में बहुत देर तक इस विचारधारा का प्रचार रहा। किन्तु यह विचारधारा देर तक टिक न सकी। कालान्तर मे इंगलैण्ड की लेबर पार्टी ने समाजवाद को अपना लक्ष्य घोषित किया। समाजवाद का अर्थ है कि उत्पादन के सब साधन सरकार के हाथ में हों। मजदूरो को सामाजिक न्याय मिले। शोषण खतम हो। परन्तु लेबर पार्टी का प्रभाव अभी बहुत कम था।

उन्नीसवी शताब्दी में वैधानिक क्षेत्र मे पालियामेंट द्वारा बहुत से सुधार किए गए। इन सुधारो का मुख्य कारण औद्योगिक क्रान्ति ही थी। इस क्रान्ति के परिणामस्वरूप देश में कई नए नगर आबाद हो गए थे। परन्तु इन नगरो को पालियामेंट में अपने प्रतिनिधि भेजने का हक नही था। एक लम्बे आन्दोलन के बाद इन नगरो के रहनेवालो को वोट का अधिकार मिला।

थोडे शब्दो में हम कह सकते है कि औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय दौलत बढी। जन-सख्या में वृद्धि हुई। लोग गावो से आकर नगरो में बस गए। पूजीपतियो के एक नए वर्ग का जन्म हुआ। बडे-बडे कारखाने स्थापित हुए। इन कारखानो में स्त्रियो और बच्चो को नौकर रखा गया। मजदूरो की हालत अच्छी नही थी। इसलिये पालियामेंट को सुधार के पग उठाने पडे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) औद्योगिक क्रान्ति का क्या अर्थ है?

(२) औद्योगिक क्रान्ति क्यो और कैसे हुई?

(३) सक्षिप्त नोट लिखो :—
जेम्स वाट, मैकडम, जार्ज स्टीफेनसन, आर्कराईट।

(४) १७५०–१८५० तक इगलैण्ड को दुनिया की वर्कशाप क्यो कहा जाता था?

(५) औद्योगिक क्रान्ति के मुख्य परिणाम बताओ?

चतुर्थ खण्ड

आधुनिक भारत का इतिहास

: २६ :

योरोपियन जातियाँ भारत में

लगभग ४५० वर्ष हुए वास्कोडिगामा भारत पहुंचने के लिए एक नया समुद्री रास्ता खोजने के लिये पुर्तगाल से रवाना हुआ। कई सप्ताह तक वह अटलांटिक सागर में दक्षिण की दिशा में चलता रहा। आखिर वह अफ्रीका के दक्षिणी कोने तक जा पहुंचा। यहां से वह उत्तर की ओर बढ़ा। कुछ और आगे जाने पर उसे एक अरब नाविक मिला। उस नाविक ने वास्कोडिगामा को हिन्द महासागर पार करके भारत के दक्षिणी तट पर कालीकट की बन्दरगाह का रास्ता बताया। वास्कोडिगामा कालीकट के हिन्दू राजा जमोरिन के दरबार में पहुंचा। राजा ने उससे पूछा कि वह किस प्रयोजन से भारत आया है। वास्कोडिगामा ने उत्तर दिया कि वह भारत से गर्म मसाले खरीदने के लिए यहां आया है। राजा ने पुर्तगालियों को भारत से व्यापार करने की सुविधाएं प्रदान कर दी। यह १४९८ की घटना है।

कालीकट की बन्दरगाह को देख कर वास्कोडिगामा हैरान रह गया। यहां पर पूर्व के ऐसे ऐसे देशों के जहाज खड़े थे जिनका नाम भी उसने कभी नहीं सुना था। कालीकट नगर की तंग गलियों में झूमते हुए हाथियों पर सवार धनाढ्य लोग घूम रहे थे। जनसाधारण रंग-बिरंगे सूती कपड़े पहने हुए थे। इनमें से कुछ ने तो इतने महीन कपड़े पहने रखे थे कि किसी योरोपियन ने आज तक ऐसे वस्त्र नहीं देखे थे। इस प्रकार के कपड़े को आज भी योरोप में कैलिको कहा जाता है क्योंकि वह कालीकट से आया था।

वास्कोडिगामा द्वारा भारत के समुद्री मार्ग की खोज से पूर्व योरोप और हिन्दुस्तान में स्थल मार्ग से हजारों सालों से व्यापार होता रहा था। सिकन्दर के समय से योरोप को भारत के बारे में जानकारी प्राप्त थी। रोमन साम्राज्य और भारत में काफी व्यापार होता था। ईस्वी की पहली शताब्दी में रोमन इतिहासकार प्लिनी ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि भारत से ऐश्वर्य का सामान खरीद कर रोम अपना सोना बर्बाद कर रहा है। १२९३ में इटैलियन यात्री मार्कोपोलो ने दक्षिण भारत की यात्रा की। उसने भारत में हीरे-जवाहरात की खानों का बखान किया। मार्कोपोलो ने भारतीय मलमल का विशेष रूप से वर्णन किया जो उसके शब्दों में 'मकड़ी के जाल की तरह प्रतीत होती थी।'

शताब्दियों से स्थल मार्ग द्वारा लम्बे-लम्बे काफिले भारत का माल अफगानिस्तान, फारस, और तुर्की के रास्ते योरोप पहुंचाते थे। यह रास्ता कान्स्टेंटीनोपल (इस्तम्बूल) से होकर जाता था। परन्तु १४५३ में कान्स्टैंटीनोपल पर तुर्कों का कब्जा हो गया और इस तरह भारत से योरोप का व्यापार प्रायः ठप्प हो गया।

अब योरोप से भारत पहुंचने के लिये किसी समुद्री मार्ग की खोज हुई। इस खोज में कोलम्बस ने १४९२ में अमेरिका को खोज डाला। पाच वर्ष बाद वास्कोडिगामा भारत आ पहुंचा।

पुर्तगाली

वास्कोडिगामा के बाद पुर्तगालियो के जहाज धड़ाधड़ भारत आने लगे। इससे पूर्व भारत के समुद्री व्यापार पर अरबो का कब्जा था। उन्होंने पुर्तगालियो की यह सरगर्मिया नापसन्द की। कई समुद्री लड़ाइयो के उपरान्त पुर्तगाली गोआ में अपने कदम जमाने में सफल हो गए। यह १५१० की बात है। उस समय भारत में पुर्तगाली गवर्नर का नाम अल्बुकर्क था। वह बड़ा योग्य व्यक्ति था। उसने गोआ को केन्द्र बनाकर दक्षिण-पूर्वी एशिया में मलाक्का तक अपने बाजू पसार लिए। मालाबार की काली मिर्च और लंका व मलाक्का के गर्म मसाले पुर्तगाल के जहाजो में भर कर योरोप जाते थे। ये मसाले योरोप में सोने के भाव बिकते थे। पुर्तगाली अमीर होने लगे। १५७० के लगभग गोआ, बसई, बम्बई, दिव, तथा चाल से तुलसर तक कोकण का पूरा समुद्र तट पुर्तगालियो के अधीन हो चुका था। इसके अतिरिक्त वे लंका में कोलम्बो, और इण्डोनेशिया में मलाक्का पर भी कब्जा कर चुके थे। पुर्तगालियो की यह समृद्धि देख कर अन्य योरोपियन शक्तियो—विशेष रूप से डचो, अंग्रेजो और फ्रांसीसियो ने पूर्व के इस व्यापार में रुचि दिखाई।

अल्बुकर्क

पुर्तगाली इस व्यापार को पूर्ण रूप से अपने हाथ में रखना चाहते थे। इसलिए नए व्यापारियो से संघर्ष स्वाभाविक था। इस संघर्ष में डचो का पलड़ा भारी रहा। उन्होंने १६४१ में पुर्तगालियो से मलाक्का छीन लिया और १६५४ में कोलम्बो। डचो ने मद्रास के तट पर कालीकट को अपने व्यापार का मुख्यालय बनाया। पुर्तगालियो की इस पराजय का एक कारण यह था कि १५८० में पुर्तगाल स्पेन का एक भाग बन गया। स्पेन ने पुर्तगाल के पूर्वीय उपनिवेशो की ओर ध्यान नहीं दिया। पुर्तगालियो की अवनति का एक और कारण उनकी धर्मान्धता थी। वे स्त्रियो और बच्चों को उठा ले जाते थे और उन्हें गुलाम बना कर बेच डालते थे।

डच

भारत से व्यापार करने के लिए १६०२ में डचो ने अपनी डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित की। शीघ्र ही उन्होंने पुर्तगालियो को भारतीय समुद्रो से निकाल बाहर किया। डचो ने भारत में मछलीपटट्म, हुगली, अहमदाबाद, सूरत, आगरा, कोचीन इत्यादि स्थानो पर अपनी कोठिया कायम की किन्तु उनका ज्यादा ध्यान इण्डोनेशिया तथा गर्म मसाले पैदा करनेवाले अन्य पूर्वीय देशो की ओर रहा। इसलिये अंग्रेज डचो को सदा के लिये सन् १८२५ में भारत से निकालने में सफल हुए। परन्तु इण्डोनेशिया में चिरकाल तक डचो का राज रहा। कुछ वर्ष हुए इण्डोनेशिया ने डचो से आजादी प्राप्त कर ली थी।

अंग्रेज और फ्रांसीसी

अंग्रेज और फ्रांसीसी भी पुर्तगालियों की भांति भारत के व्यापार से मालामाल होना चाहते थे। अंग्रेजों ने ३१ दिसम्बर, १६०० को अपनी ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित की। १६६४ में फ्रांसीसियों ने उनका अनुसरण किया। परन्तु इन दो कौमों ने अपनी गतिविधियों को व्यापार तक ही सीमित न रक्खा। कालान्तर में व्यापार गौण हो गया और राज्य प्राप्ति मुख्य। आप पढ़ चुके हैं कि १६०८ में अंग्रेजों ने व्यापारिक सुविधाओं की प्राप्ति के लिये कप्तान हाकिन्ज को जहांगीर के दरबार में भेजा। १६१५ में सर टामस रो इंगलैण्ड के बादशाह जेम्स प्रथम की ओर से बहुत से उपहार लेकर जहांगीर के दरबार में आया। सर टामस रो अंग्रेजों के लिए काफी व्यापारिक सुविधाएं प्राप्त करने में सफल हुआ।

अंग्रेजों ने १६१२ में सूरत पुर्तगालियों से छीन लिया और १० वर्ष बाद ईरान की खाड़ी में आर्मुज। १६४० में अंग्रेजों ने कर्नाटक प्रान्त में जमीन का एक छोटा-सा टुकड़ा खरीद कर वर्तमान मद्रास की नींव रखी। १६३३ में अंग्रेजों ने बालासार और १६५१ में हुगली के स्थान पर व्यापारिक कोठियां स्थापित कीं। सम्राट चार्ल्स को पुर्तगाल के राजा से बम्बई का छोटा-सा टापू दहेज में मिला था। चार्ल्स ने १६६८ में यह टापू ईस्ट इण्डिया कम्पनी को १० पौंड वार्षिक किराये पर दे दिया। १६९० में कुछ अंग्रेजों ने फोर्ट विलियम का किला बनाया। इस प्रकार आधुनिक कलकत्ते की नींव पड़ी। इस कम्पनी की उन्नति रख कर १७९८ में इंगलैण्ड में एक और प्रतिद्वन्द्वी कम्पनी बन गई। दोनों में आपसी होड़ चलती थी जिससे दोनों को नुकसान पहुंचा। आखिरकार १७०८ में ब्रिटिश सरकार ने दोनों कम्पनियों को मिला दिया।

फ्रांसीसी इस दौड़ में बहुत पीछे रहने वाले थे। उन्होंने १६६४ में फ्रेंच ईस्ट इण्डिया कम्पनी बनाई। १६६८ में उनकी पहली व्यापारिक कोठी सूरत में कायम हुई। १६७४ में उन्होंने पाण्डीचेरी पर कब्जा किया। पाण्डीचेरी को फ्रांसीसियों ने हाल ही में खाली किया है। जिस तरह अल्बुकर्क ने भारत में पुर्तगाली राज्य का प्रसार किया था, उसी तरह फ्रेंकोयस मार्टिन ने भारत में फ्रांसीसी उपनिवेशों की नींव रखी। वह भारत में फ्रांसीसी उपनिवेशों का डायरेक्टर जनरल था। उसके प्रयास से फ्रांसीसियों का मालाबार तट पर माही, मद्रास तट पर कारीकल और पाण्डीचेरी तथा बंगाल में चन्द्रनगर की बस्ती पर कब्जा हो गया।

मार्टिन के जाने के बाद किस्मत ने फ्रांस का साथ न दिया। १७१४ में उनकी सूरत की कोठी बन्द हो गई। योरोप में युद्ध का पासा उनके विपरीत पलट गया। सब जगह अंग्रेजों का दबदबा छाने लगा। फ्रांसीसियों ने अपने योग्य सेनापति डूप्ले के अधीन (१७४१–५१) अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने की चेष्टा की। डूप्ले के मुकाबले में अंग्रेजों को भी क्लाइव के रूप में एक योग्य प्रशासक मिला था। इस आपसी संघर्ष में फ्रांसीसी पिछड़ गए। उन्होंने अपनी दो एक बस्तियों में ही सन्तोष कर लिया। अंग्रेज कालान्तर में सारे भारत के शासक बन गए। यह कैसे हुआ, इसकी कहानी अगले अध्यायों में पढ़िए।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत के समुद्री मार्ग की खोज सर्वप्रथम किसने की और कैसे?

(२) *भारतीय व्यापार के लिए योरोपियन जातियों के प्रारम्भिक संघर्ष का वर्णन करो।*

(३) अंग्रेज भारत में सर्व प्रथम कब आए? उनकी प्रारम्भिक सफलताओं के बारे में आप क्या जानते हैं?

: २७ :

मराठों का उदय और पतन

सन् १६७४ ई० में रायगढ के किले में छत्रपति वीर शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ। दक्षिण में स्वतंत्र मराठा राज की स्थापना हुई। परन्तु इतिहास की यह महत्वपूर्ण घटना एक दिन में ही नहीं हो गई थी। वीर शिवाजी को इसके लिये लम्बा संघर्ष करना पडा था।

महाराष्ट्र दक्षिण भारत का एक प्रदेश है जो ताप्ति और सतपुडा पहाडियों से गोवा तक और अरब सागर से वर्धा तक फैला हुआ है। इस प्रदेश में रहनेवाले लोग मराठा कहलाते हैं। यह एक पहाडी प्रदेश है। लोगों को जीवन के साधन जुटाने के लिए बडा परिश्रम करना पडता है। मराठे स्वतंत्रता प्रिय लोग हैं। ढाई सौ साल के मुगल राज्य में वीर मराठे प्राय अपनी पहाडियों और दुर्गों पर स्वतन्त्र रहे। मुगलों की साम्राज्य लोलुपता का सामना करने के लिए मराठो को शिवाजी के रूप में एक महान नेता मिला जिसने मुगल सल्तनत की जडो को खोखला कर दिया।

मराठो में देश के लिये मर मिटने की भावना रामदास जैसे सन्तो ने भरी। जनसाधारण 'महाराष्ट्र धर्म' की रक्षा के लिए कटिबद्ध हो गए। जिस तरह प्रारंभ मे मुसलमान इस्लाम के प्रचार की भावनाओ से ओतप्रोत थे, उसी तरह मराठे अब अपने देश, धर्म और स्वतन्त्रता के लिए जान देने को उद्यत थे। मराठो में अदम्य उत्साह था जबकि मुगलों में चारित्रिक दुर्बलता आ चुकी थी। इसलिए आश्चर्य नहीं कि थोडे ही समय में मराठा साम्राज्य का झण्डा भारत के कोने कोने में फहराने लगा।

शिवाजी

मराठा जाति के प्रवर्त्तक शिवाजी महाराज शाहू जी भोसले के पुत्र थे। शाहूजी बीजापुर के सुलतान के पास नौकरी करते थे। उनकी माता का नाम जीजाबाई था। शिवाजी के जीवन में जो भी महान परिवर्तन आए उनका एकमात्र श्रेय जीजाबाई को ही है। किसी पारिवारिक तनाव के कारण जीजाबाई की अपने पति से अनबन रहती थी। शिवाजी पर शाहूजी भोसले का संस्कार नाममात्र को ही पडा। शिवाजी पर समस्त छत्रछाया उनकी माता की ही रही। माता से भारतीय वीरो की कहानियां सुनकर शिवाजी के मन में वीरता और राष्ट्र प्रेम के भाव पैदा हुए। अपने गुरु दादाजी कोणदेव से जहा उन्होंने अस्त्र-शस्त्र की विद्या सीखी वहा भारतीय संस्कृति का प्रबल अस्त्र भी धारण किया। सौभाग्य से समर्थ रामदास ऐसे व्यक्ति थे जो

जाति पाति को दूर कर समस्त महाराष्ट्र में एकता का स्वप्न देख रहे थे। गुरु की इस इच्छा को शिवाजी ने अपने अन्तिम समय तक पूरा किया।

प्रारम्भिक जीवन—प्रत्येक मनुष्य के बचपन में कुछ न कुछ विशेषताएं होती हैं। शिवाजी की बचपन की क्रीडाएं युद्ध क्रीडाएं थीं। वे नाना प्रकार के किले बना कर उन पर विजय प्राप्त किया करते थे। बचपन की यह क्रीड़ा ही उनके जीवन का अंग बन गई। १६४० में शिवाजी ने अपनी विजय यात्रा प्रारम्भ की। १६५६ तक शिवाजी ने महाराष्ट्र के बहुत से दुर्गों पर अधिकार कर लिया। १६५७ में उनकी टक्कर बीजापुर के सुलतान से हुई।

अफजल खां और शिवाजी—बीजापुर के सुलतान ने अपने प्रमुख सेनापति अफजल खा को शिवाजी की शक्ति को कुचलने के लिये भेजा। अफजलखा ने भरे दरबार में डींग हांकी कि वह शिवाजी को जंजीरों में बांध कर लाएगा। उसने प्रथम मावल प्रदेश के देशमुख को तथा उन अधिकारियों को जो शिवाजी के पक्ष में थे अपने साथ मिलाना चाहा किन्तु वह विफल रहा। महाराष्ट्र प्रदेश की भौगोलिक परिस्थितियों और शिवाजी की नैतिक शक्ति का परिचय पाकर अफजलखा ने छल-कपट से शिवाजी को मारने की सोची। उसने कृष्णाजी भास्कर को शिवाजी के पास भेजा और शिवाजी तथा बीजापुर सुल्तान के बीच में संधि कराने की योजना बनाई। विचार-विमर्श के पश्चात् एक स्थान पर शिवाजी और अफजलखा मिले। शिवाजी ने चलते समय अपने हाथ में बाघनख छिपा लिया था और समस्त शरीर को लोहे के कवच से ढ़ंक लिया था। जब दोनों में भेंट हुई तो अफजल खा ने एक हाथ से अपनी तलवार शिवाजी के उदर में भोंकनी चाही। किन्तु शिवाजी अधिक चतुर थे, इसने पहले कि अफजल खा कुछ करे शिवाजी ने बाघनख से अफजलखा को खत्म कर दिया। अफजल खा के मरते ही मराठा सैनिक चारों ओर से बीजापुर की सेना पर टूट पड़े।

शिवाजी और मुगल

शिवाजी की दक्षिण में शक्ति दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही थी। मुगल सम्राट औरंगजेब को इससे चिन्ता हुई। उसने अपने मामा शाइस्तखा को दक्षिण का सूबेदार बनाकर आदेश दिया कि वह हर कीमत पर शिवाजी को पकड़ कर लाए।

शाइस्तखा पूना में खेमे लगाए पड़ा था। तत्कालीन अंग्रेजों के अनुसार शिवाजी को ईश्वरीय प्रेरणा हुई। ५ अप्रैल, १६६३ ई० को आधी रात के समय ४०० चुने हुए सिपाहियों को लेकर शिवाजी ने मुगल कैंप पर छापा मारा। शाइस्तखा और उसके साथी भाग निकले। शाइस्तखा ने इस हार को इतना बड़ा अपमान समझा कि वह अपना मुंह दिखाने भी औरंगजेब के पास दिल्ली नहीं गया।

जयसिंह से टक्कर—औरंगजेब शिवाजी की कार्यवाही से दिन प्रतिदिन चिंतित रहने लगा। उसने अपने सबसे योग्य सरदार मिर्जा जयसिंह को शिवाजी के मुकाबले के लिये भेजा। मिर्जा जयसिंह की वीरता के बारे में विख्यात था कि वह कभी भी पराजित नहीं हुआ था। जयसिंह ४ लाख सेना लेकर दक्षिण आया। सर्व प्रथम मिर्जा जयसिंह ने १६६५ ई० में नर्मदा नदी के किनारे अपना डेरा डाला और आसपास के राजाओं को अपने पक्ष में कर लिया। तदोपरान्त जयसिंह ने शिवाजी के किले पुरन्दर को घेर लिया। समस्त मराठे

किले में बन्द हो गए। अन्त में शिवाजी ने मुगलों से सधि करने की योजना बनाई। दोनों पक्षों में सधि हुई। सधि के साथ ही साथ शिवाजी को आगरा चलने का निमन्त्रण दिया गया। जयसिंह चाहता था कि शिवाजी को आगरे ले जाकर सम्राट से सम्मान दिलाया जाए और इस तरह चिरकाल से चलती हुई लड़ाई मैत्री में बदल दी जाए। किन्तु औरगजेब कूटनीतिज्ञ और छली था। बादशाह ने शिवाजी को अपने पुत्र सहित आगरा के किले में नजरबन्द कर दिया। कैद होने पर भी शिवाजी अपने मस्तिष्क में स्वाधीन होने की योजनाए बराबर बनाते रहे। आपने बीमारी का बहाना बना कर अपने यहा से बड़े बड़े टोकरों में मिठाई बाटनी प्रारभ की। एक दिन वे स्वय भी मिठाई के एक टोकरे में छिप कर बाहर निकल आए। आगरे से कुछ दूर जाकर वे सन्यासी वेष में समस्त भारत का भ्रमण करते हुए दक्षिण पहुचे। महाराष्ट्र में पहुच कर शिवाजी ने अपने छिने हुए दुर्गों को पुन वापस ले लिया। औरगजेब से रुष्ट कुछ मुसलमान सैनिकों को भी शिवाजी ने अपनी सेना में भर्ती किया। १६७० तक दक्षिण का बहुत सा भाग शिवाजी के अधिकार में आ गया था।

शिवाजी : राजा के रूप में—सन् १६७४ के अन्त तक प्राय समस्त महाराष्ट्र पर शिवाजी का अधिकार हो गया था। यहा के हिन्दू इन्हें अपना नेता समझते थे। १६ जून १६७४ को शिवाजी का हिन्दू परम्परा से राज्याभिषेक हुआ। उन्होंने छत्रपति गौ-ब्राह्मण प्रतिपालक की उपाधि ग्रहण की। मराठा सरदार शिवाजी ६ वर्षों तक सम्राट के रूप में रहे। अपने राज्यकाल में उन्होंने अच्छी राज्य से व्यवस्था स्थापित की। राज्याभिषेक के कारण शिवाजी का बहुत सा राजकोष खाली हो गया था। वे धनाभाव अनुभव करते थे। सन् १६८० के प्रारम्भ में वह रुग्ण हो गए और फिर वे असाध्य रोग से नहीं बच सके।

शिवाजी व्यवस्थापक के रूप में—यद्यपि शिवाजी एक निरकुश राजा थे फिर भी उन्होंने परामर्श के लिए आठ मन्त्रियों की एक ससद सभा बनाई जिसका नाम अष्ट प्रधान रखा गया। राज्य का प्रधान मन्त्री, राज्य का मुख्य हिसाब किताब निरीक्षक मन्त्री, शासन व्यवस्था का सुपरिन्टेन्डेण्ट, विदेश मत्री, सेनापति तथा धार्मिक विभाग के अध्यक्ष तथा न्यायाधीश इसके सदस्य थे। प्रत्येक सदस्य के सुझाव पर भलीभाति विचार करने पर बहुमत से जो निर्णय होता उसको ही अन्तिम निर्णय समझा जाता था। शिवाजी ने अष्ट प्रधान की व्यवस्था साथ-साथ सेना के सघठन की भी उचित प्रबन्ध किया। शिवाजी की सेना में घुडसवार और पैदल दोनो ही प्रकार के सिपाही थे। सेना में कडा अनुशासन था। शिवाजी के राज्य में दो प्रकार के प्रदेश थे—स्वराज्य और मुगलई। स्वराज्य सीधे शिवाजी के अधीन थे और मुगलई मुगलो के अधीन। मुगलाई प्रदेशों से शिवाजी चौथ वसूल करते थे। शिवाजी ने जागीरदारी खत्म कर दी। किसानो से शिवाजी के अफसर स्वय लगान वसूल करते थे।

शिवाजी का चरित्र—कुछ इतिहासकार शिवाजी को लुटेरा, पहाडी चूहा और महान छलछन्दी कहते हैं। इसके पक्ष में अफजल खा के वध का उदाहरण दिया जाता है। परन्तु जब हम शिवाजी के चरित्र का अध्ययन करते हैं तो ये बातें सर्वथा निर्मूल प्रतीत होती हैं।

यद्यपि शिवाजी हिन्दू धर्म के कट्टर अनुयायी थे किन्तु उन्होंने कभी भी मुसलमानों या अन्य धर्मों के माननेवालों पर अत्याचार नहीं किया। उन्होंने हिन्दू मन्दिरों को वृत्तिया दी परन्तु उसके साथ मुसलमान फकीरों को भी दान दिया। लूट के समय कभी भी कुरान की प्रति का अनादर नहीं किया और न ही मराठा

सेना को आदेश था कि वह किसी भी मुसलमान स्त्री से अनुचित व्यवहार करे। शिवाजी के दरबार में स्त्रियों के दो ही स्थान थे—मां और बेटी के। शिवाजी की उदारता को मुगल इतिहासकार खफी ने भी माना है। शिवाजी का निजी सचिव एक मुसलमान था। उनकी नौ सेना के दो सेनापति मुसलमान थे। एक मुसलमान फकीर बाबा यकूत का आप बड़ा आदर करते थे।

शिवाजी ने अपने राज्य को सुरक्षित करने के लिए समुद्री बेड़े की भी स्थापना की। १६८० में अंग्रेजों और डचों की मिली जुली सेना को एक समुद्री लड़ाई में परास्त किया। राजनीतिक योग्यता में मुगलों में शिवाजी जैसे बहुत कम अवसर मिलते हैं। अफजलखां और शाइस्तखां जैसे सेनापतियों पर विजय प्राप्त करना शिवाजी का ही काम था। इतिहासकार यदुनाथ सरकार ने शिवाजी के लिए लिखा है :—शिवाजी मध्यकाल का एक महान निर्माता प्रिय तथा कल्याणप्रिय शासक था। रणजीत सिंह तथा माधोजी सिन्धिया के विपरीत शिवाजी ने केवल शासन-व्यवस्था की ही स्थापना नहीं की, वरन् किसी भी विदेशी सहायता के बिना एक शक्ति-सम्पन्न जाति का निर्माण भी किया। इसके साथ ही उन्होंने अपनी प्रजा के हित के लिए बहुत कार्य किया। वह नागरिक तथा सैनिक अधिकारियों पर पूरा नियन्त्रण और अनुशासन रखते थे और शासन-व्यवस्था के प्रत्येक विवरण का व्यक्तिगत रूप से निरीक्षण करते थे।

आधुनिक काल में किसी भी हिन्दू ने इतनी योग्यता नहीं दिखाई। फिर शिवाजी का कार्य उनकी मृत्यु के साथ ही समाप्त नहीं हो गया था। वरन् जो चेतना उन्होंने मराठों में डाल दी थी वह उनके बहुत देर बाद तक जीवित रही और उसने मराठों को अठारहवीं शताब्दी में एक अजेय शक्ति बना दिया।

शिवाजी के उत्तराधिकारी

शम्भूजी (१६८०–८९)—शिवाजी की मृत्यु के पश्चात् उनका सबसे बड़ा पुत्र शम्भूजी गद्दी पर बैठा। उसमें शिवाजी जैसी सैनिक प्रतिभा नहीं थी। उसका अधिकांश जीवन रागरंगलिया मनाने में ही व्यतीत होता था। यद्यपि शम्भूजी के सामने कई ऐसे अवसर आए जब वे अपने राज्य का विस्तार कर सकते थे किन्तु शम्भूजी ने वे अवसर खो दिए। शम्भूजी अपनी चरित्रहीनता के कारण प्रजा के हृदय को अपने पिता की भांति नहीं जीत सके। शिवाजी के विश्वासपात्र सरदारों ने भी उसका साथ नहीं दिया।

औरंगजेब ने बिना किसी प्रयास के बहुत से मराठा दुर्गों को अपने अधिकार में कर लिया। शम्भूजी को गिरफ्तार करके औरंगजेब के सम्मुख लाया गया। औरंगजेब के दरबार में पहुंच कर शम्भूजी के हृदय में अपने पिता की प्रवृत्तियां जागृत हुईं। उन्होंने भरे दरबार में बादशाह का तिरस्कार किया। औरंगजेब ने निर्दयता से उसका वध करवा दिया। उनका शरीर टुकड़े-टुकड़े करके पहले तो बाजारों में घुमाया गया और फिर कुत्तों को खिला दिया गया। शम्भूजी की विधवा पत्नी और बालक पुत्र को गिरफ्तार करके औरंगजेब ने अपने पास आदर के साथ रखा। इस बालक का नाम शाहूजी रखा।

राजाराम (१६८९–१७००)—शम्भूजी की गिरफ्तारी के पश्चात् उनके छोटे भाई राजाराम सम्राट बने। वे भी अपने भाई के समान थे। औरंगजेब के आक्रमणों के सामने राजाराम भाग कर महाराष्ट्र चले गए।

१६९८ में उन्होंने कुछ मराठा सरदारों के साथ सितारा को अपनी राजधानी बनाया। १७०० में राजाराम अचानक बीमार पड गए और उनकी मृत्यु हो गई।

ताराबाई (१७००–१७०७)—राजाराम की मृत्यु के पश्चात् उनकी विधवा पत्नी मराठा संघ की शासिका बनी। उसने अपने पुत्र शिवाजी द्वितीय, जिसकी अवस्था ४ वर्ष की थी, को गद्दी पर बिठाया। राज का भार अपने ऊपर ले लिया। ताराबाई भारतीय इतिहास में एक योग्य वीरांगना के नाम से स्मरण की जाती रहेगी। उसने मुगलों से युद्ध जारी रखा और मराठा संघ का काफी प्रसार किया। १७०७ में ताराबाई तथा औरंगजेब दोनों की मृत्यु हो गई। इस प्रकार मुगलों और मराठों का संघर्ष भी प्रायः समाप्त सा हो गया।

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् बादशाह ने शम्भू जी के पुत्र शाहूजी को छोड दिया। शाहूजी के आने पर मराठा सरदारों में फूट पड गई। अन्त में शाहूजी की जीत हुई। मुगल दरबार में रहने के कारण शाहूजी विलासप्रिय हो गया था। उसने राजकाज का सारा काम अपने पेशवा बालाजी विश्वनाथ को सौंप दिया। स्वयं वह नाम मात्र का ही राजा रह गया।

१७१४ से १८०० तक भारत में पेशवा राज रहा। प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने दक्षिण में मराठों का दबदबा बैठाने का प्रयत्न किया और समस्त महाराष्ट्र ने शाहू को राजा माना। ६ वर्षों में बालाजी विश्वनाथ ने मराठों की बिखरी हुई शक्ति को संगठित कर लिया और पुनः मराठों में वीरता के भाव संचारित कर मराठा राज्य की स्थापना की। सन् १७२० में शाहू जी ने बालाजी विश्वनाथ की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र बाजीराव को अपना पेशवा नियुक्त किया। उस समय उनकी आयु केवल २० वर्ष की थी।

बाजीराव प्रथम

बाजीराव प्रथम—पेशवा बाजीराव उच्च कोटि के शासक थे। उन्होंने शाहू से कहा कि मुगल राज्य की जडों पर चोट करो। शाखाएं अपने आप गिर जाएगी। यदि आप मेरी बात मान लें तो मैं मराठों का झण्डा अटक तक गाड दूंगा। शाहूजी ने अनुमति दे दी और उन्होंने दिल्ली पर आक्रमण किया। दक्षिण से निजाम हैदराबाद मुगल सम्राट की सहायता को आया किन्तु वह भी भोपाल में घिर गया और हार गया। चंबल तथा नर्मदा के मध्य का इलाका मराठों को मिला।

कई मराठा सरदार बडे बलशाली हो रहे थे। डर था कि कहीं ये लोग शाहू के विरुद्ध न हो जाय। अतः पेशवा ने मुगलों से जीता हुआ इलाका इन सरदारों में बांट दिया। बाजीराव के इस कार्य से सुव्यवस्था का परिचय मिलता है। इस प्रकार सब मराठा सरदार पेशवा के झण्डे के नीचे आ गए।

सन् १७४० में इस वीर पेशवा की मृत्यु हो गई। बाजीराव की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र बालाजी बाजीराव को पेशवा नियुक्त किया गया। उन्होंने २१ वर्ष तक (१७४०–६१) तक पेशवाई की। १७४८ में शाहू की मृत्यु के पश्चात् पेशवा ही मराठा संघ के सम्राट माने गए।

इनके शासन काल में मराठा राज्य की बहुत उन्नति हुई। १७५१ में मराठों ने बंगाल के नवाब से कटक छीना, १७५५ में गुजरात पर आक्रमण किया। हैदराबाद का निजाम भी उन्हें चौथ देता था। सन् १७५७ में बालाजी बाजीराव ने दिल्ली पर भी अपनी शासन पताका फहरा दी। १७५८ में वे अपने मुख्य सरदारों को लेकर पंजाब की ओर बढ़े। मराठों ने पंजाब से अफगान बादशाह अहमद शाह अब्दाली के गवर्नर तैमूर शाह और उसकी सेना को भगा दिया। इस प्रकार १७५८ तक अफगानिस्तान की सीमा तक मराठों का झंडा फहराने लगा।

पानीपत की तीसरी लड़ाई—मराठों की इस विजय से अहमद शाह अब्दाली चिढ़ गया था। उसने १७५९ में एक विशाल सेना के साथ पंजाब पर आक्रमण किया। लाहौर से मराठों को भगा दिया गया। वहां से बढ़ता हुआ वह दिल्ली पहुँचा। दिल्ली से भी मराठों को भागना पड़ा। अब्दाली थक चुका था। यदि मराठे उसी समय फिर हमला कर देते तो अहमदशाह मराठों को पराजित करने में असमर्थ रहता। परन्तु अब्दाली को दम लेने का काफी समय मिल गया। पेशवा ने अपने चचेरे भाई सदाशिवराव भाऊ और पुत्र विश्वास राव के नेतृत्व में अब्दाली को खदेड़ने के लिए फौज भेजी। अपने सेनापतियों को पेशवा का कड़ा आदेश था, "तुम्हें शत्रु को तबाह करके सिन्धु नदी तक के प्रदेश पर कब्जा करना है।" परन्तु ईश्वर को कुछ और मंजूर था। सदाशिव ने दिल्ली पर पुनः कब्जा कर लिया। परन्तु अपने अहं में सदाशिव राव ने मराठों की परम्परागत गुरीला लड़ाई की प्रणाली को त्याग कर खुले मैदान में लड़ने का निश्चय किया। यह एक घातक फैसला था।

पानीपत के मैदान में अहमदशाह अब्दाली तथा मराठों की सेनाएं डट गईं। १४ जनवरी १७६१ को घमासान युद्ध हुआ। तीसरे पहर तक मराठों का पलड़ा भारी रहा। अचानक तोप का एक गोला विश्वास-राव को लगा और वह मारा गया। यह देख कर मराठा सैनिक भाग खड़े हुए। पानीपत के युद्ध में ७५ हजार मराठे सैनिक काम आए। दक्षिण से पेशवा स्वयं अपने भाई की सहायता के लिए आ रहे थे। किन्तु जब उनको चम्बल में पराजय का समाचार मिला, तो वह इस कठोर आघात को सहन न कर सका। १७६१ में इसी दुख से उनकी मृत्यु हो गई। इस युद्ध में बेहतरीन मराठे युवक काम आए। कहते हैं महाराष्ट्र में कोई ऐसा परिवार नहीं था जिसका कोई न कोई सदस्य इस युद्ध में काम न आया हो। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इस युद्ध का विशेष महत्व है।

पानीपत की इस लड़ाई से मराठा राज्य की जड़ें खोखली हो गईं। बलशाली सरदार अपने को स्वतंत्र मान बैठे और विशाल मराठा साम्राज्य छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित होकर नष्ट होने लगा। मराठों की फूट से शत्रुओं ने पूरा फायदा उठाया और मैसूर में हैदरअली तथा कर्नाटक और बंगाल में अंग्रेज अपनी शक्ति को सुदृढ़ करने लगे।

माधवराव प्रथम—१७६१ में पेशवा बालाजी का प्रतिभाशाली पुत्र माधवराव गद्दी पर बैठा। चूंकि वह नाबालिग था इसलिए उसका चाचा रघुनाथराव उसका संरक्षक बना। रघुनाथराव चरित्रहीन व्यक्ति था। वह सारी शक्ति अपने हाथ में केन्द्रित करना चाहता था। इसलिए माधवराव ने उसे अलग कर दिया। रघुनाथराव हैदराबाद के निजाम से षड्यन्त्र करने लगा। आपसी फूट का लाभ उठाने के लिए १७६२ में हैदराबाद के निजामअली ने मराठा राज्य पर चढ़ाई कर दी। पेशवा माधवराव ने निजाम को बुरी तरह हराया। तत्पश्चात् माधवराव ने सब अधिकार हाथ में लेकर

पेशवा माधवराव

पेशवा दरबार

योग्य अधिकारी नियुक्त किए। इनमें बालाजी जनार्दन (नाना फड़नवीस) और महादाजी सिन्धिया मराठा इतिहास में बहुत प्रसिद्ध हैं। माधवजी ने मैसूर के नवाब हैदरअली को दो बार हराया।

सन् १७६९ में पेशवा की सेना ने होल्कर और सिन्धिया के साथ दिल्ली पर कब्जा करके मुगल बादशाह को अपने संरक्षण में ले लिया। इस प्रकार पानीपत के कलंक का बदला ले लिया गया। उन्होंने राजपूतों, जाटों, तथा रोहिलों से चौथ वसूल की। सन् १७७२ में माधवराव की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के साथ ही मराठा शक्ति का भी सूर्यास्त होने लगा। एक अंग्रेज इतिहासकार ने लिखा है, "मराठा साम्राज्य के लिए पानीपत के मैदान इतने घातक नहीं थे जितने इस महान शासक (माधवराव) की अकाल मृत्यु।"
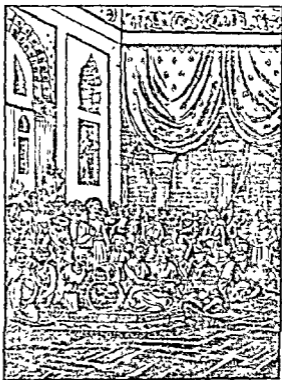
माधवराव की मृत्यु के उपरान्त माधवराव के छोटे भाई नारायणराव पेशवा बने। परन्तु चाचा

रघुनाथ ने षड्यन्त्र द्वारा नौ मास के बाद ही उसे मरवा दिया। तब वह स्वयं पेशवा बना। महाराष्ट्र की जनता उसके विरुद्ध थी। नारायणराव की पत्नी उसके पति की मृत्यु के समय गर्भवती थी। १७७६ में उसने एक पुत्र को जन्म दिया। जब उस बालक की आयु ४० दिन की थी तो नाना फड़नवीस ने उसे पेशवा घोषित कर दिया। नवजात शिशु का नाम सवाई माधवराव रखा गया।

रघुनाथराव अंग्रेजों के पास गया और उसने कहा कि यदि वे उसे पेशवा बनवा दें तो वह उनको बहुत-सा इलाका दे देगा। अंग्रेज ऐसा मौका कब छोड़नेवाले थे। सवाई माधवराव के शासनकाल की मुख्य घटना १७९५ में मराठों के हाथों निजाम की करारी हार थी। परन्तु मराठों की यह जीत उनकी अन्तिम जीत सिद्ध हुई। कुछ समय बाद सवाई माधवराव अचानक छत से गिर कर मर गया। उसके मरते ही समस्त मराठा संघ में गड़बड़ी मच गई।

सवाई माधवराव की मृत्यु के बाद देशद्रोही रघुनाथराव का नालायक पुत्र बाजीराव द्वितीय के नाम से पेशवा बना। सन् १८०० में नाना फड़नवीस की मृत्यु हो गई और नाना फड़नवीस की मृत्यु के पश्चात् मराठा संघ छोटे-छोटे टुकड़ों में बट गया। अन्त में मराठा साम्राज्य कैसे खत्म हुआ उसका उल्लेख हम भारत में अंग्रेजी राज्य के विस्तार के अध्याय में करेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) मराठा शक्ति का उदय कैसे हुआ? मराठों की सफलता के क्या कारण थे?

(२) छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र लिखो? उन्होंने किस प्रकार स्वतन्त्र मराठा राज स्थापित किया।

(३) मराठा राज्य के उदय तथा पतन की कहानी १००० शब्दों में लिखो।

(४) पानीपत की तीसरी लड़ाई का हाल लिखो? इसमें मराठों की पराजय क्यों हुई?

(५) एक शासक के रूप में शिवाजी का चरित्र लिखो?

(६) पेशवा कौन थे? उनका राज्य कैसे स्थापित हुआ? पेशवाओं ने किस प्रकार मराठा राज्य का विस्तार किया?

(७) मराठा शक्ति के पतन के क्या कारण थे?

(८) मराठों के प्रमुख पेशवाओं के नाम बताओ, उन्होंने क्या-क्या सफलताएं प्राप्त कीं?

: २८ :

सिख

भारत में मुगल साम्राज्य के पतन का एक मुख्य कारण पंजाब में सिखों का उदय और दक्षिण में मराठा शक्ति का संघठन था। मुगल अत्याचारों के विरुद्ध जिन लोगों ने आवाज उठाई उनमें सिख सबसे ज्यादा क्रियाशील थे।

भारतीय इतिहास के मध्यकाल में जिन धार्मिक प्रवृत्तियों ने जन्म लिया और अपनी चरम सीमा तक पहुंची, सिख धारा उनमें प्रमुख है। प्रारंभ में सिख धारा एक विशुद्ध सांस्कृतिक आंदोलन था। सिखों के दस गुरुओं में से प्रथम छ: ने शांतिमय ढंग से धर्म प्रचार किया परन्तु कालान्तर में मुगल अत्याचारों ने सिख गुरुओं को आततायी मुगल सत्ता के विरुद्ध शस्त्र उठाने पर विवश कर दिया।

गुरु नानक—सिख धर्म के महान प्रवर्तक गुरु नानकदेव जी का जन्म सन् १४६९ ई० में पश्चिमी पाकिस्तान के जिला शेखुपुरा के एक छोटे से नगर तलवंडी में हुआ था। बाद में यह स्थान उनके नाम पर "ननकाना साहिब" के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आपकी माता का नाम तृप्ति और पिता का नाम कालू था। "होनहार बिरवा के होत चिकने पात" वाली कहावत आप पर चरितार्थ होती है। बाल्यावस्था के लक्षणों को देख कर ही उनके बारे में कहा जाने लगा था कि आप या तो चक्रवर्ती राजा होंगे या सन्यासी, किन्तु दूसरी बात सत्य निकली। बचपन से ही उनका मन किसी सांसारिक काम में नहीं लगता था। सांसारिक बन्धनों में बांधने के लिए उनके पिता ने उनका विवाह १४ वर्ष की आयु में कर दिया था। कुछ वर्ष तो नानक ने साधारण गृहस्थ की भांति जीवन बिताया परन्तु देर तक उन्हें इन बंधनों में ही बाधा न जा सका।

सन् १४९४ ई० में गुरु जी सुलतानपुर में वालीबेई नामक नदी पर स्नान कर रहे थे। वहीं पर उन्हें ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त हुआ। इस प्रकार उनके जीवन में एक महान परिवर्तन आया। उनका अधिकांश समय एकांत में व्यतीत होने लगा। गुरुजी हिन्दुओं और मुसलमानों में भ्रातृत्व की भावना फैलाना चाहते थे। वे कहते थे, कि "न कोई हिन्दू है न कोई मुसलमान—सब लोग मनुष्य हैं। प्रत्येक मनुष्य ईश्वर का निवास अपने हृदय में समझे और उसी में ईश्वर को देखे। हिन्दू और मुसलमान के नाम पर व्यर्थ में ही झगड़ा न करें। ऐसा करने से ही वास्तविक आनन्द की प्राप्ति हो सकती है।"

जब लोगों ने गुरुनानक की ऐसी बातें सुनी तो वे समझे कि नानक दिवाना हो गया है। उनकी दिवानगी को दूर करने के लिए जादूगर, वैद्य और हकीम बुलाए गए। कुछ दिनों के पश्चात् गुरु नानक सच्चे सन्यासी बन कर यात्रा के लिए चल पड़े। गुरु नानक ने पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण, हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध तथा सभी मतावलंबियों के तीर्थ स्थानों की यात्रा की। कहते हैं कि वे मक्का, मदीने और बगदाद भी गए थे। गुरु नानक ने बहुत समय तक करतारपुर में निवास किया। अन्तिम समय में उन्होंने अपना सन्यासी जीवन बदल कर सांसारिक जीवन को पुनः प्रारम्भ किया। उस समय उन्होंने अपनी पत्नी और बच्चों को भी बुला लिया। अपने जीवन के अन्तिम १० वर्षों में आपने धर्मप्रचार का कार्य किया। जब बाबर ने भारत पर आक्रमण किया तो गुरु जी जीवित थे।

गुरु नानक ने अन्तिम समय से पूर्व अपने उत्तराधिकारी का निर्णय स्वयं कर दिया था। उन्होंने अपने बेटों तथा शिष्यों की परीक्षा ली। उस परीक्षा में भाई लहना सिंह खरे उतरे। वही १५३८ ई० में गुरुजी के देहान्त के पश्चात् गुरु अंगद के नाम से गुरु बने।

गुरु नानक

गुरु अंगद (१५३८-५२)—आपका नाम भाई लहना था। प्रारंभ में आप दुर्गा के बड़े कट्टर भक्त थे। गुरु नानक का शिष्य बनने के पश्चात् आपने गुरु की बड़ी सेवा की और इसी कारण गुरु ने आपको गद्दी प्रदान की, अपने पुत्रों को नहीं। आपने गुरुमुखी लिपि का प्रचार किया। लंगर की प्रथा जारी की। १४ वर्ष तक आप सिख धर्म की सेवा करते रहे। सन् १५५२ में आपकी मृत्यु हुई। मृत्यु के पश्चात् आपके उत्तराधिकारी अमरदास गुरु बने।

गुरु अमरदास (१५५२-७४)—आपका जन्म १४७९ को हुआ था। आप सिख धर्म की दीक्षा लेने से पूर्व कट्टर वैष्णव थे। गुरु अंगद की पुत्री बीबी अमरो से आपने सिख धर्म की दीक्षा ली थी। आपने श्रद्धा और प्रेम के साथ गुरु अंगद की बड़ी सेवा की। गुरु अंगद के देहावसान के पश्चात् आपको

गद्दी मिली। इसी समय गुरुनानक के दोनों पुत्रो ने अपने अधिकार के लिये संघर्ष किया किन्तु सफलता अमरदास को प्राप्त हुई।

गुरु रामदास (१५७४-८१)—गुरु अमरदास ने अपने उत्तराधिकारी रामदासजी को अपनी मृत्यु के पश्चात् गद्दी पर बैठने के लिये नियुक्त किया था। ये सोढी वंशीय क्षत्री थे। गुरु आपके शील स्वभाव से बहुत ही प्रभावित हुए थे और उन्होने अपनी छोटी बेटी का विवाह आपसे कर दिया था। आप ७ वर्ष तक गुरु की गद्दी पर आसीन रहे। आपने सम्राट अकबर से बहुत ही कम मूल्य पर जमीन लेकर एक नए नगर रामदासपुर की नीव डाली जिसे आज कल अमृतसर कहते हैं।
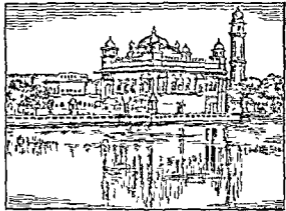
स्वर्ण मन्दिर अमृतसर

गुरु अर्जुनदेव (१५८१-१६०६) गुरु रामदास ने अपने दोनो बडे पुत्रों—पृथ्वीचन्द्र और महादेव को छोड कर सबसे छोटे पुत्र अर्जुन देव को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। गुरु के पद पर अपने पच्चीस वर्षीय कार्यकाल में गुरु अर्जुनदेव ने सिख धर्म के लिए चार मुख्य कार्य किए :—(१) अमृतसर नगर, अमृतसर सरोवर, सन्तोपसर और हरि मन्दिर को पूरा किया, (२) तरनतारन और करतारपुर नगरो की नीव रखी, (३) सिखो के धर्म-ग्रन्थ गुरु ग्रन्थसाहब का सम्पादन किया, और (४) सिखों को आज्ञा दी कि वे अपनी आमदनी का १० वा भाग दान के लिए दें।

जहांगीर सकुचित हृदय व्यक्ति था। उसे सिख धर्म की लोकप्रियता नही भाई। जैसा कि उसने अपनी पुस्तक 'तजके जहांगीरी' में स्वीकार किया है—उसे सिख गुरुओ का यह कार्य एक धार्मिक दूकान के रूप में दिखाई दिया। उसके शब्दो में सिखो की दूकान तीन-चार पीढ़ियों से काफी गर्म चल रही थी। इसलिए उसने इस दूकान को बन्द करने का उपाय सोचा।

गुरु अर्जुनदेव ने जहांगीर के पुत्र खुसरो को आशीर्वाद दिया था। कुछ लोगो का विचार है उसको आर्थिक सहायता भी दी थी। इस कारण जहांगीर अर्जुनदेव से रुष्ट था। अत उसने गुरु अर्जुनदेव को सजा देने का निश्चय किया। उन पर जुर्माना कर दिया गया और जुर्माने के साथ यह भी आज्ञा दी कि वे गुरुग्रन्थ साहब से वह अंश निकाल दें जो हिन्दुओ और मुसलमानो के धर्म के विरुद्ध थे। गुरु अर्जुनदेव ने जहांगीर की एक भी बात नही मानी जिसके कारण जहांगीर ने क्रुद्ध होकर गुरु अर्जुनदेव की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली और मुरतजा खाँ को आदेश दिया कि वह गुरु अर्जुनदेव को सता-सता कर मार डालें। कहते हैं कि गुरुजी के शरीर

को अग्नि में तपती हुई रेत पर डाला गया। उन्हें तपते हुए लोहे और खौलते हुए पानी में डाला गया। जिस समय उन्हें इस प्रकार सताया जा रहा था तो उन्होंने अपने कातिलों से रावी में स्नान करने के लिये अवकाश मांगा और वहीं पर आपने जलसमाधि ले ली। यह ३० मई १६०६ की घटना है।

गुरु हरगोविन्द सिंह (१६०६-१६४५)—बलिदान के समय अर्जुनदेवजी ने अपने पुत्र तथा शिष्यों को आदेश दिया कि वे शस्त्र धारण करके मुगलों के विरुद्ध संघर्ष करें। परिणामस्वरूप सप्तम गुरु हरगोविन्दजी के साथ सिखों में एक नवीन शक्ति का उदय हुआ। आपने नियमित रूप से सच्चा पातशाह की उपाधि धारण की। सिर पर छत्र, चवर दोनों ओर तलवार और बाज आदि राज्य के चिन्हों को धारण किया। फकीरों का बाना त्याग कर सैनिक वेष-भूषा को अपनाया। एक तलवार सामाजिक राज्य का चिन्ह थी और दूसरी आत्मिक राज्य की। सिख उन्हें 'सच्चे पातशाह' कहने लगे।

गुरु हर राय—गुरु हरगोविन्द की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र गुरु हरराय जी गद्दी पर बैठे। आपने पिता गुरु हरगोविन्द की युद्ध नीति को छोड़कर शान्तिमय ढंग से धर्म प्रचार की नीति को अपनाया।

आठवें गुरु हरकृष्ण केवल तीन वर्ष तक ही गद्दी पर बैठे। ९ वर्ष की अवस्था में चेचक के कारण उनकी मृत्यु हो गई।

गुरु तेगबहादुर (१६६४–१६७५)—नवम गुरु तेगबहादुर का जीवन भी शान्ति से व्यतीत नहीं हो सका। मुगल बादशाहों में औरंगजेब सबसे कट्टर मुसलमान था। वह गुरु जी की लोकप्रियता से चिढ़ गया। गुरु तेगबहादुर को औरंगजेब ने दिल्ली बुलाया। दिल्ली आने पर औरंगजेब ने उनका वध करवा दिया।

गुरु गोविन्द सिंह

सिख धर्म में दशम गुरु गोविन्दसिंह को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। जिस समय आपके पिता तेगबहादुर का दिल्ली में बलिदान हुआ, उस समय आपकी अवस्था केवल ९ वर्ष की थी।

आपने सर्वप्रथम वर्तमान हिमाचल प्रदेश के नाहन जिला में पाउटा नामक एक स्थान पर सुन्दर धर्मस्थान बनवाया। यहां पर आपने साहित्यिक रचनाएं कीं। हिन्दी और पंजाबी में कविताएं लिखीं और इसके साथ सिखों में संघर्ष की प्रेरणा भरी।

खालसा पंथ का जन्म

गुरु साहब ने आनन्दपुर में सिखों को एकत्रित किया। केशगढ़ के स्थान पर ८०,००० सिख एकत्रित हुए। एक खेमें में गुरु गोविन्द सिंह ने गर्जना की कि मुझे राष्ट्र के लिए एक जीवित बलिदान चाहिए। प्रथम बलिदान के लिए दयाराम खत्री उठे। दूसरे बलिदान के लिए धर्मदास। इस प्रकार तीसरे और चौथे और पांचवें बलिदान के लिए पांच वीर गुरु की आज्ञा पर अपने को जीवित बलिदान करने के लिए तैयार होकर खेमे में चले गए। बाद में गुरु ने पांचों प्यारों को जनता के सम्मुख उपस्थित करके उन्हें अमृत चखाया। इस प्रकार पांच प्यारों को गुरु ने खालसा की उपाधि प्रदान की और सिखों के स्थान पर सिंह शब्द का प्रयोग किया। उस समय से आजतक सभी अमृतधारी सिख अपने नाम के पीछे सिंह लगाते हैं।

खालसा पंथ में जाति-पांति का भेद समाप्त कर दिया गया। केश काटना, कुट्ठा (खराब मांस)

खाना, परस्त्री गमन आदि बुराइयों को दूर किया। सिखों को ठीक अर्थों में सैनिक बनाने के लिए उन्हें लोहे का कड़ा पहनने, केश बढ़ाने, केशों को कंघे से बांधे रखने, कृपाण बांधने तथा कच्छा पहनने का आदेश दिया। इन्हें सिखों के पांच 'क' कहते है।

गुरु गोविन्द सिंह

पहाड़ी राजा गुरु गोविन्द सिंह की शक्ति से डर रहे थे। इसलिए उन्होंने औरंगजेब से सहायता मांगी। औरंगजेब ने लाहौर और सरहिन्द के शासकों को आज्ञा दी कि वे गुरु गोविन्द सिंह को कुचल दें। सरहिन्द के गवर्नर वजीरखां ने विशाल सेना के साथ आनन्दपुर को घेर लिया। रसद के समस्त साधन काट दिए गए। पहाड़ी राजाओं पर विश्वास कर गुरु साहब ने दुर्ग को खाली कर दिया। दुर्ग खाली कर वे कुछ ही दूर गए थे कि पीछे से मुगल फौज ने हमला किया। इस गड़बड़ी में गुरु साहब की माता और दो बेटे जोरावर और फतह सिंह उनसे पृथक हो गए। सरहिन्द के सूबेदार वजीरखां ने उन दोनों लड़कों को मुसलमान होने के लिए कहा। परन्तु वीर बालकों ने सूबेदार को फटकार दिया। रुष्ट होकर सूबेदार ने दोनों लड़कों को जिन्दा दीवार में चुनवा दिया।

गुरु साहब बड़ी कठिनाई के साथ चमकौर पहुंचे। एक कच्ची गढ़ी में उनके साथ केवल ४० सिख थे। इधर मुगलों ने हमला कर दिया। इस युद्ध में गुरुजी के दो बेटे अजीत सिंह और जुझार सिंह बलिदान हुए। १७०७ में औरंगजेब की मृत्यु हो गई। नए मुगल सम्राट बहादुरशाह और गुरु गोविन्द सिंह में मित्रता हो गई। बहादुरशाह को आपने सैनिक सहायता दी थी। सन् १७०८ ई० में जब बादशाह दक्षिण को गया तो गुरु गोविन्द सिंह को भी अपने साथ ले गया। दक्षिण में नादेर के स्थान (हैदराबाद के समीप) पर एक पठान ने उनके पेट में छुरा भोंक दिया।

गुरु गोविन्दसिंह का चरित्र

भारतीय इतिहास में गुरु गोविन्द सिंह का स्थान बहुत ऊंचा है। उन्होंने अपनी शिक्षा और उदाहरण से पंजाब के सोये हुए हिन्दुओं के मन में वीरता के भाव उत्पन्न किए। उनमें आत्मसम्मान की भावना जागृत की। उन्होंने हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए निरन्तर संघर्ष किया। परन्तु वे मुसलमानों के विरोधी न थे। उन्होंने किसी राज्य प्राप्ति के उद्देश्य से युद्ध नहीं किया। उन्होंने केवल धर्म की रक्षा के लिए तलवार उठाई। वे अन्त तक धार्मिक नेता के रूप में रहे। डा० इन्दुभूषण बनर्जी के शब्दों में "गुरु गोविन्द सिंह एक महान समाज निर्माता थे। उन्होंने एक नवीन जाति को जन्म दिया और भारत के ऐतिहासिक क्षेत्र में नवीन प्रभावोत्पादक

शक्ति को अर्पित किया।" गुरुजी ने व्यक्तिगत गुरु की प्रथा समाप्त करके आदेश दिया कि भविष्य में सिख ग्रंथ साहिब को ही अपना गुरु मानें।

बन्दा बहादुर

नांदेड़ के स्थान पर रहते हुए गुरु गोविन्द सिंह की भेंट माधोदास बैरागी से हुई। गुरु गोविन्द सिंह ने उसे मुगलों के अत्याचारों से परिचित करवाया और बतलाया कि पंजाब में हिन्दुओं पर कैसा कैसा अत्याचार हो रहे हैं। गुरु से प्रभावित होकर माधोदास ने वैराग्य की धूनी में लात मारी और चिमटे को छोड़ कर तलवार पकड़ी। तलवार ने माधोदास बैरागी से बन्दा बन कर पंजाब में आया। यहां वह गोविन्द सिंह के पुत्रों के वधिकों और उन मुसलमान सिपाहियों को नष्ट करने का प्रयत्न करने लगा जिन्होंने सिखों को कष्ट दिया था। सर्वप्रथम साढोरा में युद्ध हुआ। यहां पर मुगलों की हार हुई और बन्दा को विजय मिली।

सरहिन्द की विजय

सरहिन्द के सूबेदार वजीरखां ने गुरु के दोनों पुत्रों को दीवार में चुनवाया था। बन्दा ने हजारों सिखों के साथ सरहिन्द पर चढ़ाई की। वजीरखां बुरी तरह से जख्मी हुआ। उसकी मुस्लिम फौज भाग खड़ी हुई। बन्दा ने सरहिन्द की ईंट से ईंट बजा दी। मुगल सम्राट बहादुरशाह इन उपद्रवों को सहन नहीं कर सका। उसने महाबतशाह और अब्दुस समद खां को बन्दा की गिरफ्तारी के लिए भेजा। इसी बीच सिखों में आपसी मतभेद पैदा हो गए। परस्पर कलह के कारण १७१६ ई० में बादशाह फर्रुखसियर के शासनकाल में बन्दा पकड़ा गया। एक लोहे के बड़े पिंजरे में बन्द करके बन्दा को दिल्ली लाया गया। बन्दा और उसके साथियों को सारे दिल्ली शहर में घुमाया गया। सिखों को ऊंटों की नंगी पीठ पर बांध दिया गया। उनके सिरों पर मैली टोपियां पहनाई गईं। बादशाह के हुक्म से बन्दा के शरीर को लोहे की गर्म सलाखों से बींधा गया और उसकी आंखों को फोड़ दिया गया। उसके बच्चों को उसके सामने कत्ल किया गया। परन्तु इस वीर पुरुष ने आह न भरी।

डा० गंडा सिंह ने बन्दा बहादुर के बारे में लिखा है कि—"बन्दा ने पंजाब के लोगों को विजय द्वारा स्वतन्त्रता का मार्ग दिखाया। वह पहला मनुष्य था जिसने पंजाब में मुगलों के असहिष्णुतापूर्ण शासन को जोरदार धक्का दिया और जिसने सिखों में पंजाब-विजय के लिए सबसे पहले कदम उठाया।"

सिख मिसलें

बन्दा की मृत्यु से समस्त सिख जाति का संगठन छिन्न-भिन्न हो गया। सिखों का कोई भी नेता नहीं रहा। सिखों में दो दल हो गए। तत्वखालसा और बन्दई खालसा। अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण ने सिखों की रही सही शक्ति को भी नष्ट कर दिया। सिख जाति १२ मिस्लों या जत्थों में बंट कर रह गई। बाद में इन्हीं में से एक सुकरचकिया नामक मिस्ल के सामंत रणजीत सिंह ने स्वतन्त्र पंजाब की नींव रखी।

रणजीत सिंह

रणजीत सिंह को 'शेरे पंजाब' के नाम से पुकारा जाता है क्योंकि वह शेर की तरह बहादुर था। उसने प्रत्येक सिख को सचमुच सिंह बना दिया। योरोपियनों की तरह सिख भी अपने कारखानों में तोपें ढालने लगे।

सिखो को योरोपियन अफसरो द्वारा सैनिक शिक्षा दिलवाई गई। रणजीत सिंह में अकबर और शिवाजी दोनो के गुण थे। अफगान और अंग्रेज दोनों ही उसका आदर करते थे। अंग्रेजों ने रणजीत सिंह के साथ 'निरन्तर मैत्री' का समझौता किया।

रणजीत सिंह का जन्म १७८० ई० में गुजरावाला में हुआ था। उसका पिता का नाम महा सिंह था। १२ वर्ष की आयु में ही पिता की मृत्यु हो जाने पर रणजीत सिंह को राज-काज का समस्त भार सम्भालना पडा। वह एक कुशल नेता और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। एक बार जब अफगानिस्तान का बादशाह शाहजमा भारत पर हमला करने के बाद लौट रहा था, उसकी तोपें जेहलम नदी में गिर गई। वह उन्हें निकाल न सका। रणजीत सिंह ने दूरदर्शिता से काम लेते हुए तोपें निकलवा कर शाहजमा के पास भिजवा दी। शाहजमा ने कृतज्ञता अनुभव करते हुए उसे लाहौर का सूबेदार नियुक्त कर दिया और राजा की उपाधि दी। इस समय रणजीत सिंह केवल १९ वर्ष का था। अब उसने अपने पाव पसारने शुरू किये। १८०२ में रणजीत सिंह ने अमृतसर पर कब्जा कर लिया। अगले चार-पाच सालों में उसने सिखो की प्राय सब मिस्लो को अपने अधीन कर लिया। तदोपरान्त रणजीत सिंह सतलुज की ओर बढा। परन्तु अंग्रेज उस इलाके को अपने अधीन समझते थे। उन्होंने रणजीत सिंह को रोका। दूरदर्शी राजा ने भाप लिया कि वह अभी अंग्रेजो की सगठित शक्ति का मुकाबला नहीं कर सकता। अत १८०९ में दोनों में मित्रता की सन्धि हो गई। इस सन्धि के परिणाम-स्वरूप रणजीत सिंह की मृत्यु तक अंग्रेजो के साथ सिखो का सघर्ष टल गया। रणजीत सिंह अनपढ़ था परन्तु बहुत दूरदर्शी था। उसकी दूरदर्शिता की एक कहानी प्रचलित है। कहते हैं उसे भारत का एक नक्शा दिखाया गया जिसमें अंग्रेजी राज में लाल रग भरा था। रणजीत सिंह ने पूछा—"इस लाल रग का क्या अर्थ है।" जब उसे बताया गया कि यह रग अंग्रेजी राज का सूचक है तो उसने कहा—"सब लाल हो जायेगा।" उसकी यह भविष्यवाणी सत्य निकली।

रणजीत सिंह

रणजीत सिंह जैसा शक्तिशाली राजा शान्त तो बैठ नहीं सकता था। उसने अपनी विजय-यात्रा का रुख पश्चिम की ओर मोड दिया। १८१८ में उसने अफगानो से मुल्तान छीना। १८१९ में काश्मीर पर कब्जा किया। बन्नू, डेराजात और पेशावर पर भी अधिकार कर लिया। रणजीत सिंह के वीर सेनापति हरि सिंह नलुवा ने अफगानो के विरुद्ध लडाइयों में बड़ा यश कमाया। उसने सिख राज्य के झण्डे खैबर के दर्रे तक गाड दिए। १८१४ में अफगानिस्तान के पदच्युत बादशाह शाहशुजा ने रणजीत सिंह की शरण प्राप्त की। रणजीत सिंह ने उससे कोहेनूर हीरा प्राप्त किया। रणजीत सिंह का राज्य एक तरफ काश्मीर से मुल्तान तक और दूसरी तरफ सतलुज से पेशावर तक फैला हुआ था।

रणजीत सिंह जितना वीर था, उतना ही कुशल शासक था। उसका सारा राज्य चार प्रान्तो में बाटा हुआ था। लाहौर, मुल्तान, काश्मीर और पेशावर। प्रत्येक प्रान्त एक अधिकारी के अधीन होता था।

उसकी शासन-व्यवस्था सरल और सीधी थी। प्रायः भूमि की पैदावार का एक तिहाई भाग किसानों से मालगुजारी के रूप में लिया जाता था। मुकदमों का फैसला अधिकांश पंचायतें ही करती थीं। फौजदारी कानून कड़े थे। रणजीत सिंह सिख धर्म का कट्टर अनुयायी था, परन्तु उसमें धर्मान्धता नाम को न थी। रणजीत सिंह का विदेश मन्त्री फकीर अजीजुद्दीन मुसलमान था, तोपखाने का अध्यक्ष इलाहीबख्श भी मुसलमान था। इनके अतिरिक्त अनेकों मुसलमान सरकारी अफसर थे। नौकरियों में धार्मिक भेदभाव न बरता जाता था।

रणजीत सिंह पर पंजाब को ही क्या, सारे भारतवर्ष को गर्व है। उसने उस नाजुक समय, जब सर्वत्र अराजकता सी फैली हुई थी, पंजाब को एक सुदृढ़ शासन दिया। सिखों की बिखरी हुई ताकत को इकट्ठा करके स्वतन्त्र पंजाब राज्य की नींव रखी। उसकी दूरदर्शिता इस बात से सिद्ध होती है कि जबतक वह जीवित रहा, उसने अंग्रेजों से टक्कर न ली।

१८३९ में पंजाब के इस महान निर्माता का देहान्त हो गया। उसकी मृत्यु के साथ ही सिख राज्य भी लड़खड़ाने लगा।

रणजीतसिंह के बाद

रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र खड़ग सिंह पंजाब की गद्दी पर बैठा। वह एक कमजोर व्यक्ति था। राज्य व्यवस्था बिगड़ने लगी। इस पर खड़गसिंह के योग्य पुत्र नौनिहाल सिंह ने पेशावर से लौट कर राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले ली। नौनिहाल सिंह एक वीर और योग्य शासक था। वह सिखों की ताकत को अफगानिस्तान, सिन्ध और हिन्दुकुश तक पहुँचाना चाहता था। परन्तु किस्मत ने उसका साथ नहीं दिया। खड़गसिंह और नौनिहाल सिंह दोनों की अचानक मृत्यु हो गई। इन दोनों के मरते ही पंजाब में गड़बड़ी सी फैल गई। दरबार में गुटबन्दी थी। सिन्धनवालिया सरदारों के एक गुट ने खड़ग सिंह की विधवा रानी चांदकौर को शासन-भार सौंपा तो जम्मू के ध्यान सिंह गुलाबसिंह गुट ने सेना की सहायता से शेरसिंह को गद्दी पर बिठा दिया। शेरसिंह रणजीत सिंह का दूसरा पुत्र समझा जाता था।

सिख राज्य का अन्त

सन् १८४३ ई० में राजा शेर सिंह की भी हत्या कर दी गई। तदोपरान्त आठ वर्षीय बालक दिलीप सिंह को गद्दी पर बिठाया गया। उसकी मां रानी जिन्दकौर बालक राजा की संरक्षक बनी, परन्तु स्थिति सुधरी नहीं। दरबार में पदों के लिए झगड़ा रहने लगा। सेना जो मनमानी चाहती थी, कर लेती थी।

इधर अंग्रेज भी सतर्क थे। वे तो केवल अवसर देख रहे थे। पंजाब पर उनकी नजर तो बड़ी देर से थी। तत्कालीन गवर्नर लार्ड एलिनबरो ने उस समय एक रिपोर्ट में लिखा था कि "पंजाब मेरी जूती तले है।"

लार्ड एलिनबरो तो शायद तुरन्त ही कोई कार्रवाई शुरू कर देता परन्तु १८४४ में उसे वापस बुला लिया गया। इसलिए सिख राज्य की समाप्ति का दायित्व लार्ड हार्डिंग पर पड़ा। अंग्रेजों ने सतलुज के किनारे अपनी किलेबन्दियां दृढ़ करनी शुरू कर दीं। अंग्रेजों की यह सरगर्मियां देख कर सिख फौज भड़क उठी। अंग्रेजों ने दो-दो हाथ करने के लिए १८४५ में सतलज पार करके उन्होंने फिरोजपुर के स्थान पर डेरा डाल दिया। सिख सेना जोश और उत्साह से भरी हुई थी। परन्तु उसके नेता देशद्रोही निकले। उस समय तेजसिंह प्रधान सेनापति था और लाल सिंह वजीर। दोनों ही अंग्रेजों से मिले हुए थे। फलतः सिखों की मुठभेड़ और

फिरोजपुर के स्थानों पर हार हुई। लेकिन लुधियाना के पास सिखों ने अंग्रेजों को हरा दिया। इससे सिख सेना के हौसले बढ़े। उन्होंने ध्यान सिंह को बुलाकर पुन प्रधान मन्त्री बनाया। परन्तु वह भी देशद्रोही निकला। अलीवाल और सुबराव के स्थान पर सिख एक बार फिर अंग्रेजों से पराजित हुए। ९ मार्च १८४६ को सिखों ने एक सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर किए जिसे लाहौर की सन्धि कहते हैं। इसके अनुसार उन्हें अंग्रेजों को सतलुज और व्यास के बीच का प्रदेश सौंपना पडा और जुर्माना भी देना पडा। चूंकि पंजाब दरबार जुर्माने का रुपया न चुका सका, इसलिए कांगड़ा, हजारा और काश्मीर के इलाके अंग्रेजों को सौंपने पड़े। ध्यान सिंह ने ७५ लाख रुपये अंग्रेजों को देकर काश्मीर अपने लिए मोल ले लिया। यह डोगरा सरदार तीन रुपये मासिक वेतन पर रणजीत सिंह की फौज में साधारण सैनिक के रूप में भर्ती हुआ था।

दिलीपसिंह के बालिग होने तक पंजाब में अंग्रेजी सेना और एक रेजीडेंट रख दिया गया। दिलीपसिंह की ओर से शासन चलाने के लिए अंग्रेज तथा सिख सरदारों की एक सम्मिलित कौंसिल बना दी गई। इस प्रकार सिखों ने घर की फूट के कारण अपनी स्वतन्त्रता खोनी। परन्तु लाहौर की सन्धि पर हस्ताक्षर हुए अभी दो वर्ष भी नहीं हुए थे कि अंग्रेजों ने पुन लडाई छेड दी। मुलतान में अंग्रेजी सेना तथा सिखों में झगडा हो जाने के कारण अंग्रेजों ने वहा के लोकप्रिय दीवान मूलराज को पदच्युत कर दिया। इस खबर से स्थानीय नागरिक तथा सैनिक भडक उठे। उन्होंने कुछ अंग्रेजों की हत्या कर दी। इस बलवे की खबर सुन कर लार्ड डलहौजी ने पुन लडाई छेड दी। मुलतान को घेर लिया गया। मुलतान के पतन से पूर्व अंग्रेजों को चिलयांवाला के स्थान पर जबरदस्त हार हुई जिसे अंग्रेजों ने 'ब्रिटिश जाति के लिए कलंक का टीका' समझा। परन्तु अगले दो मास में भाग्य ने अंग्रेजों का साथ दिया। गुजरात के स्थान पर सिख फौज बुरी तरह पराजित हुई। १२ मार्च, १८४९ को सिख सेना ने सेनाओं सहित आत्म-समर्पण कर दिया। इस तरह भारतवर्ष में स्वतन्त्रता का आखिरी किला भी टूट गया।

तत्कालीन वायसराय लार्ड डलहौजी ने पंजाब को अंग्रेजी राज्य में शामिल करने का निश्चय किया। दिलीप सिंह को विलायत भेज दिया गया। खालसा सेना तोड दी गई। सिखों को निशस्त्र कर दिया गया। पंजाब के शासन के लिए उच्च अंग्रेज अधिकारियों का एक बोर्ड बना।

अभ्यास के प्रश्न

(१) सिख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानकदेव जी के मूल उपदेश क्या थे? उनके जीवन चरित्र के बारे में लिखो।

(२) सिख धर्म की सांस्कृतिक धारा सैनिक आन्दोलन में कैसे परिवर्तित हुई? सैनिक आन्दोलन का संचालन किन गुरुओं के हाथ में रहा?

(३) सिखों के दस गुरुओं के नाम लिखो। दसम गुरु ने सिखों को किस प्रकार संगठित किया?

(४) गुरु गोविन्द सिंह के पुत्रों का बदला किसने लिया और कैसे?

(५) सिखों और मुगलों में कब झगडा शुरू हुआ और क्यों? इसका परिणाम क्या हुआ?

(६) रणजीत सिंह को "शेरे पंजाब" क्यों कहते हैं? उसने पंजाब में किस प्रकार स्वतंत्र राज्य स्थापित किया?

(७) रणजीत सिंह का जीवन चरित्र लिखो?

(८) सिख राज्य का अध पतन क्यों हुआ? अंग्रेजों और सिखों के संघर्ष को कहा"

: २९ :

व्यापारी से शासक

अंग्रेज और फ्रांसीसी केवल व्यापार करने के उद्देश्य से भारत आए थे। परन्तु स्थानीय राजाओं में फूट देख कर दोनों में साम्राज्य स्थापित करने की लालसा उत्पन्न हुई। योरोप में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों में प्रायः युद्ध होते रहते थे। ये युद्ध योरोप तक ही सीमित नहीं रहे। भारत में अंग्रेज और फ्रांसीसी भी इनमें उलझ जाते थे। भारत में अंग्रेजों की मुख्य किलाबन्दी मद्रास के पास फोर्ट सेंट डेविड में थी और फ्रांसीसियों का मुख्य केन्द्र पाण्डीचेरी था।

दक्षिण में यदि अंग्रेज एक शासक का साथ देते तो फ्रांसीसी दूसरे पक्ष में हो जाते। इस प्रकार दोनों में निरन्तर संघर्ष होता रहता। इस संघर्ष की कहानी हम आपको बड़े ही संक्षेप में बताएंगे।

कर्नाटक—दक्षिण के कर्नाटक राज्य में उत्तराधिकार का झगड़ा था। फ्रांसीसियों तथा अंग्रेजों ने इन झगड़े में अपनी-अपनी टांग अड़ा दी। इस गद्दी के दो दावेदार थे—चन्दा साहब और मुहम्मद अली। फ्रांसीसियों ने चन्दा साहब का पक्ष लिया तो अंग्रेजों ने मुहम्मद अली का। शीघ्र ही यह प्रगट हो गया कि कर्नाटक के इस नाटक के दो मुख्य अभिनेता हैं—अंग्रेज सेनापति क्लाइव और फ्रांसीसी सेनापति डुप्ले। वास्तव में यह लड़ाई इन दो की लड़ाई थी। कर्नाटक में अरकाट इस संघर्ष का केन्द्र बना। फ्रांसीसियों की सहायता से चन्दा साहब ने मुहम्मद अली को त्रिचनापल्ली के किले में घेर लिया। अंग्रेज सेनापति क्लाइव को एक युक्ति सूझी। उसने देखा कि चन्दा साहब की राजधानी अरकाट इस समय असुरक्षित है। उसने अरकाट पर कब्जा कर लिया। चन्दा साहब के सामने अब वापस लौट कर राजधानी को बचाने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं था। उसने अरकाट को घेर लिया परन्तु वह अपनी राजधानी को अंग्रेजों से पुनः प्राप्त करने की चेष्टा में मारा गया। मुहम्मद अली १७५१ में कर्नाटक का नवाब बना। इस प्रकार दक्षिण में अंग्रेजों का दबदबा हो गया।

हैदराबाद—कर्नाटक के साथ साथ हैदराबाद के निजाम के उत्तराधिकार का भी झगड़ा चल रहा था। निजाम की गद्दी के लिए दो उम्मीदवार थे नासिर जंग और उसका भतीजा मुजफ्फर जंग। अंग्रेजों ने चाचा का पक्ष लिया तो फ्रांसीसियों ने भतीजे का। १७५० में नासिर जंग युद्ध में मारा गया। डुप्ले ने खाली गद्दी पर मुजफ्फर जंग को बिठाने के लिए फ्रेंच सेनापति बुसी को भेजा। परन्तु फ्रांसीसियों के दुर्भाग्य से मुजफ्फर जंग भी १७५१ में मारा गया। फ्रांसीसियों ने निजाम आसफ जाह के तीसरे बेटे सलाबत जंग को गद्दी पर बिठा दिया। कठपुतली सलाबत जंग ने फ्रांसीसियों को उत्तरी सरकार का इलाका प्रदान किया। फ्रांसीसियों की स्थिति अब बहुत आशाजनक थी। डुप्ले बड़ा खुश था। परन्तु फ्रांसीसी कम्पनी के डायरेक्टर डुप्ले की इस युद्ध नीति से तंग आ चुके थे। उन्होंने १७५४ में डुप्ले को वापस बुला लिया। १० वर्ष बाद डुप्ले की मृत्यु हो गई। उसे बड़ा खेद था। मरते समय उसने कहा—"भारत में अपनी जाति की समृद्धि के लिए मैंने अपनी

जवानी, दौलत और जीवन बर्बाद कर दिया मेरे साथ खराब से खराब इन्सान से भी बुरा सलूक किया गया है। मैं अत्यन्त बुरी अवस्था में हू।'

डुप्ले के जाते ही भारत में फ्रांसीसी राज का सितारा डूबने लगा। क्लाइव ने अरकाट जीतने के बाद १७५७ में चन्द्र नगर की फ्रांसीसी बस्ती पर कब्जा कर लिया। १७५८ में फ्रांस ने अंग्रेजो को भारत से निकालने के लिए अपना एक विख्यात सेनापति काऊट लाली भेजा। काऊट लाली ने आते ही फ्रांसीसी बेड़े की सहायता से फोर्ट सेंट डेविड पर कब्जा कर लिया। वह अब मद्रास पर हमला करना चाहता था। इस काम के लिए उसने हैदराबाद से बसी को बुला लिया। बसी ने बहुत कहा कि उत्तरी सरकार की रक्षा के लिए मेरा यहा रहना जरूरी है। परन्तु काऊट लाली ने एक न मानी। बसी के आते ही क्लाइव ने कर्नल फोर्ड की अध्यक्षता में एक फौज भेज कर उत्तरी सरकार पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार फ्रांसीसी हैदराबाद से निकाल दिए गए।

डुप्ले

फ्रांसीसियों ने मद्रास को घेर लिया। परन्तु १७६० में अंग्रेजो ने सर आयरकूट की कमान में वन्देवाश के स्थान पर फ्रांसीसियो को बुरी तरह पछाड़ा। बसी पकडा गया। लाली भाग कर पाण्डीचरी पहुचा। परन्तु अगले वर्ष पाण्डीचरी का भी पतन हुआ। काऊट लाली गिरफ्तार कर लिया गया। १७६३ में योरोप में सप्त वर्षीय युद्ध समाप्त हुआ। इसमें भी अंग्रेजो का पलडा भारी रहा था। इसलिए सन्धि की जो शर्तें फ्रांसीसियों को मिली वे बहुत अच्छी न थी। इन शर्तों के अनुसार फ्रांसीसियो को पाण्डीचरी, चन्द्रनगर, माही और कारीकल वापिस मिल गए। परन्तु उनसे इन स्थानो की किलाबन्दी करने तथा फौज रखने के अधिकार छीन लिए गए।

अंग्रेजो की बंगाल विजय

सिराजुद्दौला—मुगल साम्राज्य के दुर्बल हो जाने पर बंगाल का सूबा पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो गया था। वहा का नवाब अलीवर्दी खा एक योग्य शासक था। उसने बंगाल पर सन् १७४१ से सन् १७५६ ई० तक राज्य किया। राज्य में सर्वत्र शान्ति थी। अंग्रेजो को उसके शासन काल में सिर उठाने का साहस नही हुआ। उसके उत्तराधिकारी सिराजुद्दौला से अंग्रेजो का झगडा हुआ। अंग्रेजो ने कलकत्ते की किलाबन्दी प्रारम्भ की। जब नवाब ने इनका विरोध किया तो अंग्रेजो ने न केवल किलाबन्दी तोडने की आज्ञा को भंग किया बल्कि नवाब के अपराधियों को भी अपने यहा शरण दी। अंग्रेजो द्वारा अपनी आज्ञा के ठुकराए जाने पर सिराजुद्दौला ने कलकत्ते के किले पर आक्रमण किया। किले के अंग्रेज कमाण्डर और सिपाही भाग गए। सिराजुद्दौला ने किले पर कब्जा कर लिया।

कलकत्ते पर आक्रमण के समय क्लाइव भारत में नहीं था। उसने आते ही कलकत्ता पर पुन. कब्जा करने की योजना बनाई। वह एक विशाल जहाजी बेडा और फौज लेकर हुगली पहुचा। सिराजुद्दौला को पीछे हटना पडा। सिराजुद्दौला फ्रांसीसियो की मदद लेना चाहता था परन्तु क्लाइव ने तत्काल फ्रांसीसी

बस्ती चन्द्र नगर को अपने कब्जे में कर लिया। विवश होकर सिराजुद्दौला को अंग्रेजों से सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धि के अनुसार अंग्रेजों को कलकत्ता में लूटा हुआ माल वापिस मिल गया। उसके साथ ही उन्हें कलकत्ते में किलेबन्दी का अधिकार भी प्राप्त हुआ।

अंग्रेज और मीरजाफर—क्लाइव के मन में सिराजुद्दौला के प्रति द्वेष भावना पैदा हो चुकी थी इसलिए उसने सिराजुद्दौला को गद्दी पर से उतारने का षड्यन्त्र किया। क्लाइव ने सिराजुद्दौला के सेनापति मीरजाफर से साठ-गांठ की और यह तय पाया कि बंगाल की नवाबी मीरजाफर को दी जाएगी। बदले में मीरजाफर बंगाल में कम्पनी को समस्त व्यापारिक सुविधाएं देने के साथ एक करोड़ रुपया हरजाना देगा और कलकत्ता स्थित अंग्रेजों को ५० लाख रुपए दिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त कोई भी फ्रांसीसी बंगाल में नहीं रहेगा। उन्हें बंगाल से बाहर निकाल दिया जाएगा।

यह षड्यन्त्र एक बनिए सेठ अमीचन्द द्वारा तय हुआ था। क्लाइव ने वर्नल वाटसन के नाम से एक झूठा कागज लिख कर उसने यह वायदा किया था कि मीरजाफर से जो रकम मिलेगी, सेठ अमीचन्द को उसमें से एक मोटी राशि दी जाएगी। किन्तु विजय के उपरान्त क्लाइव ने सेठ अमीचन्द को अंगूठा दिखा दिया।

रावर्ट क्लाइव

बंगाल में अंग्रेजों के दुराचारों पर स्वयं अंग्रेज इतिहासकारों ने प्रकाश डाला है। बड़े से बड़ा अंग्रेज भी उस समय घूसखोर और बेईमान था, उनमें से हर एक लूट से हाथ रंगना चाहता था। लार्ड मैकाले ने लिखा है, *"उस समय बंगाल ऐसा स्थान समझा जाता था जहां जाकर अंग्रेज झटपट अमीर हो जाते थे। वहां प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक वस्तु बिकाऊ थी।"* उनके लिए "मीर जाफर एक सोने की बोरी था जिसमें जब चाहा हाथ डाला और सोना निकाल लिया।" इंगलैण्ड में भारत से आये हुए नव-धनी लोगों से घृणा की जाती थी। वे इंगलैंड जाकर भी नवाबों की तरह रहते थे।

प्लासी का युद्ध—कलकत्ते से ७० मील उत्तर की ओर प्लासी का मैदान है। २३ जून, १७५७ ई० को सिराजुद्दौला और क्लाइव की लड़ाई इसी मैदान में हुई। क्लाइव के पास संख्या में सेना थोड़ी थी किन्तु थी, वह थी सुसंगठित। इस कारण सिराजुद्दौला की विशाल सेना हार गई। मीरजाफर पहले ही अंग्रेजों से मिल चुका था। सन्धि के अनुसार बंगाल का नवाब मीरजाफर और गवर्नर क्लाइव बना। सिराजुद्दौला लड़ाई के मैदान से भाग गया किन्तु कुछ दिनों उपरान्त अंग्रेजों ने उसको पकड़ कर कत्ल करवा दिया। प्लासी की लड़ाई एक मामूली लड़ाई थी। परन्तु राजनीतिक दृष्टि से इसने हिन्दुस्तान की किस्मत का सदा के लिए फैसला कर दिया। अंग्रेज व्यापारी से शासक बन गए। बंगाल उनके हाथ में आ गया। बंगाल से बढ़ते हुए वे सारे हिन्दुस्तान पर छा गए।

अंग्रेजों की धन और सुविधाओं की मांग दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही थी और मीरजाफर के लिए यह संभव न था कि वह उनकी समस्त मांगों को पूरा कर सके। मीरजाफर अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली मात्र था। उनसे छुटकारा पाने के लिए मीरजाफर ने डचों से सहायता चाही। क्लाइव के लिए यह एक स्वर्ण अवसर था।

उसने पहले डचो की बस्ती चिनसुरा को उजाड़ा। फिर मीरजाफर को गद्दी से उतारकर उसके दामाद मीरकासिम को नवाब बना दिया। बदले में मीरकासिम ने अंग्रेजो को मिदनापुर, बरदवान और चटगाव के जिले दिए।

मीरकासिम और अंग्रेज—मीरकासिम स्वतन्त्र विचारो का व्यक्ति था। उसके लिए यह सभव नही था कि वह अंग्रेजो की कठपुतली बनकर नवाबी करे। अंग्रेजी कम्पनी के अधिकारियो ने उसकी राज्य व्यवस्था को नष्ट कर दिया था। कम्पनी के माल के साथ-साथ अंग्रेज अधिकारी अपना निजी माल भी बिना चुगी के ले जाते थे। साथ ही उन्होंने भारतीय व्यापारियो से रुपया लेकर चुगी न देने के परवाने जारी करने शुरू कर दिए। चुगी की व्यवस्था को समाप्त होता देख कर मीर कासिम ने सब व्यापारियो पर से चुगी हटा दी। अंग्रेजो के लिए यह कार्य असह्य था। इससे उनका कालेबाजार का धन्धा समाप्त हो जाता था। उन्होंने मीरकासिम को हटा कर पुन मीरजाफर को नवाब बना दिया। मीरकासिम ने अवध के नवाब शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाहआलम की सहायता लेकर बगाल पर चढाई की। सन् १७६४ ई० में बक्सर के स्थान पर लड़ाई हुई। इसमें अंग्रेजो की विजय हुई। शुजाउद्दौला ने अंग्रेजो की शरण ली। मीर-कासिम भाग गया। प्लासी की लडाई में जो काम अधूरा रह गया था, बक्सर की लडाई में वह पूरा हो गया।

सन् १७६५ में क्लाइव को बगाल का गवर्नर तथा सेनापति बना दिया गया। उसे लार्ड की भी उपाधि प्रदान की गई। शाहआलम और शुजाउद्दौला से सन्धि करके अंग्रेजो ने बगाल, बिहार और उडीसा की दीवानी कम्पनी के लिए प्राप्त कर ली।

कम्पनी ने मीर जाफर के उत्तराधिकारियो की पेन्शन लगा दी और मालगुजारी उगाहने का काम अपने हाथ मे ले लिया। मालगुजारी कम्पनी लिया करती थी और शासन नवाब का होता था। इस प्रकार बगाल में कम्पनी तथा नवाब दोनो का शासन था और इस दोहरे शासन से बगाल की जनता बडी त्रस्त हुई। देश में हाहाकार मच गया। बगाल में भयानक अकाल पडा जिसमे सारा बगाल कगाल हो गया। इस दोहरी शासन प्रणाली को दो अमली कहते है।

१७६७ में क्लाइव बगाल से रिटायर हुआ। यह एक वीर योद्धा और कुशल राजनीतिज्ञ था। उसने कम्पनी के एक साधारण क्लर्क से इतनी उन्नति की थी। १७७४ में वह आत्म-हत्या करके मर गया।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में अंग्रेज व्यापारी से शासक कैसे बने ?

(२) भारत में अंग्रेजो और फ्रासीसियो के आपसी सघर्ष का वर्णन करो। अन्तिम जीत किसकी और कैसे हुई ?

(३) अंग्रेजों ने बगाल पर कैसे अधिकार किया ? संक्षेप में लिखो ?

(४) सक्षिप्त टिप्पणियां लिखो —

डूप्ले, काऊंट लाली, मीरजाफर, सिराजुद्दौला, अमीचन्द, दो अमली।

(५) क्लाइव कौन था ? उसने भारत में अंग्रेजी राज किस प्रकार सुदृढ किया।

वस्ती चन्द्र नगर को अपने कब्जे में कर लिया। विवश होकर सिराजुद्दौला को अंग्रेजों से सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धि के अनुसार अंग्रेजों को कलकत्ता में लूटा हुआ माल वापिस मिल गया। उसके साथ ही उन्हें कलकत्ते में किलेबन्दी का अधिकार भी प्राप्त हुआ।

अंग्रेज और मीरजाफर—क्लाइव के मन में सिराजुद्दौला के प्रति द्वेष भावना पैदा हो चुकी थी। इसलिए उसने सिराजुद्दौला को गद्दी पर से उतारने का षडयन्त्र किया। क्लाइव ने सिराजुद्दौला के सेनापति मीरजाफर से साठ-गांठ की और यह तय पाया कि बंगाल की नवाबी मीरजाफर को दी जाएगी। बदले में मीरजाफर बंगाल में कम्पनी को समस्त व्यापारिक सुविधाएं देने के साथ एक करोड़ रुपया हरजाना देगा और कलकत्ता स्थित अंग्रेजों को ५० लाख रुपए दिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त कोई भी फ्रांसीसी बंगाल में नहीं रहेगा। उन्हें बंगाल से बाहर निकाल दिया जाएगा।

रावर्ट क्लाइव

यह षडयन्त्र एक बनिए सेठ अमीचन्द द्वारा तय हुआ था। क्लाइव ने कर्नल वाटसन के नाम से एक झूठा कागज लिख कर उसमें यह वायदा किया था कि मीरजाफर से जो रकम मिलेगी, सेठ अमीचन्द को उसमें से एक मोटी राशि दी जाएगी। किन्तु विजय के उपरान्त क्लाइव ने सेठ अमीचन्द को अंगूठा दिखा दिया। बंगाल में अंग्रेजों के दुराचारों पर स्वयं अंग्रेज इतिहासकारों ने प्रकाश डाला है। बड़े से बड़ा अंग्रेज भी उस समय घूसखोर और बेईमान था, उनमें से हर एक लूट में हाथ रंगना चाहता था। लार्ड मैकाले ने लिखा है, "उस समय बंगाल ऐसा स्थान समझा जाता था जहां जाकर अंग्रेज झटपट अमीर हो जाते थे। वहां प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक वस्तु बिकाऊ थी।" उनके लिए "मीर जाफर एक सोने की बोरी था जिसमें जब चाहा हाथ डाला और सोना निकाल लिया।" इंगलैण्ड में भारत से आये हुए नव-धनी लोगों से घृणा की जाती थी। वे इंगलैंड जाकर भी नवाबों की तरह रहते थे।

प्लासी का युद्ध—कलकत्ते से ७० मील उत्तर की ओर प्लासी का मैदान है। २३ जून, १७५७ ई० को सिराजुद्दौला और क्लाइव की लड़ाई इसी मैदान में हुई। क्लाइव के पास संख्या में सेना थोड़ी थी किन्तु थी, वह थी सुसंगठित। इस कारण सिराजुद्दौला की विशाल सेना हार गई। मीरजाफर पहले ही अंग्रेजों से मिल चुका था। सन्धि के अनुसार बंगाल का नवाब मीरजाफर और गवर्नर क्लाइव बना। सिराजुद्दौला लड़ाई के मैदान से भाग गया किन्तु कुछ दिनों उपरान्त अंग्रेजों ने उसको पकड़ कर कत्ल करवा दिया। प्लासी की लड़ाई एक मामूली लड़ाई थी। परन्तु राजनीतिक दृष्टि से इसने हिन्दुस्तान की किस्मत का सदा के लिए फैसला कर दिया। अंग्रेज व्यापारी से शासक बन गए। बंगाल उनके हाथ में आ गया। बंगाल से बढ़ते हुए वे सारे हिन्दुस्तान पर छा गए।

अंग्रेजों की धन और सुविधाओं की मांग दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही थी और मीरजाफर के लिए यह सम्भव न था कि वह उनकी समस्त मांगों को पूरा कर सके। मीरजाफर अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली मात्र था। उनसे छुटकारा पाने के लिए मीरजाफर ने डचों से सहायता चाही। क्लाइव के लिए यह एक स्वर्ण अवसर था।

उसने पहले डचो की बस्ती चिनसुरा को उजाडा। फिर मीरजाफर को गद्दी से उतारकर उसके दामाद मीरकासिम को नवाब बना दिया। बदले में मीरकासिम ने अंग्रेजो को मिदनापुर, बरदवान और चटगाव के जिले दिए।

मीरकासिम और अंग्रेज—मीरकासिम स्वतन्त्र विचारो का व्यक्ति था। उसके लिए यह सभव नही था कि वह अंग्रेजो की कठपुतली बनकर नवाबी करे। अंग्रेजी कम्पनी के अधिकारियो ने उसकी राज्य व्यवस्था को नष्ट कर दिया था। कम्पनी के माल के साथ-साथ अंग्रेज अधिकारी अपना निजी माल भी बिना चुगी के ले जाते थे। साथ ही उन्होने भारतीय व्यापारियो से रुपया लेकर चुगी न देने के परवाने जारी करने शुरू कर दिए। चुगी की व्यवस्था को समाप्त होता देख कर मीर कासिम ने सब व्यापारियो पर से चुगी हटा दी। अंग्रेजो के लिए यह कार्य असह्य था। इससे उनका कालेबाजार का धन्धा समाप्त हो जाता था। उन्होने मीरकासिम को हटा कर पुन मीरजाफर को नवाब बना दिया। मीरकासिम ने अवध के नवाब शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाहेआलम की सहायता लेकर बगाल पर चढाई की। सन् १७६४ ई० में बक्सर के स्थान पर लडाई हुई। इसमें अंग्रेजो की विजय हुई। शुजाउद्दौला ने अंग्रेजो की शरण ली। मीरकासिम भाग गया। प्लासी की लडाई में जो काम अधूरा रह गया था, बक्सर की लडाई में वह पूरा हो गया।

सन् १७६५ में क्लाइव को बगाल का गवर्नर तथा सेनापति बना दिया गया। उसे लार्ड की भी उपाधि प्रदान की गई। शाहेआलम और शुजाउद्दौला से सन्धि करके अंग्रेजो ने बगाल, बिहार और उडीसा की दीवानी कम्पनी के लिए प्राप्त कर ली।

कम्पनी ने मीर जाफर के उत्तराधिकारियो की पेन्शन लगा दी और मालगुजारी उगाहने का काम अपने हाथ में ले लिया। मालगुजारी कम्पनी लिया करती थी और शासन नवाब का होता था। इस प्रकार बगाल में कम्पनी तथा नवाब दोनो का शासन था और इस दोहरे शासन से बगाल की जनता बडी त्रस्त हुई। देश में हाहाकार मच गया। बगाल में भयानक अकाल पडा जिससे सारा बगाल कगाल हो गया। इस दोहरी शासन प्रणाली को दो अमली कहते है।

१७६७ में क्लाइव बगाल से रिटायर हुआ। वह एक वीर योद्धा और कुशल राजनीतिज्ञ था। उसने कम्पनी के एक साधारण क्लर्क से इतनी उन्नति की थी। १७७४ में वह आत्म-हत्या करके मर गया।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में अंग्रेज व्यापारी से शासक कैसे बने ?

(२) भारत में अंग्रेजों और फ्रासीसियों के आपसी सघर्ष का वर्णन करो। अन्तिम जीत किसकी और कैसे हुई ?

(३) अंग्रेजों ने बगाल पर कैसे अधिकार किया ? संक्षेप में लिखो ?

(४) सक्षिप्त टिप्पणियां लिखो —

डूप्ले, काउन्ट लाली, मीरजाफर, सिराजुद्दौला, अमीचन्द, दो अमली।

(५) क्लाइव कौन था ? उसने भारत में अंग्रेजी राज किस प्रकार सुदृढ किया।

: ३० :

भारत में अंग्रेजी राज्य का प्रसार

पिछले अध्याय में हमने देखा कि किस प्रकार क्लाइव ने अंग्रेजों को व्यापारी से शासक बना दिया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत में केवल व्यापार के लिए आई थी। परन्तु १७०७ में औरंगजेब की मौत से बाद देश में जगह-जगह लड़ाइयां होने लगीं। अंग्रेजों ने इस गृह कलह का लाभ उठाया। एक को दूसरे से लड़वा कर अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक क्लाइव ने भारत में अंग्रेजों के लिए एक विशाल राज्य बना लिया। धीरे-धीरे अंग्रेज इस राज्य का विस्तार करने लगे।

वास्तव में अंग्रेज भारत में शासन स्थापित करने के लिए नहीं आए थे। अंग्रेज इतिहासकार जे० आर० सीले ने इस तथ्य को इस प्रकार प्रगट किया है—"अंग्रेजों को लापरवाही की हालत में भारत का साम्राज्य मिल गया। भारत में हमारा इरादा कुछ होता था लेकिन होता कुछ और था...... ......।" इसमें सन्देह नहीं कि 'ब्रिटिश ताज का यह सबसे चमकदार हीरा' उन्हें कोई भागीरथ प्रयास किए बिना ही मिल गया। क्लाइव जब भारत से चला तो भारत में अंग्रेजी राज की जड़ें काफी मजबूत हो चुकी थीं। फ्रांसीसी सदा के लिए खत्म कर दिए गए थे। मुगल सत्ता आखिरी सांसें ले रही थी। मराठे मुगल राज्य के उत्तराधिकारी हो सकते थे परन्तु पानीपत की लड़ाई ने उन्हें खोखला कर दिया था। इसके अतिरिक्त उनमें अनुशासन, संगठन और एकता का अभाव था। अतः साम्राज्य स्थापन के लिए अंग्रेजों का रास्ता साफ था।

वारेन हेस्टिंग्ज

वारेन हेस्टिंग्ज

क्लाइव के बाद १७७२ में वारेन हेस्टिंग्ज भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त हुआ। वह एक योग्य व्यक्ति था जिसने भारत में अंग्रेजी राज को सुदृढ़ता दी। वह एक क्लर्क के रूप में कम्पनी की नौकरी में भर्ती हुआ था और धीरे धीरे उन्नति के इस पद पर पहुंचा था। भारत में आकर उसने शासन में कुछ महत्वपूर्ण सुधार किए। उसने मालगुजारी के हिन्दुस्तानी अधिकारियों को अलग करके प्रत्येक जिले में मालगुजारी एकत्र करने के लिए एक अंग्रेज अफसर लगा दिया। मालगुजारी के दफ्तर पटना और मुर्शिदाबाद से कलकत्ते में लाए गए। इस प्रकार कम्पनी की राजधानी कलकत्ते में स्थापित हो गई। प्रत्येक जिले में दीवानी और फौजदारी मुकदमों की सुनवाई के लिए अदालतें स्थापित की गईं। कलकत्ते में अपीलें सुनने के लिये एक उच्च अदालत बना दी गई।

रेगुलेटिंग एक्ट

भारत में अंग्रेजों को अचानक विशाल राज्य मिल गया था। परन्तु राज-प्रबन्ध के लिए वे कोई उचित व्यवस्था न कर पाये थे। अतः भारत में स्थिति को सुधारने के लिए ब्रिटिश पालियामेंट ने १७७३ में एक कानून पास किया जिसे रेगुलेटिंग ऐक्ट कहते हैं। इस कानून के अन्तर्गत भारत में कम्पनी का राज ब्रिटिश पालियामेंट को उत्तरदायी हो गया। बंगाल के शासन के लिए एक गवर्नर जनरल तथा चार सदस्यों की एक कौंसिल बना दी गई। कौंसिल बहुमत से फैसले करती थी। बम्बई और मद्रास के सूबों को बंगाल के गवर्नर जनरल के अधीन कर दिया गया। कलकत्ते में एक उच्च न्यायालय बनाया गया जो निम्न अदालतों की अपीलें सुनता था।

इस एक्ट की त्रुटियां दूर करने के लिये ब्रिटिश पालियामेंट ने में १७८४ में पिट्स इण्डिया एक्ट पास किया। तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मन्त्री पिट के नाम इसे पिट्स इण्डिया एक्ट कहते हैं। नए अधिनियम के अन्तर्गत भारत में गवर्नर जनरल के अधिकार बढ़ गए। कौंसिल के सदस्यों की संख्या ४ से ३ कर दी गई। पालियामेंट को भारतीय मामलों पर अधिक नियन्त्रण प्राप्त हुआ।

हैदरअली और टीपू

टीपू सुल्तान

अंग्रेजी राज को सुदृढ़ बनाने के लिए हेस्टिंग्ज को मैसूर के हैदरअली और उसके मरने के बाद हैदरअली के बेटे टीपू से दो भयंकर युद्ध करने पड़े। हैदरअली मैसूर के हिन्दू राजा से गद्दी छीन कर १७६१ में मैसूर का नवाब बना था। उसकी शक्ति इतनी बढ़ी कि अंग्रेज, मराठे और हैदराबाद का निजाम तीनों ही उसे अपने अपने अस्तित्व के लिए खतरा समझने लगे। तीनों हैदरअली से निपटने के लिए आपसी गठजोड़ करने लगे। परन्तु हैदरअली कच्ची गोलियां नहीं खेले हुए था। उसने अंग्रेजों के विरुद्ध गठजोड़ किया। विशाल सेना लेकर वह मद्रास से केवल ५ मील के फासले पर पहुंच गया। अंग्रेजों ने डर कर उससे सुलह कर ली और वचन दिया कि यदि उसके राज्य पर किसी ने हमला किया तो अंग्रेज उसकी सहायता करेंगे। परन्तु १७७१ में जब मराठों ने मैसूर पर हमला किया तो अंग्रेजों ने अपना वचन न निभाया। हैदरअली ने इसे विश्वासघात समझा। उसने निजाम और मराठों से सन्धि करके १७८० में कर्नाटक में अंग्रेजी इलाके पर हमला किया। इसे मैसूर का दूसरा युद्ध कहते हैं। हैदरअली ने कर्नल बेली के नेतृत्व में एक ब्रिटिश सेना को पछाड़ दिया। परन्तु

१७८१ में सर आयरकूट ने पोर्टोनोवो के स्थान पर हैदरअली को हरा दिया। वर्षा के कारण लडाई थोडी देर के लिए रुक गई। १७८२ में हैदरअली कैंसर के रोग से मर गया। मरते हुए उसने अपने बेटे टीपू को परामर्श दिया कि वह अग्रेजो से सन्धि कर ले। परन्तु टीपू ने अग्रजो के विरुद्ध लडाई जारी रखी। फ्रांसीसियों ने भी उसकी मदद की। १७८४ में मगलोर के स्थान पर अग्रजों और टीपू में सन्धि हो गई।

मराठों से युद्ध

वारेन हेस्टिंग्ज के कार्य-काल में ही मराठों की पहली लडाई हुई। यह झगडा पूना की गद्दी के सवाल पर हुआ। इस गद्दी के दो दावेदार थे—रघुनाथ राव (राघोवा) और नारायण राव। अंग्रेजो ने राघोवा का साथ दिया। कर्नल एजर्टन की कमान में घाटो की ओर बढती हुई अंग्रेजी फौज को मराठों ने टुकडे टुकडे कर दिया। इस लडाई में मराठो का सेनापति माधोजी सिन्दे था। अंग्रेजो को बडी शर्मनाक शर्तों पर मराठो से सन्धि करनी पडी। वारेन हेस्टिंग्ज ने इस सन्धि के बारे में लिखा है—"इसे पढ कर मेरा सिर शर्म से झुक गया।" जनरल गोडार्ड की अध्यक्षता में बगाल से आई हुई एक अंग्रेजी सेना को भी करारी हार हुई। अंग्रेजो ने अपने १९ अफसर, ३९०० सिपाही और ५००० बन्दूकें खोई। परन्तु कुछ अन्य ब्रिटिश सेनापतियों ने इस घाटे को पूरा कर दिया। १७८२ में सलबई की सन्धि हुई। अंग्रेजो ने राघोवा का पक्ष छोड कर नारायण राव को पूना की गद्दी का उत्तराधिकारी मान लिया।

माधोजी शिन्दे

वारेन हेस्टिंग्ज ने कम्पनी की आर्थिक स्थिति सुधारने की ओर विशेष ध्यान दिया। मराठो तथा हैदरअली और टीपू से लडाई के कारण कम्पनी का खजाना खाली हो गया था। अत हर अच्छे और बुरे तरीके से कम्पनी के खजाने को भरने की चेष्टा की गई। बगाल के नवाब का अलाउंस कम करके आधा कर दिया गया। ४० लाख रुपये के बदले अवध के नवाब को रुहेलखण्ड जीतने के लिये सैनिक सहायता दी। बनारस के राजा चेतसिंह से धन हथियाने के लिये अत्याचार किए। जब राजा उसकी मांगें पूर्ण करने में असमर्थ रहा तो उसके भतीजे को गद्दी पर बिठा दिया। अवध की बेगमो से दुर्व्यवहार किया। उनकी सब सम्पत्ति छीन ली। हेस्टिंग्ज के इन कामो को इंगलैण्ड में कम्पनी के डायरेक्टरो ने नापसन्द किया और १७८५ में उसे वापस बुला लिया गया जहां पर उस पर मुकदमा चला।

स्थायी बन्दोबस्त

वारेन हेस्टिंग्ज के बाद लार्ड कार्नवालिस (१७८६–९३) गवर्नर जेनरल बन कर आया। कार्नवालिस बगाल में जमीन के स्थायी बन्दोबस्त के लिए अधिक प्रसिद्ध है। इस बन्दोबस्त के अनुसार जमींदार लोग भूमि के सदा के लिए मालिक बन गए। इससे पूर्व हर पांच साल बाद जमीन को नीलाम किया जाता था। इससे कम्पनी को कुछ आर्थिक लाभ तो होता था, परन्तु जमीन को पट्टे पर लेनेवाले व्यक्ति उसे सुधारने में कोई रुचि नहीं लेते थे। इसलिए उपज [illegible] होती थी।

लार्ड कार्नवालिस के कार्यकाल में एक बार मैसूर के टीपू सुल्तान से युद्ध हुआ। मराठों और निजाम से गठजोड़ करके अंग्रेजों ने टीपू पर हमला कर दिया। टीपू की हार हुई और उसे अपना आधा राज्य देना पड़ा। इसे अंग्रेजों, मराठों और निजाम ने बराबर-बराबर बांट लिया।

लार्ड कार्नवालिस

अंग्रेजी राज्य का विस्तार

लार्ड कार्नवालिस के बाद छः वर्ष तक सर जानशोर गवर्नर जनरल रहे। उन्होंने देशीय रियासतों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया परन्तु अगला गवर्नर जनरल लार्ड वेलजली साम्राज्यवादी दृष्टिकोण का था। आते ही उसने राज्य विस्तार के लिये सहायक नीति (Subsidiary System) की प्रणाली चलाई। इस नीति को माननेवाले प्रत्येक राजा और नवाब के लिये जरूरी था कि वह अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार करे। अपने यहां अंग्रेजी फौज की एक टुकड़ी रखे जिसका खर्च वह स्वयं उठाए या खर्च के लिये कुछ इलाके अंग्रेजों को दे। किसी दूसरे शासक से लड़ाई छेड़ने से पूर्व अंग्रेजों से अनुमति प्राप्त करे। बदले में अंग्रेज इस राजा या नवाब को अपने संरक्षण में ले लेते थे। जिन शासकों ने यह प्रणाली स्वीकार कर ली, वे अपनी स्वतन्त्रता से तो हाथ धो बैठे, परन्तु उन्हें सुरक्षा मिल गई।
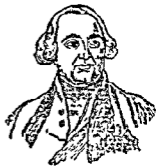
वेलजली ३१ दिसम्बर, १७९८ को मद्रास पहुंचा। ९ जनवरी, १७९९ को उसने 'मैसूर के शेर' टीपू से छेड़-छाड़ शुरू कर दी। वह जानता था कि टीपू फ्रांसीसी बादशाह नेपोलियन से साजबाज कर रहा है। काहिरा से नेपोलियन ने टीपू को लिखा था—"आपको लाल समुद्र तक मेरे आने की सूचना पहले ही मिल चुकी है। मैं एक अजेय सेना लेकर आपको अंग्रेजों के फौलादी पंजे से छुड़ाने के लिये आ रहा हूं।" टीपू को आदेश दिया गया कि वह फ्रांसीसियों को पदच्युत कर दे। अंग्रेजी राजदूत को दरबार में रखे। टीपू ने वेलजली की आदेश को ठुकरा दिया। मार्च में युद्ध छिड़ गया। श्रीरंगपट्टम के स्थान पर घमासान युद्ध हुआ। इतिहास के अनुसार "टीपू सुलतान एक शेर की तरह लड़ा उसके चेहरे पर तीन घाव लग चुके थे। इस तरह लड़ता हुआ वह शहीद हुआ।" अंग्रेजों की जीत हुई। मैसूर का राज्य वहां के भूतपूर्व हिन्दू राजा को दे दिया गया।

लार्ड वैलजली

वेलजली अंग्रेजी राज्य के विस्तार का दृढ़ निश्चय करके आया था। सर्वप्रथम उसने हैदराबाद के निजाम को सहायक नीति के अन्तर्गत अपने संरक्षण में ले लिया। १७९९ में उसने तंजौर के राजा को अयोग्य बताकर तंजौर राज्य छीन लिया। कर्नाटक के नवाब पर टीपू से षड्यन्त्र का अभियोग लगाकर कर्नाटक अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। सूरत के नवाब को पेन्शन देकर अलग कर दिया गया। १८०१ ई० में अवध के नवाब से रुहेलखण्ड छीन लिया।

दूसरा मराठा युद्ध

निजाम और टीपू से निपट कर वेलज़ली ने मराठों की ओर ध्यान दिया। पूना में पेशवा का राज्य था और ग्वालियर में सिन्धिया का। वह सबसे शक्तिशाली मराठा सरदार था। होल्कर और भोंसले भी शक्तिशाली मराठा सरदार था। मराठों में गृहयुद्ध आरंभ हुआ। पेशवा भाग कर अंग्रेजों की शरण में चला गया। इस पर मराठा सरदार भड़क उठे। पेशवा को अंग्रेजों से छुड़ाने के लिए सिन्धिया और भोंसले ने अंग्रेजों गुप बनाया। होल्कर अंग्रेजों की कूटनीति के कारण इस गुप में शामिल नहीं हुआ। असई और आरगाव के विरुद्ध के स्थानों पर दो भीषण युद्ध हुए। इनमें अंग्रेज विजयी हुए। अंग्रेजों ने तीव्रता से अहमदनगर, बुरहानपुर, अलीगढ़ और ग्वालियर पर कब्जा कर लिया। भोंसले ने मजबूर होकर अंग्रेजों से सन्धि की। इसे देवगाव की सन्धि कहते हैं। नागपुर में भोंसले के दरबार में एक ब्रिटिश राजदूत रखा गया और भोंसले को कटक तथा वर्धा नदी के पश्चिम का सारा इलाका अंग्रेजों के हवाले करना पड़ा।

उत्तर में जनरल लेक ने अलीगढ़, दिल्ली और आगरा पर कब्जा करके मुगल बादशाह को बन्दी बना लिया। सिन्धिया ने लेक को रोकने के लिए दक्षिण से फौज भेजी परन्तु उसे भी पराजय का सामना करना पड़ा। यह फौज स्वयं लेक के शब्दों में "भूतों की तरह लड़ी।" इसकी हार का कारण यह था कि सिन्धिया का शहीदी सेनापति पैरों विश्वासघात करके अंग्रेजों से जा मिला था। सिन्धिया की इस हार से अंग्रेजों का दबदबा सारे भारत में छा गया। अलवर, जयपुर और जोधपुर के राजाओं ने डर कर अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार कर ली। सिन्धिया के साथ भी १८०३ में सन्धि हुई। इस सन्धि के अनुसार अंग्रेजों ने सब जीते हुए प्रदेश अपने पास रख लिये। भोंसले को बरार, निजाम के हवाले करना पड़ा। सिन्धिया ने सहायक सन्धि के अन्तर्गत अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार कर ली।

परन्तु इससे शान्ति स्थापित न हुई। होल्कर अभी तक स्वतन्त्र था। जनरल लेक और जनरल आर्थर वेल्ज़ली ने उसका पीछा किया। परन्तु होल्कर ने उन्हें बुरी तरह पछाड़ा। लेक ने स्वयं स्वीकार किया, "मैंने पांच बटालियन और छ कम्पनियां खो दी हैं। वे हमारी सेना का सर्वोत्तम भाग थी। भगवान ही जानता है कि यह कमी कैसे पूरी होगी।"

इंगलैण्ड में कम्पनी के अधिकारी वेल्ज़ली की निरन्तर लड़ाइयों से परेशान हो चुके थे। इसलिए मराठा युद्ध की समाप्ति से पहले ही उसे वापस बुला लिया गया। परन्तु वेलज़ली को २०,००० पौंड इनाम में दिए गए।

वेलज़ली के बाद बूढ़े लार्ड कार्नवालिस को पुनः गवर्नर जनरल बनाकर भेजा गया। परन्तु वह हिन्दुस्तान पहुंचने के थोड़ी देर बाद ही मर गया। तत्पश्चात् सर जार्ज बार्लो गवर्नर जनरल बना। उसने सिन्धिया को ग्वालियर लौटाकर सन्धि कर ली। १८०६ में होल्कर से भी सन्धि हो गई। सन्धि के अनुसार अंग्रेजों ने उसका जीता हुआ इलाका लौटा दिया। उसे अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार नहीं करनी पड़ी। १८११ में यह वीर योद्धा असमय ही में परलोक सिधार गया। १८०७ में लार्ड मिण्टो भारत के गवर्नर जनरल बने और सात वर्ष तक इस पद पर रहे। उन्होंने देशी राज्यों में सक्रिय हस्तक्षेप नहीं किया।

लार्ड हेस्टिंगज

वेलजली ने भारत में साम्राज्य स्थापना का जो बीड़ा उठाया था, उसके बचे खुचे काम को लार्ड हेस्टिंगज (१८१३–२३) ने पूरा कर दिया। लार्ड हेस्टिंगज को सर्वप्रथम नेपाल के गोरखों से निपटना पड़ा। शुरू शुरू में तो गोरखों को अंग्रेजों के विरुद्ध कुछ सफलताएं मिलीं, परन्तु आखिर गोरखों की हार हुई। सागौली की सन्धि द्वारा नेपाल से यह युद्ध समाप्त हुआ। अंग्रेजों को शिमला, देहरादून, मसूरी, नैनीताल और अलमोड़ा के सुन्दर पर्वतीय स्थान गोरखों से मिले।

पिंडारे

तत्पश्चात् हेस्टिंगज ने पिंडारों की ओर ध्यान दिया। पिंडारे मूलतः पठान डाकुओं का एक गिरोह था जो मक्खियों के झुण्डों की तरह जहां जाते, तबाही मचा देते थे। इन्हें मराठे सरदारों की सहानुभूति प्राप्त थी। हेस्टिंगज ने पिंडारों के दमन के लिए १,१५,००० फौज इकट्ठी की। इतनी विशाल सेना अंग्रेजों ने आज तक कभी जमा न की थी। पिंडारों के प्रमुख नेता थे—करीमखां, वासिल मुहम्मद और चीतू। अंग्रेजी सेना उत्तर और दक्षिण दोनों ओर से बढ़ी। जनवरी, १८१८ तक पिंडारों का समूल नाश कर दिया गया था। वासिल मुहम्मद ने आत्महत्या कर ली। चीतू जंगलों में भाग गया और करीमखां ने आत्मसमर्पण कर दिया।

मराठों से अन्तिम युद्ध

अंग्रेजों को पिंडारों से व्यस्त देखकर पेशवा ने अन्य मराठा सरदारों से मिलकर स्वतन्त्रता प्राप्ति की अन्तिम चेष्टा की। परिणामस्वरूप अंग्रेजों और मराठों में अन्तिम और निर्णयात्मक युद्ध १८१७–१८ में हुआ। भोंसले ने पेशवा का पक्ष लिया। दोनों को अंग्रेजों ने हरा दिया। पेशवा को गद्दी से उतार कर पेन्शन दे दी गई और बिठूर निर्वासित कर दिया गया। वह अपने दत्तक पुत्र धोंडू पन्त को भी अपने साथ ले गया। यह लड़का बाद में नाना साहब के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सितारा की गद्दी पर शिवाजी के एक वंशज को बिठा दिया गया।

अब भारत में अंग्रेजों का प्रायः एकछत्र राज्य था। मराठे पिट गये थे, निज़ाम उनकी शरण में था। भारतवर्ष में सिखों को छोड़ कर अंग्रेजों का मुकाबला करने के योग्य कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं रही थी।

बर्मा से लड़ाई

हेस्टिंगज के बाद लार्ड एमहर्स्ट भारत के गवरनर जनरल बने। उनके कार्यकाल में १८२४ में बर्मा के साथ लड़ाई हुई। लार्ड एमहर्स्ट ने एक ब्रिटिश सेना भेज कर रंगून पर कब्जा कर लिया। बर्मा ने अंग्रेजों को आसाम, अराकान और तिनासरम के प्रदेश हानिपूर्ति के रूप में दिए।

सुधार

एमहर्स्ट के बाद विलियम बेंटिक गवर्नर जनरल बना। उसका कार्यकाल शान्ति, व्यवस्था और प्रगति का युग था। उसने हिन्दुओं की सती प्रथा का वैधानिक रूप से निषेध किया। ठगों को समाप्त किया। वे

टग व्यापारियों के वेष में मुसाफिरों का गला घोटकर उन्हें लूट लेते थे। ठगों के विनाश से सड़कें यात्रा के लिए सुरक्षित हो गई। बेंटिक ने शिक्षा के प्रसार की ओर भी ध्यान दिया।

विलियम बेंटिक के बाद लार्ड आकलैण्ड गवर्नर जनरल बना। अंग्रेजों को डर था कि उत्तर पश्चिम की ओर से कहीं रूस हमला न कर दे। इसलिये आकलैंड ने पंजाब के राजा रणजीत सिंह की मदद से शाहशुजा को अफगानिस्तान की गद्दी पर बिठा दिया। तत्कालीन अफगान सम्राट दोस्त मुहम्मद भाग गया। काबुल में अंग्रेजी सेना रख दी गई। लेकिन थोड़ी देर बाद ही अफगानों ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजी सेना को हथियार डालने पड़े। जब यह सेना वापस आ रही थी तो अफगानों ने इसे रास्ते में ही काट दिया। काबुल में अंग्रेज पुरुषों तथा स्त्री बच्चों की संख्या १६०० थी। इनमें से केवल एक आदमी बच सका। इसे पहला अफगान युद्ध (१८३९-४०) कहते हैं।

लार्ड विलियम बेंटिक

इस पराजय का कलंक लेकर आकलैण्ड घर लौट गया। उसके स्थान पर १८४२ में एलनबरो आया। अंग्रेजों ने बदला लेने के लिए काबुल पर पुनः हमला कर दिया। काबुल और गजनी के बाजारों को बर्बाद कर दिया गया। परन्तु उन्हें वहां ठहरने का साहस न हुआ।

उत्तर-पश्चिमी सीमा को सब प्रकार से सुरक्षित बनाने के लिए सिंध तथा पंजाब पर कब्जा करना जरूरी था। १८४३ में सर चार्ल्स नेपियर ने सिंध के अमीरों से साधारण-सा झगड़ा करके सिंध को अंग्रेजी राज्य में शामिल कर लिया।

लार्ड डलहौजी

सिखों से लड़ाई

अब सिखों की बारी थी। सिखों के दमन का कार्य लार्ड डलहौजी ने पूरा किया। १८४२ में जब वह गवर्नर जनरल बना तो सिखों से युद्ध छिड़ चुका था। सिखों के साथ जो युद्ध हुए, उनका वर्णन हम सिखों संबंधी पिछले एक अध्याय में कर चुके हैं। १८४९ में पंजाब सिख राज्य का अंग बन गया।

ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार

साम्राज्य लोलुपता की प्यास बुझाने के लिए लार्ड डलहौजी ने एक और तरीका अपनाया। उसने आदेश दिया कि जो राजा या नवाब निस्सन्तान मर जाए, उसका राज्य अंग्रेजी राज्य में शामिल कर लिया जाएगा। इसे लैप्स (Lapse) का सिद्धान्त कहते हैं। इस नीति के अन्तर्गत सितारा, नागपुर, झांसी और कुछ अन्य रियासतों को अंग्रेजी राज्य में शामिल कर लिया गया। लार्ड डलहौजी ने १८५३ में बरार निजाम से छीन लिया। १८५६ में अवध के नवाब वाजिदअली

शाह पर कुशासन का अभियोग लगाकर अवध को ब्रिटिश राज्य में शामिल कर लिया। बर्मा को भी ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया।

लार्ड डलहौजी के सुधार

डलहौजी केवल साम्राज्य निर्माता ही न था, उसने कई महत्वपूर्ण सुधार भी किए। उसके कार्यकाल में १८५३ में भारत में पहली रेल शुरू हुई। उसीके समय पहली बार तार की व्यवस्था की गई। उसने डाक व्यवस्था को सुधारा। शिक्षा की ओर ध्यान दिया तथा सार्वजनिक निर्माण विभाग का सगठन किया।

१०० वर्ष के अन्दर अंग्रेज भारतवर्ष के एकछत्र शासक बन गए। लार्ड डलहौजी १८५६ में भारत से गया। उसके बाद लार्ड कैनिंग आया। लार्ड कैनिंग के कार्यकाल में स्वतन्त्रता सग्राम हुआ जिसके बारे में आप अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) प्लासी की लड़ाई से १८५६ तक भारत में अंग्रेजी राज्य के विस्तार का संक्षेप से वर्णन करो।
(२) लार्ड वेलजली ने किस प्रकार अंग्रेजी राज्य को बढ़ाया? उसकी नीति का क्या परिणाम निकला?
(३) लार्ड हेस्टिंग्ज के कार्यकाल की मुख्य घटनाएं लिखो।
(४) सती प्रथा को किस गवर्नर जनरल ने बन्द किया? उसके बारे में संक्षिप्त नोट लिखो
(५) मराठों और अंग्रेजों के सघर्ष का संक्षेप में वर्णन करो।
(६) हैदरअली कौन था? उसने कौन सा राज्य स्थापित किया? हैदरअली का राज्य कैसे समाप्त हुआ?
(७) टीपू सुलतान को 'मैसूर का शेर' क्यों कहते हैं?
(८) अफगानों के साथ अंग्रेजों की पहली लड़ाई का हाल लिखो?
(९) लार्ड डलहौजी ने अंग्रेजी राज्य में किन-किन राज्यों को शामिल किया और कैसे?
(१०) संक्षिप्त टिप्पणियां लिखो —
रेगुलेटिंग एक्ट, पिटस इण्डिया एक्ट, स्थायी बन्दोबस्त, सहायक नीति, लैप्स का सिद्धान्त, पिंडारे, ठग।

: ३१ :

भारत का स्वाधीनता संग्राम

१९५७ में हमने अपने प्रथम स्वाधीनता संग्राम की १००वीं वर्षगांठ मनाई थी। १८५७ में स्वतन्त्रता की जो ज्योति भारत के वीरों ने जलाई थी, वह ९० वर्ष बाद १९४७ में जाकर फलीभूत हुई।

अंग्रेजों ने हमारे इस स्वतन्त्रता संग्राम को गदर का नाम दिया था। गदर उसे कहते हैं जो केवल फौज द्वारा किया जाए। परन्तु इस संग्राम में तो सैनिकों के अतिरिक्त राजाओं, महाराजाओं, जमींदारों, किसानों तथा हर प्रकार के लोगों ने योग दिया। इसे तो क्रान्ति कहना अधिक उपयुक्त है यद्यपि यह क्रान्ति हमारी फूट के कारण असफल रही।

कारण

अंग्रेजों के विरुद्ध इतना विशाल और देशव्यापी आन्दोलन एक दिन में संगठित नहीं हुआ। इस क्रान्ति की नींव तो १०० वर्ष पूर्व बंगाल में क्लाइव के कुशासन ने रख दी थी। अंग्रेज इतिहासकार स्टील के मत में 'इस विद्रोह का सबसे बड़ा कारण अंग्रेजों की अज्ञानता था'। उन्होंने भारतीय जनता से कोई ताल-मेल नहीं रखा था। अत १८५७ में जब तूफान उठा तो उन्हें ऐसे लगा जैसे किसी ने नींद से झकझोर दिया हो।

भारतीय सेना को स्वयं अंग्रेजों ने रास्ता दिखा दिया था कि अपनी मांगें मनवाने के लिए उन्हें क्या करना चाहिए। क्लाइव के समय में कुछ अंग्रेज अफसरों तथा सिपाहियों ने डबल भत्ता बन्द किए जाने के विरुद्ध सैनिक विद्रोह किया था जिसे क्लाइव ने कड़ाई से दबा दिया था। इसी प्रकार १८०९ में लार्ड मिण्टो के जमाने में मद्रास में अंग्रेज फौजी अफसरों ने अपनी बातें मनवाने के लिए विद्रोह किया था। अंग्रेजों द्वारा दर्शाया हुआ यह रास्ता भारतीय फौजी भी अपनाने लगे। १८०६ में पहली बार भारतीय सिपाहियों ने वेलोर के स्थान पर विद्रोह किया। १८२४ में बैरकपुर के स्थान पर एक हिन्दुस्तानी पैदल दस्ते ने रंगून जाने से इनकार कर दिया क्योंकि समुद्र पार जाने से उनका धर्म भ्रष्ट होना था। अंग्रेजों ने बागी सिपाहियों को तोपों से उड़ा दिया। इसके बाद बैरकपुर जैसे छोटे-मोटे कई सैनिक विद्रोह हुए परन्तु इन सबको कुचल दिया गया। स्पष्ट है कि भारतीय सेना में असन्तोष था और कुछ दूरदर्शी अंग्रेज इसको अनुभव भी करते लगे थे। १८२६ में भारत के कार्यवाहक गवर्नर जनरल सर चार्ल्स मेटकाफ ने लिखा था, "मुझे डर है कि एक रात में सो कर उठने पर देखूंगा कि भारत ब्रिटिश ताज से छिन चुका है।" १८५७ में सचमुच ही 'ब्रिटिश ताज का सबसे चमकदार हीरा' ताज से टूटने लगा था ?

असन्तोष की इस भावना के मुख्य कारण ये थे —

१ राजनीतिक —भारत ने अपनी स्वाधीनता खो दी थी। देशभक्त हिन्दुस्तानी अपनी इस अमूल्य निधि के छिन जाने से दुखी थे और उसे पुन प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील थे। भारतीय राज्यों के

अपहरण की नीति ने भी लोगो को भडका दिया। आपने पीछे पढा होगा कि जो भी राजा या नवाब बिना पुत्र मर जाता था उसके राज्य को लार्ड डलहौजी ब्रिटिश राज्य में शामिल कर लेता था।

२ सामाजिक —हिन्दू और मुसलमान दोनो ही अपने ईसाई शासको के नए नए सुधारो से परेशान थे। डाक, तार, रेल इत्यादि सबको उन्होंने ईसाई धर्म के प्रचार का एक साधन समझा। अंग्रेजो ने सेना में ईसाई धर्म के खुले प्रचार की आज्ञा दे दी थी। जो सैनिक ईसाई बन जाते उन्हें बडा मान और आदर मिलता। देश में अंग्रेजी पढाए जाने की व्यवस्था से उनके इस सन्देह को बल मिला कि अंग्रेज हमें ईसाई बनाने पर तुले हुए हैं। इसलिए हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने धर्म की रक्षा के लिए तैयार हो गए।

३ आर्थिक —भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना से बेकारी फैल गई। विदेशी लूट खसोट से लोग गरीब हो गए। गृह उद्योगो को अंग्रेजो ने समाप्त कर दिया। अंग्रेज जो कुछ कमाते थे, वह इगलैण्ड चला जाता। भारत का धन भारत में नही रहता था। यही नही, अंग्रेजो की नीति से बहुत से राजे, नवाब, जमीदार और सिपाही बेकार हो गए। अंग्रेज जिस राज्य को अपने अधीन करते, वहा की फौज को भग कर देते थे। इस तरह वे सिपाही बेकार हो जाते थे।

सबसे बढ कर लोगो मे यह भावना जागृत हुई कि ये मुट्ठी भर अंग्रेज हमारे इस प्राचीन देश पर क्यो शासन करें ?

विद्रोह की आग सुलग रही थी केवल उस चिनगारी की जरूरत थी जो इस आग को भडका दे। चिनगारी का काम चर्बीवाले उन कार्तूसो ने कर दिया जो अंग्रेजो ने १८५३ में भारतीय सेना में प्रचलित किए। इन कार्तूसो को प्रयोग करने से पहले मुह से काटना पडता था। अफवाह यह थी कि कार्तूसो में गाय और सूअर की चर्बी लगी है। नए कार्तूसो के प्रचलन का उद्देश्य हिन्दुओ और मुसलमानो के धर्म को भ्रष्ट करना है।

स्वाधीनता सग्राम की रूपरेखा

स्वाधीनता सग्राम की रूपरेखा सर्वप्रथम नाना साहब और उनके सलाहकार अजीमुल्ला ने बनाई। अजीमुल्ला नाना साहब (अन्तिम पेशवा का उत्तराधिकारी) की पेन्शन लगवाने के लिए कम्पनी के डायरेक्टरो से मिलने इगलैण्ड गया था। वहा पर डायरेक्टरो ने उसकी एक न सुनी। निराश होकर वह भारत लौट आया और नाना साहब से मिल कर भारत की देशी रियासतो को एक सूत्र में बाध कर अंग्रेजो को बाहर निकालने की योजना बनाने लगा। जनता में इस विद्रोह की प्रतीक दो चीजें थी—गेहूँ की रोटी और लाल कमल का फूल। स्वाधीनता सग्राम के प्रतीक स्वरूप ये चीजें देश के एक गाव से दूसरे गाव तक पहुचाई गई। निश्चय यह हुआ था कि ३१ मई को मुगल बादशाह बहादुरशाह के नेतृत्व में देशव्यापी विद्रोह होगा। परन्तु सैनिको की बेसब्री के कारण विद्रोह समय से पहले ही शुरू हो गया और यह बहुत हद तक इसकी असफलता का कारण भी बना।

प्रारम्भ

सबसे पहले विद्रोह की ज्वाला बैरकपुर छावनी (कलकत्ता) में भडकी। वहा सेना की एक टुकडी ने चर्बीवाले कार्तूस लेने से इनकार कर दिया। एक भावुक सैनिक मगल पाण्डे ने तीन अंग्रेजो की हत्या कर दी।

मंगल पांडे को फांसी दे दी गई। इस घटना ने एक प्रकार के सिगनल का काम किया। १० मई को मेरठ की फौजों ने विद्रोह कर दिया। नगरवासियों ने सेना का साथ दिया। मेरठ छावनी पर कब्जा करने के उपरान्त ये सिपाही दिल्ली आ गए। दिल्ली पर कब्जा करके सैनिकों ने बहादुरशाह को शाहंशाह हिन्दुस्तान घोषित कर दिया। यह विद्रोह शीघ्र ही कानपुर, लखनऊ, झांसी इत्यादि स्थानों में फैल गया।

बहादुरशाह

नाना साहब

कानपुर में देशभक्तों का नेता नाना साहब था। वह अन्तिम पेशवा बाजीराव द्वितीय का दत्तक पुत्र था। उसे अंग्रेजों के विरुद्ध रोष था क्योंकि उन्होंने उसकी वह पेन्शन रोक दी थी जो उसके पिता को मिलती थी। कानपुर में लगभग एक हजार अंग्रेज थे जिन्हें निर्दयतापूर्वक खत्म कर दिया गया। लखनऊ में जब विद्रोह हुआ तो अंग्रेजों ने रेजीडेंसी में शरण ली। वहां का चीफ कमिश्नर सर जान लारेंस मारा गया और जनरल हैवलक भाग गया।

रानी लक्ष्मीबाई

रानी झांसी

स्वाधीनता संग्राम में सबसे प्रमुख भाग महारानी झांसी (लक्ष्मीबाई) ने लिया। यह वीरांगना मरदाने कपड़े पहन कर स्वयं सेना का संचालन करती थी। बड़ी वीरता से लड़ती हुई इस रमणी ने युद्धभूमि में जान दी। १८५८ के अन्त में झांसी पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। रानी झांसी की वीरता की प्रशंसा स्वयं अंग्रेज सेनापतियों ने की है।

ग्वालियर में मराठा सेना ने तात्या टोपे के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। वह बड़ा वीर पुरुष था। उसने बिठूर पर कब्जा कर लिया। १८५९ में अंग्रेजों ने तात्या टोपे को कानपुर के पास पराजित कर दिया। तात्या दक्षिण में जाकर विद्रोह का संगठन करना चाहता था। परन्तु अल्वर में एक विश्वासघाती मित्र ने उसे अंग्रेजों के हवाले कर दिया। अंग्रेजों ने उसे फांसी दे दी। स्वतन्त्रता संग्राम के कुछ अन्य सेनानियों के नाम ये हैं:—जगदीशपुर के राजा कुमार सिंह और फैजाबाद के मौलवी अहमदशाह।

१८५९ के प्रारम्भ में यह विद्रोह प्राय समाप्त हो गया। अंग्रेजो ने बहादुरशाह "जफर" को पकड कर मुकदमा चलाया। बूढ़े बादशाह को रगून निर्वासित कर दिया गया जहा चार वर्ष बाद उनका देहान्त हो गया। उनके दो बेटो और एक पोते को गोली मार दी गई। रंगून जेल में इस कवि बादशाह के अन्तिम दिन बुरी तरह कटे। उन्हें कविता लिखने के लिए अंग्रेज पेंसिल और कागज भी नही देते थे। वे कोयलो के साथ दीवारो पर शेर लिखते रहते थे। उनका निम्न शेर उनकी दयनीय दशा का प्रतीक है —

कितना है बदनसीब 'जफर' कफन के लिए
दो गज जमीन भी न मिली कूचा-ए-यार में

नाना साहब जगलो में भाग गया। अंग्रेजो ने लोगों पर बडे जुल्म ढाए। सिपाहियों को वृक्षो से लटका-लटका कर फासिया दी गई। ८ जुलाई, १८५९ को लार्ड कैनिंग ने शान्ति स्थापित हो जाने की घोषणा कर दी।

लार्ड कैनिंग

परिणाम

भारतीय स्वतन्त्रता सग्राम का यह परिणाम कुछ आश्चर्यजनक नही था। हमारी हार एक तरह से निश्चित थी। अंग्रेजी सेना में बडा अनुशासन था और उनके पास उन्नत हथियार थे। जिस प्रकार बेहतर सैनिक सचालन तथा अच्छे हथियारो के कारण बाबर इब्राहीम लोदी को हराने में सफल हुआ, उसी प्रकार १८५७ में अंग्रेज अपनी इन्ही विशेषताओ के कारण भारतीय देशभक्तो को कुचलने में सफल हुए। भारतीयो की देश भक्ति तो अंग्रेजी गोलियों और तोपखाने का मुकाबला नही कर सकती थी। भारत को अपनी आजादी प्राप्त करने के लिए अभी काफी इन्तजार करना था। १८५८ में विद्रोह की समाप्ति के साथ ही भारत में कपनी राज का युग समाप्त हुआ। उसके साथ ही मुगल साम्राज्य तथा पेशवा राज के अवशेष भी मिट गए। एक नया दौर प्रारम्भ हुआ जिसमें भारतीय निरन्तर ९० वर्ष तक सघर्ष करने के बाद अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए। यह कैसे सम्भव हुआ? हम आपको अगले परिच्छेद में बताएगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) १८५७ के विद्रोह को स्वाधीनता सग्राम क्यों कहते हैं?
(२) स्वाधीनता संग्राम के मुख्य कारण क्या थे?
(३) स्वाधीनता सग्राम में देशभक्त असफल क्यों रहे?
(४) सक्षिप्त टिप्पणियां लिखो :—
बहादुरशाह, लक्ष्मीबाई, तांत्या टोपे, नाना साहब, मंगल पाण्डे।

: ३२ :

ब्रिटिश राज की छत्रछाया में राजनीतिक और सामाजिक चेतना

१८५७ में भारत के स्वतन्त्रता संघर्ष के कुचले जाने के बाद देश के इतिहास में एक नया युग शुरू होता है। देश का शासन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों से छिन कर ब्रिटिश सरकार के हाथ चला गया। इंगलैण्ड की महारानी विक्टोरिया भारत की सम्राज्ञी बनी। गवर्नर जनरल का पद हटा दिया गया। ब्रिटिश ताज के प्रतिनिधि के रूप में वायसराय की नियुक्ति होने लगी। लार्ड कैनिंग ने भारत के प्रथम वायसराय का पद सम्भाला।

देश का शासन सम्भालते समय ब्रिटिश सम्राज्ञी ने जो घोषणा पत्र निकाला उसमें जनता को विश्वास दिलाया गया कि भविष्य में सरकार सदा भारतवासियों की भलाई के लिए प्रयत्नशील रहेगी। लोगों के धर्म में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा। ब्रिटिश सरकार राज्य विस्तार की कोई चेष्टा न करेगी। निःसन्तान नरेश दत्तक पुत्र ले सकेंगे। घोषणा पत्र में कहा गया, *"आप लोगों की समृद्धि में हमारी शक्ति है, आपके सन्तोष में हमारी सुरक्षा निहित है और आपकी कृतज्ञता ही हमारा इनाम है।"*

सम्राज्ञी की इस घोषणा ने दुखते फोड़े पर फाहे का काम किया। स्वतन्त्रता की आग थोड़ी देर के लिए शान्त होगई, बुझी नहीं। शीघ्र ही वह इण्डियन नेशनल कांग्रेस के रूप में पुनः व्याप्त हुई। ब्रिटिश सरकार के हाथ में शासन चले जाने के बाद कुछ महत्वपूर्ण वैधानिक सुधार हुए। आप पढ चुके हैं कि १७७३ में रेगुलेटिंग एक्ट द्वारा बम्बई तथा मद्रास की सरकारों को बंगाल के अधीन कर दिया गया था। उन्हें कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं था। कानून बनाने का अधिकार केवल बंगाल को ही प्राप्त था। १८६१ में ब्रिटिश सरकार ने एक कौंसिलज एक्ट पास किया इसके अन्तर्गत बंगाल, बम्बई और मद्रास की सरकारों के लिए पृथक पृथक कौंसिलों की व्यवस्था कर दी गई। वे अब अपने अलग-अलग कानून बना सकती थीं। केवल वायसराय की स्वीकृति की जरूरत होती थी। वायसराय की लेजिस्लेटिव कौंसिल (विधान सभा) को भी बड़ा कर दिया गया। उसमें कुछ गैर-सरकारी सदस्य शामिल किए गए। इस वर्ष पहली बार कुछ भारतीयों को कौंसिल में शामिल किया गया। कौंसिल के सदस्य कानून बना सकते थे परन्तु उन्हें सवाल पूछने का अधिकार नहीं था। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में हाइकोर्टों की स्थापना हुई। भारतवासियों के न्याय के लिए भारतीय दण्ड विधान की रचना हुई।

१८८० में लार्ड रिपन भारत का वायसराय बना। उसने जहां ब्रिटिश राज की उन्नति के लिए उपाय किए वहां भारतीयों को भी कुछ नागरिक अधिकार दिए। आज देश में हम जो जिला बोर्ड, नगरपालिका, ग्राम पंचायतें आदि देखते हैं उनकी सर्वप्रथम नींव लार्ड रिपन के ही कार्यकाल में रखी गई थी। लार्ड रिपन ने समाचार पत्रों की आजादी पर लगे हुए कुछ प्रतिबन्ध भी उठा लिए।

१८८५ तक भारत में शांति का साम्राज्य था। अंग्रेजो ने यातायात तथा डाक व्यवस्था सर्वसाधारण के लिए सुलभ बना दी। अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार हुआ। कुछ भारतीय उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंगलैण्ड गए। वहा से वे स्वतन्त्रता की भावना से भरकर स्वदेश लौटे। उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किसी देश-व्यापी संगठन की आवश्यकता को अनुभव किया। १८७६ ई० में श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने इण्डियन एसोसियेशन की स्थापना की। तदोपरान्त १८८३ में एक प्रगतिशील अंग्रेज श्री ए ओ ह्यूम ने विश्वविद्यालयों के स्नातकों से अपील की कि वे देश सेवा में भाग लें। इस अपील में एक देश-व्यापी संगठन बनाने पर जोर दिया गया। १८८५ में श्री ह्यूम ने वायसराय की अनुमति लेकर बम्बई में एक सम्मेलन किया जिसमें देश के विभिन्न भागों से प्रतिनिधि आए। कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन श्री व्योमेशचन्द्र बनर्जी के सभापतित्व में २८ से ३० दिसम्बर तक हुआ।

लार्ड रिपन

अगले वर्ष सन् १८८६ में कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन कलकत्ते में हुआ। इसके सभापति दादा भाई नौरोजी थे। इसमें श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, पण्डित मदन मोहन मालवीय आदि नेता भी शामिल हुए। सम्मेलन में शिक्षा प्रसार की माग की गई। सम्मेलन की समाप्ति पर वायसराय लार्ड डफरिन ने प्रतिनिधियों को एक प्रीति भोज दिया। १७८६ से १९०४ तक कांग्रेस की कार्रवाई प्राय कागजी कार्रवाई ही होती थी। वर्ष में एक बार मिलकर ये लोग कुछ प्रस्ताव पास कर देते थे जिनकी ओर सरकार कोई ध्यान नही देती थी। कांग्रेस की अकर्मण्यता की नीति को अधिकतर लोग पसंद नही करते थे। अब तक कांग्रेस में कुछ और महान विभूतियां शामिल हो चुकी थी जैसे लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय, अरविन्द घोष, विपिन चन्द्र पाल, गोपाल कृष्ण गोखले, इत्यादि। श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, दादा भाई नौरोजी और पण्डित मदनमोहन मालवीय पहले ही कांग्रेस में थे।

जब लोकमान्य तिलक ने कांग्रेस के मच से यह घोषणा की कि "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूंगा", तो सारा भारत लोकमान्य की जय जयकार करने लगा। कुछ लोगो को लोकमान्य की नीति अच्छी लगी और कांग्रेस दो दलों में बट गई। एक दल गर्म दल कहलाता था तो दूसरा नरम दल। गर्म दल के नेता लोकमान्य तिलक थे और उनके साथियों में पजाब के लाला लाजपत राय और बगाल के विपिनचन्द्र पाल और अरविन्द घोष के नाम उल्लेखनीय है। नरम दल के नेताओं में दादाभाई नौरोजी सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, गोपाल कृष्ण गोखले, पण्डित मदन मोहन मालवीय आदि नाम प्रमुख हैं।

कांग्रेस के निर्माता

सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी —आधुनिक युग के राजनीतिज्ञो में आपका नाम सर्वप्रथम आता है। आपने उस समय आई०सी०एस० की परीक्षा पास की थी, किन्तु स्वाधीनता संघर्ष में भाग लेने के कारण आपने सरकारी पद को ठोकर मार दी। वास्तव में कांग्रेस को जन्म देनेवालों में आप ही प्रमुख थे। आपने भारत का भ्रमण करके देशवासियों में स्वाधीनता के प्रति लगन उत्पन्न की। आप दो बार कांग्रेस के अध्यक्ष (सन् १८९५ तथा

१९०२) मनोनीत हुए। सन् १९२१ में ब्रिटिश सरकार ने उन्हें बंगाल राज्य का मन्त्री नियुक्त किया। अन्तिम दिनों में आपकी विचारधारा में परिवर्तन आ गया था। आप उस समय आम चुनावों में भाग लेकर सुधार करने के पक्ष में थे जबकि देश के अन्य व्यक्ति असहयोग के पक्ष में थे। स्वाधीनता संग्राम के इस महान सेनानी ने सन् १९२५ में स्वर्ग यात्रा की।

दादा भाई नौरोजी—भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में नौरोजी का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा हुआ है। बी० ए० पास करने के उपरान्त आप एक कालिज में प्रोफेसर हो गये थे। सन् १८५८ में आप व्यापारिक कार्य की शिक्षा के लिए इंगलैण्ड गये। वहां पर आपने ११ वर्ष रह कर विश्व राजनीति का अध्ययन किया। भारत में आकर आपने कांग्रेस का संगठन किया। तीन बार कांग्रेस के अध्यक्ष (१८८६, १८९३, १९०६) मनोनीत हुए। आप नर्म दलीय नेताओं में प्रमुख थे। देश सेवा में आपने अन्तिम समय तक भाग लिया। सन् १९१७ में आपकी मृत्यु हो गई।

दादाभाई नौरोजी

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक—महाराष्ट्र ने भारत को एक महान कर्मठ कूटनीतिज्ञ एवं वेदों, शास्त्रों का ज्ञाता नेता के रूप में दिया। इस नेता का नाम बाल गंगाधर तिलक था। सर्वसाधारण में उनकी अपार प्रतिष्ठा थी। इसी कारण उनको लोकमान्य कहा जाता है जिसका अर्थ है सारी जनता में जिसकी मान्यता हो। आपने बी० ए० तथा वकालत की शिक्षा प्राप्त करके एक राष्ट्रीय कालेज का संचालन किया।

लोकमान्य तिलक

भारतीय जनता में राजनीतिक चेतना के प्रसार के लिए दो समाचार-पत्रों (मराठा और केसरी) का संचालन किया। अपने पत्रों द्वारा आपने भारतीय युवकों की सुप्त धमनियों में रक्त का संचार किया। राजनीतिक क्षेत्र में तिलकजी के प्रवेश से भारतीय जीवन में एक महान् क्रांति हुई। सन् १९०० से १९२० तक के समय को राजनीति में तिलक युग कहा जाने लगा क्योंकि सर्वसाधारण तिलक के लेखों और भाषणों से प्रभावित थे। आपने कांग्रेस मंच से कहा कि स्वाधीनता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है और हमें उसे प्राप्त करना है। तिलक की यह घोषणा सुन कर भारतीय तरुणों की बाहें खिल उठीं। भारत में अंग्रेजी सरकार को तिलक से खतरा अनुभव होने लगा।

तिलक जी के समय में कुछ भारतीय युवकों ने क्रान्तिकारी दल की स्थापना की थी जिनमें सरदार भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, राम प्रसाद बिस्मिल आदि प्रमुख हैं। ये सशस्त्र क्रान्ति में विश्वास रखते थे। कलकत्ता में इसी दल

के किसी सदस्य ने एक अंग्रेज अधिकारी की हत्या कर दी। इस घटना पर चर्चा करते हुए तिलक ने अपनी पत्रिका में लिखा था कि "यह हत्या अंग्रेजो द्वारा पैदा की गई उन परिस्थितियो का परिणाम है जिसके कारण भारतीयत या अंग्रेज दोनो एक दूसरे के विरोधी हो गए हैं।" सरकार ने इन पत्रियो को आपत्तिजनक समझ कर आपको माण्डले जेल में नजरबंद कर दिया। जेल में आपने एक महान सांस्कृतिक ग्रन्थ "गीता रहस्य" की रचना की। जेल से छूटने के पश्चात् आपने होम रूल आन्दोलन में भाग लिया। भारतीय जनता ने आपको, आपकी इकसठवी वर्ष गाठ पर एक लाख रुपये की थैली भेंट की जो आपने कांग्रेस को सौंप दी। १ अगस्त सन् १९२१ को आपका स्वर्गवास हो गया।

गोपाल कृष्ण गोखले —तिलक जी के समान श्री गोपाल कृष्ण गोखले की भारतीय जनता में बड़ी प्रतिष्ठा थी। श्री तिलक यदि गर्म दल के नेता थे तो आप नर्म दल के नेता थे। आप शांति और प्रेम द्वारा अंग्रेज अधिकारियों से सुधार एव अधिकार की आशा करते थे। वे डरा धमका कर किसी भी अधिकार की प्राप्ति को अनुचित समझते थे। सर्व प्रथम आपने महादेव गोविन्दरानाडे के साथ एजूकेशन सोसाइटी की स्थापना की। श्री रानाडे ही आपके राजनीतिक गुरु थे।

गोपाल कृष्ण गोखले

सन् १९०९ में आपने सर्वेन्ट आफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना की। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य भारत में ऐसे युवको का निर्माण करना था जो राष्ट्र यज्ञ में अपने जीवन की बलि दे सकें। पत्र-प्रकाशन, सहकारी उद्योग एव शिक्षा प्रचार के क्षेत्रो में इसी संस्था द्वारा महान प्रयास किया गया। सन् १९१५ में आप कांग्रेस के बनारस अधिवेशन के सभापति मनोनीत हुए। उस समय दक्षिणी अफ्रीका में भारतवासियो के लिए महात्मा गाधी ने आन्दोलन छेड़ रखा था। श्री गोखले गाधी जी के निमन्त्रण पर दक्षिणी अफ्रीका गए। भारतीय स्वाधीनता के लिये महात्मा गाधी ने जितने भी कार्य किये उनके पीछे गोखले का हाथ होता था। स्वय महात्मा गाधी ने स्वीकार किया कि श्री गोखले मेरे राजनीतिक गुरु हैं।

श्री गोखले ने जहा राजनीतिक आन्दोलन को सफल बनाने में कार्य किया वहा उन्होंने समाज सुधार के क्षेत्र में भी भारी काम किया। हिन्दू और मुसलमान दोनो जातियो में फूट डाल कर अंग्रेज भारत में राज्य करना चाहता था। श्री गोखले ने हिन्दू और मुसलमानो की खाई को पाटने के लिए प्रयास किया। अछूतोद्धार के लिए भी आपने चेष्टा की। सन् १९१६ में जब आप केवल ४६ वर्ष के थे तो आपका देहान्त हो गया।

धार्मिक और सामाजिक चेतना

जब देश में राजनीतिक चेतना की लहर उठ रही थी तो सामाजिक और धार्मिक जागृति का पैदा होना भी स्वाभाविक था। शिक्षा के प्रसार के साथ भारतीय अपने समाज तथा धर्म के भी गुण दोष परखने लगे। उस समय हिन्दू-समाज बुरी तरह रूढ़ियों से जकड़ा हुआ था। आर्य समाज इत्यादि के रूप में हिन्दू समाज के

सुधार के आन्दोलन शुरू हुए। भारत में सामाजिक क्रान्ति के कुछ अग्रदूतों का संक्षिप्त जीवन चरित हम नीचे दे रहे हैं।

राजा राममोहन राय—राजा राममोहन राय ने ही सर्वप्रथम भारतीयों में सामाजिक चेतना का मन्त्र फूंका। आप १७७६ में बंगाल में पैदा हुए थे और १८३२ में इंगलैण्ड में उनका देहान्त हुआ। आप मुगल बादशाह के वकील के रूप में इंगलैण्ड गए थे। बादशाह ने आपको राजा की उपाधि दी थी। राजा राममोहन राय ने फारसी, संस्कृत और अंग्रेजी का गहरा अध्ययन किया था। अतः आप भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता से भलीभांति परिचित थे। शिक्षा के प्रचार के लिए कलकत्ता में हिन्दू कालेज की स्थापना की। भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैंटिक की सहायता से देश में सती प्रथा बंद करने का आन्दोलन शुरू किया। भारतीय समाज के भिन्न भिन्न मतमतान्तरों के अच्छे सिद्धान्त लेकर एक धार्मिक सम्प्रदाय 'ब्रह्मसमाज' की नींव रखी।

राममोहन राय

ब्रह्म समाज में मूर्ति पूजा का कोई स्थान न था। इस समाज द्वारा विज्ञान की नई नई खोजों पर प्रकाश डाला गया। भारतीय जनता के हृदयों से पाखण्ड एवं आडम्बर को हटाने का प्रयास किया गया। ब्रह्मसमाज के प्रचार में आगे चल कर महाकवि टैगोर के पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर तथा स्वामी केशवचन्द्र ने कार्य किया। आजकल समाज की भारत के विभिन्न भागों में शाखायें स्थापित हो चुकी हैं। ब्रह्मसमाज के आन्दोलन से प्रभावित होकर अंग्रेजी सरकार ने कानून बनाया कि विधवायें अपनी इच्छा से दूसरी शादी कर सकती हैं। छोटी आयु की कन्या तथा बालकों का विवाह अवैध घोषित हुआ।

रानाडे

ब्रह्मसमाज की देखादेखी महाराष्ट्र में प्रार्थना समाज की स्थापना हुई, यह समाज भी हिन्दू जाति का एक अंग था। बम्बई में इस समाज का वही स्थान है जो बंगाल में ब्रह्मसमाज का। इस समाज के मुख्य संचालक न्यायाधीश महादेव गोविन्द रानाडे थे। आपने अन्तर्जातीय विवाह, अछूतोद्धार, विधवा विवाह इत्यादि समाज सुधार के कार्य किये। बाल-विवाह को रोकने के लिए भी इस समाज ने अनेक उपाय किये। रानाडे सरकारी नौकर होते हुए भी बम्बई की सभी सामाजिक संस्थाओं के प्राण थे।

सर सैयद अहमद खाँ—राजा राममोहन राय तथा मदन मोहन मालवीय ने प्रचार एवं प्रेरणा से हिन्दुओं में अंग्रेजी भाषा के पठन-पाठन के प्रति उत्साह पैदा किया। किन्तु मुसलमान अभी तक अरबी फारसी के पीछे ही पड़े हुए थे। सौभाग्य से उस समय मुसलमानों को सर सैयद अहमद खां के रूप में ऐसा नेता मिला जिसने मुस्लिम समाज की बुराइयों को दूर करने का उपाय किया। उन्होंने मुसलमानों को कहा कि वह अपनी

उन्नति के लिए शिक्षा प्राप्त करें। सर सैयद अहमद को सर्व प्रथम अपने सुधार कार्य में काफी कठिनाइयां आईं परन्तु वे साहस के साथ अपने पथ पर बढ़ते ही चले गए। सन् १८७५ में आपने अलीगढ़ में एंग्लो ओरिएन्टल कालेज की स्थापना की। १८८६ में आपने महम्मडन एजूकेशनल कान्फ्रेंस की स्थापना की। इस संस्था का प्रतिवर्ष अधिवेशन होता था जिसमें मुस्लिम जगत में फैली हुई कुरीतियों को दूर करने के उपाय सोचे जाते थे। इसके अतिरिक्त शिक्षा प्रचार की नयी योजनाओं पर विचार किया जाता था।

सर सैयद अहमद खां की मृत्यु के पश्चात् भी उनका लगाया हुआ पौधा फूलने फलने लगा। ओरियन्टल कालेज ने उन्नति करते करते सन् १९२० में मुस्लिम विश्वविद्यालय का रूप ले लिया।

भारत में सामाजिक चेतना पैदा करने में राजा राममोहन राय और सर सैयद अहमद जैसे नेताओं का बड़ा हाथ है। इसके साथ देश में समाचार पत्रों का प्रकाशन शुरू हो जाने से सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध हो रहे आन्दोलन को बल मिला और शिक्षा के प्रसार में सहायता भी।

धार्मिक चेतना.—इधर तो राजनीति एवं समाज के निर्माता शिक्षा प्रसार तथा समाचार-पत्रों द्वारा भारतीय जनता का मार्ग दर्शन कर रहे थे उधर भारतीय धार्मिक जगत में स्वामी दयानन्द और स्वामी रामकृष्ण परमहंस का उदय हुआ जिन्होंने धर्म के नाम पर होनेवाली बुराइयों की निन्दा की। स्वामी दयानन्द ने उस समय सम्पूर्ण वेद शास्त्रों का अध्ययन करके आर्य समाज की स्थापना की।

स्वामी दयानन्द .—आपका जन्म १८२४ में गुजरात में हुआ था। आपके माता-पिता कट्टर सनातनी थे। १४ वर्ष की आयु में एक बार शिवरात्रि के अवसर पर स्वामी दयानन्द ने जिनका बचपन का नाम मूलशंकर था, शिवजी की आराधना में व्रत तथा समस्त रात्रि का जागरण किया। इस जागरण में उन्हें मूर्ति पूजा की व्यर्थता का बोध हुआ। आपने देखा कि एक चूहा शिव की प्रतिमा पर रात भर उछलता-कूदता रहा। उन्होंने अपने मन में निश्चय किया कि मूर्ति पूजा व्यर्थ है। उन्होंने सच्चे शिव की आराधना का निश्चय किया। मथुरा में स्वामी विरजानन्द से धर्म ग्रन्थों की शिक्षा प्राप्त की।

शिक्षा प्राप्त कर स्वामी दयानन्द ने भारतीय जनता के सम्मुख प्रचलित हिन्दू धर्म के दोषों को रक्खा और उनके सुधार का रास्ता दिखाया। स्वामी जी ने देश भर में घूम कर वेद प्रचार किया। आपने वेदों का हिन्दी में अनुवाद किया और जनसाधारण के लिए "सत्यार्थ प्रकाश" नामक एक धर्म-पुस्तक लिखी। स्वामीजी ने कहा कि जो हिन्दू, मुसलमान या ईसाई बन चुके हैं उन्हें वेद मन्त्रों के उच्चारण से पुनः हिन्दू धर्म में लाया जा सकता है। स्वामी जी आर्य धर्म के प्रचारक थे। इस काम के लिए उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। देश के कुछ भागों में विशेष रूप से पंजाब में आर्य समाज का बड़ा प्रचार हुआ। इसने हिन्दुओं में धर्म-परिवर्तन की प्रवृत्ति को रोक दिया।

स्वामी जी ने भारत के विभिन्न नगरों में आर्य समाज की शाखाएं स्थापित की। आर्य समाज ने देश के विभिन्न भागों में गुरुकुल एवं कालेज शिक्षा प्रारम्भ की। इन शिक्षा-संस्थाओं द्वारा आर्य समाज के सिद्धांतों...

का प्रचार हुआ। अंग्रेजी शिक्षा के साथ साथ वेदो की शिक्षा का भी आर्य समाजी कालेजो द्वारा प्रचार हुआ। स्वामी जी ने स्वराज्य की महत्ता को सर्वश्रेष्ठ बताया। स्वामीजी ने जितना भी प्रचार किया उसकी भाषा हिन्दी थी। जहा हिन्दी ने सर्वसाधारण के लिये स्वामी जी के उपदेशो को सरल बना दिया था, वहा स्वामीजी द्वारा हिंदी भाषा को बड़ा बल मिला।

रामकृष्ण परमहंस—स्वामी दयानन्द के समकालीन स्वामी रामकृष्ण परमहस ने सभी धर्मों के माननेवालो की एकता पर बल दिया। स्वामी रामकृष्ण परमहस ने धार्मिक पूजा परिपाटी के लिये वेदो का ही सहारा लिया। परन्तु उन्होने मूर्ति पूजा का समर्थन किया। आपने कहा कि ईश्वर, अल्लाह, ईसा, कृष्ण, और मुहम्मद एक ही के अनेक नाम हैं। स्वामी जी ने इस कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिये एक संस्था रामकृष्ण मिशन की स्थापना की।

इस संस्था के अनेक कार्यकर्त्ताओ ने भारतवर्ष के आध्यात्मिक सदेश को विश्व के सम्मुख रखा। स्वामी रामकृष्ण के शिष्य स्वामी विवेकानन्द भारतीय संस्कृति का अमर सदेश लेकर यूरोप तथा अमेरिका गये जहा पर उन्होने भारतीय संस्कृति एव भारतीय राष्ट्रवाद का सच्चा स्वरूप विश्व के नागरिको के सम्मुख रक्खा। स्वामी विवेकानन्द का मुख्य सदेश था जन सेवा। आपने कहा, 'जहा भी कही महामारी, अकाल या कोई और मुसीबत आए, तुरन्त जाकर लोगो का दुख हरण करो।" रामकृष्ण मिशन का यही काम है। इस मिशन के केन्द्र योरोप और अमेरिका में भी हैं। कई मिशन वेदान्त का प्रचार करता है। स्वामीजी देश की स्थिति से भलीभाति परिचित थे। अत आपने पुकार की, 'आज देश को लोहे की भुजाओ, फौलाद की धमनियों और पहाड जैसे संकल्प की आवश्यकता है।" १९०२ में केवल ३८ वर्ष की आयु में देश का यह सपूत अकाल ही चल बसा।

स्वामी विवेकानन्द

थियोसोफिकल सोसाइटी—थियोसोफिकल सोसायटी का प्रधान केन्द्र अमेरिका था। उसकी एक शाखा सन् १८८६ में भारत के मद्रास नगर में स्थापित हुई। इस सोसायटी की मुख्य कार्यकर्त्री श्रीमती एनी बीसेन्ट थी। आपने भारतीयो से कहा कि उनका पुरातन ज्ञान भण्डार विश्व के ज्ञान कोष का अगुवा है। वह अपने पुराने के साहित्य का अध्ययन करके भविष्य को उज्वल बनायें। भारतवासियो की उन्नति एवं प्रगति उनकी अपनी सस्कृति से ही हो सकती है।

श्रीमती एनीबीसेन्ट के साथ मदन मोहन मालवीय ने बनारस में हिन्दू कालेज की स्थापना की। आज यह कालेज विश्वविद्यालय के रूप धारण कर चुका है। इस सोसाइटी का प्रभाव महाराष्ट्र में महादेव गोविन्द रानाडे तथा अन्य भारतीय नेताओ पर भी पडा।

अभ्यास के प्रश्न

(१) इण्डियन नेशनल कांग्रेस का जन्म कब हुआ। इसके प्रारम्भिक विकास पर प्रकाश डालो ?
(२) लोकमान्य तिलक का जीवन चरित्र लिखो।
(३) इण्डियन नेशनल कांग्रेस के निर्माताओं के जीवन पर प्रकाश डालो ?
(४) ब्रिटिश राज में भारत में सामाजिक और धार्मिक जागृति के अग्रदूत कौन थे। उनके जीवन के बारे में संक्षेप से लिखो ?
(५) आर्य समाज की स्थापना किसने की, आर्य समाज के मूल सिद्धान्त क्या हैं।
(६) ब्रह्म समाज के संस्थापक का जीवन चरित्र लिखो ?
(७) संक्षिप्त नोट लिखो :—
दादा भाई नौरोजी, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेका नन्द, गोपाल कृष्ण गोखले, मदन मोहन मालवीय।

: ३३ :

ब्रिटिश सरकार और कांग्रेस में संघर्ष

एक स्वाभिमानी मनुष्य के लिए सोने की जंजीर उतनी ही कष्टप्रद है जितनी लोहे की। पीडा पाव में नहीं, बेडियों में है।

—गाधीजी

बगाल विभाजन—१८९९ में भारत के वायसराय लार्ड कर्जन नियुक्त हुए। वह पहले वायसराय थे जिन्हें भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में कुछ लगाव था। उन्होंने स्वय कई बार भारतीय सभ्यता और संस्कारो की प्रशसा की थी। उन्होंने भारत में शासन व्यवस्था का सुधार करने के लिए बगाल राज्य के दो भाग करने का प्रयास किया। उस समय बगाल में उडीसा तथा विहार प्रान्त भी सम्मिलित थे। अत कर्जन ने पूर्वी बगाल तथा आसाम को मिलाकर बगाल की राजधानी ढाका में स्थापित की। पश्चिमी बगाल, उडीसा और विहार को मिलाकर एक नया प्रात बनाया गया।

लार्ड कर्जन

वंग विभाजन ने एक उग्र राजनीतिक आन्दोलन का रूप धारण कर लिया। बगालियों ने यह समझा कि विभाजन द्वारा हिन्दू मुस्लिम एकता को समाप्त किया जा रहा है। कांग्रेस के दोनो दल (नर्म अथवा गर्म) तथा बगालवासी चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान एक होकर वग विभाजन का विरोध करने के लिये एकत्र हो गये। सन् १९०५ से १९११ तक यह आन्दोलन चला। वग की एकता के लिये सैकडो युवक और युवतियो ने अपना बलिदान दिया। अन्त में भारतीयो की विजय हुई। सन् १९११ में जब सम्राट जार्ज पचम दिल्ली पधारे तो उन्होंने वग को एक कर दिया और उसके साथ विहार तथा उडीसा के नये प्रात बनाये गये।

स्वदेशी आन्दोलन—वग विभाजन के समय ही भारतवासियों ने अपना आर्थिक विकास करने के लिये अग्रेजी वस्तुओं का बहिष्कार प्रारम्भ किया। स्थान-स्थान पर विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गई। भारत-वासियों ने हाथ करघे के उद्योग को पुन सम्हाला। विदेशी कपडे के बहिष्कार का आन्दोलन इतना सफल हुआ कि भारत में ब्रिटेन का कपडा किसी भी मूल्य पर बाजार में न बिकता था।

क्रान्तिकारियों की गतिविधि—अग्रेज सर्व प्रथम बगाल में ही आकर बसे थे। अत उन्होंने अपनी सुविधा के अनुसार बगाल प्रान्त की रचना की। जीवन की उपयोगी नवीनतम वैज्ञानिक सुविधायें सर्वप्रथम बगाल में ही आई। शिक्षा क्षेत्र में भी बगाल सबसे आगे था। इस कारण राजनीतिक चेतना में भी बगाल आगे था।

बंगाल के नवयुवको के नेता रासबिहारी घोष, अरविंद घोष, योगेश चटर्जी इत्यादि कांग्रेस की वैधानिक सघर्ष की नीति में विश्वास न रखते थे। उन्होने एक क्रांतिकारी दल की स्थापना की। इस दल ने ब्रिटिश अधिकारियो और उनके चापलूसो को बम द्वारा उडाने की नीति अपनाई। बाद में इस दल ने अखिल भारतीय रूप ले लिया। उत्तर प्रदेश में चन्द्र शेखर आजाद तथा पजाब में सरदार भगत सिंह इस दल के प्रमुख नेता थे। दोनो ही ने भारतीय स्वाधीनता सग्राम की बलिवेदी पर अपना जीवन बलिदान कर दिया। मुजफ्फरपुर, मानिकताल, तथा ढाका में काफी बम-दुर्घटनाए हुई जिसको देख कर अग्रेजो को अपना शासन डोलता हुआ दिखाई दिया।

सरकारी दमन चक्र —कांग्रेस के दोनो दलो, नर्म और गरम दल में किसी प्रकार समझौता न हुआ। दोनो के सैद्धान्तिक मत भेद बढते गए। अग्रेजो ने क्रातिकारियो का दमन करने के लिये कठोरता से कार्य किया। लाला लाजपत राय तथा सरदार अजीतसिंह को बिना मुकदमा चलाये इगलैण्ड नजरबद कर दिया गया। क्रातिकारी नवयुवक खुदीराम बोस को बम केस में फासी की सजा दी गई।

दमन चक्र ने क्रान्तिकारियो को हतोत्साह नही किया। उनकी सरगर्मिया कम होने के स्थान पर बढ गईं। दिल्ली में सन् १९११ में अग्रेजी राज की शान और शौकत दिखाने के लिये एक विशाल दरबार का आयोजन किया गया। जब वायसराय लार्ड हार्डिग एक जुलूस में जा रहे थे तो क्रान्तिकारियो ने उन पर बम फेंका। वायसराय बच निकले।

मुस्लिम लीग —सन् १९०६ में अलीगढ में मुस्लिम विश्वविद्यालय ने काफी उन्नति कर ली थी। मुस्लिम नेताओ ने कांग्रेस की देखादेखी मुस्लिम लीग सस्था को जन्म दिया। अग्रेजो ने इस सस्था को बडा प्रोत्साहन दिया क्योकि वे नही चाहते थे कि कांग्रेस देश की एकमात्र प्रतिनिधि सस्था बनी रहे। कुछ समय पश्चात् मुस्लिम लीग अग्रेजो के हाथ की कठपुतली बन गई। अग्रेजो का सकेत पाकर मुस्लिम लीग प्रत्येक क्षेत्र में मुसलमानो के लिये पृथक अधिकारो की माग करने लगी। प्रत्येक जनसुधार के कार्य में जिसका श्रीगणेश कांग्रेस द्वारा होना था, उसमें मुस्लिम लीग रोडा अटकाती थी। इस प्रकार मुस्लिम लीग की नीति से हिन्दू-मुस्लिम एकता नष्ट होने लगी। आगे चल कर कांग्रेस के नेता महात्मा गाधी जितना भारतीय एकता के लिये प्रयास करते मुस्लिम लीग के नेता मिस्टर जिन्ना उतना ही उसका विरोध करते थे। मुस्लिम लीग की नीति के परिणामस्वरूप अन्त में भारत दो भागो में विभाजित हुआ।

मिन्टो-मार्ले सुधार

अग्रेजो ने यह जान लिया कि केवल दमन से ही भारतीय राष्ट्रीयता नही दबेगी। इसके लिये कुछ सुधार आवश्यक है। अत १९०९ में पार्लियामेंट में एक कानून पास किया जिसे इण्डियन कौंसिलज एक्ट कहते हैं। इस कानून के अन्तर्गत भारत के प्रत्येक प्रात में कौंसिलें (विधान सभाए) स्थापित हुई। कौंसिल में बहुत से सदस्य निर्वाचित होते थे। वायसराय की तथा इगलैण्ड में सेक्रेटरी आफ स्टेट की कौंसिलो में भी एक भारतीय सदस्य लिया जाने लगा। परन्तु इन सुधारो का सबसे बुरा पहलू यह था कि हिन्दुओ और मुसलमानो को पृथक निर्वाचन के आधार पर प्रतिनिधित्व मिला। इस तरह अग्रेजो ने दोनों सम्प्रदायो के बीच एक गहरी खाई खोद दी। उस समय भारत के वायसराय लार्ड मिन्टो थे और सेक्रेटरी आफ स्टेट मार्ले। इसलिए १९०८ के सुधारो को मिन्टो-मार्ले सुधार कहते हैं।

महात्मा गांधी और कांग्रेस

महात्मा गांधी का जन्म बम्बई राज्य के गुजरात प्रदेश में २ अक्तूबर १८६९ को हुआ था। आपने इंगलैण्ड में उच्च शिक्षा प्राप्त की। वहां से बैरिस्ट्री का परीक्षा पास करके जब आप भारत लौटे तो उन्हें १८९३ में एक मुकदमे के सिलसिले में दक्षिणी अफ्रीका जाना पड़ा। दक्षिणी अफ्रीका में भारतवासियों की अवस्था बड़ी ही शोचनीय थी। अतः भारतवासियों की अवस्था को सुधारने के लिए महात्मा गांधी वहीं पर रह कर रचनात्मक कार्य करते रहे। दक्षिणी अफ्रीका में गोरे शासकों द्वारा भारतीयों पर भारी अत्याचार हुए। परन्तु गांधीजी ने अपने आंदोलन का अहिंसात्मक स्वरूप ही रखा। उसमें किसी भी प्रकार की हिंसा का प्रवेश न होने दिया। गांधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलन को "सत्याग्रह" कहते हैं। सत्याग्रह के परिणामस्वरूप दक्षिणी अफ्रीका के भारतीयों से जो अपमानजनक व्यवहार होता था वह कुछ हद तक रुक गया।

बैरिस्टर गांधी

महात्मा गांधी के दक्षिणी अफ्रीका में किये गये कार्यों तथा आन्दोलन से भारतीय राजनीति के कर्णधार परिचित हो चुके थे। श्री गोपाल कृष्ण गोखले गांधी जी के निमन्त्रण पर दक्षिणी अफ्रीका गये। वहां पर उन्होंने गांधीजी के कार्यों को देखा। १९१४ में जब गांधीजी भारत लौटे तो उन्होंने कांग्रेस में नर्म दलवालों का हाथ बटाया और आगे चल कर कांग्रेस के वही एकमात्र कर्णधार बन गये।

विश्व का प्रथम महायुद्ध:—अंग्रेजों के भारत में जम जाने के बाद भारत अधिकाधिक विश्व राजनीति का एक मुहरा बन गया। योरोप में जर्मनी, इंगलैण्ड और फ्रांस में साम्राज्य के लिये संघर्ष हो रहा था। जर्मनी ने सम्राट कैसर द्वितीय के अधीन बड़ी शक्ति प्राप्त कर ली थी। जर्मनी का सम्राट कैसर और इंगलैण्ड के सम्राट जार्ज पंचम दोनों ममेरे भाई थे। फिर भी जर्मनी और इंगलैण्ड में दुनिया की व्यापारिक होड के परिणामस्वरूप १९१४ में विश्व का पहला महायुद्ध छिड गया। इस युद्ध में एक ओर इंगलैण्ड, फ्रांस, इटली और रूस थे और दूसरी ओर जर्मनी, आस्ट्रिया और टर्की थे। कुछ समय पश्चात् जापान और अमेरिका ने भी जर्मनी और उसके साथियों के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी। भारत अंग्रेजों का एक उपनिवेश था, इसलिए उसे भी अंग्रेजों का साथ देना पड़ा।

इधर ब्रिटिश अधिकारी युद्ध क्षेत्र में विजय प्राप्त का प्रयास कर रहे थे उधर क्रान्तिकारियों ने समय का लाभ उठाकर भारत में अंग्रेजों के अस्त्रागारों पर अधिकार पाने का प्रयत्न किया। इन क्रान्तिकारियों में लाला हरदयाल, सरदार करतार सिंह, रास बिहारी बोस, विष्णु गणेश पिंगले के नाम प्रमुख हैं। क्रान्तिकारियों में फूट के कारण अंग्रेज अधिकारी उनकी गतिविधियों से चौकन्ने हो गये। उन्होंने क्रान्तिकारियों के अड्डों पर छापेमार कर बहुत सा विध्वंसक सामान प्राप्त किया।

यद्यपि भारत अंग्रेजों से असन्तुष्ट था परन्तु गांधी जी के नेतृत्व में भारत ने इस युद्ध में ब्रिटिश सरकार की भरपूर सहायता की। इस युद्ध में ६ लाख भारतीय सैनिक दुनिया के विभिन्न मोर्चों पर लड़ते रहे और लगभग

५ लाख असैनिक लोगों ने युद्ध में सहयोग दिया। लड़ाई में ५३ हजार भारतीय काम आए। विदेशों में लड़नेवाले भारतीय सैनिकों का समूचा खर्च स्वयं भारत सरकार ने दिया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार को १५० करोड़ रुपये उपहार स्वरूप दिए गए। भारतीय सैनिक इतनी बहादुरी से लड़े कि उन्होंने कई मोर्चों पर जर्मनों के छक्के छुड़ा दिए। कई भारतीय सनिकों ने ब्रिटिश सरकार के सर्वश्रेष्ठ वीरता पदक विक्टोरिया क्रास प्राप्त किए।

गांधीजी को विश्वास दिलाया गया था कि विजय प्राप्ति के बाद भारत में महत्वपूर्ण शासनिक सुधार किए जाएंगे। भारत की सहायता प्राप्त करने के लिये १९१७ में ब्रिटिश सरकार के सक्रेटरी आफ स्टेट मि० मान्टेगो ने घोषणा की कि "ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य भारत को ब्रिटिश साम्राज्य में रखते हुए उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना है।" परन्तु यह सब वायदे खोखले रहे। १९१८ में विजय के उपरान्त ब्रिटिश सरकार ने वह दमन चक्र चलाया जिसकी याद भुलाना कठिन है। युद्ध में सहायता देने के उपहार स्वरूप भारत को 'रोलेट एक्ट' जैसे काले कानून मिले।

अंग्रेजों का दमन चक्र —सन् १९१६ में लार्ड चेम्सफोर्ड भारतवर्ष का वायसराय नियुक्त हुए। आपने क्रान्तिकारी तथा स्वाधीनता आन्दोलन को दबाने के लिए नजरबन्दी कानून जारी कराया। साथ ही विधान समिति के सम्मुख एक नया एक्ट प्रस्तुत किया जिसे रोलेट एक्ट कहते हैं। इस एक्ट के अनुसार ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों के साधारण नागरिकता के अधिकारों पर भी कड़े प्रतिबन्ध लगा दिये। युद्ध समाप्त हो जाने के बाद भी रोलेट एक्ट द्वारा पुलिस को दिए हुए युद्धकालीन असाधारण अधिकार जारी रखने का प्रयास किया गया। इन दमनकारी कानूनों को भारतीय काले कानून कहते थे। महात्मा गांधी ने जब अंग्रेजों की इस नीति को देखा तो वह अंग्रेजी सरकार के विरोधी हो गये। उन्होंने जनता को इन कानूनों का विरोध करने का परामर्श दिया।

लार्ड चेम्सफोर्ड

सत्याग्रह आन्दोलन —महात्मा गांधी ने काले कानूनों का विरोध करने के लिए स्थान-स्थान पर विरोध सभाएं करने तथा सरकार के विरुद्ध शान्ति पूर्वक प्रदर्शन करने की सलाह दी। आन्दोलन का संगठन करने के लिये गांधीजी ने भारत का भ्रमण किया। जिस समय वह पंजाब आ रहे थे तो रास्ते में उन्हें गिरफ्तार करके बम्बई भेज दिया गया।

महात्मा गांधी की गिरफ्तारी से समस्त भारत में रोष की लहर उठी। जनता गांधी जी के बताए हुए अहिंसात्मक आन्दोलन को चलाने में सफल न हो सकी। गांधीजी की गिरफ्तारी के कारण जनता के सब्र का बांध टूट चुका था। अहमदाबाद और दक्षिण भारत में हिंसात्मक झगड़े हुए। भारत में कुछ स्थानों पर सरकारी ईमारतों को आग लगा दी गई। देश के कोने कोने में विरोध सभाएं हुईं, जलसे किए गए, हड़तालें हुईं तथा भारी प्रदर्शन हुए।

महात्मा गांधी और कांग्रेस

महात्मा गांधी का जन्म बम्बई राज्य के गुजरात प्रदेश में २ अक्तूबर १८६९ को हुआ था। आपने इंग्लैण्ड में उच्च शिक्षा प्राप्त की। वहां से बैरिस्ट्री की परीक्षा पास करके जब आप भारत लौटे तो उन्हें १८९३ में एक मुकदमे के सिलसिलेमें दक्षिणी अफ्रीका जाना पड़ा। दक्षिणी अफ्रीका में भारतवासियों की अवस्था बड़ी ही शोचनीय थी। अतः भारतवासियों की अवस्था को सुधारने के लिए महात्मा गांधी वहीं पर रह कर रचनात्मक कार्य करने लगे। दक्षिणी अफ्रीका में गोरे शासकों द्वारा भारतीयों पर भारी अत्याचार हुए। परन्तु गांधीजी ने अपने आंदोलन का अहिंसात्मक स्वरूप ही रखा। उसमें किसी भी प्रकार की हिंसा का प्रवेश न होने दिया। गांधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलन को "सत्याग्रह" कहते हैं। सत्याग्रह के परिणामस्वरूप दक्षिणी अफ्रीका के भारतीयों से जो अपमानजनक व्यवहार होता था वह कुछ हद तक रुक गया।

बैरिस्टर गांधी

महात्मा गांधी के दक्षिणी अफ्रीका में किये गये कार्यों तथा आन्दोलन से भारतीय राजनीति के कर्णधार परिचित हो चुके थे। श्री गोपाल कृष्ण गोखले गांधी जी के निमन्त्रण पर दक्षिणी अफ्रीका गये। वहां पर उन्होंने गांधीजी के कार्यों को देखा। १९१४ में जब गांधीजी भारत लौटे तो उन्होंने कांग्रेस में नर्म दलवालों का हाथ बटाया और आगे चल कर कांग्रेस के वही एकमात्र कर्णधार बन गये।

विश्व का प्रथम महायुद्ध —अंग्रेजों के भारत में जम जाने के बाद भारत अधिकाधिक विश्व राजनीति का एक मुहरा बन गया। योरोप में जर्मनी, इंग्लैण्ड और फ्रांस में साम्राज्य के लिये संघर्ष हो रहा था। जर्मनी ने सम्राट कैसर द्वितीय के अधीन बड़ी शक्ति प्राप्त कर ली थी। जर्मनी का सम्राट कैसर और इंग्लैण्ड के सम्राट जार्ज पंचम दोनों ममेरे भाई थे। फिर भी जर्मनी और इंग्लैण्ड में दुनिया की व्यापारिक होड़ के परिणामस्वरूप १९१४ में विश्व का पहला महायुद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में एक ओर इंग्लैण्ड, फ्रांस, इटली और रूस थे और दूसरी ओर जर्मनी, आस्ट्रिया और टर्की थे। कुछ समय पश्चात् जापान और अमेरिका ने भी जर्मनी और उसके साथियों के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी। भारत अंग्रेजों का एक उपनिवेश था, इसलिए उसे भी अंग्रेजों का साथ देना पड़ा।

इधर ब्रिटिश अधिकारी युद्ध क्षेत्र में विजय प्राप्त का प्रयत्न कर रहे थे उधर क्रांतिकारियों ने समय का लाभ उठाकर भारत में अंग्रेजों के अस्त्रागारों पर अधिकार पाने का प्रयास किया। इन क्रांतिकारियों में लाला हरदयाल, सरदार करतार सिंह, रास बिहारी बोस, विष्णु गणेश पिंगले के नाम प्रमुख हैं। क्रांतिकारियों में फूट के कारण ब्रिटिश अधिकारी उनकी गतिविधियों से चौकन्ने हो गये। उन्होंने क्रांतिकारियों के अड्डों पर छापेमार कर बहुत सा विध्वंसक सामान प्राप्त किया।

यद्यपि भारत अंग्रेजों से असन्तुष्ट था परन्तु गांधी जी के नेतृत्व में भारत ने इस युद्ध में ब्रिटिश सरकार की भरपूर सहायता की। इस युद्ध में ६ लाख भारतीय सैनिक दुनिया के विभिन्न मोर्चों पर लड़ते रहे और लगभग

५ लाख असैनिक लोगों ने युद्ध में सहयोग दिया। लड़ाई में ५३ हजार भारतीय काम आए। विदेशों में लड़नेवाले भारतीय सैनिकों का समूचा खर्च स्वयं भारत सरकार ने दिया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार को १५० करोड़ रुपये उपहार स्वरूप दिए गए। भारतीय सैनिक इतनी बहादुरी से लड़े कि उन्होंने कई मोर्चों पर जर्मनों के छक्के छुड़ा दिए। कई भारतीय सैनिकों ने ब्रिटिश सरकार के सर्वश्रेष्ठ वीरता पदक विक्टोरिया क्रास प्राप्त किए।

गांधीजी को विश्वास दिलाया गया था कि विजय प्राप्ति के बाद भारत में महत्वपूर्ण शासनिक सुधार किए जाएंगे। भारत की सहायता प्राप्त करने के लिये १९१७ में ब्रिटिश सरकार के सेक्रेटरी आफ स्टेट मि० मान्टेग्यू ने घोषणा की कि "ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य भारत को ब्रिटिश साम्राज्य में रखते हुए उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना है।" परन्तु यह सब वायदे खोखले रहे। १९१८ में विजय के उपरान्त ब्रिटिश सरकार ने वह दमन चक्र चलाया जिसकी याद भुलाना कठिन है। युद्ध में सहायता देने के उपहार स्वरूप भारत को 'रोलेट एक्ट' जैसे काले कानून मिले।

अंग्रेजों का दमन चक्र—सन् १९१६ में लार्ड चेम्सफोर्ड भारतवर्ष का वायसराय नियुक्त हुए। आपने क्रान्तिकारी तथा स्वाधीनता आन्दोलन को दबाने के लिए नजरबन्दी कानून जारी कराया। साथ ही विधान समिति के सम्मुख एक नया एक्ट प्रस्तुत किया जिसे रोलेट एक्ट कहते हैं। इस एक्ट के अनुसार ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों के साधारण नागरिकता के अधिकारों पर भी कड़े प्रतिबन्ध लगा दिये। युद्ध समाप्त हो जाने के बाद भी रोलेट एक्ट द्वारा पुलिस को दिए हुए युद्धकालीन असाधारण अधिकार जारी रखने का प्रयास किया गया। इन दमनकारी कानूनों को भारतीय काले कानून कहते थे। महात्मा गांधी ने जब अंग्रेजों की इस नीति को देखा तो वह अंग्रेजी सरकार के विरोधी हो गये। उन्होंने जनता को इन कानूनों का विरोध करने का परामर्श दिया।

लार्ड चेम्सफोर्ड

सत्याग्रह आन्दोलन—महात्मा गांधी ने काले कानूनों का विरोध करने के लिए स्थान-स्थान पर विरोध सभाएं करने तथा सरकार के विरुद्ध शान्ति पूर्वक प्रदर्शन करने की सलाह दी। आन्दोलन का संगठन करने के लिये गांधीजी ने भारत का भ्रमण किया। जिस समय वह पंजाब आ रहे थे तो रास्ते में उन्हें गिरफ्तार करके बम्बई भेज दिया गया।

महात्मा गांधी की गिरफ्तारी से समस्त भारत में रोष की लहर उठी। जनता गांधी जी के बताए हुए अहिंसात्मक आन्दोलन को चलाने में सफल न हो सकी। गांधीजी की गिरफ्तारी के कारण जनता के सब्र का बांध टूट चुका था। अहमदाबाद और दक्षिण भारत में हिंसात्मक झगड़े हुए। भारत में कुछ स्थानों पर सरकारी ईमारतों को आग लगा दी गई। देश के कोने कोने में विरोध सभाएं हुईं, जलूसे किए गए, हड़तालें हुईं तथा भारी प्रदर्शन हुए।

जलियावाला बाग—ऐसी ही एक सभा १३ अप्रैल १९१९ को बैसाखी के दिन अमृतसर के जलियावाला बाग में हुई। वहां हजारों लोग जमा थे। जनरल डायर की अध्यक्षता में एक गोरा फौज ने बिना चेतावनी दिए भीड़ पर गोली चला दी। बाग से बाहर निकलने का केवल एक ही रास्ता था जिसे स्वयं जनरल डायर ने रोक रखा था। इस पाशविक अत्याचार के परिणामस्वरूप ३२० भारतीय शहीद हुए और १२०० से अधिक घायल हुए। इसे जलियावाला बाग का हत्याकांड कहते हैं। इस हत्याकाण्ड के उपरान्त सारे पंजाब में फौजी राज जारी हुआ। मार्शल ला लगा दिया गया। फौज ने पंजाब पर अमानुषिक अत्याचार किए। बिना कुछ कहे लोगों पर बारबार गोली चलाई गई, निरपराध लोगों को फांसी पर लटकाया गया और उन्हें कोड़े लगाये गए। अमृतसर में लोगों को घुटने के बल रेंगने के लिए विवश किया गया। ब्रिटिश सरकार लोगों को "नवक सिखलाने" पर तुली हुई थी। इन पाशविक अत्याचारों के विरुद्ध देश की आत्मा रो उठी। बम्बई और अहमदाबाद में १५ लाख मजदूरों ने हड़ताल कर दी। गांधीजी ने ब्रिटिश सरकार को वह 'कैसरे हिंद' पदक लौटा दिया जो उन्हें युद्ध में सहायता करने के उपलक्ष में मिला था। कवींद्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी "सर" की उपाधि लौटा दी।

माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार—भारतीयों की ब्रिटिश शासन के प्रति इतनी सुसंगठित रोषात्मक भावना को देखकर ब्रिटिश अधिकारियों को भी कुछ सोचने के लिए विवश होना पड़ा। सन् १९१९ में नया गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट पास किया गया। यह कानून तत्कालीन वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड तथा सेक्रेटरी आफ स्टेट मि० माण्टेग्यू की रिपोर्ट के आधार पर पास किया गया था। अतः इस कानून द्वारा प्रतिपादित सुधारों को माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार कहते हैं। इन सुधारों की रूपरेखा इस प्रकार थी केन्द्र तथा प्रांतों की विधान सभाओं के सदस्यों की संख्या बढ़ा दी गई। इससे पूर्व केवल वायसराय की विधान सभा होती थी, परन्तु अब ब्रिटिश पार्लमेंट के उच्च सदन (हाउस आफ लार्डस) के आधार पर एक और सदन बना जिसे कौंसिल आफ स्टेट्स कहते थे। दोनों सदनों में गैर सरकारी सदस्यों का बहुमत कर दिया गया। इन सदनों को कानून बनाने के अतिरिक्त बजट पर बहस करने तथा किसी एक खर्चे को रद्द करने का अधिकार मिला। परन्तु वायसराय को कौंसिलों द्वारा अस्वीकृत किए गए व्यय को मंजूर करने के विशेषाधिकार प्राप्त रहे।

प्रांतों की विधान सभाओं में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत रखा गया। सरकारी विभागों को दो भागों में बांटा गया। अधिक महत्त्वपूर्ण विभाग जिन्हें सुरक्षित विभाग कहा जाता था गवर्नर की एक्जीक्यूटिव कौंसिल के सरकारी सदस्यों के अधीन होते थे और शिक्षा, लोक कर्म इत्यादि विभाग निर्वाचित सदस्यों में से नियुक्त मन्त्रियों के अधीन कर दिए गए। वायसराय तथा गवर्नरों की एक्जीक्यूटिव कौंसिलों में अधिक भारतीय सदस्य नियुक्त किए गए।

१९१९ के इन सुधारों को प्रस्तुत करते हुए ड्यूक आफ कनाट ने भारतीयों से अपील की कि वे अमृतसर की खेदजनक घटनाओं को भूल जाय। क्षमा करने और भूल जाने की नीति अपना कर प्रगति की ओर अभियान करें। परन्तु अन्त में यह सुधार एक खिलौना मात्र सिद्ध हुए। इसका एक रोचक उदाहरण मद्रास के मन्त्री श्री के० वी० रेड्डी ने दिया। आप इन सुधारों के अन्तर्गत मन्त्री बने थे। श्री रेड्डी ने कहा, "मैं कृषि मन्त्री था परन्तु सिंचाई विभाग मेरे पास नहीं था ......मैं उद्योग मन्त्री था परन्तु कारखाने, बिजली, जल-विद्युत, खानें

और श्रम विभाग मेरे अधीन नही थे।" शिक्षा निर्वाचित मन्त्रियो के अधीन थी परन्तु अर्थ विभाग सुरक्षित विभाग था। इसके अलावा गवर्नरो के पास विशेषाधिकार थे। इन विशेषाधिकारो द्वारा वे मनमानी कर सकते थे। काम चलता तो कैसे ? यह सब कुछ तो क्लाइव की दो अमली की तरह ही था।

असहयोग आन्दोलन—युद्ध काल में उत्तरदायी सरकार का जो वायदा किया गया वह इन खोखले मान्टेगो चैम्सफोर्ड सुधारो के रूप में पूरा किया गया। कांग्रेस ने गाधी जी के नेतृत्व में इन सुधारो को ठुकरा दिया और सरकार से असहयोग का मार्ग अपनाया। गाधीजी ने कहा कि ब्रिटिश सरकार को किसी भी रूप में सहयोग न दिया जाए। विद्यार्थियो ने स्कूल और कालेज छोड दिए और वकीलो ने अदालतें। सरकारी कर्मचारियो ने नौकरियो से त्याग पत्र दे दिए। विधान सभाओ के सदस्यो ने विधान सभाओ की सदस्यता त्याग दी। विदेशी कपडे की हर जगह होली जलाई गई। लोगो ने हाथ से कता और बुना हुआ खादी पहनना शुरू कर दिया। गाधीजी की पुकार पर श्री मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु चित्तरजन दास जैसे विख्यात कानूनदानो ने अपना व्यवसाय छोड दिया। हजारो छात्र कालेजों से बाहिर आ गए। देश भर में रोष सभाए हुई, कानून तोड कर हजारो सत्याग्रहियो ने जेलें भर दी। ब्रिटिश सरकार की जडें हिल गई।

परन्तु जब सत्याग्रह अपने पूरे जोबन पर था तो उत्तर प्रदेश के एक गाव चौराचोरी में कुछ लोगो ने एक थाने को आग लगा दी। कुछ सिपाही मारे गए। गाधीजी अपने अहिंसात्मक आदोलन में लेशमात्र भी हिंसा नही चाहते थे। उन्हें इस घटना से इतना दुख हुआ कि शान्ति सेना के इस नायक ने अपनी फौज को रुक जाने का आदेश दिया। सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया।

अग्रेज घबरा गए। वे हिंसा को अधिक हिंसा से कुचल सकते थे। इन लोग से कैसे निपटें जो निहत्थे प्राणो की बाजी लगाकर गोलियो के आगे छाती तान देते थे। गाधीजी ने अपने शान्ति सैनिको में अद्भुत मन्त्र फूका था। ये लोग कानून तोडते, और जेल चले जाते थे। अदालत में सफाई भी पेश नही करते थे। उन्हें सरकार की कोई धमकी डरा न सकती थी। विश्व के इतिहास में एक भी ऐसा उदाहरण नही जब जनता ने अहिंसा के अस्त्र से किसी बलशाली विदेशी शक्ति से टक्कर ली हो। दुनिया भारत के इस स्वाधीनता आन्दोलन की ओर बडी दिलचस्पी से देखने लगी। गाधीजी ने कहा—भारत आत्म शक्ति से स्वाधीनता प्राप्त करेगा ? क्या यह सम्भव है ? हा ! अगले अध्याय में आप देखेंगे कि किस प्रकार हिन्दुस्तान ने अपनी आजादी की जग जीती।

अभ्यास के प्रश्न

(१) महात्मा गाधी कांग्रेस में कब शामिल हुए। उन्होने भारत को कौन-सा नया अस्त्र दिया ?
(२) भारत में गान्धीजी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन कैसे चला।
(३) सत्याग्रह किसे कहते है ? सर्वप्रथम इसका प्रयोग कहाँ हुआ ?
(४) मान्टेगो चैम्सफोर्ड सुधारों के विषयों में आप क्या जानते है ?
(५) मुस्लिम लीग की स्थापना क्यों हुई? इस सस्था की स्थापना से भारतीय राजनीति में क्या परिवर्तन आया
(६) सक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो—
मिन्टो मार्ले सुधार, क्रान्तिकारी आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन, जालियानवाला हत्याकांड।

: ३४ :

स्वाधीनता की ओर

१९२०–१९४७

स्वराज्य एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र को उपहार नहीं हो सकता। यह एक निधि है, जिसे राष्ट्र के सर्वोत्तम रक्त से खरीदा जाता है।

—गाधीजी

पिछले अध्याय में आपने पढा किस प्रकार गाधीजी के असहयोग आदोलन ने ब्रिटिश सरकार की जडो को हिला दिया। १९०५ में बग-भग आन्दोलन को शान्त करने के लिए सम्राट जार्ज पचम स्वय भारत में आए थे और खुले दरबार में घोषणा की कि बगाल को पुन एक कर दिया जायगा। अब १९२१ में गाधीजी के सत्याग्रह आदोलन के परिणामस्वरूप प्रिंस आफ वेल्स (ब्रिटिश सम्राट के सबसे बडे बेटे) भारत आए। १९२७ में भारत को सुधारो की अगली किस्त देने के लिये साइमन कमीशन भेजा गया। इस कमीशन के सब सदस्य अग्रेज थे। अत भारतवासियो ने इस कमीशन तथा प्रिंस आफ वेल्स दोनो का काले झडो तथा विरोधी प्रदर्शनो के साथ स्वागत किया। वास्तव में अग्रेजो के इन सब आयोजनो का प्रयोजन भारत की स्वाधीनता की माग को टालना था। अपने इन आडम्बरो को असफल होते देख कर ब्रिटिश सरकार ने लदन में एक गोलमेज कान्फ्रेंस (१९३०–३२) बुलाई। इसकी पहली बैठक में कांग्रेस को छोडकर बाकी सब राजनीतिक दलो ने भाग लिया। परन्तु कांग्रेस के बिना यह गोलमेज कान्फरेंस ऐसे ही थी जैसे दूल्हे के बिना बरात। अत तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविन ने गाधीजी को लदन चलने के लिए राजी कर लिया। १९३१ में गाधीजी सितम्बर से दिसम्बर तक लदन में रहे। परन्तु उन्हें आशा की कोई किरण नहीं दिखी। अत पूर्ण स्वराज के लिए अन्तिम सघर्ष करने का निश्चय करके वे भारत लौटे।

लार्ड इरविन

स्वराज्य पार्टी—गान्धी जी ने बारदोली के सत्याग्रह में जो हिंसात्मक रूप देखा था उसके फलस्वरूप वे अब राजनीति में भाग न लेना चाहते थे। उन्होंने जाति के सुधार के लिए रचनात्मक कार्य प्रारभ किये। अछूतोद्धार, शिक्षा, स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार, इत्यादि आपके जीवन के महत्वपूर्ण कार्य बन गये। देश में राजनीतिक कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिये देशबधु चित्तरजन दास तथा पं० मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य पार्टी की स्थापना की। इस दल की नीति थी कि कौंसिलों में प्रवेश करके उन्हें अन्दर से भग किया जाए। सन् १९२६ में होनेवाले चुनाव में स्वराज्य पार्टी ने पूरी ताकत के साथ भाग लिया और उसमें उसे आशा से अधिक सफलता प्राप्त हुई।

[साइम]न कमीशन

जब स्वराज्य पार्टी कौंसिलो पर छा गई तो ब्रिटिश सरकार ने साइमन कमीशन को भारत भेजा। जैसे हमने अभी बताया इस कमीशन के सब सदस्य अंग्रेज थे। इसलिए भारतीय नेताओं ने कमीशन का बायकाट करने का निश्चय किया।

महात्मा गाधीजी के आदेशानुसार भारतीय जनता ने इस कमीशन का स्थान स्थान पर बहिष्कार किया और साइमन गो बैक के नारे लगाये। पंजाब में लाला लाजपत राय के नेतृत्व में जनता ने लाहौर के स्टेशन पर साइमन गो बैक के नारे लगाये और काले झण्डे से प्रदर्शन किया। इस विशाल प्रदर्शन से चिढ कर पुलिस ने लाठी बरसानी प्रारभ की। युवकों ने लालाजी पर पडनेवाली लाठियो को अपने सिरो और छातियों पर सहन किया। लाख प्रयास करने पर भी लालाजी पुलिस की लाठियो से न बचाए जा सके। वे घटनास्थल पर बुरी तरह घायल हुए। १७ नवम्बर सन् १९२८ को लालाजी स्वर्ग सिधारे। लालाजी की मृत्यु से पंजाब में रोष की लहर दौड़ गई। उस समय पंजाब में चन्द्रशेखर आजाद, राजगुरु तथा भगतसिंह आदि क्रांतिकारी कार्य कर रहे थे। उन्होने लालाजी की मृत्यु का प्रतिशोध उस अंग्रेज अधिकारी की हत्या से लिया जिसने पुलिस को आदेश देकर लाठी वर्षा कराई थी।

भारतवासियो के सब्र का बांध टूट चुका था। १९२८ में दिल्ली में एक सर्वदलीय सम्मेलन हुआ जिसमें ब्रिटिश सरकार को नोटिस दिया गया कि वह दिसम्बर १९२८ तक भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य दे दे। औपनिवेशिक स्वराज्य का अभिप्राय यह था कि भारत, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया जैसे उपनिवेशो की भांति ब्रिटिश साम्राज्य मे रहते हुए स्वतन्त्र हो जाए। ब्रिटिश सरकार ने यह माग स्वीकार करने के स्थान पर गोलमेज कान्फरेंस का ढोंग रचा जिसके बारे में हमने ऊपर पढ़ा है।

पूर्ण स्वराज्य की माग

१९२८ में लाहौर में रावी के तट पर कांग्रेस का अधिवेशन पण्डित जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में हुआ। इस अधिवेशन में भारत के लिये पूर्ण स्वाधीनता की माग की गई। २६ जनवरी १९३० को भारत का प्रथम "स्वाधीनता दिवस" मनाया गया। अब हम इसे प्रतिवर्ष लोकतन्त्र दिवस के रूप में मनाते हैं। इस अवसर पर भाषण देते हुए तरुण नेता जवाहरलाल नेहरू ने कहा था—"मैं नहीं समझता किसी प्रकार के औपनिवेशिक स्वराज्य से हमें वास्तविक सत्ता मिलेगी। भारत से सब विदेशी सेना हटनी चाहिए और हर प्रकार का विदेशी आर्थिक नियन्त्रण समाप्त होना चाहिए। आओ हम इसके लिये संघर्ष करें।"

पूर्ण स्वराज्य के ध्येय को प्राप्त करने के लिए कांग्रेस ने एक बार फिर असहयोग आन्दोलन शुरू करने का निश्चय किया। इस बार असहयोग ने आज्ञा भंग आन्दोलन का रूप धारण किया। सरकार को कर न देने तथा सरकारी कानूनों को जानबूझ कर तोड़ने का फैसला किया गया।

डांडी मार्च

गांधीजी ने एक बार फिर सत्याग्रही सेना की कमान सम्भाली। भारत में कोई व्यक्ति निजी रूप से नमक नहीं बना सकता था। गांधीजी ने सरकारी आज्ञा तोड़ कर नमक बनाने का निश्चय किया। ६ अप्रैल, १९३० को

गांधीजी ने सैंकड़ो स्वयंसेवकों के साथ डंडी-यात्रा प्रारंभ की। डंडी उस स्थान का नाम था जहाँ उन्हें समुद्र के जल से नमक बनाना था। नमक बनाने का यह आन्दोलन सारे भारत में फैल गया। सरकार ने इसे कुचलने की चेष्टा की। परन्तु वह पूर्णतया असफल रही। सरकारी रिपोर्टों के अनुसार नमक बनाने के अपराध में ६ हजार व्यक्ति गिरफ्तार हुए।

गांधीजी की लंदन यात्रा

इस नाजुक घड़ी में वायसराय लार्ड रिपन ने गांधीजी को लंदन जाने के लिए राजी कर लिया। गांधीजी लंदन में गोलमेज कान्फ्रेंस में शामिल हुए। परन्तु उन्होंने समझ लिया कि अंग्रेज भारत को कुछ देने के लिए तैयार नहीं। १९३१ के अन्त में गांधीजी जब भारत आए तो उन्होंने देखा कि नए वायसराय लार्ड वेलिंगडन का दमन चक्र तेजी से चल रहा था। गुजरात तथा बंगाल की जनता बुरी तरह कराह रही थी। इस दमन नीति का उत्तर देने के लिए कांग्रेस ने अपना सत्याग्रह आंदोलन तेज कर दिया। ४ जनवरी १९३२ को गांधीजी गिरफ्तार कर लिये गए। इस सत्याग्रह में सरकारी आंकड़ों के अनुसार सवा लाख से अधिक लोग गिरफ्तार हुए। लोगों को हर तरह से दबाने की चेष्टा की गई। गिरफ्तारियां हुईं, जब्तियां हुईं और जुर्माने हुए। परन्तु लोग डरे नहीं।

साम्प्रदायिक एवार्ड —अंग्रेजी सरकार हिन्दुओं और मुसलमानों में फूट डलवाने में सफल रही थी। मुसलमानों को पृथक निर्वाचन का अधिकार मिल चुका था। अब यही सिद्धान्त हरिजनों पर लागू करने की चेष्टा की गई। इंग्लैण्ड के प्रधान मंत्री रैमजे मैकडानल्ड ने एक फैसला दिया जिसे साम्प्रदायिक एवार्ड कहते हैं। इसके अनुसार हरिजनों को हिन्दुओं से अलग जाति माना गया। उनके लिए धारा सभाओं में सीटें सुरक्षित करने और हिन्दुओं से अलग निर्वाचन की भी व्यवस्था की गई। पूना जेल में गांधीजी को जब ब्रिटिश सरकार के इस फैसले की सूचना मिली तो उन्होंने आमरण अनशन प्रारंभ किया। तत्पश्चात् सरकार और गांधीजी में एक समझौता हुआ। इसे पूना पैक्ट कहते हैं। इसके अनुसार हरिजनों के लिए सीटें तो सुरक्षित कर दी गईं परन्तु चुनाव सम्मिलित हो गए। सरकार ने साम्प्रदायिक एवार्ड के अन्तर्गत यह व्यवस्था की थी कि हिन्दू हिन्दू को वोट डाले और हरिजन हरिजन को ही। पूना पैक्ट द्वारा यह अन्तर हुआ कि हिन्दुओं और हरिजनों का चुनाव सम्मिलित होगा परन्तु हरिजनों के लिए कुछ स्थान सुरक्षित रखे जाएंगे। इस प्रकार गांधीजी का जीवन बचा। परन्तु पूर्ण स्वराज्य के लिए हमारा संघर्ष खत्म नहीं हुआ था। अभी हमें कुछ मन्जिलें तय करनी थीं।

तीसरी गोलमेज कान्फ्रेंस —१९३२ में तीसरी गोलमेज कान्फ्रेंस लंदन में हुई। इसमें कांग्रेस का कोई प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं हुआ। कान्फ्रेंस की सिफारिशों के अनुसार भारत में संघीय शासन का एक ढांचा तय्यार किया गया। इस संबंध में ब्रिटिश सरकार ने एक श्वेत पत्र भी प्रकाशित किया। यही श्वेत पत्र बाद में गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट १९३५ का आधार बना।

प्रान्तीय स्वशासन—कांग्रेस के महान आन्दोलन के परिणामस्वरूप १९३५ का गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट पास हुआ। इस विधान के अनुसार भारत में संघीय शासन की व्यवस्था की गई।

संविधान का विस्तृत विवरण आप इस पुस्तक के दूसरे भाग में पढ़ेंगे।

संविधान के अधीन १९५२ और १९५७ में आम चुनाव हुए। दोनो चुनावों में कांग्रेस पार्टी को बहुमत प्राप्त हुआ। इसलिए केन्द्र तथा राज्यों में कांग्रेसी सरकारें स्थापित हुई। पिछले आम चुनावों में केरल राज्य में कम्यूनिस्ट पार्टी को बहुमत प्राप्त हुआ अत. केरल में अब कम्युनिस्ट पार्टी का शासन है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) स्वाधीनता के बाद भारत के सामने कौन कौन सी समस्यायें आईं ?

(२) भारतीय गणतन्त्र की स्थापना कब और कैसे हुई ?

(३) देशीय राज्यों के एकीकरण के बारे में आप क्या जानते हैं ? इस एकीकरण का श्रेय किसे मिलना चाहिए।

(४) काश्मीर पर किसने हमला किया था ? भारत और काश्मीर का क्या सम्बन्ध है ?
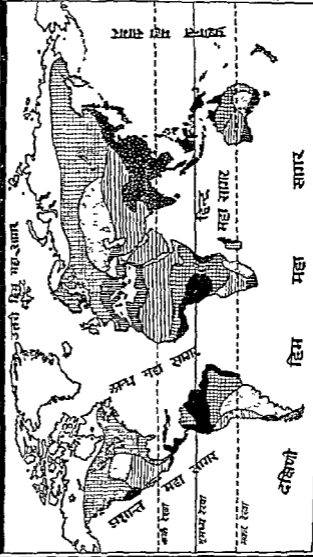
पंचम खण्ड

भूगोल

: ३६ :

संसार के प्राकृतिक खण्ड

आप जानते हैं कि ससार के प्रत्येक भाग में एक जैसी जलवायु नही होती। यदि कुछ देशो की जलवायु गर्म है तो कुछ की सर्द। कही अत्यधिक ठण्ड पड़ती है तो कही असहनीय गर्मी। जलवायु के इस अन्तर के बावजूद भी हम देखते हैं कि दुनिया के कई भागो की जलवायु प्राय एक जैसी होती है। वहा एक जैसे पशु-पक्षी होते है और एक जैसी उपज, चाहे वे देश एक दूसरे से हजारो मील दूर ही क्यो न हो। उदाहरण के रूप में पश्चिमी राजस्थान, सिन्ध, अरब, दक्षिणी कैलिफोर्निया, उत्तरी चिल्ली, पश्चिमी आस्ट्रेलिया इत्यादि देशो की जलवायु साधारणतया गर्म और खुश्क है। प्राकृतिक वनस्पतिया काटेंदार पौधे आदि हैं। ये सब प्रदेश मिल कर एक पृथक् प्राकृतिक खण्ड बनाते है जिसे गर्म मरुस्थलीय खण्ड कहते है। दूसरे शब्दो में हम कहेंगे कि प्राकृतिक खण्ड उसे कहते है जिसमें सम्मिलित देशो में बहुत हद तक एक जैसी जलवायु, एक जैसी वनस्पतिया तथा लोगो का रहन-सहन भी प्राय एक जैसा हो।

दुनिया को प्राकृतिक खण्डो में बाटते समय हमें निम्नलिखित बातो का ध्यान रखना चाहिए

(१) एक प्राकृतिक खण्ड के सभी देशो की प्राकृतिक स्थिति एक जैसी होनी जरूरी नही है। किसी विशेष प्राकृतिक खण्ड में होने के लिये एक जैसी जलवायु होना ही जरूरी है न कि भौतिक स्थिति भी। उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित दो देश भी एक भौगोलिक खण्ड में हो सकते है।

(२) यदि हम एक देश को किसी विशेष प्राकृतिक खण्ड में रखते है तो उसका अभिप्राय केवल यह होता है कि इसकी जलवायु इस खण्ड में सम्मिलित अन्य देशो से लगभग मिलती-जुलती है।

(३) प्राकृतिक खण्ड किसी राजनीतिक आधार पर नही किए जाते। दुनिया का प्राकृतिक विभाजन करते समय राजनीतिक सीमाओ को ध्यान में नही रखा जाता।

(४) किसी प्रदेश को किसी विशेष प्राकृतिक खण्ड में शामिल करने के बारे में विद्वानो में मतभेद हो सकता है।

दुनिया का अध्ययन प्राकृतिक खण्डो के आधार पर करने से कई लाभ होते हैं। एक प्राकृतिक खण्ड में शामिल सब देश एक दूसरे के अनुभवो से लाभ उठा सकते हैं। उदाहरण के रूप में इण्डोनेशिया, ब्राजील और बेल्जियन कागो एक ही प्राकृतिक खण्ड में हैं। यदि रबड ब्राजील में हो सकता है तो कोई कारण नही कि वह इण्डोनेशिया में न हो। इस तरह इण्डोनेशिया ब्राजील के अनुभव से लाभ उठा सकता है। वास्तव में इण्डोनेशिया ने लाभ उठाया भी। ५० वर्ष पूर्व रबड केवल ब्राजील और कागो के प्रदेश में ही होता था।

परन्तु धीरे-धीरे इण्डोनेशिया और मलय में भी रबड़ के वृक्ष लगाए गए। अब दुनिया में जितना रबड़ होता है, उसका ९० प्रतिशत भाग इन देशों से आता है।

जलवायु के आधार पर हम दुनिया को निम्नलिखित प्राकृतिक खण्डों में बांटेंगे :

(१) भूमध्य रेखा की जलवायु का खण्ड
(२) गर्मियों में वर्षा वाला खण्ड
(३) मौनसून खण्ड
(४) शुष्क मरुस्थलीय खण्ड
(५) रूमसागरीय जलवायु का खण्ड
(६) स्टेप देशों जलवायु का खण्ड
(७) समशीतोष्ण कटिबन्ध के वनों का खण्ड
(८) अति सर्द टुन्ड्रा की जलवायु का खण्ड।

(१) भूमध्य रेखा की जलवायु का खण्ड

यह खण्ड भूमध्य रेखा के दोनों ओर ५° उत्तर तथा ५° दक्षिण के बीच में स्थित है। भूमध्य रेखा की जलवायु वाले खण्ड में दक्षिणी अमेरिका में एमेजान नदी की घाटी, तथा कोलम्बिया का तटीय भाग; एशिया में लंका का कुछ भाग, मलय प्रायद्वीप, आस्ट्रेलिया का उत्तर-पूर्वी तट, अफ्रीका में कांगो नदी की घाटी और गिनी का तट इत्यादि प्रदेश शामिल हैं।

भूमध्य रेखा पर स्थित होने के कारण इस खण्ड के प्रदेशों में सूर्य की किरणें प्रायः सारा वर्ष सीधी पड़ती रहती हैं जिससे यहाँ १२ महीने गर्मी रहती है। सर्दी की ऋतु एक तरह से होती ही नहीं। वर्षा भी यहाँ काफ़ी होती है। यहाँ वर्षा प्रायः प्रतिदिन दोपहर के बाद सायं काल होती रहती है। इसलिये इस वर्षा को (4'0 Clock Rain) अथवा ४ बजे की वर्षा भी कहते हैं। मार्च और सितम्बर के महीनों के निकट यहाँ वर्षा और भी अधिक होती है क्योंकि सूर्य इस समय ठीक लम्बित चमकता है। इसलिये इस प्राकृतिक खण्ड की जलवायु गर्म तथा आर्द्र है जो स्वास्थ्य के लिए अच्छी नहीं है। वर्षा साल भर में ८० इंच या इससे भी अधिक हो जाती है और तापक्रम प्रायः १२ महीने ८०° या इसके आसपास रहता है। इस प्रकार की जलवायु प्रायः उन्हीं देशों में होती है जो भूमध्य रेखा के निकट होते हैं। इसलिये इस खड को भूमध्य रेखा वाली जलवायु का खंड कहते हैं। इस खंड को उष्णार्द्र वनों का प्रदेश भी कहते हैं।

इस खण्ड में अधिक वर्षा और अधिक गर्मी होती है। इसलिये यहाँ पर घने जंगल पाये जाते हैं। इन जंगलों से गुज़रना बड़ा कठिन होता है। जंगलों में महागनी, आबनूस, रबड़, नारियल इत्यादि के पेड़ पाए जाते हैं। जहाँ-जहाँ वनों को साफ़ कर लिया गया है, वहाँ-वहाँ गन्ना, कहवा, तम्बाकू, कोको और गर्म मसाले की खेती होती है। इन प्रदेशों में केला भी बहुत होता है।

भूमध्य रेखा के खण्ड में रहनेवाले लोग रंग के काले और कद के छोटे होते हैं। वे जंगलों में जानवरों का शिकार करते हैं और अर्द्धनग्न रहते हैं। अफ्रीका के बौने और एमेजान की घाटी के रेड इण्डियन ऐसा ही जीवन व्यतीत करते हैं। परन्तु इस जलवायु के कुछ प्रदेशों में सभ्यता का काफ़ी प्रसार हो चुका है; जैसे

मलय प्रायद्वीप और इडोनेशिया। यहाँ के लोग सभ्य और परिश्रमी हैं। इन देशों के रहने वाले लोगों ने बड़ी उन्नति की है,। यहाँ गन्ना रबड़ और गर्म मसाले पैदा होते हैं। मलय प्रायद्वीप में दुनिया में सबसे ज्यादा रबड़ होता है। अच्छी पैदावार होने के कारण ये लोग बड़े सम्पन्न हैं।

दक्षिणी अमेरिका के रेड इण्डियन लोगों के जीवन की एक झाकी

भूमध्य रेखा के खण्ड की जलवायु सारा वर्ष वर्षा होने तथा आर्द्रता रहने के कारण स्वास्थ्यवर्द्धक नहीं। भूमि जगलों से ढकी होने के कारण बहुत कम प्रदेश में खेती होती है। लोग झोपडियों में रहते हैं। ये झोपडियाँ वृक्षों की टहनियों के ढांचे बनाकर और मिट्टी थोप कर बनाई जाती है। इनको चारों ओर से पत्तों से ढाँप दिया जाता है ताकि वे गर्मी और वर्षा से सुरक्षित रहें।

इस खण्ड में कई तरह के जानवर पाये जाते हैं। एक तो ऐसे जन्तु हैं जो या वृक्षों पर उछल-कूद सकते हैं या वनों में रेंग सकते हैं जैसे बन्दर, साँप, छिपकली, चमगादड, मेंढक, रगारग के पक्षी, कीडे-मकोडे इत्यादि। दूसरे बडे-बडे जन्तु होते हैं जैसे हाथी और गैंडा। इसलिये हाथी दाँत का भी व्यापार होता है। तीसरे वे जन्तु हैं, जो नदियों में रहते हैं, जैसे मगरमच्छ और दरियाई घोडे।

(२) गर्मियों में वर्षा वाला खण्ड

यह प्राकृतिक खण्ड भूमध्य रेखा के दोनों ओर लगभग ५° उत्तर से २०° उत्तर तक और ५° दक्षिण से २०° दक्षिण तक फैला हुआ है। इस खड में ये देश शामिल हैं—(१) आस्ट्रेलिया में क्वीन्जलैण्ड और उत्तरी प्रान्त, (२) अफ्रीका में सूडान, केनिया कालोनी, टागानिका और रोडेशिया, (३) दक्षिणी अमरीका में वैनेजुएला और दक्षिणी ब्राजील, और (४) उत्तरी अमेरिका में संयुक्त राज्य का दक्षिण-पूर्वी तटीय भाग।

यह प्राकृतिक खण्ड उष्ण कटिबन्ध में स्थित है। इसलिये यहाँ गर्मी बहुत ज्यादा पड़ती है। वर्षा बहुत कम होती है। जो थोडी-बहुत वर्षा होती है, वह गर्मियों में होती है। सर्दियों में प्रायः वर्षा होती ही नहीं। सूडान में इस प्रकार की जलवायु होने के कारण इसे सूडान जैसी जलवायु का खण्ड भी कहा जाता

है। इस खण्ड की प्राकृतिक उपज लम्बी घास है। कहीं-कहीं पेड़ भी मिलते हैं। यह घास कोई ५ से १० फुट लम्बी और बड़ी घनी होती है। अधिक गर्मी पड़ने पर यह घास झुलस जाती है। फिर जिधर दृष्टि उठाकर देखें, मटियाला ही मटियाला रंग दिखाई देता है। इस खंड के उन प्रदेशों को जहाँ कहीं-कहीं वृक्ष भी मिलते हैं, सवानास (Savannas) भी कहते हैं।

इस खण्ड की मुख्य फसलें ये हैं—मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास और मूंगफली। इन फसलों के लिए इस खण्ड में होनेवाली वर्षा काफी होती है। इसके अतिरिक्त जिन भागों में वर्षा कुछ अधिक होती है, वहाँ कहवा, तथा गन्ने की खेती भी होती है। सूडान में बहुत बढ़िया कपास उत्पन्न होती है और ब्राजील में उत्तम कहवा पैदा होता है।

अफ्रीका का एक जंगल

इस खण्ड में अधिकतर घास चरने-वाले पशु हिरण, घोड़ा, गाय, बैल आदि मिलते हैं। एक लम्बी गर्दनवाला जानवर भी होता है जिसे जिराफ कहते हैं। यह वृक्षों की पत्तियाँ खाकर गुजारा करता है। इनके अतिरिक्त शेर, चीता, दरियाई घोड़े भी मिलते हैं। कहीं-कहीं हाथी और गैंडा भी मिलते हैं।

इस प्राकृतिक खण्ड में रहने वाले लोग अधिक उन्नत नहीं हैं। वे पशुओं को पालकर तथा जानवरों का शिकार करके या साधारण खेती-बाड़ी से अपना निर्वाह करते हैं। अधिकतर लोग घर बनाकर रहते हैं, परन्तु कुछ लोग खानाबदोश जीवन भी व्यतीत करते हैं। इस भाग में एक प्रकार की मक्खी होती है जिसका डंक पशुओं के लिए घातक होता है।

(३) मौनसून खण्ड

यह प्राकृतिक खण्ड महाद्वीप एशिया के दक्षिण-पूर्व में स्थित है। इस खण्ड में निम्नलिखित देश सम्मिलित हैं —

(१) एशिया में भारत, पूर्वी पाकिस्तान, बर्मा, स्याम, हिन्दचीन, लंका का कुछ भाग, चीन, जापान तथा फिलिपाइन द्वीपसमूह।

(२) उत्तरी आस्ट्रेलिया का कुछ भाग।

इस खण्ड की जलवायु भी गर्म है। यहाँ मौनसून हवाएँ गर्मियों में खूब वर्षा करती है, परन्तु इस खण्ड के सभी भागों में एक-सी वर्षा नहीं होती। सर्दियों में केवल भारत और लंका के पूर्वी तट को छोड़कर और कहीं वर्षा नहीं होती। इस कारण सर्दियों में इस खण्ड की जलवायु शुष्क और कुछ ठण्डी होती है। इस खण्ड के उत्तरी भागों में सर्दी बहुत ज्यादा हो जाती है। वर्षा अधिकतर ग्रीष्म ऋतु में होती है। इसका

कारण यह है कि इस खण्ड में मौनसून अथवा मौसमी हवाएँ चलती हैं। गर्मियो में ये हवाएँ समुद्र से आती हैं, इसलिये भारी वर्षा करती है। सर्दियो में ये हवायें स्थल की ओर से चलती हैं, इसलिये बहुत कम वर्षा लाती हैं। भूमध्य रेखा के निकट होने के कारण इस खण्ड में बहुत अधिक सर्दी नही होती। अधिक सर्दी केवल उन्ही भागो में होती है, जो भूमध्य रेखा से ज्यादा दूर है।

जैसा कि हमने बताया, इस खण्ड में वर्षा एक जैसी नही होती। इसलिए भिन्न-भिन्न भागों में होनेवाली उपज में भी विभिन्नता आ जाती है। जिन भागो में बहुत ज्यादा वर्षा होती है, वहाँ वन जगलो से ढके हुए है। इन जगलो में सागवान, साल और बाँस के पेड खूब होते है। जिन प्रदेशो में वर्षा कम होती है, वहाँ शुष्क वन तथा कटिदार झाडियाँ इत्यादि ही मिलती है। इस प्राकृतिक खड की भूमि बडी उपजाऊ होती है। पहाडी ढलवानो में चाय बहुत पैदा होती है। मैदानो में चावल, गन्ना, तम्बाकू, रुई, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा तथा तेल निकालने के बीजो की भरपूर फसलें होती है। भारत में पटसन की खेती होती हैं और चीन तथा जापान में शहतूत के पेड बडी सख्या में पाए जाते है। शहतूत के इन पेडो पर रेशम के कीडे पाले जाते हैं। इस खण्ड में गाय, भैंस तथा भेड-बकरियाँ बहुत पाली जाती है। बन्दर, मोर, तोते, चीते, हिरण आदि भी पाए जाते हैं। आसाम, बर्मा तथा हिन्दचीन के वनो में हाथी भी मिलते है।
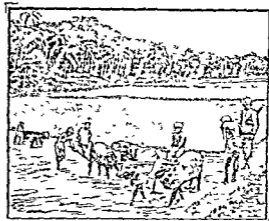
भारत में मौनसून वर्षा के बाद किसान खेतों में हल जोत रहे हैं

इस खण्ड में गर्मी और सील एक साथ मिलती है। इसलिए उपज खूब होती है। यही कारण है कि यह खण्ड दुनिया भर में सबसे अधिक घनी आबादी वाला खण्ड है। दुनिया की प्राय एक-तिहाई आबादी इस खण्ड में रहती है। साधारणतया लोग खेती बाडी करते हैं और उनका मुख्य आहार चावल हैं। परन्तु शुष्क प्रदेशो में लोगो का मुख्य भोजन ज्वार और बाजरा है। लोग साधारणतया सूती कपडे पहनते हैं। जीवन की आवश्यकताएँ आसानी से प्राप्त हो जाती है, इसलिए यह खण्ड सभ्यता की उन्नति के लिए बहुत अनुकूल है। भारत तथा चीन की प्राचीनतम सस्कृतियाँ इसी खण्ड में पनपी थी।

(४) शुष्क मरुस्थलीय खण्ड

शुष्क मरुस्थलीय खण्ड कर्क रेखा और मकर रेखा के निकट महाद्वीपो के पश्चिम में २०° और ३०° के बीच फैला हुआ है। कर्क तथा मकर रेखाएँ इस खण्ड में से होकर गुजरती हैं। ये मरुस्थल रेतीले है। रेत यहाँ टीलो के आकार में इकट्ठी हो गई है। ये मरुस्थल ससार की समस्त भूमि के एक चौथाई भाग पर छाए हुए है।

इस खण्ड में निम्न प्रदेश शामिल हैं :—

(१) एशिया में थार (भारत), सिन्ध (पाकिस्तान) और अरब।
(२) अफ्रीका में महामरुस्थल और कालाहारी।
(३) उत्तरी अमेरिका में कैलिफोर्निया और मैक्सिको का उत्तर-पश्चिमी भाग।
(४) दक्षिणी अमेरिका में पीरू और चिल्ली में फैला हुआ एटिकामा मरुस्थल।
(५) आस्ट्रेलिया का पश्चिमी भाग।

ये गर्म मरुस्थल हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ठण्डे मरुस्थल भी हैं। पर्वतों से घिरे रहने के कारण ये शुष्क रहते हैं। इनमें ईरान, तिब्बत, मंगोलिया तथा उत्तरी अमेरिका में ग्रेट बेसिन शामिल हैं।

मरुस्थलों की जलवायु साधारणतया गर्म तथा बहुत शुष्क होती है। यहाँ दिन के समय बहुत गर्मी पड़ती है, परन्तु रात को ठंडक हो जाती है। इन मरुस्थलों में वर्षा नहीं के बराबर होती है और कहीं भी यह १० इंच से अधिक नहीं होती। कई प्रदेशों में तो वर्षा साल भर नहीं होती। इसका कारण यह है कि ६ महीने तक यहाँ व्यापारिक पवनें चलती हैं। ये पवनें महाद्वीपों के पूर्व में थोड़ी-सी वर्षा करती हैं, परन्तु पश्चिम तक पहुँचते पहुँचते शुष्क हो जाती हैं। शेष ६ महीने तक यह भाग शान्त खण्ड में होता है। वायु ऊपर के ठण्डे आवरणों से नीचे के गर्म आवरणों में उतरती रहती है। इससे द्रवीभवन क्रिया (Condensation) नहीं हो पाती। इसलिए वर्षा भी नहीं होती।

इस खण्ड में बड़ी-बड़ी आँधियाँ आती हैं जिनसे रेत उड़ती रहती है। चारों तरफ रेत ही रेत होने
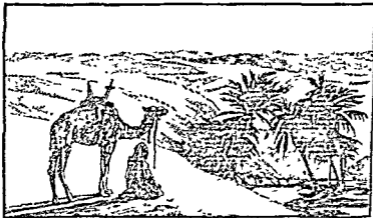
अरब का एक नखलिस्तान

के कारण उपज बहुत कम होती है। केवल ऐसे पौधे अथवा वृक्ष पैदा होते हैं जो खुश्की के सहारे जी सकें; जैसे काँटेदार झाड़ियाँ, बबूल, पलाश इत्यादि कुछ रेतीले मैदानों में पानी के स्रोत पाए जाते हैं। वहाँ

खजूर की बड़ी पैदावार होती है। थोड़ी बहुत मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास, फलों आदि की भी खेती होती है। ऐसे हरे-भरे स्थानों को शाद्वल (नखलिस्तान) कहते हैं। इस खण्ड का प्रसिद्ध पशु ऊँट है। यह पशु मरुस्थलों के लिए बड़ा अनुकूल है। इसके पाँव रेत में नहीं धँसते और यह कई दिनों तक बिना खाए-पिए रह सकता है। यह सूँघकर मालूम कर सकता है कि कहाँ पानी है। मरुस्थल में यह पशु ही प्राय एक स्थान से दूसरे स्थान तक सामान ले जाने के काम आता है। इसलिये इसे "मरुस्थल का जहाज" कहते हैं। इसके अतिरिक्त इस खण्ड में भेड़-बकरियाँ भी मिलती हैं। अरब के मरुस्थल में कुछ अच्छे घोड़े होते हैं।

मरुस्थलों में उपज तथा जल बहुत कम होने के कारण आबादी भी थोड़ी है। लोग अधिकतर खाना-बदोश हैं। वे ऊँट तथा भेड़-बकरियाँ पालते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान को भोजन के लिए भटकते रहते हैं। अरब में ऐसे लोग बद्दू कहलाते हैं। इस खण्ड में जहाँ-जहाँ नखलिस्तान है, वहाँ लोग खेती-बाड़ी करते हैं तथा मकान बनाकर रहते हैं। इस खण्ड में कहीं-कहीं खनिज पदार्थ भी होते हैं। वहाँ लोग खानों
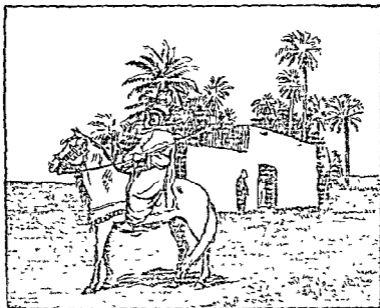
एक अरब सौदागर और उसका घर

में काम करते हैं। दक्षिणी अफ्रीका में शुतुरमुर्ग बहुत मिलते हैं। कई लोग शुतुरमुर्ग के पंख इकट्ठे करके उनका व्यापार करते हैं।

ठण्डे मरुस्थलों में वर्षा बहुत कम होती है। ऊँचाई पर स्थित होने के कारण वहाँ सर्दी बहुत पड़ती है।

प्राकृतिक उपज केवल घास ही होती है जिस पर भेड़ बकरियां पाली जाती हैं और उनसे ऊन प्राप्त होता है। तिब्बत में याक नामक एक पशु होता है जो लोगों के बड़े काम आता है।

(५) रूमसागरीय जलवायु का खण्ड

यह खण्ड उत्तरी गोलार्द्ध तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में ३०° और ४५° की अक्षांश रेखाओं के बीच में फैला हुआ है। इसमें निम्नलिखित देश शामिल हैं।

(१) रूम सागर के आसपास के देश, जैसे पुर्तगाल, स्पेन, इटली, दक्षिणी फ्रांस, यूनान, टर्की, सीरिया, फिलस्तीन, ट्यूनिस, अल्जीरिया और मोरक्को।

(२) उत्तरी अमेरिका में उत्तरी कैलिफोर्निया।

(३) आस्ट्रेलिया में विक्टोरिया प्रान्त तथा दक्षिण-पश्चिमी भाग।

(४) अफ्रीका का दक्षिण-पश्चिमी भाग।

(५) दक्षिण अमेरिका में मध्य चिल्ली।

इस खण्ड की जलवायु गर्मियों में गर्म और शुष्क होती है। यहाँ सर्दियों में वर्षा होती है। सर्दियों में वर्षा होने के कारण सर्दी कम पड़ती है। इसलिए इस खण्ड को सर्दियों में वर्षा वाला खण्ड भी कहते हैं। यहाँ साल भर में २० इंच तक वर्षा होती है। रूमसागर का खण्ड गर्म और शुष्क होता है। इसलिए यहाँ ऐसे वृक्ष और पौधे होते हैं जो गर्मी और खुश्की सहन कर सकें, जैसे अंगूर की बेल, जैतून, नींबू, अनार, अंजीर इत्यादि। शहतूत के पेड़ भी बहुत पाए जाते हैं जिनपर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। जिन प्रदेशों में सिंचाई होती है, वहाँ गेहूँ, मक्का, कपास, जौ इत्यादि की खेती होती है।

गर्मियों की ऋतु शुष्क होने के कारण घास के हरे-भरे मैदान इस खण्ड में नहीं होते। इसलिये गाय, बैल कम पाले जाते हैं। अधिकतर लोग भेड़-बकरियाँ ही पालते हैं। घोड़े, गधे और खच्चर सामान ढोने के काम आते हैं।

इस खण्ड का जलवायु स्वास्थ्य के लिए बड़ा अच्छा है। यही कारण है कि रूमसागर के आसपास के प्रदेशों में बड़ी ऊँची सभ्यताएँ पनपीं। यूनान तथा रोम दुनिया की प्राचीनतम सभ्यताओं के केन्द्र थे। इस खंड में जनसंख्या काफी है। अधिकतर लोगों का व्यवसाय खेती करना है। इसके अतिरिक्त भेड़-बकरियाँ पालना, रेशम बनाना, अंगूरों से शराब तैयार करना, जैतून का तेल निकालना इत्यादि कुछ बड़े-बड़े व्यवसाय हैं। लोगों का मुख्य आहार गेहूँ है।

(६) स्टेप जैसी जलवायु का खण्ड : (समशीतोष्ण कटिबन्ध के घास के मैदान)

यह खण्ड उत्तरी गोलार्द्ध और दक्षिणी गोलार्द्ध के समशीतोष्ण कटिबन्ध (३०° से ४५°) के पूर्वी भाग में स्थित है। इस खण्ड के पश्चिम में रूमसागरीय खण्ड है। इस खण्ड में ये प्रदेश शामिल हैं:

(१) एशिया और योरोप में स्टेप के मैदान—काला सागर से लेकर मचूरिया तक।

(२) उत्तरी अमेरिका में प्रेरीज के मैदान।

(३) दक्षिणी अमेरिका में पम्पास के मैदान (अर्जेन्टाइना)।

कई स्थानों पर बर्फ जम जाती है। सर्दियों में गर्मियों की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है। यहाँ वर्षा साइक्लोन्स द्वारा होती है। गर्म पानी की धाराओं की निकटता के कारण जलवायु अत्यधिक सर्द नहीं रह पाती। इस खण्ड के अधिक ठंडे भागों में सदाबहार वन मिलते हैं। इनमें नोकदार पत्तोंवाले सनोवर, समशाद आदि पेड़ मिलते हैं। जिन भागों में ठण्ड कम पड़ती है, वहाँ पतझड़ी वन पाए जाते हैं। इन वनों में बलूत, बर्च इत्यादि के चौड़ी पत्तियों वाले वृक्ष होते हैं। उत्तर-पश्चिमी योरोप के तटीय भागों में घास के बड़े उत्तम मैदान मिलते हैं। यह घास सारा साल हरी रहती है जिस पर दूध देने वाले पशु पाले जाते हैं। उत्तर-पश्चिमी योरोप में जहाँ वन साफ कर दिए गए हैं, वहाँ खेती की जाती है। यहाँ की मुख्य उपज गेहूँ, जौ, अलसी, जई, चुकन्दर और आलू हैं। सेब, नाशपातियाँ और आलूचे प्रमुख फल हैं।

साइबेरिया के जीवन की एक झाँकी

आज संसार में इस खण्ड के लोग सबसे अधिक प्रगतिशील हैं। उन्होंने अपने प्राकृतिक साधनों का पूरा-पूरा लाभ उठाया है। यहाँ कला-कौशल तथा उद्योग-धन्धे बहुत फले-फूले हैं। परिणामस्वरूप लोगों का जीवन स्तर बहुत ऊँचा हो गया है। लोगों के मुख्य धंधे खेती तथा उद्योग, लकड़ी काटना, मछली तथा समूरदार जानवरों का शिकार करना इत्यादि हैं। वनों के कारण जहाज बनाना, दियासलाई, कागज इत्यादि के उद्योग भी स्थापित हुए हैं। इस खण्ड में बहुत से खनिज पदार्थ मिलते हैं, जैसे लोहा, कोयला इत्यादि। इस कारण योरोपीयन देशों में उद्योग-धंधे बहुत फले-फूले हैं। घास के सदाबहार मैदानों में दूध देनेवाले पशु पाले जाते

है। इसलिए डेरी उद्योग ने बड़ी उन्नति की है। इस खण्ड के लोग व्यापार में भी बहुत आगे हैं। इस भाग में संसार के कुछ सबसे बड़े तथा प्रसिद्ध नगर आबाद हैं, जैसे लन्दन और न्यूयार्क।

(८) अति सर्द टुण्ड्रा की जलवायु का खण्ड

टुण्ड्रा हिममय प्रदेश को कहते हैं। यह खण्ड योरोप, एशिया और उत्तरी अमेरिका के अत्यन्त उत्तर में उत्तरी ध्रुव से लेकर उत्तरी हिममहासागर तक फैला हुआ है। यह खण्ड ६६° से ९०° उत्तर के बीच में स्थित है। इस खण्ड की जलवायु बहुत सर्द है। साल में प्राय ९ महीने तो बर्फ जमी रहती है। गर्मियो की ऋतु बहुत छोटी और सर्द होती है। उत्तरी हिममागर से जो ठण्डी हवाएँ आती है, वे इस खण्ड के प्रदेशो की सर्दी को और भी बढ़ा देती है। अत्यधिक सर्द होने के कारण यहाँ प्राय कुछ भी पैदा नही होता। सर्दियो के तीन महीनो में जब बर्फ पिघलती है, तो काई और लीचन जो रेंडियर का आहार है, पैदा होते हैं। इसके अतिरिक्त छोटी-छोटी झाडियाँ और रग-बिरग के फूल उगते है। खेती करना प्राय असभव है।

रेंडियर द्वारा बिना पहिये की गाड़ियां बर्फ पर चलाई जाती हैं

इस खण्ड का सबसे प्रसिद्ध और उपयोगी पशु रेंडियर है। लोग रेंडियर का मास खाते हैं, दूध पीते है और इसकी खाल पहनने के काम आती है। रेंडियर की हड्डियो से हथियार भी बनाते हैं। रेंडियर बिना पहियो की गाडियो को बर्फ पर खीचता है। इस खण्ड में कुत्तो को भी बिना पहियो की गाडियो में जोत

कर मार डालने के काम में लाया जाता है। इनके अतिरिक्त यहाँ सफेद रीछ, सील मछली और वालरस इत्यादि जन्तु पाए जाते हैं।

भयंकर सर्दी तथा खाद्य पदार्थ न उपजने के कारण इस खंड में आबादी बहुत कम है। अधिकतर लोग खानाबदोश हैं। वे एक स्थान से दूसरे स्थान को घूमते रहते हैं। उत्तरी अमेरिका के टुण्ड्रा में एस्कीमो नामक एक जाति रहती है, उत्तरी योरोप में लैप्प जाति बसती है और एशिया के टुण्ड्रा में समोईड्स लोग बसते

एक एस्कीमो परिवार तथा उसका घर

हैं। इन लोगों का मुख्य व्यवसाय शिकार करना, मछली पकड़ना या पशु पालना है। सफेद रीछ, दरियाई घोड़े और ह्वेल इत्यादि का शिकार किया जाता है। वे रेंडियर पालते हैं जो उनकी सबसे बड़ी सम्पत्ति है। वे समूर और खालों का व्यापार करते हैं। सील मछली के तेल को जलाकर रोशनी करते हैं और अपने शरीर को गर्म रखने के लिए चर्बी मलते हैं और खाते हैं। सर्दियों के दिनों में ये लोग कुछ दक्षिण में जा जाते हैं और रेंडियर की खाल के तम्बुओं में रहते हैं। इस खण्ड में रहनेवाली जातियों में एस्कीमो सबसे प्रगतिशील जाति है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) दुनिया को किन २ प्राकृतिक खण्डों में बाँटा जा सकता है? मुख्य-मुख्य प्राकृतिक खण्डों के नाम बताओ।

(२) दुनिया को प्राकृतिक खण्डों में बाँटते समय हमें किन बातों का ध्यान रखना चाहिये।

(३) भूमध्य रेखा की जलवायु के खण्ड की स्थिति के बारे में आप क्या जानते हैं? यहाँ की जलवायु कैसी है और लोगों के मुख्य धंधे क्या-क्या हैं?

(४) गर्मियों में वर्षा वाले खण्ड को सूडान जैसी जलवायु वाला खण्ड क्यों कहते हैं? इस खण्ड की स्थिति और यहाँ के जलवायु के बारे में संक्षेप में लिखो।

(५) मौनसून खण्ड की जलवायु सभ्यता की उन्नति के लिये क्यों अनुकूल है ? इस खण्ड में शामिल देशों के नाम बताओ ?

(६) शुष्क मरुस्थलीय खण्ड के निवासियों के रहन-सहन के बारे में आप क्या जानते हैं ?

(७) रूम सागरीय खण्ड की स्थिति का वर्णन करो। इस खण्ड की क्या विशेषता है ? यहाँ की मुख्य उपज बताओ।

(८) स्टेप जैसी जलवायु का खण्ड तथा सूडान जैसी जलवायु के खण्ड में पाए जाने वाले घास के मैदानों में क्या अन्तर है ? दोनों की जलवायु और उपज की तुलना करो।

(९) संसार के नक्शे में समशीतोष्ण कटिबन्ध के वनों का खण्ड दिखाओ। उन देशों के नाम भी लिखो, जो इस खण्ड में शामिल हैं ?

(१०) अति शर्द टुण्ड्रा के प्राकृतिक खण्ड में कैसी जलवायु होती है ? लोग अपना जीवन कैसे व्यतीत करते हैं ?

(११) ये क्या हैं :

रेंडियर, एस्कीमो, बद्दू, रेगिस्तान का जहाज, जिराफ।

: ३७ :

भारत की प्राकृतिक रचना

भारत की भौतिक विविधता के बारे में एक कहानी प्रचलित है। कहते हैं कि एक बार संसार का भ्रमण करने बाद नारद स्वर्गलोक में ब्रह्मा के पास पहुँचे। ब्रह्मा ने नारद से पूछा—'कहो नारद, हमारी सृष्टि का क्या हाल है?' नारद ने मुंह बनाते हुए कहा—'विधाता, आपकी सृष्टि का हाल अच्छा नहीं।' ब्रह्मा को अचम्भा हुआ। पूछा, 'क्या बात है, नारद?' नारद ने उत्तर दिया, 'महाराज, क्या बताऊं। आपकी दुनिया में कहीं तो इतनी सर्दी है कि लोग ठुरु-ठुरु करते रहते हैं और कहीं इतनी गर्मी है कि लोग झुलस जाते हैं। कहीं जल-प्लावन है तो कहीं दो घूंट पानी पीने को भी नहीं। कहीं पहाड़ है, तो कहीं रेगिस्तान। कहीं चावल होता है तो गहूँ नहीं। कहीं आम होता है तो सेब नहीं। कहीं सब लोग काले हैं तो कहीं गोरे ही। भगवान, मैं तो सृष्टि की यह एकरसता देखकर ऊब जाता हूँ।'

नारद की बात सुनकर ब्रह्मा खिलखिलाकर हँसने लगे। नारद से पूछा—'देवर्षि, तुम चाहते क्या हो?' नारद बोले—'विधाता! कोई ऐसा उद्यान रचो जहाँ सब प्रकार का जलवायु हो। सब प्रकार की भूमि हो। पर्वत हों, घाटियाँ हों, मैदान हों, जंगल हो और हरी-भरी खेतियाँ भी। सब प्रकार के अन्न उपजें। सब प्रकार के फल हों। सब रंग के लोग हों।' ब्रह्मा ने खुश होकर कहा—'तथास्तु।' कहते हैं, ब्रह्मा ने उसी समय भारतवर्ष की रचना कर डाली। भारतवर्ष में सब प्रकार की रोचक विविधता उत्पन्न कर दी।

यह कहानी मनगढ़न्त है। परन्तु कहानी की मूल बात सच्ची है। भारतवर्ष में प्रायः सब तरह का जलवायु उपलब्ध है। सब तरह की भूमि और सब तरह के फल, पौधे और अनाज मिलते हैं। विश्वास नहीं आता? अच्छा, तो हम भारत की प्राकृतिक रचना, जलवायु, साधनों इत्यादि के बारे में आपको इस अध्याय में बताएँगे। आपको इस कहानी की सत्यता में तनिक भी सन्देह नहीं रहेगा।

प्राकृतिक रचना

भारतवर्ष पर्वतों तथा समुद्र से घिरा हुआ एक स्वतन्त्र देश है। इस कारण वह एशिया से प्रायः अन्य अलग सा रहा है। इसके उत्तर में हिमालय पर्वत, दक्षिण में हिन्द महासागर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी और पश्चिम में अरब सागर है। हमारा यह देश भूमध्य रेखा के उत्तर में ८° से ३७° उत्तरी अक्षांश रेखाओं के बीच स्थित है। कर्क रेखा इसके बीच में से होकर गुजरती है और इसे लगभग दो बराबर-बराबर हिस्सों में बाँटती है। उत्तरी भाग को उत्तर भारत और दक्षिणी भाग को दक्षिण अथवा प्रायद्वीप भारत कहते हैं।

उत्तर से दक्षिण तक भारत की लम्बाई २,००० मील है। पूर्व से पश्चिम तक चौड़ाई लगभग १,७०० मील है। इसका क्षेत्रफल १२,६६,९०० वर्गमील है। आकार की दृष्टि से यह दुनिया में सातवां

सबसे बड़ा देश है। भारत की सीमाएँ बड़ी लम्बी-चौड़ी हैं। भारत की स्थल सीमा ९,३०९ मील और समुद्री किनारे की लम्बाई ३,५३५ मील है।
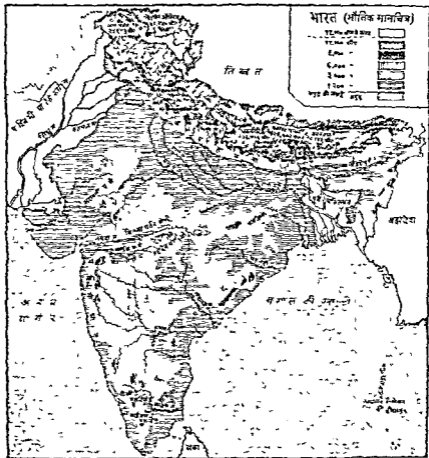
सीमाएँ

भारत के उत्तर में हिमालय के साथ-साथ चीन, तिब्बत तथा नेपाल, पूर्व में बर्मा है जिसे कई पर्वत-श्रेणियां भारत से अलग करती हैं। उत्तर-पूर्व में पश्चिमी बंगाल तथा असम के बीच पूर्वी पाकिस्तान का प्रदेश है। पश्चिमोत्तर में पश्चिमी पाकिस्तान का प्रदेश है। दक्षिण में श्री लंका है। बंगाल की खाड़ी में स्थित

अन्दमान तथा निकोबार द्वीपसमूह तथा अरब सागर में स्थित लकाद्वीप, मिनिकाय और अमीनदीवी द्वीप भी भारत का अंग हैं।

भारत की विशालता को देखते हुए भारत का समुद्री तट बहुत कम है। विशेष रूप से यहाँ बहुत कम खाड़ियाँ और कटाव हैं। हमारा तट एक सीधी लाइन की तरह है। परिणामस्वरूप यहाँ बहुत कम प्राकृतिक बन्दरगाहें हैं। तीन अच्छी बन्दरगाहें हैं—बम्बई, गोआ और कोचीन। गोआ पुर्तगाल के अधीन है और कोचीन में रेत भर जाया करती है। इसलिए रेत को को बार-बार साफ़ करना पड़ता है। पूर्वी तट पर समुद्र कम गहरा होने के कारण कोई अच्छी बन्दरगाह नहीं है। मद्रास एकमात्र अच्छी बन्दरगाह है। परन्तु वह भी कृत्रिम बन्दरगाह है—मनुष्य द्वारा बनाई हुई। कलकत्ते की बन्दरगाह समुद्र से ८० मील दूर हुगली नगर के पूर्वी तट पर स्थित है। यहाँ बड़े-बड़े जहाज आ-जा सकते हैं।

प्राकृतिक भाग

प्राकृतिक अथवा नैसर्गिक आधार पर भारत को मोटे रूप से तीन मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है :

(१) उत्तर की विशाल पर्वतीय दीवार

(२) *सिन्धु-गंगा का मैदान*

(३) दक्षिणी पठार जिसे दक्षिणी प्रायद्वीप भी कहते हैं।

१—उत्तर की विशाल पर्वतीय दीवार

पूर्व में असम से लेकर उत्तर में काश्मीर तक हिमालय २,००० मील लम्बी पर्वत शृंखलाओं का नाम है। ये शृंखलाएँ १८० से २२० मील तक चौड़ी हैं। पर्वत की इन समानान्तर श्रेणियों के बीच लम्बे चौड़े पठार और घाटियाँ हैं। इनमें काश्मीर तथा कुल्लू कांगड़ा की उपजाऊ तथा सुन्दर घाटियाँ भी हैं। हिमालय पर्वत की औसत ऊँचाई समुद्र तट से १७,००० फीट है। परन्तु यहाँ दुनिया की कुछ सबसे ऊँची चोटियाँ पाई जाती हैं; जैसे, माउन्ट एवरेस्ट (२९,०२८ फीट), कांचनजंघा (२८,१४६ फीट), धौलगिरि (२६,८२६) फीट) तथा नन्दादेवी (२५,६६१ फीट)।

हिमालय को प्रकृति ने हमारा प्रहरी बनाया है। यही नहीं, हिमालय वर्षा के पानी को अपने विशालकाय शरीर में रोककर नदियों द्वारा हमें जलामृत भेजता है। इस वर्षा से गंगा और सिंधु के मैदान हरे भरे हो जाते हैं। सर्दियों में हिमालय मध्य एशिया की भयावह सर्द हवाओं को रोकता है। यहाँ सिन्धु, यमुना और गंगा जैसी महान् नदियाँ जन्म लेती हैं। हिमालय की निचली ऊँचाइयों पर घने जंगल तथा अन्य वन्य-पशु होते हैं। असम से लेकर पंजाब तक हिमालय के बाहरी भाग में चाय के बाग लगे हुए हैं।

२—गंगा और सिन्धु का मैदान

हमारे देश का यह मैदानी प्रदेश १,५०० मील लम्बा और १५० से ३०० मील चौड़ा है। यह हिमालय पर्वत तथा विन्ध्याचल के बीच में स्थित है। इसमें गंगा का सारा मैदान और सिन्धु के मैदान का थोड़ा-सा पूर्वी भाग शामिल है। यह पंजाब से पश्चिमी बंगाल तक फैला हुआ है। इसमें गंगा और उसकी सहायक नदियाँ—यमुना, गोमती, घाघरा, गंडक और कोसी बहती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी हिमालय से निकल कर भारत

के असम प्रदेश में प्रवेश करती है। इस मैदान की निम्न विशेषताएँ हैं: (क) उपजाऊ भूमि, (ख) अच्छा जलवायु, (ग) समतल धरातल जिसमें सड़कें तथा रेल मार्ग आसानी से बन सकते है, (घ) नदियाँ, (ङ) अपार खनिज पदार्थ। इस मैदानी प्रदेश में वर्षा काफी होती है। खेतीबाड़ी लोगो का मुख्य व्यवसाय है। भारत की प्राय. ४० प्रतिशत आबादी यहाँ रहती है।

३—दक्षिण पठार या दक्षिणी प्रायद्वीप

सिन्धु और गगा के मैदान का प्राय समूचा दक्षिणी प्रदेश एक विशाल पठार है। दक्षिण प्रायद्वीप तीन ओर से पहाड़ो द्वारा घिरा हुआ है। उत्तर की ओर विन्ध्य तथा सतपुड़ा की पहाड़ियाँ है। पश्चिम की ओर ३,००० फीट ऊँचे पश्चिमी घाट है, पूर्व की तरफ १,२०० फीट ऊँचे पूर्वी घाट है। इन घाटो की ऊँचाई कही-कही तो ९,००० फीट तक पहुँच जाती है। ये दोनों पर्वतशृखलाएँ दक्षिण में नीलगिरि पर्वत में जा मिलती है। नीलगिरि के दक्षिण में पालघाट का दर्रा है। उसके बाद कार्डेमम पहाड़ियाँ है। ये पहाड़ियाँ कुमारी अन्तरीप तक फैली हुई है।

दक्षिण का पठार पथरीला है। उसकी औसत ऊँचाई २,००० फीट है। धरातल समतल नही। इसमें महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा और ताप्ती नदियाँ बहती है। जलवायु प्राय सारा वर्ष गर्म रहती है। उत्तर-पश्चिमी भाग में उपजाऊ काली मिट्टी पाई जाती है जो कपास की खेती के लिये अत्यत लाभकारी है। यह भाग भारतवर्ष में कपास का घर है। कपास के अतिरिक्त चाय, कहवा, गर्म मसाले चावल, ज्वार, मक्का तथा तेलहन इत्यादि भी पैदा होते है।

पश्चिमी घाट भारत के मालाबार तट के साथ-साथ कुमारी अन्तरीप तक १,००० मील तक चलते हैं। समुद्र और घाटो के बीच प्राय ३० से ४० मील तक का अन्तर है। पश्चिमी घाट समुद्र के साथ एक विशाल दीवार की तरह दिखाई देते है। पूर्वी घाट महानदी की घाटी से नीलगिरि तक प्राय ५०० मील तक फैले हुए है। ये घाट उतने ऊँचे नही जितने पश्चिमी घाट। पूर्वी घाटो और समुद्र के बीच का अन्तर भी अधिक है—प्राय ५० से ८० मील तक।

भारत की नदिया

भारत की मुख्य नदियो का उल्लेख हम पहले कर चुके है। गगा और सिन्धु के मैदान की नदियाँ, गगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र हिमालय के बर्फानी पहाड़ो से निकलती है। बर्फ पिघलने के कारण उनमें वर्ष भर पानी रहता है। वर्षा ऋतु में तो यह नदियाँ बहुत चढ़ जाती है। ये अपने साथ बहुत-सी उपजाऊ मिट्टी बहाकर लाती है, जो बाढ़ के पानी के साथ मैदानो में फैल जाती है। इसलिये इन नदियो द्वारा सीचे जानेवाले मैदान भारत का अन्न भण्डार है। गगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र में तो जहाज भी चलते है।

हमारे दक्षिणी प्रायद्वीप की नदियाँ मौनसून के दिनो में ही भरकर बहती है। वर्ष के शेष दिन वे पानी के एक गन्दले नाले की तरह बहती है। उनका स्रोत बर्फानी पहाड़ नही। अत बारह महीने उनमें पानी नही रहता।

भारत का जलवायु

भारत इतना विशाल देश है कि इसके प्रत्येक भाग में एक जैसा जलवायु कदापि नही हो सकता। जलवायु के दृष्टिकोण से भारत को दो भागों में विभक्त करना उचित होगा—उत्तरी भारत और दक्षिणी प्रायद्वीप। उत्तरी भारत कर्क रेखा के ऊपर है। इसलिए इसके विभिन्न प्रदेशों में जलवायु अलग-अलग है। पश्चिम में पंजाब और राजस्थान में गर्मियो में बडी गर्मी और सर्दियो में बडी सर्दी होती है। हवा खुश्क होती है। पूर्वी प्रदेश में जिसमें पश्चिमी बंगाल, आसाम, बिहार तथा उत्तर प्रदेश शामिल हैं, जलवायु गर्मियो में गर्म तथा आर्द्र होती है और सर्दियो में जाडा कम होता है। दक्षिण भारत उष्ण कटिबन्ध में होने के कारण यहाँ तापमान काफी ऊँचा रहता है। सर्दी बहुत साधारण होती है। विभिन्न मौसमो में जलवायु का विशेष अन्तर नही होता।

वर्षा के आधार पर जलवायु के अनुसार भारत के प्रदेशो का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है।

(क) ८० इंच से अधिक वर्षा वाले प्रदेश जैसे पश्चिमी तट, बंगाल और असम।

(ख) ४० से ८० इंच तक की वर्षा के प्रदेश जैसे उत्तर पूर्वी पठार तथा गंगा घाटी का मध्य भाग।

(ग) २० से ४० इंच तक की वर्षा वाले प्रदेश जैसे मद्रास, दक्षिणी तथा दक्षिण का उत्तर पश्चिमी पठार तथा गंगा के मैदान का ऊपरी क्षेत्र।

(घ) वे क्षेत्र जहाँ २० इंच से कम वर्षा होती है। रेगिस्तानी अथवा अर्ध-रेगिस्तानी प्रदेश—राजस्थान इत्यादि।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत की प्राकृतिक रचना कैसी है ? उसके मुख्य नैसर्गिक भागों का वर्णन करो ?
(२) मौनसून पवनें क्या होती हैं ? इन पवनों से भारत को क्या लाभ होता है ?
(३) भारत के जलवायु के बारे में आप क्या जानते है ?
(४) वर्षा के आधार पर आप भारत को कैसे विभक्त करेंगे ?
(५) भारत की प्राकृतिक सीमाओं का वर्णन करो ? भारत देश की क्या विशेषता है ?

भारत की प्राकृतिक सम्पदा

प्रकृति ने भारत को एक सम्पन्न देश बनाया है। भारत की भूमि के नीचे खनिज पदार्थों के रूप में कीमती खजाने दबे पड़े है। अभी हम उनका पूरा पूरा उपभोग नहीं कर पाए। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा रूस को छोड कर भारत में खनिज पदार्थों का सर्वाधिक भण्डार है। देश की नदियो में खेती के लिये ही अपार जल ही नही बल्कि अपरिमित मात्रा में बिजली की शक्ति भी है। हमारा काम केवल उस शक्ति को साधना है। पर्वतीय प्रदेशो में घने जगल पाए जाते है। इन जगलो में बहुमूल्य लकडी उपलब्ध है।

भारत में मुख्यत ये खनिज पदार्थ उपलब्ध हैं—कोयला, लोहा, मैंगनीज, सोना, अभ्रक, नमक, तेल इत्यादि।

कोयला : ससार के कोयला उत्पादक देशो में भारत का सातवा नम्बर है। कुल उत्पादन का ९० प्रतिशत भाग दामोदर घाटी में रानीगज और झरिया की कोयला-खानो से आता है। मद्रास के तटवर्ती प्रदेश में लिगनाइट के रूप में कोयले की जाच पडताल हो रही है। १९५५ में भारत में ३८२ लाख टन कोयला निकाला गया था जिसका मूल्य ५६ करोड रुपये था। सारे कोयले का एक तिहाई-भाग भारतीय रेलो के काम आता है। १० प्रतिशत कोयले की खपत कपडे के कारखानों में हो जाती है और १० प्रतिशत इस्पात के कारखानों में इस्तेमाल होता है। बिहार के अतिरिक्त कुछ कोयला चान्दा (मध्यप्रदेश), सिंगारेनी (बम्बई) और माकूम (असम) में भी पाया जाता है।

लोहा भारत में ससार के उच्चकोटि के लोहे के भण्डार हैं। धारवाड तथा कडप्पा प्रदेशो में दुनिया के सबसे बडे लोहे के भण्डार है। उत्तरी उडीसा की पहाडियो तथा बिहार के सिंहभूम जिले के कई महत्वपूर्ण स्थानो में कच्चे लोहे के सम्बन्ध में जाच पडताल हो रही है। कच्चे लोहे का यह क्षेत्र दक्षिण में छत्तीसगढ, बस्तर तथा दक्षिणी मध्य प्रदेश तक फैला हुआ है।

इस समय लोहा अधिकतर दक्षिणी बिहार में सिंहभूम और उडीसा में मयूरभज के स्थानो पर निकाला जाता है। लोहा मैसूर प्रदेश, मद्रास के जिला सेलम तथा मध्य प्रदेश में भी मिलता है। लोहे के उत्पादन में दुनिया में भारत का सातवा नम्बर है और कामनवेल्थ में दूसरा।

आज के औद्योगिक युग में लोहे का भारी महत्व है। वास्तव में आधुनिक सभ्यता का आधार ही लोहा है। लोहे के बिना कोई कल नही चल सकती और कलो के बिना वर्तमान मशीनी युग बेकार हो जाता है।

मैंगनीज . मैंगनीज अधिकतर लोहे को इस्पात बनाने के काम आता है। इस बहुमूल्य धातु के उत्पादन में दुनिया में भारत तीसरे नम्बर पर है। लगभग दो तिहाई मैंगनीज मध्यप्रदेश में निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त मद्रास, मैसूर, बम्बई, बिहार और उडीसा में भी मैंगनीज मिलता है। चूंकि भारत में इस्पात उद्योग बहुत उन्नत नही, अत भारत का ९० प्रतिशत मैंगनीज विशाखापटनम की बन्दरगाह द्वारा निर्यात हो जाता है।

सोना सोना अधिकतर मैसूर में कोलार की खानों में मिलता है। कुछ सोना बम्बई में दुती तथा धारवाड़ और आन्ध्र में अनन्तपुर की खानो में भी मिलता है। दुनिया भर में जितना सोना उत्पन्न होता है, भारत उसका केवल २ प्रतिशत भाग पैदा करता है।

अभ्रक भारत में संसार का ७० प्रतिशत अभ्रक पैदा होता है। यह ज्यादातर बिजली का सामान बनाने, गैस लैम्पों की चिमनियां बनाने तथा दवाइयों इत्यादि में प्रयोग होता है।

अभ्रक की सबसे बड़ी खान बिहार राज्य में हजारीबाग, मुंगेर और गया के जिलों में फैली हुई है, दूसरी खान आन्ध्र राज्य के जिला नीलोर में है। कुछ अभ्रक मैसूर, अजमेर और केरल में भी होता है।

तांबा यह धातु सोना, चांदी, लोहा, सिक्का इत्यादि धातुओं के साथ उपलब्ध होती है। इसे बिजली के उद्योगों तथा सिक्के बनाने के काम में लाया जाता है।

यह धातु बिहार के सिंहभूम जिले तथा आन्ध्र के जिला नीलोर में मिलती है। मध्य प्रदेश और मैसूर में भी तांबे के भण्डार हैं। अभी उन्हें प्रयोग में नहीं लाया गया। इस समय तांबे के लिए हम आत्मनिर्भर नहीं। कुछ तांबा हमें विदेशों से मंगवाना पड़ता है।

नमक - भारत में नमक मुख्य रूप से (क) समुद्र के जल से, (ख) झीलों तथा भूमि के नीचे के पानी से तथा, (ग) नमक के पहाड़ों से निकाला जाता है। नमक अधिकतर बम्बई, मद्रास और राजस्थान में बनाया जाता है। देश में जितना नमक पैदा होता है, उसका दो-तिहाई भाग मद्रास तथा बम्बई प्रदेशों के तटीय समुद्र जल से बनाया जाता है। राजस्थान में साम्भर झील के पानी को सुखा करके भी नमक बनाया जाता है। हिमाचल प्रदेश में मण्डी के नमक के पहाड़ों से भी थोड़ा-सा नमक मिलता है।

भारत अब नमक के लिए आत्मनिर्भर है। कुछ नमक जापान और पाकिस्तान को भी भेजा जाता है।

चांदी भारत में चांदी की बड़ी मांग है क्योंकि स्त्रियां इसके आभूषण पहनती हैं। परन्तु हम बहुत कम चांदी निकाल पाते हैं। चांदी ज्यादातर कोलार की सोने की खानों से तथा बिहार के जिले मानभूम में निकाली जाती है।

पेट्रोल - औद्योगिक युग में पेट्रोलियम की आवश्यकता सर्वविदित है। परन्तु तेल उत्पादन की दृष्टि से हमारी स्थिति सन्तोषजनक नहीं। असम में डिगबोई के आसपास तेल के कुछ क्षेत्र हैं। यहां हम प्रायः ७ लाख गैलन तेल पैदा करते हैं, परन्तु यह तेल हमारी कुल आवश्यकता का केवल १० प्रतिशत है। इसलिए इस समय देश के विभिन्न भागों में तेल की खोज हो रही है। पंजाब के कांगड़ा जिला में ज्वालामुखी के स्थान पर भी तेल के मिलने की आशा है।

कोयला से तेल बनाने की एक योजना सरकार के विचाराधीन है।

शोरा: शोरा बिहार, उत्तर प्रदेश, मद्रास और पंजाब में पाया जाता है। यह बारूद और नाइट्रिक एसिड बनाने के काम आता है। कई देशों में शोरा खाद के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

उपरोक्त खनिज पदार्थों के अतिरिक्त राजस्थान में संगमरमर के पत्थर तथा पन्ना में कहीं कहीं हीरे भी मिलते हैं।

भारत में कुछ ऐसे अलौह खनिज पदार्थ भी मिलते हैं जो अणु-विखण्डन के लिए आवश्यक हैं। बेरिल

राजस्थान में और मोनाजाइट केरल में मिलते हैं। बिहार के गया जिले में युरेनियम निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त जहा तहा पाये जानेवाले अन्य खनिज पदार्थों में जिप्सम और एपाटाइट उल्लेखनीय हैं। एपाटाइट उर्वरक के रूप में प्रयुक्त होता है और जिप्सम उर्वरक के अतिरिक्त सीमेंट बनाने के भी काम आता है।

जल

बिजली शक्ति के दो मुख्य साधनो—कोयला तथा तेल का उल्लेख हम ऊपर कर चुके है। कोयले तथा तेल दोनो से पैदा की गई विद्युत शक्ति महगी पडती है। परन्तु देश की औद्योगिक उन्नति के लिए भारत की नदियो मे विद्युत की अपरिमित शक्ति प्राप्त की जा सकती है। अनुमान है कि देश की नदियो मे ४ करोड किलोवाट बिजली मिल सकती है जबकि हम अभी केवल १० लाख किलोवाट बिजली भी पैदा नही कर पाये है। हम अपनी कुल जल-विद्युत शक्ति का केवल १ प्रतिशत भाग ही प्रयोग में ला सके है।

एक जल-विद्युत घर

विद्युत के इस अपार भण्डार को काम में लाने के लिए बहुत सी नदी घाटी योजनाए कार्यान्वित की जा रही हैं। इन योजनाओ का वर्णन हम इस पुस्तक के दूसरे भाग में करेंगे।

जगल

भारत सघ में प्राय १६०,००० वर्गमील क्षेत्र जगलो से ढका हुआ है। यह भारत के कुल क्षेत्रफल का १५ प्रतिशत भाग है।

जगल किसी भी देश की उन्नति के लिए जरूरी है। इनसे बहुमूल्य लकडी मिलती है। बहुत से उद्योग जगलो पर निर्भर है। ये वर्षा में सहायक होते हैं। खेती को लाभ पहुचाते है और लाखो लोगो को काम धन्धा देते है।

भारत में जगल निम्न प्रदेशो मे पाए जाते है—असम की पहाडिया, सुन्दर वन (गगा का डेल्टा), हिमालय पर्वत, तराई, पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, मध्य प्रदेश, उत्तरी पजाब, छोटा नागपुर और पश्चिमी तटीय मैदान। हरे-भरे जगल प्राय उन्ही स्थानो पर होते हैं जहा ४० इच या इससे अधिक वर्षा होती है।

जगलो में जो उत्पादन होता है उसे मोटे रूप से दो भागो में बाटा जा सकता है। (क) मुख्य उत्पादन इमारती तथा जलाने की लकडी, (ख) गौण उत्पादन जैसे लाख, चमडा रगने का मसाला, कई प्रकार के तेल जैसे तारपीन का तेल, सन्दल का तेल इत्यादि, रबड, गन्दाबिरोजा, काफूर, शहद इत्यादि। कागज तथा दियासलाई उद्योग भी जगलो पर निर्भर हैं।
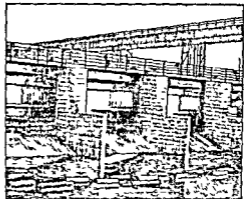
भारतीय जंगलो में जो वृक्ष होते हैं उनमें से कुछ एक का विवरण नीचे दिया जाता है।

रबड रबड का वृक्ष केरल और मैसूर में अधिक होता है। रबड इस वृक्ष का जमाया हुआ रस होता है।

सागवान : सागवान के वृक्ष हिमालय की ढालों, आसाम, पश्चिमी घाट, नीलगिरि और मध्य प्रदेश की पहाडियो पर होते हैं। सागवान की लकडी फर्नीचर, मकान जहाज इत्यादि बनाने के काम आती है।

देवदार और चीड़ : ये वृक्ष काश्मीर, पंजाब, उत्तर प्रदेश और हिमाचल प्रदेश में ३ हजार फीट की ऊंचाई से ऊपर होते हैं। इन वृक्षो की लकडी अधिकतर मकान बनाने के काम आती है। चीड के वृक्ष से गन्दा-बिरोजा प्राप्त होता है।

जंगल

साल साल की लकडी में लचक बहुत होती है। यह मकानो की खिडकियां, दरवाजे, रेलो के स्लीपर इत्यादि बनाने के काम आती है। साल के वृक्ष असम, बगाल, मध्य प्रदेश, उडीसा तथा उत्तर प्रदेश में पाए जाते हैं।

शीशम . शीशम के वृक्ष उत्तर प्रदेश और पजाब में होते हैं। मजबूत होने के कारण यह लकडी नावें, छकडे इत्यादि बनाने के काम आती है।

इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार के कीमती वृक्ष होते हैं जैसे सिंकोना जिनकी छाल से कुनैन बनती है, बांस, सन्दल, शहतूत इत्यादि।

आपने देख लिया कि प्रकृति ने भारत पर अपार कृपा की है। हमें ऊंचे-ऊंचे पर्वत दिए हैं जिन पर घने जंगल पाये जाते हैं। विशाल नदियां दी हैं जिनमें विद्युत की अपरिमित मात्रा छिपी हुई है। उपजाऊ धरती दी है जिसके नीचे खनिज पदार्थों के रूप में अमूल्य खजाने दबे पडे हैं। स्पष्ट है इस देश में साधनों की कमी नहीं। मानव शक्ति की कमी नही। आवश्यकता केवल इस बात की है कि दोनो का ऐसा समन्वय किया जाए जिससे हम अपने साधनों से अधिकाधिक लाभ उठा सकें। एक विद्वान ने कहा है कि भारत एक अमीर देश है जिसमें गरीब लोग रहते हैं। दूसरे शब्दों में भारत एक साधन सम्पन्न देश है परन्तु हम उन साधनो से उचित लाभ नहीं उठा सके। इसलिए हम गरीब हैं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) प्राकृतिक सम्पदा किसे कहते हैं। भारत की प्राकृतिक सम्पदा के बारे में एक संक्षिप्त निबंध लिखो।

(२) निम्न खनिज पदार्थ कहां मिलते हैं :
कोयला, लोहा, अभ्रक, मैंगनीज, नमक।

(३) भारत अपनी नदियों की कितनी विद्युत शक्ति प्रयोग करता है ? नदियों से बिजली क्यों प्राप्त करना चाहिये ?

(४) भारत के मुख्य खनिज पदार्थ क्या हैं ?

: ३९ :

कृषि

भूमि भारतवासियो की आजीविका का मुख्य साधन है। भारत के एक बहुत बड़े भाग में खेती होती है। देश की आबादी का ७० प्रतिशत से अधिक भाग खेती पर ही निर्भर है। हमारी कुल राष्ट्रीय आय का ४६ प्रतिशत भाग कृषि से ही प्राप्त होता है।

भारतवर्ष का भौगोलिक क्षेत्रफल ८१ ०८ करोड एकड है। इसमें से ७२ १५ करोड एकड भूमि के उपयोग सबधी आकडे उपलब्ध हैं। इस भूमि का उपयोग इस प्रकार हो रहा है।

वन	१३ ३४ करोड एकड
चरागाहें	९ ३९ करोड एकड
बंजर	५ ७५ करोड एकड
कृषि	३१ ४९ करोड एकड
भूमि जिसकी काश्त नही हो रही	१२ १८ करोड एकड

हमारे देश की कुल जनसंख्या ३६ करोड है और कृषि के अन्तर्गत भूमि लगभग ३२ करोड एकड। गत ४–५ सालो में कृषि के अन्तर्गत भूमि में कुछ वृद्धि भी हुई है। इसलिए मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि हमारे यहा प्रति व्यक्ति एक एकड भूमि में खेती होती है। क्या आपको मालूम है एक एकड खेत कितना बडा होता है? फुटबाल का मैदान तो देखा ही होगा। फुटबाल के दो मैदानो का जितना क्षेत्र फल होता है लगभग उतने क्षेत्र को एक एकड कहते हैं। एक आदमी का पेट भरने के लिए इतनी भूमि की दरकार है। हमारी जनसख्या विशाल है। इतनी बडी जनसंख्या का पेट भरने के लिए देश में खाद्यान्न अधिक पैदा करना पडता है। इसलिये भारत की कुल कृषि भूमि के ८० प्रतिशत भाग में अनाज की फसलें बोई जाती हैं। हमारे कुछ मुख्य उद्योग खेती पर निर्भर हैं जैसे सूती वस्त्र उद्योग तथा चीनी उद्योग। खेती द्वारा इन उद्योगो के लिए कच्चा माल मिलता है। भारतवर्ष से जो चीजें निर्यात होती हैं उनमें भी अधिकाश वस्तुए कृषि जन्य होती हैं। लाख केवल भारत में ही पैदा होता है। मूगफली और चाय के उत्पादन में भारत पहले नम्बर पर है। पटसन, गन्ना, अरण्डी के बीज, राई तथा तिल के उत्पादन में भारत का स्थान दूसरा है। ये सब चीजें हम विदेशो को भेजते हैं।

भारतवर्ष में मुख्य रूप से दो फसलें होती हैं। पहली खरीफ की फसल और दूसरी रबी की फसल। खरीफ की फसल जून महीने में मौनसून शुरू होने पर बोई जाती है और रबी की फसल सर्दियो में बोई जाती है। खरीफ की बडी-बडी फसलें ये हैं : चावल, बाजरा, ज्वार, मक्का, कपास, गन्ना, तिल तथा मूगफली। रबी की मुख्य फसलो के नाम ये हैं : गेहू, जौ, चने, अलसी, राई तथा सरसो।

आप अपने देश की मुख्य फसलों के बारे में जानना चाहेंगे। इनका संक्षिप्त ब्योरा हम नीचे दे रहे हैं।

धान धान भारत की एक प्रमुख फसल है। सर्वप्रथम धान का उल्लेख ३००० वर्ष पूर्व के अथर्ववेद में मिलता है। भारत की कुल कृषि भूमि का ३० प्रतिशत भाग धान की खेती के अन्तर्गत है। धान की पैदावार में दुनिया भर में भारत का नम्बर दूसरा है। दक्षिण तथा पूर्वी भारत में धान ही लोगों का मुख्य आहार है।

धान के लिए सूर्य की काफ़ी गर्मी तथा अधिक पानी की जरूरत होती है। धान के पौधों के लिए पानी से ढके रहना जरूरी है इसलिए धान वहीं पैदा होता है जहां काफ़ी वर्षा होती हो अथवा वहां जहां नहरों से भरपूर जल मिल सके।

धान का वितरण।

प्रत्येक बिन्दु ५०,००० एकड़ के तुल्य है; देखिये अधिकांश धान समतल पुलिनमय भूमि में उत्पन्न होता है जहां वर्षा अधिक होती है। कहीं-कहीं सिंचाई की सहायता से भी धान उत्पन्न किया जाता है?

भारतवर्ष में धान मुख्य रूप से इन प्रदेशों में पैदा होता है—मद्रास, बिहार, पश्चिमी बंगाल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, आसाम और बम्बई।

गेहूं. गेहूं की खेती हमारे देश में अत्यन्त प्राचीन काल से हो रही है। मोहनजोदड़ो के खण्डहरों में भी गेहूं के अवशेष मिले हैं। गेहूं पंजाब तथा उत्तर प्रदेश के लोगों का मुख्य आहार है। दुनिया में गेहूं की पैदावार में हमारा स्थान तीसरा है, और संसार की उपज का आठवां हिस्सा हम पैदा करते हैं।

गेहूं को बहुत अधिक पानी की आवश्यकता नहीं। जिन प्रदेशों में साल भर में ३० इंच के करीब वर्षा होती है वहां गेहूं की खेती सफलता से हो पाती है। अधिक वर्षा के इलाकों में इसकी खेती अच्छी तरह नहीं हो सकती। इसकी फ़सल बहुधा सर्दियों में बोई जाती है और अप्रैल में काट ली जाती है। पकने में इसे तीन से छः मास लगते हैं। गेहूं मुख्य रूप से पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बम्बई, राजस्थान और बिहार में पैदा होता है।

जौ: जौ अधिकतर उन्हीं प्रदेशों में उत्पन्न होता है जहां गेहूं होता है। इसका रूप भी गेहूं जैसा होता है। यह मुख्य रूप से उत्तर भारत में पैदा होता है विशेषतया उत्तर प्रदेश में। विश्व में जितना जौ पैदा होता है उसका ५ प्रतिशत मात्र भारत में उत्पन्न होता है।

ज्वार-बाजरा : ज्वार-बाजरा छोटे दानों का अनाज होता है। यह अधिकतर गर्म तथा खुश्क जलवायु वाले प्रदेशों में पैदा होता है। ज्वार-बाजरा कम वर्षा वाले इलाकों में भी बिना सिंचाई के हो सकता है। बम्बई, मद्रास, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, और उत्तर प्रदेश में इसकी अधिक पैदावार होती है।

मक्का मक्का प्राय सारे भारतवर्ष में होता है। उत्तर भारत में इसकी खेती ज्यादा होती है। मक्का की खेती मैदानों तथा पहाड़ों दोनों स्थानों पर जहा साधारण वर्षा होती है, हो सकती है। मक्का अनाज और चारे दोनों रूपों में इस्तेमाल होता है।

दालें दालों की खेती प्राय सारे भारतवर्ष में होती है। देश भर में लगभग ५ करोड़ एकड़ भूमि में दालों की काश्त होती है।

ईख भारत दुनिया में सबसे अधिक ईख पैदा करता है। सर्व प्रथम भारत में ही ईख की खेती आरम्भ हुई थी। ईख भारत के लगभग सभी राज्यों में होता है परन्तु अधिक पैदावार के इलाके बिहार, बगाल, पंजाब और बम्बई हैं।

कपास भारत की व्यापारिक फसलों में कपास का सर्वोच्च स्थान है। दुनिया के कपास पैदा करने वाले देशों में भारत का स्थान दूसरा है। ससार में पैदा होनेवाली कुल कपास का १० प्रतिशत भाग हम उत्पन्न करते हैं। भारत में दो तरह की कपास होती है। छोटे रेशे की देसी कपास और लम्बे रेशे की अमरीकन कपास। लम्बे रेशेवाली कपास अधिक मूल्यवान होती है।

साधारणत कपास सूखे प्रदेश में होती है जहा वर्षा ४० इच से कम हो। परन्तु इसके लिये अच्छी मिट्टी का होना आवश्यक है। दक्षिणी पठार की काली मिट्टी इसके लिये बडी उपयोगी है। अमरीकन कपास को ज्यादा पानी की जरूरत होती है। अत यह पंजाब के नहरी इलाकों में अधिक होती है। कपास की खेती अधिकतर इन प्रदेशों में होती है—बम्बई, मध्य प्रदेश, मद्रास, उत्तर प्रदेश, राजपूताना, मैसूर और पंजाब।

पटसन पटसन मुख्यत ससार के एक ही भाग में पैदा होती है—गगा के डेल्टा की बहुत आर्द्र भूमि में। इससे अनाज के बोरे बनते हैं। पटसन मार्च से मई तक बोई जाती है और इसके पौधे १० से १२ फीट ऊंचे होते हैं। फसल की कटाई जुलाई से सितम्बर तक होती है।

तिलहन बीज : मूगफली, राई, सरसों, अलसी और तिल के बीजों से तेल निकाला जाता है। तेल के बीज साधारण वर्षा के प्रदेशों में अधिक होते हैं। भारत में तिलहन की खेती लगभग तीन करोड़ एकड़ भूमि में होती है।

भारत से तिलहन बहुत बडी मात्रा में विदेशों को भेजे जाते हैं। वास्तव में हमारे विदेशी व्यापार में तिलहन का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के महत्वपूर्ण निर्यातों में तिलहन का स्थान पाचवा है।

चाय : भारत दुनिया में सबसे अधिक चाय पैदा करता है। ससार में चाय का जितना व्यापार होता है उसका लगभग आधा भाग भारत से जाता है। चाय एक विशेष प्रकार की सदा हरी रहनेवाली झाडी के खुश्क पत्तों से बनती है। चाय को उष्णार्द्र जलवायु और ढलवा धरती चाहिए। इसके लिये वर्षा अधिक होनी चाहिए परन्तु इसकी जडों में पानी जमा नहीं रहना चाहिए।

भारतीय चाय का ७५ प्रतिशत भाग बगाल और असम में पैदा होता है। इन राज्यों के अतिरिक्त

चाय मुख्यतः इन प्रदेशों में होती है —केरल, देहरादून, कांगड़ा, नीलगिरि की पहाड़ियां, छोटा नागपुर।

कहवा भारत में कहवा दक्षिण भारत में ही पैदा होता है। देश में कहवे की पैदावार का ५० प्रतिशत भाग विदेशों को जाता है।

कहवा को उष्णार्द्र जलवायु चाहिए। यह १५०० से २५०० फीट की ऐसी ऊंचाइयों पर होता है जहां वर्षा ६० से १०० इंच प्रतिवर्ष होती हो। कहवा मुख्यतः मैसूर, मद्रास, और केरल में पैदा होता है।

तम्बाकू १५०८ में पुर्तगाली पहली बार भारत में तम्बाकू का पौधा लगाए थे। अब विश्व में तम्बाकू के उत्पादन में भारत का दूसरा नम्बर है। दुनिया में जितना तम्बाकू पैदा होता है, उसका ३५ प्रतिशत भाग भारत में होता है।

तम्बाकू की खेती के लिए उष्णार्द्र जलवायु और उपजाऊ धरती चाहिए। स्थानीय जरूरतों के लिए यह थोड़ा बहुत भारत के सभी भागों में होता है। परन्तु मुख्य रूप से तम्बाकू भारत के इन भागों में होता है—बिहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश, मद्रास, मैसूर, और बम्बई।

गर्म मसाले गर्म मसाले में काली मिर्च, दालचीनी, जीरा, इलायची, लौंग और जायफल शामिल हैं। गर्म मसालों की पैदावार के लिए उष्णार्द्र जलवायु की जरूरत होती है। गर्म मसाले अधिकतर केरल और मद्रास में पैदा होते हैं।

रबड़ रबड़ एक विशेष प्रकार के वृक्ष के रस से बनता है। यह वृक्ष बहुत आर्द्र प्रदेशों के सदाबहार वनों में होता है। रबड़ मुख्यतः मद्रास, केरल और मैसूर में पैदा होता है।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए पशुओं का बड़ा महत्व है। सौभाग्य से हमारे देश में पशु बहु-संख्या में होते हैं। भारत में संसार के कुल गाय बैलों में से १९ प्रतिशत गाय बैल, कुल भैंसों में से ५० प्रतिशत भैंस और कुल बकरे बकरियों में से १८ प्रतिशत बकरे-बकरियां हैं। भारत का वार्षिक दूध उत्पादन १९१ लाख टन है। दूसरे देशों के मुकाबिले में दूध का यह उत्पादन बहुत कम है। अच्छी नस्ल होने तथा पर्याप्त पोषण के अभाव के कारण हमारे पशु निम्न स्तर के हैं।

देश में खाद्य की आवश्यकता पूरी करने में मछली-पालन का काफी महत्व है। मछली एक पौष्टिक आहार है। मछली पालन-द्वारा भारतीयों को प्रतिवर्ष १० करोड़ रुपये की आय होती है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) रबी और खरीफ की मुख्य फसलों के नाम बताओ ?

(२) भारत को कृषिप्रधान देश क्यों कहा जाता है ?

(३) भारत की मुख्य फसलें कौन-कौन सी हैं ?

(४) निम्नलिखित फसलें कहां पैदा होती हैं और उनका आर्थिक महत्व क्या है ?—धान, चाय, तिलहन, पटसन, कपास।

(५) निम्न फसलों के लिये कैसे जलवायु की आवश्यकता है ? गेहूं, तम्बाकू, ज्वार-बाजरा, रबड़।

: ४० :

उद्योग धन्धे

कृषि के बाद भारतीय आर्थिक जीवन का मुख्य आधार उद्योग-धन्धे हैं। नवीनतम आकड़ो के अनुसार ६० लाख आदमी भारत के बड़े बड़े उद्योगों में काम कर रहे हैं। पिछले दस वर्षों में बड़ी तेजी से भारत का औद्योगीकरण हुआ है। स्वतन्त्र भारत में औद्योगीकरण का विस्तृत वर्णन हम इस पुस्तक के दूसरे भाग में करेंगे। यहा हम आपको यही बताना चाहते हैं कि भारत में बड़े-बड़े उद्योग कौन से हैं और कहा-कहा स्थित हैं।

भारत प्राचीन काल से एक औद्योगिक देश रहा है। भारतीय कारीगर अपने हाथ की सफाई के लिए दुनिया भर में प्रसिद्ध थे। इसलिए बहुत देर तक भारत को 'विश्व का कारखाना' कहा जाता था। भारत से कपड़ा तथा अन्य सामान दुनिया के अन्य भागो में जाता था। अंग्रेज भी काफी देर तक भारत से योरोप को कपड़ा तथा अन्य सामान ले जाते रहे। परन्तु सत्रहवी शताब्दी में इंगलैण्ड में औद्योगिक क्राति का प्रारम्भ हुआ। इंगलैण्ड में बने सामान को भारत में खपाने के लिए अंग्रेज शासको ने भारत के कुटीर उद्योगों को धीरे धीरे खत्म कर दिया। एक किंवदन्ती के अनुसार कपड़ा बनानेवाले कुशल कारीगरो के हाथ के अगूठे काट दिये गये जिससे वे कपड़ा न बना सकें।

भारतीय कारीगर कितना अच्छा कपड़ा बनाते थे, इस बात का अनुमान बादशाह औरंगजेब सम्बन्धी इस कहानी से लगाया जा सकता है। कहते है औरंगजेब की एक बेटी बढ़िया मलमल की सात तहें अपने शरीर के इर्द-गिर्द बाध कर पिता के सम्मुख आई। कट्टरपथी पिता आगबबूला हो गया क्योकि बेटी का शरीर कपड़े में से झलक रहा था। बादशाह ने अपनी पुत्री को भविष्य में मलमल पहनने से मना कर दिया। कुटीर उद्योगो के समाप्त हो जाने के बाद चिरकाल तक भारत अपनी औद्योगिक जरूरतो के लिए योरोप का मोहताज हो गया। परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में भारत में कपड़े की कुछ मिलें कायम हुई, धीरे धीरे कुछ अन्य उद्योग भी शुरू हुए। पहले और दूसरे महायुद्ध ने भारतीय उद्योगो को और बढ़ाया। स्वाधीनता के बाद तीव्रगति से देश की औद्योगीकरण सरकार की नीति का मूल सिद्धान्त रहा है। इन प्रयत्नो के परिणाम स्वरूप अब दुनिया के औद्योगिक देशों में भारत का आठवा नम्बर है। एशिया में जापान के बाद भारत का ही स्थान है। उद्योग के क्षेत्र में हम चीन से आगे हैं। हमारे मुख्य उद्योग निम्न हैं।

सूती वस्त्र उद्योग सूती वस्त्र उद्योग में भारत दुनिया में दूसरे नम्बर पर है। यह हमारा सबसे बड़ा उद्योग है। भारत में पहली कपड़ा मिल १८२२ में हुगली में स्थापित हुई थी। परन्तु वस्त्र उद्योग की वास्तविक उन्नति १८५४ में शुरू हुई थी जब बम्बई में कपड़े की पहली मिल कायम हुई। नवीन आंकड़ो के अनुसार अब भारत में ४६७ कपड़ा मिलें है जिनमें ८,४०,००० लोग काम करते हैं। कपड़े की मिलें मुख्यत इन राज्यों में केन्द्रित हैं: बम्बई, पश्चिमी बगाल, मद्रास और उत्तर प्रदेश। बम्बई राज्य में १७९ मिलें हैं जिनमें से ७० बम्बई नगर में और ७० अहमदाबाद में हैं।

रेशमी तथा ऊनी वस्त्र उद्योग भारत में रेशम उद्योग प्राचीन काल से पनप रहा है। देश के भिन्न भिन्न भागों में रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। रेशमी कपड़े के लिए काश्मीर, मैसूर और पश्चिमी बंगाल प्रसिद्ध हैं। काश्मीर में शहतूत के वृक्ष बहुत होते हैं जिनके पत्तों पर रेशम के कीड़े पलते हैं। काश्मीर के अतिरिक्त रेशम उद्योग के अन्य केन्द्र ये हैं—बंगलौर, बम्बई, और लुधियाना।

ऊनी कपड़े के कारखाने कानपुर, धारीवाल,(पंजाब), बम्बई और बंगलोर में हैं।

पटसन उद्योग सूत के बाद पटसन उद्योग भारत का सबसे महत्वपूर्ण उद्योग है। इस उद्योग में तीन लाख मजदूर लगे हुए हैं। भारत संसार में सबसे ज्यादा पटसन निर्यात करता है। इस निर्यात से हमें भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा मिलती है। पटसन उद्योग अधिकतर पश्चिमी बंगाल में केन्द्रित है। भारत में पटसन की १०९ मिलें हैं जिनमें से ९५ पश्चिमी बंगाल में स्थित हैं।

चीनी उद्योग. दुनिया में भारत ने ही सर्वप्रथम चीनी का प्रयत्न किया था। ईसा के जन्म से कई सौ वर्ष पूर्व के हमारे धर्मग्रंथों में चीनी का उल्लेख है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारी भारत मात्रा में विदेशों को चीनी का निर्यात करता रहा। परन्तु जावा में चीनी उद्योग पनपने से भारतीय चीनी दुनिया की मण्डियों में टिक न सकी। १९३२ में सरकार ने भारतीय चीनी उद्योग को संरक्षण दिया। इससे चीनी के कारखानों की संख्या बहुत बढ़ गई। इस समय देश के १४२ चीनी के कारखानों में डेढ़ लाख से ज्यादा व्यक्ति काम करते हैं। उत्तर प्रदेश में चीनी के सबसे ज्यादा कारखाने हैं। उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त बिहार, पंजाब, बम्बई, केरल और मैसूर में भी चीनी के कारखाने हैं। चीनी उद्योग अब हमारे देश का एक प्रमुख उद्योग है। हम प्रति वर्ष १०० करोड़ रुपये की चीनी तैयार करते हैं।

चाय उद्योग - भारत के चाय बगानों में १० लाख से अधिक लोग काम करते हैं। दुनिया के चाय पैदा करनेवाले देशों में भारत का पहला स्थान है। देश में जितनी चाय तैयार होती है उसका ८० प्रतिशत भाग बंगाल और असम से प्राप्त होता है, १८ प्रतिशत दक्षिण से और शेष २ प्रतिशत पंजाब और बिहार से। चाय के प्रायः प्रत्येक बाग से संलग्न एक कारखाना होता है जहां कुशल कारीगर चाय तैयार करते हैं।

इस्पात भारत का लोहा तथा इस्पात उद्योग देश का महत्वपूर्ण उद्योग है। इसमें ३५ हजार से अधिक लोग काम कर रहे हैं। भारत में आधुनिक ढंग का इस्पात का कारखाना सर्वप्रथम स्वर्गीय जमशेदजी नसरवान टाटा ने १९०७ में जमशेदपुर में कायम किया था। इस समय भारत में इसपात के मुख्य कारखाने ये हैं—टाटा आयरन एण्ड स्टील वर्क्स जमशेदपुर, बंगाल में हीरापुर,कुल्टी तथा बर्नपुर के इण्डियन आयरन एण्ड स्टील वर्क्स तथा मैसूर आयरन एण्ड स्टील वर्क्स, भद्रावती। भारत सरकार भी पश्चिमी जर्मनी, ब्रिटेन तथा रूस की सरकारों की सहायता से इस्पात के तीन बड़े-बड़े कारखाने स्थापित कर रही है।

कागज उद्योग भारत में मशीन से कागज बनाने का पहला कारखाना १८७० में कलकत्ते के पास शुरू हुआ था। इस समय देश में कागज की १८ मिलें हैं जो बंगाल, बम्बई, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा पंजाब, मैसूर, केरल और आन्ध्र में स्थित हैं। १९५५ में भारत में १,८५,००० टन कागज बना जो देश की जरूरतों के लिए काफी नहीं। इसलिए हमें बहुत सा कागज विदेशों से मंगवाना पड़ता है। आशा है कि १९६० तक कागज के लिए भारत आत्म निर्भर हो जाएगा।

इजीनियरिंग उद्योग : १९४७ से भारत में इजीनियरिंग उद्योगो का विकास हुआ है। कई चीजो में जो पहले भारत में न बनती थी, देश आत्मनिर्भर हो चुका है। सिलाई की मशीनें, बिजली के पंखे, डीजल इंजन, मोटर-गाडियां, साइकिल तथा साइकिलो के पुर्जों इत्यादि के उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है।

दियासलाई : भारत में इस समय दियासलाई के १०७ कारखाने है जिनमें १६,००० आदमी काम करते हैं। ये कारखाने ग्वालियर,हैदराबाद,कोटा (मध्य प्रदेश),शिमोगा,(मैसूर),मद्रास इत्यादि स्थानो में है।

सीमेंट देश के निर्माण में सीमेंट का बडा हाथ है क्योंकि बडी-बडी नदी घाटी योजनाओ के लिए सीमेंट अत्यावश्यक है। पिछले कुछ वर्षों में सीमेंट का उत्पादन बहुत बढ़ा है और अब देश सीमेंट के मामले में आत्मनिर्भर है। सीमेंट के कारखाने भारत के प्राय सभी राज्यो में हैं।

शीशा उद्योग शीशे के सामान के अधिकतर कारखाने उत्तर प्रदेश में है। फिरोजाबाद इस शिल्प का मुख्य केन्द्र है। यहा चूडिया बहुत बनती है। इस समय देश में शीशा तैयार करने के १०९ कारखाने हैं जिनमें २६,००० लोग काम करते है। शीशा उद्योग के अन्य केन्द्र बगाल, बम्बई, पजाब, बिहार, मध्य प्रदेश, दिल्ली और उडीसा में हैं।

चमड़ा उद्योग : भारत में पशु भारी सख्या में होते हैं। अत भारत में चमडे की कमी नही होती। देश के कारखानो में केवल ६० प्रतिशत कच्चे चमडे का उपयोग हो पाता है। शेष कच्चा चमडा विदेशों को भेजा जाता है जिससे प्रतिवर्ष भारत को लगभग २५ करोड रुपये की आय होती है। चमडे के कारखाने मुख्यत इन स्थानो पर है —कानपुर, मद्रास, कलकत्ता, देहली, आगरा, बम्बई और बगलौर।

उपरोक्त उद्योगो के अतिरिक्त देश में सिन्दरी (बिहार) में उर्वरक बनाने का एक बडा कारखाना स्थापित हुआ है। रेलवे इजन पश्चिमी बगाल में चितरंजन के स्थान पर बनते हैं। रेलवे के डिब्बे बनाने का कारखाना पैराम्बूर (मद्रास) में बना है। समुद्री जहाजो का एक कारखाना विशाखापट्टनम में हैं और हवाई जहाज बनाने का बगलौर में।

कुटीर उद्योग कारखाना उद्योगो के अतिरिक्त भारत में दो करोड लोग कुटीर उद्योगो में लगे हुए हैं। केवल कारखाना उद्योगो से हम देश की आर्थिक समस्याए हल नही कर सकते। गाव में रहनेवाले करोड़ो बेकार या अर्ध बेकार लोगो का जीवन स्तर कुटीर उद्योगो की उन्नति से ही ऊचा किया जा सकता है। इसलिए सरकार कुटीर उद्योगो को प्रोत्साहन दे रही है। इस समय हमारे मुख्य कुटीर उद्योग ये है। सूत कातना और बुनना, बरतन बनाना, रेशम तैयार करना और उनका कपडा बनाना, शहद की मक्खियो पालना, पशु तथा मुर्गी पालन इत्यादि।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत की अर्थ-व्यवस्था में उद्योग का क्या स्थान है?

(२) भारत के महत्वपूर्ण उद्योग कौन से हे? सूती वस्त्र उद्योग पर एक निबन्ध लिखो।

(३) पटसन उद्योग कहां पर केन्द्रित है और भारत को उससे क्या लाभ है?

(४) निम्न उद्योग भारत में कहां पर स्थित है और उनका क्या महत्व है?

(क) इसपात (ख) कागज (ग) चीनी (घ) रेशम (ङ) चाय बगान।

: ४१ :

हमारा व्यापार

वस्तुओं के क्रय-विक्रय को व्यापार कहते हैं। व्यापार दो प्रकार का होता है—देशी तथा विदेशी। देशी व्यापार देश की सीमा के अन्दर होता है। देश के अन्दर जो अनाज पैदा होता है या माल बनता है, उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना देशी व्यापार है। विदेशी माल जो देश की बन्दरगाहों में आता है, उसे देश के अन्दरूनी भागों में पहुंचाने के कार्य को भी देशी व्यापार कहा जाता है। देश में समुद्र के तटवर्ती स्थानों में जो आपसी व्यापार होता है, वह भी देशी अथवा भीतरी व्यापार का हिस्सा है। भारतीय बन्दरगाहों से जो माल समुद्र मार्ग से बाहर जाता है और उसके बदले में विदेशों से जो माल भारतीय बन्दरगाहों में आता है, उसे विदेशी व्यापार कहते हैं।

भीतरी व्यापार - भारत के विस्तृत क्षेत्रफल तथा विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक साधनों के दृष्टिगत भारत का भीतरी व्यापार का बाह्य व्यापार से कई गुना अधिक होना स्वाभाविक ही है। १९४० में भारत का आन्तरिक व्यापार ७,००० करोड रुपये था और बाह्य व्यापार ५०० करोड़ रुपये था।

भारत बहुत बड़ा देश है। इसमें इंगलैण्ड जैसे १९ देश आ जाते हैं। हम जो कुछ पैदा करते हैं, उनका बहुत-सा भाग देश में ही उपयुक्त होता है। विदेशों से हम कल-पुर्जे तथा थोड़ा-बहुत अन्य सामान मंगवाते हैं। बदले में विदेशों को कच्चा माल इत्यादि भेजा जाता है।

देश के भीतरी व्यापार में मुख्य स्थान खाद्य-पदार्थों का है विशेष रूप से गेहूं और चावल का। इसके अतिरिक्त तिलहन, चाय, चीनी और नमक का व्यापार होता है। गेहूं उत्तर प्रदेश और पंजाब से, चावल बंगाल से, चाय आसाम से और गर्म-मसाले दक्षिण से देश के कोने-कोने में रेलों तथा सड़कों द्वारा भेजे जाते हैं। खनिज पदार्थ बंगाल और बिहार से; कपड़ा बम्बई और मद्रास से; चीनी उत्तर प्रदेश और बिहार से, इस प्रकार अनेकों वस्तुओं का आदान-प्रदान होता रहता है।

अंग्रेजी राज में भारत में आन्तरिक व्यापार को बहुत महत्व नहीं दिया जाता था। सड़कों या रेलों का निर्माण सुरक्षा अथवा विदेशी व्यापार के दृष्टिकोण से किया जाता था। परन्तु अब कुछ समय से इस ओर ध्यान दिया जा रहा है। गांवों को सड़कों द्वारा कस्बों तथा शहरों से मिलाया जा रहा है। आन्तरिक व्यापार बढ़ाने के लिए नई रेलों का निर्माण किया गया है। देश में औद्योगिक उन्नति के परिणामस्वरूप भीतरी होने के व्यापार बढ़ा है।

तटीय व्यापार : भारत में तटीय व्यापार दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले में काफी कम है। इसके दो कारण हैं—एक तो हमारे देश में अधिक संख्या में अच्छी बन्दरगाहें नहीं हैं, दूसरे हमारा व्यापारिक बेड़ा बड़ा नहीं। बन्दरगाहों को सुधारने की ओर सरकार विशेष ध्यान दे रही है। कांडला, ओखा और मंगलोर को

तीन नये बन्दरगाह भी बनाये गये हैं। १९५४-५५ में भारत में कुल तटीय व्यापार ३३८ करोड रुपये के मूल्य का हुआ था।

विदेशी व्यापार : भारत अति प्राचीन काल से समुद्र मार्ग से विदेशो से व्यापार करता रहा है। ईसा से कई सौ साल पूर्व हमारा व्यापार मिस्र, रोम, चीन, अरब इत्यादि कई देशो के साथ होता था। आज भी भारत का बाह्य व्यापार काफी बड़ा है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हमारा महत्वपूर्ण स्थान है। बाह्य व्यापार की मात्रा को दृष्टिगत रखते हुए दुनिया में भारत का स्थान पाचवा है। केवल अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रास का बाह्य व्यापार हम से ज्यादा है। बाह्य व्यापार के आधिक्य के ये कारण है :—कई चीजो में भारत के साधन बडे विशाल हैं। उसकी भौगोलिक स्थिति बाह्य व्यापार के लिए अच्छी है। भारत दुनिया में सबसे ज्यादा पटसन, अभ्रक, मोनाजाइट इत्यादि पैदा करता है। वह कच्चा लोहा, मैंगनीज, तिलहन, चाय तथा सूती कपडा भारी मात्रा में निर्यात कर सकता है। इसके साथ भारत कई वस्तुए अपनी जरूरत से कम पैदा करता है जैसे मशीनरी, पेट्रोल, मोटरगाडिया, धातुए, लम्बे रेशे की कपास, अनाज इत्यादि। ये चीजें हमें विदेशो से मंगवानी पडती है।
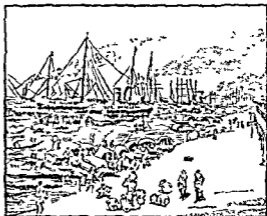
एक भारतीय बन्दरगाह का दृश्य

विदेशी व्यापार का मूल्य (Value of Foreign Trade)

कुछ समय से भारत के विदेशी व्यापार का मूल्य उत्तरोत्तर बढ रहा है। १९३८-३९ में हमारे देशी व्यापार का मूल्य ३२१ करोड रुपये था। १९५५-५६ में यह १२६० करोड रुपये था। विदेशी व्यापार का मूल्य निर्यात और आयात को जोड कर आका जाता है। मूल्य बढने का मुख्य कारण तो कीमतों का बढ़ जाना है परन्तु देश के आर्थिक विकास ने भी विदेशी व्यापार को बढाने में सहायता की है। पिछले कुछ वर्षों के आयात-निर्यात के आकडे नीचे दिए जाते है —

वर्ष	निर्यात (करोड रुपये में)	आयात	सतुलन
१९३८-३९	१६९	१५५	+१७
१९४८-४९	४२३ ३१	५४२ ९२	—११९ ६१
१९५४-५५	५७७ ७६	६१० ६०	—३२
१९५५-५६	६४२	७४८	—१०६

व्यापार का रूप (Composition of Trade)

हमारे विदेशी व्यापार के रूप में गत तीस वर्षों में भारी अन्तर हुआ है। पहले हम विदेशों को ज्यादा कच्चा माल तथा खाद्यान्न भेजा करते थे। बदले में तैयार माल हमारे देश में आता था। अब भारत तैयार माल का निर्यातक बन गया है। आयात व्यापार में मुख्य स्थान कच्चे माल, मशीनरी और खाद्य पदार्थों ने ले लिया है। १९३० में हमारे आयात-व्यापार में तैयार माल का अनुपात ७२.६ प्रतिशत था। १९५३ में यह घटकर ४३ प्रतिशत रह गया। निर्यात-व्यापार में कच्चे माल का प्रतिशत अनुपात गत २५ सालों में ५० प्रतिशत से घट कर २२ प्रतिशत रह गया है।

१९५५-५६ में निर्यात की मुख्य मदें ये थीं—पटसन, चाय, खालें, तिलहन तथा तेल, लाख इत्यादि। आयात की मुख्य मदें —मशीनरी, मोटरगाड़ियां, पेट्रोल, कागज, केमिकल, कपास, कच्चा पटसन, और अनाज थीं।

विदेशों के साथ होनेवाले व्यापार में अमेरिका तथा ब्रिटेन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। १९५५ में भारत के आयात व्यापार में ब्रिटेन का भाग २४.७ प्रतिशत और अमेरिका का भाग १३.७ प्रतिशत था। निर्यात व्यापार में २७.४ प्रतिशत निर्यात ब्रिटेन को तथा १८.८ प्रतिशत निर्यात अमेरिका को हुआ। सोवियट रूस, योगोस्लाविया, पोलैण्ड, हंगरी, रूमानिया आदि के साथ भी भारत का व्यापार बढ़ा। सरकार एशियाई अफ्रीकी देशों के साथ व्यापार को बढ़ाने की भी चेष्टा कर रही है। इंगलैण्ड और अमेरिका के बाद भारत का सबसे अधिक व्यापार पश्चिमी जर्मनी के साथ होता है। उसके बाद आस्ट्रेलिया और कनाडा का नम्बर है। पाकिस्तान के साथ हमारा विदेशी व्यापार बहुत बढ़ सकता है लेकिन अनेक राजनीतिक झगड़ों के कारण दोनों देशों के बीच बहुत कम व्यापार होता है—लगभग ३० करोड़ रुपये का। सुदूर पूर्व के देशों से भी हम काफी व्यापार करते हैं। इनमें मुख्य बर्मा, जापान और लंका हैं। १९५४ में बर्मा के साथ हमारा ६० करोड़ रुपये का व्यापार हुआ। जापान से हमारा व्यापार फिर बढ़ रहा है। १९५४ में दोनों देशों में ३२ करोड़ रुपये का व्यापार हुआ था।

अभ्यास के प्रश्न

(१) किसी देश की अर्थ-व्यवस्था में व्यापार का क्या स्थान है? व्यापार से भारत को क्या लाभ होता है?

(२) भारत का भीतरी व्यापार कितना बड़ा है? भीतरी व्यापार के विकास के उपाय बताओ।

(३) भारत के विदेशी व्यापार पर एक निबन्ध लिखो।

(४) भारत विदेशों को कौन-कौन-सी चीजें निर्यात करता है? आयात की मुख्य मदें क्या-क्या हैं?

(५) भारत के व्यापार सन्तुलन के बारे में आप क्या जानते हैं?

: ४२ :

परिवहन

अर्थशास्त्री किसी देश की उन्नति का अनुमान उसके यातायात या परिवहन के साधनो से लगाते हैं। यह है भी सच क्योकि दुनिया के देशो में देशीय या अन्तर्देशीय व्यापार तब से बढा है जब से परिवहन के क्षेत्र में नए-नए आविष्कार हुए हैं। इससे पूर्व व्यापार स्थानिक रूप से ही होता था। व्यापार तथा औद्योगीकरण के लिए यातायात के अच्छे साधन होना जरूरी है। भारत सरकार परिवहन के इस महत्व से भली-भाति परिचित है। इसलिए भारत की द्वितीय पंचवर्षीय योजना में यातायात के साधनो को उन्नत करने के लिए भारी धन-राशि की व्यवस्था की गई है। यह धनराशि इस प्रकार खर्च की जाएगी —

रेलवे	९०० करोड रुपये
सडकें	२६६ करोड रुपये
जहाजरानी, बन्दरगाहें तथा नदी मार्ग	१०० करोड रुपये
असैनिक उड्डयन	४३ करोड रुपये

भारत में यातायात को चार भागो में बाटा जा सकता है—(१) रेलवे, (२) सडकें, (३) जलमार्ग तथा (४) वायु मार्ग।

रेलवे

भारतीय रेलवे एशिया में सबसे बडी हैं। विशालता की दृष्टि से ससार में इनका चौथा स्थान है। सरकार द्वारा सचालित यह ससार का दूसरा बडा उद्योग है। इसमें १० लाख आदमी काम करते हैं। भारतीय रेलें देश में ८० प्रतिशत सामान ढोती है और ७० प्रतिशत मुसाफिरो को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती है। रेलो द्वारा प्रतिदिन ३६ लाख व्यक्ति लाए ले जाए जाते हैं और तीन लाख टन सामान ढोया जाता है। इनमें १ करोड टन कोयले की खपत होती है। भारत में पहली रेलवे लाइन का १८५३ में उद्घाटन हुआ था। वह बम्बई से थाना तक (२२ मील) चली थी। इस समय भारतीय रेलो की लम्बाई ३४,७३५ मील है।
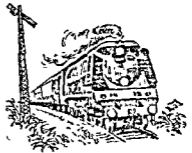
भारतीय रेल

भारत में तीन तरह की रेलवे लाइनें हैं। चौडी पटरी (Broad Gauge) ५-६ फीट चौडी, मीटर गेज लगभग ३·४ फीट और तग पटरी (Narrow Gauge) २·६ फीट चौडी। परन्तु ३४,७३५ मील लम्बी रेलवे लाइन हमारे देश की विशालता को देखते हुए पर्याप्त नही है। मुकाबिला कीजिए :—

देश	रेलों की कुल लम्बाई	१०० वर्गमील के पीछे लम्बाई
भारत	३४,७३५ मील	२.२
कैनाडा	४३,८५१ „	१.१०
अमेरिका	२,५०,००० „	८.४२
इंगलैण्ड	२०,६०१ „	२१८

भारतीय रेलों को आठ भागों में बांटा गया है :—

(१) उत्तरी रेलवे (Northern Railway)—६३४० मील लम्बी इस रेलवे का मुख्यालय दिल्ली में है। यह पंजाब, राजस्थान, दिल्ली और उत्तर प्रदेश में फैली हुई है।

(२) उत्तरी पूर्वी रेलवे (North-Eastern Railway)—इस रेलवे का मुख्यालय गोरखपुर में है। इसकी लम्बाई ४,८०५ मील है। यह उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग तथा बिहार, पश्चिमी बंगाल व आसाम के उत्तरी भागों में फैली हुई है।

(३) पूर्वी रेलवे (Eastern Railway)—पूर्वी रेलवे २,३२० मील लम्बी है। यह मुगलसराय से हुगली तक के गंगा के पूर्वी मैदान तथा पश्चिमी बंगाल में फैली हुई है। इस रेलवे का मुख्यालय कलकत्ता में है।

(४) दक्षिण पूर्वी रेलवे (South Eastern Railway)—इस रेलवे का मुख्यालय भी कलकत्ता में है और यह ३,४०० मील लम्बी है। यह दक्षिण-पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश के खनिज पदार्थों वाले इलाके में फैली हुई है।

(५) पश्चिमी रेलवे (Western Railway)—इसका मुख्यालय बम्बई में है और लम्बाई ५,६२० मील है। यह बम्बई, राजस्थान, और मध्य प्रदेश में फैली हुई है।

(६) मध्य रेलवे (Central Railway)—इस रेलवे की लम्बाई ५,६३३ मील है। इसका मुख्यालय भी बम्बई में है। यह मध्य प्रदेश तथा आन्ध्र व मद्रास के कुछ भागों में फैली हुई है।

(७) दक्षिणी रेलवे (Southern Railway)—इसका मुख्यालय मद्रास में है। यह ६०६२ मील लम्बी है। यह मद्रास, मसूर, केरल, बम्बई और आन्ध्र में फैली हुई है। यह रेलवे मद्रास, कोचीन, एलिप्पी, क्विलोन और कालीकोट आदि बन्दरगाहों को आपस में मिलाती है।

(८) उत्तर-पूर्वी सीमान्त रेलवे (North East Frontier Railway)—हाल ही में उत्तर-पूर्वी रेलवे के दो भाग करके यह आठवां रेलवे क्षेत्र बनाया गया है। इसका मुख्यालय पाण्डु में है।

भारतीय रेलों के बारे में १९५५-५६ के कुछ महत्वपूर्ण आंकड़े नीचे दिए जाते हैं :

कुल लम्बाई	३४,७३५ मील
ब्राड गेज	१६,१४२ „
मीटर गेज	१५,३०५ „
नैरो गेज	३,२८८ „

रेलवे में लगी हुई कुल पूंजी	९७५ करोड रुपये।
सकल आय	३१८ करोड रुपये।
चालू व्यय	२६० करोड रुपये।
शुद्ध आय	५८ करोड रुपये।
साल भर में रेलो द्वारा की गई यात्रा	२,०९४ लाख मील
साल भर में जितने मुसाफिरो ने यात्रा की	१३० करोड

रेलो का विस्तार

भारत सरकार रेलो की उन्नति पर विशेष ध्यान दे रही है। पहली पचवर्षीय योजना(१९५१–१९५६)में रेलो के विस्तार पर ४२४ करोड रुपये खर्च किये गए। दूसरी योजना (१९५६–१९६१) में १, १२५ करोड रुपये खर्च करने का कार्यक्रम है।

सड़कें

मनुष्य के शरीर में नाडिया जो काम करती हैं, देश के शरीर में वही काम सडकें और रेलें करती हैं। इससे शरीर में गति रहती है। भारतवर्ष जैसे विशाल देश के लिए सडको का महत्व अत्यधिक है। यह गावो को नगरो से मिलाती है जिससे वहा की उपज नगरो में पहुचती है। सडक परिवहन रेलो से अधिक सुविधाजनक है क्योकि आप कही भी सामान उतार या चढा सकते है। सडकें सभ्यता तथा शिक्षा के प्रसार में सहायक होती है। सडकें रेलो की सहायक है क्योकि सडको द्वारा गावों से माल रेलवे स्टेशनो तक पहुचता है जहा से वह आगे भेजा जाता है।

नवीनतम आकडो के अनुसार भारत में इस समय सडको की लम्बाई ३,१६,६६८ मील है। इनमें लगभग सवा लाख मील लम्बी सडकें पक्की हैं, शेष कच्ची। परन्तु यह लम्बाई हमारे देश के लिए काफी नही है।

यह अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत में एक लाख लोगो के पीछे केवल तीन मील सडकें हैं जबकि अमेरिका में इतने ही लोगो के लिए २,५०० मील लम्बी सडकें हैं, फ्रांस में ९३४ और इगलैण्ड में ४०० मील।

पिछले वर्षो में भारत सरकार ने सडको के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया है। प्रथम पचवर्षीय योजना में सडको के विकास पर १०० करोड रुपये खर्च किये गये थे। इस योजना काल में २४,००० मील लम्बी नई पक्की सडकें बनाई गई और ४४,००० मील कच्ची सडकें बनी। दूसरी पचवर्षीय योजना में सड़को के विकास पर २६५ करोड़ रुपये खर्च करने की व्यवस्था है।

भारत में चार प्रकार की सड़कें हैं। (१) राष्ट्रीय राजपथ (National Highways)। ये देश की मुख्य सड़कें हैं। इन सड़कों के निर्माण तथा मरम्मत का दायित्व भारत सरकार पर है।

(२) प्रान्तीय राजपथ (Provincial Highways)। ये सड़कें राज्यों में आन्तरिक व्यापार तथा यातायात के साधन हैं।

(३) तथा (४) जिला और गाव की सड़कें। ये सड़कें जिला के अन्दरूनी भागों को प्रान्तीय राजपथों तथा रेलवे स्टेशनों से मिलाती हैं।

भारत की मुख्य सड़कें ये हैं। शेष सड़कें कहीं न कहीं इनसे आ मिलती हैं।

(१) कलकत्ता से दिल्ली
(२) कलकत्ता से मद्रास
(३) मद्रास से बम्बई
(४) बम्बई से दिल्ली

बहुत से राज्यों में सरकारें मोटर यातायात का धीरे-धीरे राष्ट्रीयकरण कर रही हैं जैसे बम्बई, पंजाब इत्यादि।

जलमार्ग

जलमार्ग यातायात का प्राचीन तथा सबसे सस्ता साधन हैं। यह दो प्रकार के होते हैं। समुद्री जलमार्ग तथा नदियों और नहरों के जलमार्ग।

भारत का तट बड़ा लम्बा है—३,५०० मील से भी अधिक। इसके बन्दरगाहों में संसार के कोने-कोने से व्यापारिक जहाज आते हैं। भारत से जहाज मुख्य रूप से निम्नलिखित ६ समुद्र-पार मार्गों पर चलते हैं। (१) भारत-ब्रिटेन-योरोप (२) भारत-मलय, (३) भारत-पूर्वी अफ्रीका (४) भारत फारस की खाड़ी (५) भारत-आस्ट्रेलिया।

स्वतन्त्रता से पूर्व देश का सारा विदेशी और अधिकतर तटीय व्यापार विदेशी कम्पनियों के हाथ में था। परन्तु सरकार के प्रोत्साहन से धीरे-धीरे सारा तटीय व्यापार भारत की जहाजी कम्पनियों के हाथ में आ गया है। विदेशी व्यापार में भी भारतीय कम्पनिया अब हिस्सा बटाने लगी हैं। यह हिस्सा इस समय केवल ५ प्रतिशत है परन्तु अनुमान है कि १९६१ तक यह १५ प्रतिशत हो जाएगा।
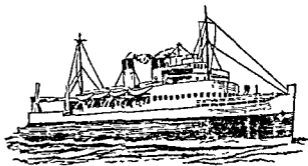
हमारे देश के आभ्यान्तरिक अथवा भीतरी जलमार्ग बड़ी अविकसित अवस्था में हैं। आभ्यान्तरिक

जलमार्गों द्वारा बहुत कम व्यापार होता है। भारतीय रेलें जितना माल ढोती हैं, आभ्यान्तरिक जलमार्ग उनका केवल एक प्रतिशत भाग ढोते है। देश में यातायात की कठिनाइयों के दृष्टिगत भीतरी जलमार्गों का विकास बहुत जरूरी है। यातायात का यह साधन बहुत सस्ता तथा सुगम है। रेलें एक टन माल ढोने का किराया प्रति मील दो आने लेती हैं जबकि जलमार्ग द्वारा इसका भाडा दो पैसे मील से ज्यादा नही बैठता। भारत में अधिकतर गगा और ब्रह्मपुत्र नदियो को ही जलमार्ग के रूप में प्रयोग किया जाता है। मद्रास, उड़ीसा इत्यादि कुछ राज्यों में नहरों द्वारा भी माल ढोया जाता है।

अनुमान है कि भारत में कोई ५,००० मील नदी मार्गों में यन्त्रचालित नौकाए चल सकती है। इस समय केवल १,५५७ मील नदी-मार्गों पर ऐसी नौकाए चलती हैं और ३,५८७ मील नदी मार्गोंपर साधारण नौकाओ द्वारा व्यापार होता है।

भारत सरकार जल-यातायात के विकास में बडी रुचि ले रही है। प्रथम पचवर्षीय योजना में जल-मार्गों की उन्नति के लिए ५८ करोड रुपये खर्च किए गए थे। द्वितीय पचवर्षीय योजना में इस काम के लिए १०० करोड रुपये रखे गए हैं।

वायुमार्ग

आज के वैज्ञानिक युग में जब समय का बडा मूल्य है, हवाई यातायात का महत्व किसी से छिपा नही है। प्रत्येक देश सैनिक तथा असैनिक उड्डयन को प्रोत्साहन दे रहा है क्योंकि देश की सुरक्षा के लिए हवाई यातायात की उन्नति जरूरी है।

भारत में उड्डयन का इतिहास बहुत पुराना नही। असैनिक उड्डयन देश में १९२४ में शुरू हुआ था। परन्तु इस क्षेत्र में अधिक उन्नति १९४६ के बाद ही हुई है। इसका अनुमान निम्न आकडों से लगाया जा सकता है।

	१९४६	१९५६
उडान (मीलो में)	४५ लाख	२ करोड ६६ लाख
मुसाफिर	१०५,२००	४,५८,०००
डाक ले जाई गई	१० लाख पौंड	१ करोड २० लाख पौण्ड
सामान ढोया गया	१३ लाख पौण्ड	१ करोड ८६ लाख पौंड

युद्ध काल में हवाई कम्पनियो ने भारी नफा कमाया। परन्तु देखादेखी बहुत-सी कम्पनिया मैदान में आ गई। आपसी मुकाबिले के कारण सबकी आर्थिक हालत खराब हो गई। इसलिए १९५३ में भारत सरकार ने हवाई कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण कर दिया था। इण्डियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन तथा एयर इण्डिया इण्टरनेशनल नामक दो निगम स्थापित किए गए। इण्डियन एयर लाइन्स देश के मुख्य मुख्य नगरो के बीच उडानो का सचालन करती है। एयर इण्डिया इण्टरनेशनल ससार के १५ देशो के साथ वायु-परिवहन सेवाओ

की व्यवस्था करती है। इन दोनो निगमों के लिए द्वितीय पचवर्षीय योजना में ३० करोड रुपये की व्यवस्था की गई है।

भारत में कुल ८२ हवाई अड्डे हैं। इनमें तीन बम्बई, (सान्ताक्रूज), कलकत्ता (डमडम) और दिल्ली (पालम) अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे हैं। भारत सरकार का असैनिक उड्डयन विभाग इन हवाई-अड्डों का सचालन करता है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में परिवहन के कौन-कौन मुख्य साधन है ?
(२) किसी देश की अर्थ-व्यवस्था में रेलों का क्या स्थान होता है ?
(३) भारतीय रेलों को कितने विभागों में बाँटा गया है ? प्रत्येक विभाग के बारे में सक्षिप्त नोट लिखो।
(४) सडकों से क्या लाभ होता है ? क्या भारत की सडकें उसकी आवश्यक्ता के लिए काफी हैं ? यदि नहीं, तो क्यों ?
(५) जल-मार्गों का लाभ क्या होता है ? भारत में जल मार्गों के विकास के लिए क्या किया जा रहा है ?
(६) भारत में हवाई यातायात ने क्या उन्नति की है ? आज के युग में हवाई यातायात का क्या महत्व है ?

: ४३ :

भारत की जनसंख्या तथा लोगों के व्यवसाय

१९५१ में जो जनगणना हुई थी, उसके अनुसार भारत में ३६ करोड से कुछ अधिक लोग रहते थे। इस जनगणना के मुख्य आंकडे इस प्रकार हैं .

कुल जनसख्या (जम्मू काश्मीर सहित)	३६,११,४१,६६९
साक्षर लोग	१६ ६ प्रतिशत
प्रत्येक हजार पुरुषो के पीछे स्त्रियो की सख्या	९४७
नगरों में रहनेवाली आबादी	६ २ करोड अथवा १७ ३ प्रतिशत
देहात में रहनेवाली आबादी	२९.५ करोड अथवा ८२ ७ प्रतिशत
कस्बो की कुल सख्या	३,०१८
गाँवो की कुल सख्या	५,५८,०८९
कृषि पर निर्भर आबादी	७० प्रतिशत
आबादी का घनत्व	३१२ प्रति वर्गमील
१९४१-५१ तक के दस वर्षों में जितनी आबादी बढी	१२ ५ प्रतिशत

विश्व में भारत

आपने हमारी नवीनतम जनगणना के कुछ मुख्य आंकडे पढलिए। अब हम आपको विश्व की जनसख्या में भारत के स्थान के बारे में कुछ दिलचस्प बातें बताएँगे। भारत की जनसख्या विश्व में चीन को छोडकर सब देशो से अधिक हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से हमारा देश सातवें नम्बर पर हैं। भारत के पास विश्व के भूतल का २ २ प्रतिशत भाग है। परन्तु उसे विश्व की १५ प्रतिशत आबादी का भरण-पोषण करना पडता है। एशिया में जापान, लेबनान और कोरिया को छोडकर भारत में आबादी सबसे ज्यादा घनी है। आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि भारत की जनसख्या उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका की जनसख्या को मिलाकर भी उससे ज्यादा है। अफ्रीका की आबादी से हमारे देश की आबादी दुगुनी है और आस्ट्रेलिया की आबादी से ४४ गुना ज्यादा। रूस से हमारी जनसख्या १ ८ गुनी अधिक है और अमेरिका से २ ४ गुनी। इग्लैण्ड की आबादी से भारत की आबादी ७ गुनी ज्यादा है। विश्व का हर सातवाँ आदमी हिन्दुस्तानी है।

अपने देश की विशालता के बारे में यह बातें सुनकर आपको गर्व होना उचित ही है। लेकिन हमारी जनसख्या ठीक तरीके से बँटी हुई नही है। इसलिए देश की आर्थिक अवस्था सतोषजनक नही हैं। भारतीय जाति का एक बहुत बडा भाग खेती में जुटा हुआ है। खेती में इतने लोगों की आवश्यकता नहीं। अत लोगो का जीवनस्तर ऊँचा करने में बडी कठिनाई होती है। इस बात को स्पष्ट करने के लिये सबसे पहले हम आपको बताएँगे कि यह विशाल भारतीय जन-समुदाय क्या काम-धन्धे करता है।

लोगों के व्यवसाय

१९५१ की जनगणना ने भारतीय लोगों को मोटे रूप से दो व्यवसायों में बाँटा है : खेती-बाड़ी करने वाले लोग और खेती-बाड़ी न करनेवाले लोग। इस जनगणना से पता चलता है कि हमारे देश में २४.९ करोड़ लोग खेती-बाड़ी का काम करते हैं। दूसरे शब्दों में हमारी ७० प्रतिशत जनसंख्या खेती में लगी हुई है। जो लोग खेती-बाड़ी नहीं करते, उनकी संख्या १०.८ करोड़ या कुल जनसंख्या का ३० प्रतिशत भाग था। जहाँ खेती-बाड़ी में ७० प्रतिशत लोग लगे हुए थे, वहाँ उद्योग-धंधों पर १०.५५ प्रतिशत लोग ही निर्वाह करते थे। व्यापार में देश की कुल जनसंख्या का ६ प्रतिशत भाग लगा हुआ था, यातायात में १.५ प्रतिशत तथा अन्य विविध कामों जैसे सरकार तथा फौज की नौकरी, घरेलू नौकरी इत्यादि में १२ प्रतिशत।

उपरोक्त आँकड़ों से आपने देख लिया कि भारतीयों की बहुत अधिक संख्या खेती-बाड़ी पर निर्भर है। खेती-बाड़ी वर्षा का जुआ है। यदि वर्षा हो गई, तो हरी-भरी खेती हो जायगी अन्यथा किसान मुह देखता रह जाता है। और यदि बाढ़ आ जाए, तो फिर किसान के लिए एक तरह से प्रलय ही आ जाती है। प्रगट है कि हमारे यहाँ आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ आधार पर स्थापित नहीं है। लोगों की आर्थिक अवस्था को सुधारने के लिए यह जरूरी है कि व्यवसायों को ठीक ढंग से संगठित किया जाए। नए-नए उद्योग-धंधे शुरू किए जाएँ।

यद्यपि भारत सदा से ही एक कृषिप्रधान देश रहा है, परन्तु यहाँ के कारीगर कपड़ा तथा रेशम बनाने में, सोना-चाँदी तथा अन्य धातुओं के काम में, हाथी दाँत और लकड़ी के ऊपर काम करने में अपनी निपुणता के लिए विश्व में प्रसिद्ध रहे हैं। आज भी देश में कृषि के साथ-साथ उद्योगों की उन्नति हो रही है। परन्तु हाथ से बनी हुई चीजों का युग बीतता जा रहा है। देश में अब बड़े-बड़े उद्योग-धंधे शुरू हो रहे हैं, जहाँ मशीनों से काम होता है। लेकिन फिर भी सरकार घर में बैठकर काम करनेवाले कारीगरों को प्रोत्साहन देती है जिससे हमारे देश में छोटे-मोटे उद्योग भी सफलता से चल रहे हैं। इस समय भारत के उद्योगों को दो भागों में बाँटा जा सकता है

(क) पुरानी दस्तकारी जिसमें चीजें हाथ से बनती हैं।

(ख) *मिलें और कारखानें जहाँ चीजें मशीन से तैयार होती हैं।*

बड़े-बड़े कारखाने बम्बई, कलकत्ता, कानपुर, जमशेदपुर, अहमदाबाद, बंगलोर, इत्यादि नगरों में स्थापित हैं।

देश का तीसरा प्रमुख व्यवसाय व्यापार है जिसमें कुल आबादी का ६ प्रतिशत भाग लगा हुआ है। इन तीन मुख्य व्यवसायों के अतिरिक्त कुछ छोटे-छोटे व्यवसाय और भी हैं जैसे बिहार, बंगाल और छोटा नागपुर में खानें खोदना, घास के मैदानों में पशुपालन, दक्षिण के खुश्क भागों में भेड़ें पालना, हिमालय पर्वत के जंगली प्रदेशों में लकड़ी काटना, समुद्र तट के समीप मछली पकड़ना इत्यादि। कुछ लोग सरकारी नौकरी भी करते हैं। उनकी संख्या कुल आबादी के एक प्रतिशत से कुछ ही अधिक है।

जनसंख्या में वृद्धि

भारत में जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है। एक भारतीय स्त्री पश्चिमी देशों की अपनी बहनों के मुकाबले में बहुत ही अधिक बच्चे पैदा करती है। एक भारतीय स्त्री अपने जीवन-काल में ६ से ७ बच्चों को

जन्म देती है। उसके मुकाबले में एक जापानी स्त्री ५ ३, अमेरिकन स्त्री ३ ३ और अंग्रेज स्त्री २ ६ बच्चे पैदा करती है। इसलिए हम देखते हैं कि पिछले चन्द वर्षों में भारतवर्ष की आबादी काफी बढी है। निम्नलिखित आँकड़ो से आप अनुमान लगा सकते हैं कि हम किस रफ्तार से बढ रहे हैं।

सन्	आबादी	प्रतिशत वृद्धि
१९०१	२३ ५ करोड़	——
१९११	२४ ९ करोड	+५ ८
१९२१	२४ ८ करोड	–० ३
१९३१	२७ ५ करोड	+११
१९४१	३१ ४ करोड	+१४ ३
१९५१	३५ ६ करोड	+१३ ४

आबादी का घनत्व

प्रारम्भ में हमने जो आँकडे दिए थे, उनमें आपने देखा होगा कि भारत में आबादी का घनत्व ३१२ प्रति वर्गमील है। जब हम जनसख्या के घनत्व की चर्चा करते है, तो हमारा अभिप्राय किसी प्रान्त या देश के प्रति वर्गमील में रहनेवाली औसत जनसख्या से होता है। यदि किसी प्रान्त का क्षेत्रफल १,००० वर्गमील है और जनसख्या ५,००,००० है तो वहाँ प्रति वर्गमील ५०० आदमी रहते है। इसी तरह यदि किसी ३५० वर्गमील के जिले में ४,५०० आदमी रहते है, तो ४,५०० को ३५० से भाग देने से आबादी का घनत्व निकल आएगा। यहाँ यह १३ है। भारत विश्व में सबसे घना देश तो नही। इसके मुकाबले में कुछ अन्य देशो में आबादी का घनत्व ज्यादा है। उदाहरण के लिए इंग्लैण्ड में आबादी का घनत्व ७५० प्रति वर्गमील है और जापान में ४८२। परतु इंग्लैण्ड और जापान औद्योगिक देश हैं। वहाँ की आबादी अधिकतर खेती-बाडी पर ही निर्भर नही। उनके लिए काम-धधे के क्षेत्र विस्तृत है। भारत के लिये आबादी का इतना ही घनत्व एक तरह से भार बन गया है क्योंकि देश में कृषि का उत्पादन कम है और अन्य काम-धधो के अवसर सीमित हैं।

भारत एक कृषिप्रधान देश है जहाँ ४ में से ३ व्यक्ति खेती पर निर्भर है। इसलिये जहाँ खेती-बाडी की अधिक सुविधाएँ प्राप्त है, उन प्रदेशो में आबादी का अधिक होना स्वाभाविक ही है। देश में अधिकतर आबादी वही सटी हुई है, जहाँ भूमि उपजाऊ है। वर्षा काफी हो जाती है और खेती-बाडी से मनुष्य का निर्वाह आसानी से हो सकता है। देश के विभिन्न राज्यो में आबादी के घनत्व में अन्तर है। पश्चिम बंगाल उपजाऊ प्रदेश है। इसलिए वहाँ आबादी का घनत्व बहुत अधिक अर्थात् एक वर्गमील के पीछे ७९९ है। इसके प्रतिकूल आसाम में आबादी का घनत्व १६८ प्रति वर्गमील है और राजस्थान में ११०।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत के लोगों के मुख्य व्यवसाय कौन-कौन से है?

(२) भारत को कृषि-प्रधान देश क्यों कहा जाता है? देश की आर्थिक उन्नति में क्या बाधाएँ उपस्थित हैं?

(३) भारत की जनसख्या के बारे में एक सारगर्भित निबन्ध लिखो।

(४) आबादी का घनत्व क्या होता है? क्या भारत में आबादी बहुत ज्यादा है?

भारत का सांस्कृतिक गौरव

किसी देश की संस्कृति जिन रूपों में अपने आपको व्यक्त करती है, कला उनमें मुख्य है। कला के रूप में वे भावनाएँ मूर्त रूप धारण करती हैं जो उस देश या जाति की प्रेरक होती हैं। जिस प्रकार एक व्यक्ति की कला उसके व्यक्तिगत चरित्र को प्रगट करती है, उस तरह जातीय कला जातीय चरित्र को प्रगट करती है। कला का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। यह वास्तुकला, भवन निर्माण कला, मूर्ति कला, चित्रकला, संगीत, साहित्य इत्यादि विभिन्न रूपों में प्रगट होती है। इस अध्याय में हम भारत की वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला और संगीत के बारे में विचार करेंगे।

भारतीय कला की विशेषता

संसार की महान् जातियों में से अधिकतर ने कलात्मक कृतियों के रूप में अपने गौरव के यथार्थवादी स्मृति चिन्ह छोड़े हैं। भारतीय संस्कृति की तो कला के रूप में मानवता को अमर देन है। भारतीय कला देश की प्रतिभा के सृजनात्मक गुणों, मानवता और सूक्ष्मता की प्रतीक है। यही नहीं, उसमें शिल्पकला का उच्चतम प्रदर्शन तथा परिश्रम शामिल है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' के अठारहवें अध्याय में भारतीय कला के बारे में कहा है —"भारतीय कला में सदा से एक धार्मिक प्रेरणा, अतीन्द्रिय सत्ता की ओर देखने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है, जिसने बौद्धों और योरोप के विशाल गिरजाघरों को प्रभावित किया। इसके अनुसार सौन्दर्य की धारणा यह है कि इसका सम्बन्ध द्रष्टा से है न कि दृश्य से। यह एक आध्यात्मिक तत्व है यद्यपि इसे भौतिक तत्वों में सुचारु रूप से मूर्त किया जा सकता है। यूनानी सौन्दर्य ने सौन्दर्य के लिए प्रेम करते थे और इसमें उन्हें न केवल आनन्द प्रत्युत सत्य की भी उपलब्धि होती थी। प्राचीन काल में भारतवासी भी सौन्दर्य से प्रेम करते थे। परन्तु वे अपनी कला में किसी गम्भीर तत्व या आध्यात्मिक तत्व की स्वानुभूति अथवा साक्षात्कार या सन्निवेश करने का प्रयत्न करते थे।"

सीधे-सादे शब्दों में हम कहेंगे कि भारतीय कला की मूलभूत भावना उस परम सत्य की खोज है जो सर्वत्र विद्यमान है। परम सत्य की खोज की यह भावना भारतीय कला की विशेषता है। इसलिए यह बहुधा मंदिरों तथा देवताओं की मूर्तियों के निर्माण में विशेष रूप से दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय कला की प्राचीनता

भारत में कला का इतिहास कम से कम ५,००० वर्ष पुराना है। इसका श्रीगणेश सिन्धु-सभ्यता से समझना चाहिए। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में जो कुछ प्राप्त हुआ है, वह हमारी कला का प्राचीनतम रूप है।

उस युग के कलाकार रूप और परिष्करण के तत्वों को अच्छी तरह समझते थे। उस समय धातु ढालने और पत्थर में खुदाई की कलाएँ उच्च विकास को प्राप्त कर चुकी थीं। सिन्धु नदी की सभ्यता और मौर्य काल के बीच के समय के भारत का सांस्कृतिक इतिहास अज्ञात है। इसलिये यह कहना उचित होगा कि ऐतिहासिक भारत में कला का आरम्भ मौर्य वंश के साथ शुरू होता है, क्योंकि इसके साथ ही वह अन्धकार जो कि मौर्यों से पहले के इतिहास को ढके हुए था, दूर हो जाता है और हम अपेक्षाकृत यथार्थता के साथ भवन-निर्माण कला और रूपात्मक कलाओं का मूल्यांकन कर सकते हैं। मौर्य शासक महान निर्माता थे। कहा जाता है कि चन्द्रगुप्त का राज्यभवन सौन्दर्य और मनोहारिता में फारस के बादशाह दारा के प्रासाद से बढ़ा हुआ था। परन्तु अशोक के राज्यारोहण से पहले अधिकांश भवन लकड़ी के बनते थे, इसलिए वे नष्ट हो गए। अशोक के राज्य काल में भवन निर्माण के लिए पत्थरों का सार्वजनिक प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। उस जमाने की इमारतों ने काल की विध्वंसकारिता का प्रतिरोध किया है। मौर्य-स्थापत्य कला का भारतीय शिल्प में विशेष स्थान है। सारनाथ की सिंह प्रतिमा को किसी मनस्वी द्वारा कृत 'पाषाण कविता' कहा जाता है। प्रतीक अत्यधिक स्पष्ट है। इसमें चार सिंह हैं जो शक्ति के प्रतीक हैं और जिनके बीच में ऐक्यतन्तु के परिचायक चार चक्र हैं। ये खिली हुई पखड़ियों वाले कमल पर जो जीवन के आदिस्रोत और सृजना-प्रतिभा का प्रतीक है, स्थित है। कमल विश्वव्यापिनी व्यवस्था के प्रतीक एक मूर्धन्य धर्म चक्र का स्थिर आसन है।

सारनाथ की सिंह प्रतिमा जो अब भारत का राज्य चिह्न है

अशोक ने बड़ी संख्या में प्रतिमाएँ, स्तूप, मठ और स्तम्भ बनवाए। उसने उपगुप्त के समक्ष उन सब स्थानों पर स्मारक निर्माण की इच्छा प्रगट की, जहाँ पर भगवान् बुद्ध रहे थे। अशोक की कला की मुख्य विशेषता यह थी कि उसने भवन-निर्माण में पत्थर का प्रयोग किया। अशोक के काल की कला के मुख्य अंग ये हैं — शिल्प पाटव, पाषाण-परिष्कार तथा पाशविक प्रतीकों का प्रयोग।

इस अति सुन्दर प्रासाद-कला के अतिरिक्त यक्ष और यक्षिणियों जैसे इष्ट देवताओं पर आश्रित एक सजीव धार्मिक कला का भी अस्तित्व था। बौद्ध-धर्म के प्रभाव के कारण भारतीय कला ने एक अत्यधिक सक्रिय युग में प्रवेश किया जिसके मुख्य उदाहरण हमें सांची और बेहुत्त के स्मारक स्तूपों में मिलते हैं।

मथुरा कला

ईसा की पहली शताब्दी में मथुरा में स्थापत्य कला की एक विशेष परिपाटी विकसित हो रही थी जिसने बहुत सुन्दर आकृतियों को जन्म दिया। कुछ प्रतिमाएँ ऐसे दृश्यों का प्रदर्शन करती थीं जिनमें पुष्पों, वृक्षों

और बहती हुई नदियां का प्रमुदित नारी जीवन में सहयोग था। परन्तु मथुरा के इस कला सम्प्रदाय की प्रधान देन बुद्ध की वे प्रतिमाएँ थीं जिन्होंने एशिया की कला को अत्यधिक प्रभावित किया।

बुद्ध की एक प्रतिमा—गान्धार शैली

गान्धार कला

कला क्षेत्र में भारत के पश्चिमोत्तर में एक विशेष शैली जो गान्धार शैली के नाम से प्रचलित है, विकसित हो रही थी। गान्धार स्थापत्य-कला के नमूने तक्षशिला तथा अफ़ग़ानिस्तान और पश्चिमोत्तरी सीमाप्रान्त में कई स्थानों पर मिलते हैं। वे या तो बुद्ध की प्रतिमाएँ हैं अथवा बौद्ध-धर्म ग्रंथों में उल्लिखित विशेष घटनाओं को मूर्त करते हैं।

गान्धार शैली मुख्यतः यूनानी कला से प्रभावित हुई थी। बैक्ट्रिया और पश्चिमोत्तरीय भारत के यूनानी शासकों से उसे प्रोत्साहन मिला। यद्यपि पद्धति यूनानी थी, कला तत्वतः भारतीय ही थी। मथुरा और गान्धार में बुद्ध की प्रतिमा का विकास स्वतन्त्र रूप से हुआ। दोनों में प्रभावोत्पादक अंतर है। जहाँ गान्धार प्रतिमा यथार्थोन्मुख है, वहाँ मथुरा की आदर्शवादिता की ओर झुकी हुई है। पश्चिमी और भारतीय कला में यही महत्वपूर्ण अंतर है।

गुप्तकालीन कला

गुप्त सम्राटों के काल में जो भारतीय कला का स्वर्ण युग था, मथुरा की शैली अपने परम विकास को पहुँची। नवीन प्रतिमाओं में हमें रूप, रूपोत्कर्ष, संयम और आध्यात्मिक अनुभूति के दर्शन होते है। कला के क्षेत्र में गुप्तकाल की दुनियाँ अनुपम है। यह भारतीय स्थापत्य-कला का पावनतम युग है। गुप्त स्थापत्यकला के नमूने न केवल भारतीय कला के लिए प्रत्युत सुदूर-पूर्व में स्थित भारतीय उपनिवेशों के लिए भी आदर्श बन गए। गुप्त कला के मुख्य नमूने मथुरा, सारनाथ और अजन्ता की बुद्ध प्रतिमाएँ हैं जो गुप्त युग के आध्यात्मिक आदर्शों का प्रदर्शन करती है।

देवत्व का सर्वांगीण कलात्मक विकास केवल बौद्धों ने ही नहीं किया। ब्राह्मण भी इसमें पीछे नहीं रहे। शिव और विष्णु तथा देवगढ़ (जिला झाँसी) के मन्दिर में स्थापित अन्य देवताओं की मूर्तियाँ भारतीय कला का सर्वोत्तम निदर्शन हैं। एक भाव, आध्यात्मिक अभिव्यक्ति, मुस्काता हुआ मुख, और चारु रूप इन मूर्तियों की मुख्य विशेषताएँ हैं।

मध्यकालीन युग

आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक की स्थापत्य-कला पुरातन हिन्दू-संस्कृति की ओर प्रत्यावर्त्तन दिखाती है। एलोरा और ऐलीफेन्टा की स्तुत्य स्थापत्य कला और महाबलीपुरम् में एक ही चट्टान से काटा हुआ मन्दिर न केवल एक धार्मिक प्रयोजन को बतलाते हैं परन्तु स्थापत्य-कला का एक उज्ज्वल तथा अद्वितीय उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं। भारतवर्ष की कुछ सुन्दरतम नारी मूर्तियों का सृजन इस युग में हुआ था।
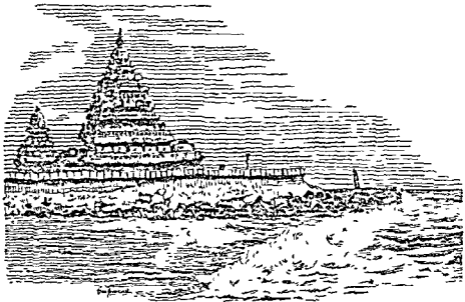
महाबलीपुरम में एक ही चट्टान से काटा हुआ एक हजार वर्ष पुराना मंदिर

धातुओं से मूर्तियाँ बनाने की कला भारत में चिरकाल से प्रचलित है। इसके कुछ नमूने हमें सिन्धु-सभ्यता और तक्षशिला से उपलब्ध हुए हैं। परन्तु इस कला का चरम विकास गुप्त युग में हुआ। भागलपुर से प्राप्त बुद्ध की नराकार मूर्ति की तुलना उस युग की किसी भी पाषाणमूर्ति से की जा सकती है। दक्षिण में यह कला चोलयुग में अपने पूर्ण विकास को पहुँची और जगत के जन्म और संहार को नृत्य में प्रदर्शित करती हुई शिव नटराज की मूर्ति इसका उल्लेखनीय उदाहरण है।

चित्रकला

अन्य मध्यकालीन कलाओं के सदृश भारतीय चित्रकला भी जाति की धार्मिक एवं सामाजिक भावनाओं का सम्मिलित विवरण उपस्थित करती हैं। अजन्ता की गुफाओं में दीवारों पर चित्रित रंग-बिरंगे चित्र, राज-महलों और जन-गृहों में अभिनीत प्राचीन भारतीय संस्कृति का एक नाटक प्रदर्शित करते हैं। इन चित्रों

को न केवल भारत में ही राष्ट्रीय कला का स्तर प्राप्त है प्रत्युत इन्होंने मध्य एशिया, बर्मा, लंका, चीन और जापान इत्यादि पड़ोसी देशों की कलाओं को भी प्रभावित किया है। अजन्ता के चित्रों में से अवलोकितेश्वर पद्मपाणि का चित्र सम्भवतः सर्वोत्तम है। यहाँ नील कमल पर महृदय बुद्ध मानवता की मुक्ति के लिए समाधि लगाए बैठे हैं। अजन्ता के चित्र विभिन्न कालों में बनाए गए थे। सम्भवतः इनका विकास ईसा पूर्व एक शताब्दी से ईसा के बाद सात शताब्दियों तक होता रहा।

अजन्ता सम्प्रदाय के चित्र

अजन्ता कला सम्प्रदाय के चित्र दूर-दूर तक फैले हुए हैं। उनके कुछ नमूने हमें बाघ (मध्य भारत) तथा दक्षिण भारत में सीतानावसाल के स्थान पर दीवारों पर चित्रित रंग-बिरंगे चित्रों में मिलते हैं। सातवीं और आठवीं शताब्दी के मध्य एलोरा की गुफाएँ चट्टानें काटकर बनाई गईं और उनके पत्थरों को काट कर महान कैलाश मन्दिर का निर्माण किया गया। अब इस बात की कल्पना करना भी कठिन है कि प्रथम बार उनकी योजनाएँ किस प्रकार बनाई गई होंगी और बाद में कैसे उन्हें कार्यान्वित किया गया होगा। एलीफेंटा की गुफाएँ भी इसी काल की हैं। परन्तु आठवीं शताब्दी के उपरान्त विशाल रूप से दीवारों की

राजा की सवारी—अजंता का एक चित्र

चित्रकारिता अधिक लोकप्रिय न रही। बंगाल के तथा पश्चिमी भारत के गुजराती सम्प्रदाय की लघु चित्रकारिता लोकप्रिय होने लगी।

राजपूतकालीन कला

मध्य काल में कला का राजस्थानी सम्प्रदाय आया जो भारतीय प्रतिभा को विशुद्ध रूप में चित्रित करता है। इसकी मुख्य प्रेरणाएँ प्रेम और भक्ति हैं। राजस्थानी चित्र वह सब कुछ प्रदर्शित करते हैं, जो भारतीय जनता के भावुक जीवन में सदा आकर्षक व सर्वोत्तम रहा है। डाक्टर कुमार स्वामी कहते हैं कि चीनी कला में प्राकृतिक दृश्यों को जो स्थान मिला हुआ है, वह पदवी यहाँ पर मानव-प्रेम को प्राप्त है।

मुगलकालीन कला

मुगलों के आगमन से भारतीय कला को प्रत्येक क्षेत्र में नया प्रोत्साहन मिला। अकबर कला का महान संरक्षक था। उसने भारत के सैकड़ों चित्रकारों को आमन्त्रित करते हुए उन्हें फारसी व संस्कृत

साहित्य की अत्युत्तम कृतियों को चित्रांकित करने का काम सौंपा। मुगल शासक, क्योंकि भारतीय ही बन गये थे, इसलिये उनके द्वारा प्रोत्साहित तथा संरक्षित चित्रकला वास्तविक भारतीय रूप में विकसित हुई। जहाँगीर अपने पिता के पदचिन्हों पर चला और शाहजहाँ ने तो स्थापत्य-कला को उच्च शिखर पर पहुँचा दिया। उसे भवन निर्माण का बड़ा शौक था। आगरा का ताजमहल और दिल्ली का लाल किला उसके कला-प्रेम का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

कैलाश मंदिर, एलोरा
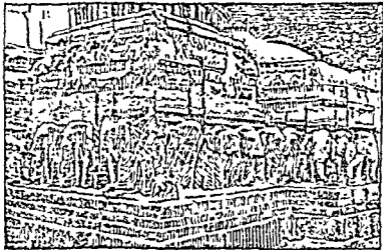
मुगलों की कला राजसी ठाट की थी, जिसमें वास्तविकता, परिष्कृत चित्रकारिता और बौद्धिक अभिव्यक्ति का समावेश है। औरंगजेब के शासन काल में कला को बड़ा धक्का पहुँचा, क्योंकि उसने चित्रकारों को राजकीय संरक्षण न दिया। अठारहवीं शताब्दी में पंजाब में कांगड़ा की पहाड़ियों में कुछ स्थानिक राजाओं के संरक्षण में कांगड़ा शैली की कला का विकास हुआ। इस शैली के चित्र बड़े मनमोहक हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय कला-कौशल की पुनर्जागृति से भारत में कलाओं का भी पुनः सृजन हुआ। अजन्ता, मुगल व राजपूत चित्रों और ग्राम्य कला के अध्ययन से बंगाल व बम्बई के कला सम्प्रदायों का प्रारम्भ हुआ। बंगाल सम्प्रदाय ने श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के नेतृत्व में अजन्ता से प्रेरणा ली। इसके कुछ कलाकार अर्वाचीन यूरोपीय कला से भी प्रभावित हुए हैं। दूसरी ओर बम्बई सम्प्रदाय ने अपने आपको बहुधा प्राकृतिक दृश्यों, आकार-सम्मिश्रण तक ही सीमित रखा। इसके कुछ कलाकारों ने नवीन योरोपीय पद्धति को भी अपनाया है। इसमें सन्देह नहीं कि आधुनिक भारतीय चित्रकारिता में व्याख्या तथा माध्यम ढूंढने के लिये अन्वेषण की भावना पाई जा रही है। आधुनिक युग के कुछ प्रमुख कलाकारों के नाम ये हैं—जैमिनी राय, अमृता शेरगिल, इत्यादि।

भारतीय संगीत

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष ने संगीतशास्त्र में बहुत उन्नति की। संगीत में गान, वाद्य और नृत्य का समावेश होता था। सामवेद में संगीत की प्रधानता है। भारत में संगीत के अनेक आचार्य हुए हैं। शार्ङ्गदेव ने 'संगीत रत्नाकर' में प्राचीन संगीताचार्यों के नामों में शिव, ब्रह्मा, भरत, नारद, कृष्ण, रावण आदि के नाम गिनाए हैं। मध्य काल में राजा भोज, शंकुक, कीर्तिधर आदि के नाम गिनाए हैं।

अर्जुन बड़ा भारी संगीतज्ञ था। उसने राजा विराट की पुत्री उत्तरा को संगीत सिखाया था। उदयन वीणा का विशेषज्ञ था। वह अपनी वीणा के मधुर स्वर से हाथियों को वश में कर वनों से उन्हें पकड़ लाता था।

राजा कनिष्क के दरबार में अश्वघोष बड़ा भारी संगीतकार था। समुद्रगुप्त स्वयं संगीतज्ञ था। राज्यश्री संगीतज्ञ थी। बाण ने हर्ष के दरबार में वन्दी (स्तुतिगायक), मार्दंगिक (मृदंग बजानेवाला), सैरन्ध्री, लासक और शैलालि तथा नर्तकी का वर्णन किया है।

सर विलियम हंटर लिखते हैं—"संगीत लिपि भारत से ईरान में, फिर अरब में और वहाँ से योरोप में पहुँची।"

ऐनी विल्सन ने लिखा है—"हिन्दुओं को इस बात का गर्व होना चाहिए कि उनकी संगीत लिपि दुनिया में सबसे प्राचीन है।"

प्राचीन काल से लेकर आज तक संगीत की धारा अविरल गति से बढ़ती चली आ रही है।

गान्धार का प्रदेश, प्राचीनकालीन यूनानी और हिन्दुस्तानी संस्कृतियों का संगमस्थल था। उत्तरी भारत में ही नहीं, दक्षिणी भारत में भी संगीत का जनता के हृदय पर राज्य था। जयदेव, शारंगदेव ने जो संगीत की सरिता बहाई थी, उसे कौन नहीं जानता।

१४ वीं शताब्दी का शासक सुल्तान अलाउद्दीन बड़ा संगीत-प्रेमी था। अमीर खुसरो उसका प्रसिद्ध दरबारी गायक था। वह भारतीय संगीत कला का अद्वितीय पण्डित था। सितार का आविष्कार अमीर खुसरो ने ही किया था।

सम्राट् अकबर के रोम-रोम में संगीत रमा हुआ था। प्रसिद्ध गायक तानसेन अकबर की ही खोज का फल था। तानसेन के गुरु स्वामी हरिदास थे। अकबर के दरबार में हिन्दू, मुसलमान, ईरानी, तूरानी, सभी प्रकार के गवैये थे। जहाँगीर, शाहजहाँ, शाहआलम भी संगीत के प्रेमी थे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारतीय कला की प्राचीनता के विषय में आप क्या जानते हैं?
(२) भारतीय कला की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
(३) कला की दृष्टि से भारतीय इतिहास को कितने युगों में विभक्त किया जा सकता है? प्रत्येक का परिचय दीजिए।
(४) भारत में कितने प्रकार की कलाओं का प्रचार रहा है? प्रत्येक का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
(५) भारतीय संगीत-कला पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।

मानव और उसकी दुनिया

दूसरा भाग

दूसरा भाग

प्रथम खण्ड

स्वतन्त्र भारत की नागरिकता

: १ :

हम और हमारा कुटुम्ब

मैं जो कुछ भी हूँ या जो कुछ भी बनने की आशा करता हूँ, उसके लिये मैं अपनी देवी स्वरूपा माता का ऋणी हूँ।

—इब्राहम लिंकन

कुटुम्ब का इतिहास इतना पुराना है, जितना स्वयं मनुष्य जाति का। कुटुम्ब में ही मानव का जन्म होता है। वहीं मनुष्य अपने माता-पिता के लाड-प्यार और देख-रेख में बड़ा होता है। कुटुम्ब में ही वह नैतिकता तथा अन्य सामाजिक गुण प्राप्त करता है। नागरिकता के सभी गुण जैसे त्याग, प्रेम, सहयोग, अनुशासन, भ्रातृत्व, शील, सेवा, बलिदान इत्यादि वह कुटुम्ब में रहकर ही सीखता है। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि 'कुटुम्ब सभी सामाजिक गुणों की आधारभूमि है,' और 'नागरिकता घर से शुरू होती है।'

कुटुम्ब के बारे में विस्तार से विचार करने से पूर्व हमें यह जान लेना चाहिए कि कुटुम्ब का अर्थ क्या है। कुटुम्ब एक ऐसा सामाजिक समुदाय है, जिसके सदस्यों का एक दूसरे के साथ रक्त के आधार पर घनिष्ट सम्बन्ध होता है। सारे मानव समाज में माता और बालक के बीच एक विशेष प्रकार का सम्बन्ध होता है। बच्चा स्तनजीवी होता है। उसका पालन माँ के दूध से ही सम्भव है। साधारणतया यह दूध माँ से ही मिल सकता है। पैदा होने के बाद कई महीनों तक बच्चा असहाय अवस्था में होता है। बिना माँ के या अन्य किसी व्यक्ति के, जो माँ की तरह इसे पाले-पोसे, वह जिन्दा नहीं रह सकता। बच्चे की माँ अथवा उसकी अन्य किसी संरक्षिका के बीच संबंध से कुटुम्ब की नींव पड़ती है।

कुटुम्ब क्या है?

कुटुम्ब के कुछ ऐसे लक्षण हैं, जो कि विश्व के सभी कुटुम्बों में पाए जाते हैं। कुटुम्ब का प्रथम लक्षण वैवाहिक बन्धन है। संसार का आधार स्त्री-पुरुष के इसी सम्बन्ध पर कायम है।

कुटुम्ब का दूसरा महत्वपूर्ण लक्षण रक्त सम्बन्ध है। रक्त का बन्धन एक अनुपम बन्धन है। यह रक्त सम्बन्ध माता और बच्चे का होता है। बच्चा माँ के गर्भ में रहकर उसके रक्त से पलता है। बाद में माँ के दूध से उसका भरण-पोषण होता है। इस प्रकार बच्चे तथा माता-पिता में रक्त-संबंध स्थापित हो जाता है। इस रक्त सम्बन्ध के कारण मनुष्य कुटुम्ब में एक दूसरे के साथ बँधा रहता है।

कुटुम्ब का तीसरा महत्वपूर्ण लक्षण एक निवासस्थान है। कुटुम्ब के सभी सदस्य सुरक्षा तथा सुविधा के लिए एक स्थान पर एक छत के नीचे रहते हैं। यदि कुटुम्ब के सदस्य एक-दूसरे से पृथक्-पृथक् रहने लगें, तो वह कुटुम्ब नष्ट हो जाता है। परन्तु यदि किसी कारणवश कुटुम्ब के सदस्यों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पड़े, तो उससे कुटुम्ब नष्ट नहीं होता, क्योंकि कुटुम्ब के सभी सदस्य त्योहारों तथा अन्य अवसरों पर इकट्ठे होते रहते हैं।

कुटुम्ब का चौथा लक्षण वंश है। प्रत्येक कुटुम्ब के साथ वंश का नाम चलता है। वंश के आधार पर हम एक-दूसरे से स्नेह बन्धनों से बंधे रहते हैं। कुटुम्ब के प्रत्येक सदस्य का एक दूसरे से विशेष प्रकार का सम्बन्ध होता है, जैसे माँ, बाप, दादा-दादी, चाचा-चाची इत्यादि। इसी सम्बन्ध के कारण हम एक दूसरे के प्रति अपने कर्तव्य को निभाते हैं।

कुटुम्ब का पांचवां महत्वपूर्ण लक्षण है आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करना। कुटुम्ब का प्रत्येक सदस्य परिवार की शारीरिक रक्षा, भोजन तथा वस्त्रों के प्रबन्ध की व्यवस्था इत्यादि करता है। कुटुम्ब अपने सदस्यों की सामाजिक सुरक्षा के लिये सदा सतर्क रहता है। साधारणतया मनुष्य के वैवाहिक सम्बंधों का निर्धारण भी कुटुम्ब द्वारा होता है।

कुटुम्ब की परिभाषा

कुटुम्ब के उपरोक्त लक्षणों का अध्ययन करने के बाद हम कुटुम्ब की कोई निश्चित परिभाषा निर्धारित कर सकते हैं। प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने कुटुम्ब की परिभाषा इस प्रकार की है, "कुटुम्ब एक ऐसी संस्था है, जिसे मनुष्य अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए स्थापित करते हैं।" कुटुम्ब की आधुनिक परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है—कुटुम्ब एक छोटा-सा सामाजिक वर्ग है, जिसमें सामान्यतः पिता, माता और एक या अधिक बच्चे शामिल होते हैं। इसमें प्रेम और उत्तरदायित्व का न्यायोचित विभाजन होता है। इसमें बच्चों को आत्मनियंत्रित तथा सामाजिक प्रेरणा प्राप्त व्यक्ति बनने की शिक्षा दी जाती है।

कुटुम्ब की उत्पत्ति तथा विकास

हम पहले बता चुके हैं कि कुटुम्ब मनुष्य के अनिवार्य समुदायों में सबसे प्राचीन और सबसे महत्वपूर्ण है। यह सामाजिक संगठन का मुख्य आधार है। कुटुम्ब के बिना बच्चे का पालन-पोषण तथा विकास प्रायः असम्भव हो जाता है। सृष्टि का क्रम जारी रखने के लिये कुटुम्ब एक अनिवार्य संस्था है। आपने देखा होगा कि अविकसित रूप में कुटुम्ब की संस्था पशुओं में भी पाई जाती है। हाथी तथा उसका कुटुम्ब सदा एक साथ चलते हैं। शेर तथा उसका कुटुम्ब साधारणतया एक ही गुफा में रहते हैं। मानव समाज की आदिम अवस्था के अध्ययन से मालूम होता है कि मनुष्य सदा ही किसी न किसी प्रकार के परिवार में रहा है। स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध आदि काल से चला आ रहा है। इसलिए कुटुम्ब आदि काल से ही विद्यमान है। इसमें सन्देह नहीं कि कुटुम्ब का रूप समय-समय पर बदलता रहता है। कुछ पश्चिमी विद्वानों ने कुटुम्ब की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न सिद्धान्त बताए हैं। मोरगन के अनुसार मानव के आदि काल में यौन सम्बंधों की स्वच्छन्दता थी। कालान्तर में मनुष्य ने विवाह की संस्था स्थापित की और तत्पश्चात् कुटुम्ब के पितृमूलक

सिद्धान्त का जन्म हुआ। एक ओर राजनीतिज्ञ वैस्टर मार्क ने यह मत प्रकट किया है कि आदि युग के मानव को यह नहीं मालूम था कि सन्तान पुरुष के वीर्य से पैदा होती है। यही कारण था कि प्रारम्भिक काल के परिवार अधिकतर माँ के नाम पर ही चलते थे। बाद में सुधार होने पर पितृमूलक कुटुम्ब बने।

वास्तव में किसी एक समय कुटुम्ब की उत्पत्ति नहीं हुई। कुटुम्ब की संस्था धीरे-धीरे विकसित होती रही है। इसमें कोई विशेष परिवर्तन भी नहीं आया। मानव आज भी प्रायः उसी तरह कुटुम्ब में रहता है जैसे आज से दस या पन्द्रह हजार वर्ष पहले रहता था।

कुटुम्ब के रूप

वर्तमान युग में कुटुम्ब को मुख्य रूप से तीन आधारों पर बाँटा जा सकता है

(१) वंश के आधार पर—इसके अंतर्गत दो प्रकार के परिवार आते हैं—मातृप्रधान (Matriarchal) तथा पितृप्रधान (Patriarchal)। मातृप्रधान कुटुम्ब वह परिवार होता है, जिसमें पूर्वजों की गणना माँ के परिवार के सहारे की जाती है। पति अपनी पत्नी के घर जाकर रहता है। माँ कुटुम्ब की प्रधान होती है। कुटुम्ब में पिता की अपेक्षा माँ का अधिक मान होता है। इस प्रकार के कुटुम्ब तिब्बत, मिस्र तथा भारत में मलाबार और असम प्रदेशों में पाए जाते हैं। पितृप्रधान कुटुम्ब में पुरुष की ओर से पूर्वजों का पता लगाया जाता है। ऐसे परिवार में सबसे अधिक आयुवाला पुरुष ही परिवार का अगुवा माना जाता है। वह घर के सब काम सम्भालता है। घर के अन्य सभी सदस्य उसके नियंत्रण में रहते हैं। दुनिया में आजकल इसी तरह के परिवार पाए जाते हैं।

(२) विवाह के आधार पर—दुनिया में तीन प्रकार के परिवार पाए जाते हैं। पहला, एक पत्नी परिवार (Monogamy) है। ऐसे कुटुम्ब में पुरुष एक ही विवाह करता है। ईसाइयों तथा यहूदियों में धर्म केवल एक ही स्त्री से विवाह की आज्ञा देता है। इस समय दुनिया में ऐसे ही परिवारों का बाहुल्य है। दूसरे, बहुपत्नी परिवार (Polygamy) है। ऐसे परिवारों में मनुष्य एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करता है। आजकल भी इस प्रकार के परिवारों की बड़ी संख्या है। इस्लाम एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करने की इजाजत देता है। इसलिए मुसलमानों में विशेष रूप से बहुपत्नी की प्रथा प्रचलित है। तीसरे, बहुपति परिवार (Polyandry) है। इस प्रकार के कुटुम्ब में एक स्त्री के कई पति होते हैं जिनसे कुटुम्ब का निर्माण होता है। मिस्र में आज भी इस प्रकार की प्रथा कहीं-कहीं प्रचलित है और भारत की भी कुछ आदिम जातियों में यह विवाह प्रथा पाई जाती है। ऐसे परिवारों का प्रारम्भ स्त्रियों के अभाव या गरीबी के कारण हुआ होगा।

(३) संगठन के आधार पर—इसके अंतर्गत दो प्रकार के कुटुम्ब होते हैं। पहला, व्यक्तिगत कुटुम्ब जिसमें स्त्री, पुरुष तथा उनके बच्चे आते हैं। ऐसे कुटुम्ब में दादी-दादा, चाची-चाचा इत्यादि का कोई स्थान नहीं। यह परिवार का सरलतम रूप है। ऐसे परिवार अधिकतर पश्चिमी देशों में पाए जाते हैं। दूसरे संयुक्त परिवार होते हैं जिनमें स्त्री-पुरुष और उनके बच्चों के अतिरिक्त दादी-दादा, चाची-चाचा, भाई-भतीजे तथा अन्य निकट सम्बन्धी शामिल होते हैं। ये सब लोग एक ही छत के नीचे रहते हैं। परिवार का सबसे वृद्ध

व्यक्ति कुटुम्ब के सदस्यो की देखभाल करता है। कुटुम्ब की आय तथा उसका व्यय इसी अगुवा के हाथ में होता है। ऐसे कुटुम्ब भारतवर्ष और चीन में बहुत अधिक सख्या में पाए जाते हैं।

हमारे देश में सयुक्त परिवार की प्रणाली ही अधिक प्रचलित है। इसलिए जरुरी है कि हम इस प्रणाली के गुण-दोषो पर विचार करें।

सयुक्त परिवार के गुण

(१) परिवार का प्रत्येक सदस्य नि स्वार्थ भाव से सारे कुटुम्ब के लिए मेहनत करता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य की कम से कम आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं। (२) सयुक्त परिवार में अनाथो, विधवाओ, बूढो तथा बीमारो की भी देखभाल की जाती है। यही कारण है कि सयुक्त परिवार को एक तरह से सब आपत्तियो का सुरक्षा-स्थल समझा जाता है। (३) इस प्रणाली के अन्तर्गत परिवार के सदस्य स्वेच्छा से अपना-अपना काम बाँट लेते हैं। प्रत्येक व्यक्ति वही काम करता है, जो उसे सबसे अच्छा लगता है। (४) सयुक्त परिवार के कारण मितव्ययता को प्रोत्साहन मिलता है और इकट्ठे रहने तथा इकट्ठे खान-पान के कारण खर्च कम पडता है। (५) सामूहिक हितो के कारण आपसी सहयोग बढता है। परिवार के सब सदस्य अनुशासन में रहते है और सबके भले के लिए अपने छोटे-छोटे निजी हितो का बलिदान कर देते हैं। (६) कहीं-कहीं तो जहाँ किसी परिवार में व्यवसाय वशागत होता है, वहाँ कला-कौशल में बड़ी उन्नति होती है।

सयुक्त परिवार के दोष

(१) सयुक्त परिवार में रहने के कारण प्रत्येक व्यक्ति को इस बात की निश्चिन्तता होती है कि मुझे खाने-पीने की कोई चिन्ता नही। इसलिए इस निश्चिन्तता के कारण अकर्मण्यता को प्रोत्साहन मिलता है और व्यक्ति मेहनत से बचता है। (२) वह किसी काम में पहल नहीं करता क्योकि वह समझता है कि इससे मुझ अकेले को तो लाभ होगा नहीं। परिवार के सब सदस्य घर के मुखिया पर निर्भर हो जाते हैं। परिवार के सदस्यो में स्वतन्त्र रूप से काम करके आगे बढने की भावना नही रहती। (३) चूंकि व्यक्ति के काम तथा उसके फल में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता, इसलिए वह अधिक मेहनत करने या नया काम शुरू करने में रुचि

हुआ करती थी। राज्य ने व्यक्ति की सुरक्षा के लिए कुछ व्यवस्थाएँ कर दी है। उदाहरण के रूप में कोई अपाहिज आदमी सरकार के अपाहिज आश्रम में जा सकता है, तो बूढ़ा वृद्धाश्रम में।

संयुक्त परिवार की सफलता कैसे ?

संयुक्त परिवार प्रणाली से हमारे देश में सामाजिक संगठन बहुत देर तक सुचारु रूप से चलता रहा। अब भी संयुक्त परिवार की उपादेयता खत्म नहीं हुई। संयुक्त परिवार को सफल बनाने के लिये अच्छी परिस्थितियों की आवश्यकता है। संयुक्त कुटुम्ब के सदस्यों में—विशेष रूप से स्त्रियों में—स्नेह, सहानुभूति तथा सहयोग की भावना हो। कुटुम्ब के सदस्य शिक्षित हों। शिक्षा के फल-स्वरूप कुटुम्ब के सदस्यों में उदार दृष्टिकोण, सहनशीलता, कार्यशीलता तथा कर्तव्य पालन की भावनाएँ उत्पन्न होंगी। इन भावनाओं के आधार पर संयुक्त कुटुम्ब सफलतापूर्वक कायम रह सकेगा। परिवार के सदस्यों को अपने-अपने कर्तव्य अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार निभाने चाहिएँ। यदि परिवार का कोई सदस्य ऐसा नहीं करता तो उससे इस सुखी परिवार को भारी खतरा है। उसकी ऐसी आदत के कारण अन्य सदस्यों में असन्तोष पैदा होगा। इसलिये संयुक्त परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपना उत्तरदायित्व अनुभव करना चाहिए।

अभ्यास के प्रश्न

(१) कुटुम्ब किसे कहते हैं ? कुटुम्ब की उत्पत्ति तथा विकास कैसे हुआ ?

(२) कुटुम्ब के विभिन्न रूपों का वर्णन करो। भारतवर्ष में किस प्रकार के कुटुम्ब पाए जाते हैं ?

(३) संयुक्त परिवार प्रणाली का क्या अर्थ है ? इसके गुण तथा दोषों का वर्णन करो। आपके विचार में कौन-सी प्रणाली अच्छी है ?

: २ :

कुटुम्ब का महत्व

नागरिकता की प्रथम शिक्षा मा के चुम्बन और बाप के प्यार से मिलती है।

—मैजिनी

एक प्रसिद्ध रूसी लेखक ने कहा है कि मुझे ६० अनुभवी माताएँ दो, मैं तुम्हें एक अच्छा राष्ट्र दे सकता हूँ। ये शब्द मानव जीवन में कुटुम्ब के महत्व को प्रकट करते हैं। इब्राहम लिंकन, शिवाजी तथा नेपोलियन इत्यादि महापुरुषों ने अपने जीवन को ढालने में माताओं का ऋण स्वीकार किया है। एक बार सम्राट् अकबर ने कुछ बच्चो को परिवार के बिना पालने का प्रयोग किया। वे यह देखना चाहते थे कि बच्चे कौन सी प्राकृतिक भाषा बोलते हैं। उन्हें अलग-अलग एक जगह पर रख दिया गया जहाँ कोई भी बड़ा आदमी न था। वे किसी का भी अनुकरण नहीं कर सकते थे। कुछ वर्षों के बाद जब बच्चों को वहाँ से निकाला गया तो वे सब गूंगे और बहरे थे तथा पशुओं के समान ही रहना जानते थे।

मानव के सामान्य जीवन में कुटुम्ब का बड़ा महत्व है। कुटुम्ब हमारे सामाजिक जीवन का आधार है। वास्तव में हमारा सामाजिक जीवन घर से ही शुरू होता है। कुटुम्ब एक ऐसा स्कूल है, जहाँ हमें आदर्श नागरिकता का पहला पाठ मिलता है। कुटुम्ब के महत्व को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाया जा सकता है।

पालन-पोषण गृह के रूप में—कुटुम्ब में मानव का जन्म होता है। वहीं पलकर बच्चा बड़ा होता है। अन्य कोई संस्था बच्चे की देखभाल और पालन-पोषण नहीं कर सकती। माँ और बाप को अपने बच्चे से कुछ स्वाभाविक लगाव होता है। वे बच्चे के लिए तन मन धन सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहते हैं। बच्चे के सुख में ही उन्हें सुख मिलता है। इसलिए हम देखते हैं कि प्रकृति ने बच्चे की सुरक्षा के लिए स्वयं परिवार की रचना की है। बच्चा यही पर समाज से प्रथम सम्पर्क स्थापित करता है। वह अधिकतर बातें परिवार के अन्य सदस्यों के अनुकरण से सीखता है।

आर्थिक सुरक्षा की संस्था—कुटुम्ब आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करता है। कुटुम्ब का प्रत्येक व्यक्ति उसके लिए कुछ न कुछ काम करता है। बाप अपने बच्चो के लिए धन पैदा करता है। माँ बच्चों के लिए खान-पान की व्यवस्था करती है। बेटे को अपने बाप की सम्पत्ति का उत्तराधिकार कुटुम्ब द्वारा ही मिलता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य की आर्थिक जरूरतें पूरी की जाती हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि कुटुम्ब एक प्रकार की बीमा कम्पनी है जिसमें परिवार के सब सदस्यों के हित सुरक्षित हैं। कुटुम्ब बूढ़ो, अपाहिजो तथा विधवाओं को शरण देता है।

अनुशासन का केन्द्र—प्रत्येक कुटुम्ब के कुछ अलिखित नियम होते हैं जिन पर परिवार के सभी सदस्य आचरण करते हैं। कुटुम्ब का अगुवा इस बात का ध्यान रखता है कि कोई सदस्य रास्ते से भटके नहीं। प्रत्येक

सदस्य से यह आशा की जाती है कि वह बड़ो की आज्ञा माने और उन नियमो का उल्लघन न करे जिन्हें परिवार स्वीकार करता है। कुटुम्ब एक प्रकार से छोटा-सा राज्य है जिसका राजा कुलपति या गृहस्वामी होता है। इस राज्य के सभी नागरिक—बच्चे, स्त्री तथा पुरुष—अपने राजा के अनुशासन में रहते हैं।

शिक्षा की पाठशाला

कुटुम्ब का सबसे बड़ा महत्व यह है कि यह नागरिकता के एक महान् शिक्षालय के रूप में काम करता है। कुटुम्ब की छत्रछाया में बड़े-बड़े नेता, दार्शनिक और विद्वान जन्म लेते हैं। शिवाजी को उनकी माता ने इस योग्य बनाया कि वे मुगल सत्ता की जड़ें खोखली कर दें। इब्राहम लिंकन को उसकी माता नें वह शिक्षा दी जिससे वह अमेरिकन राष्ट्र का महान् निर्माता बन सका। इसी प्रकार ससार के सभी नेताओ पर उनके पिता या माता की छाप रही है।

यही नही, कुटुम्ब में रहते हुए व्यक्ति में नागरिकता के गुणो का विकास होता है। वह सेवा, स्नेह, सहानुभूति, त्याग, सुहृदयता, सहिष्णुता इत्यादि नागरिक गुण सीखता है। नागरिकता के ये गुण मनुष्य में कुटुम्ब द्वारा विकसित होते हैं। यह कैसे ?

सहयोग—सहयोग नागरिकता का सबसे बड़ा गुण है। वह हमारे सामाजिक जीवन का आधार है। सबसे पहले कुटुम्ब में बच्चा अपने माता-पिता को सहयोग से अपनी सेवा और पालन-पोषण करते हुए देखता है। घर में और भी सम्बन्धी होते है। वे सब मिलकर धनोपार्जन करते है और एक साथ रहकर खाते-पीते हैं। सहयोग की यह भावना जो उसे कुटुम्ब में दिखाई देती है, बड़ा होने पर उसी पर अमल करते हुए वह देश का एक अच्छा नागरिक बनता है।

स्नेह—स्नेह आदर्श नागरिकता का एक अनुपम गुण है। यह गुण बच्चे को माँ के चुम्बन और बाप के प्यार से मिलता है। वास्तव में कुटुम्ब नि स्वार्थ स्नेह का एक मन्दिर है। माँ और बाप दोनो ही दिन-रात बच्चे की पालन-पोषण में सलग्न रहते हैं। स्वय भूखी-प्यासी रहकर भी माँ बच्चे की उदर-पूर्ति करती है। स्नेह की यह दीक्षा लेकर बच्चा ससार में प्रवेश करता है।

सहानुभूति—कुटुम्ब में बच्चा सहानुभूति का भी प्रथम पाठ सीखता है। वह जब बीमार पड़ता है, तो उसकी माँ रात-रात भर आँखो में काट देती है। वह अपने बच्चे के लिए तड़पती है और भगवान से उसके स्वास्थ्य के लिए निरन्तर प्रार्थना करती है। कुटुम्ब में बच्चा पहली बार दूसरो के लिए रोना और दूसरो के लिए सहानुभूति अनुभव करना सीखता है।

सेवा—सहानुभूति सेवा के रूप में व्यक्त होती है। माता-पिता नि स्वार्थ भाव से अपने बच्चो की सेवा करते है। मनुष्य केवल अपने लिए नही जीता, वह दूसरो के लिए जीता है। अपने बड़ो को इस प्रकार से दिन-रात सेवा में व्यस्त रहते देखकर बच्चा भी यही रास्ता अपनाता है। नि स्वार्थ सेवा का भाव आदर्श नागरिकता का एक महत्वपूर्ण अग है।

त्याग—बिना त्याग के सेवा नहीं हो सकती। सेवा करने के लिये किसी न किसी रूप में हमें त्याग

: २ :

कुटुम्ब का महत्व

नागरिकता की प्रथम शिक्षा माँ के चुम्बन और बाप के प्यार से मिलती है।

—मैजिनी

एक प्रसिद्ध रूसी लेखक ने कहा है कि मुझे ६० अनुभवी माताएँ दो, मैं तुम्हें एक अच्छा राष्ट्र दे सकता हूँ। ये शब्द मानव जीवन में कुटुम्ब के महत्व को प्रकट करते हैं। इब्राहम लिंकन, शिवाजी तथा नेपोलियन इत्यादि महापुरुषों ने अपने जीवन को ढालने में माताओं का ऋण स्वीकार किया है। एक बार सम्राट् अकबर ने कुछ बच्चों को परिवार के बिना पालने का प्रयोग किया। वे यह देखना चाहते थे कि बच्चे कौन सी प्राकृतिक भाषा बोलते हैं। उन्हें अलग-अलग एक जगह पर रख दिया गया जहाँ कोई भी बड़ा आदमी न था। वे किसी का भी अनुकरण नहीं कर सकते थे। कुछ वर्षों के बाद जब बच्चों को वहाँ से निकाला गया तो वे सब गूंगे और बहरे थे तथा पशुओं के समान ही रहना जानते थे।

मानव के सामान्य जीवन में कुटुम्ब का बड़ा महत्व है। कुटुम्ब हमारे सामाजिक जीवन का आधार है। *वास्तव में हमारा सामाजिक जीवन घर में ही शुरू होता है। कुटुम्ब एक ऐसा स्कूल है, जहाँ हमें आदर्श* नागरिकता का पहला पाठ मिलता है। कुटुम्ब के महत्व को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाया जा सकता है।

पालन-पोषण गृह के रूप में—कुटुम्ब में मानव का जन्म होता है। यहीं पल कर बच्चा बड़ा होता है। अन्य कोई संस्था बच्चे की देखभाल और पालन-पोषण नहीं कर सकती। माँ और बाप को अपने बच्चे से कुछ स्वाभाविक लगाव होता है। वे बच्चे के लिए तन मन धन सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहते हैं। बच्चे के सुख में ही उन्हें सुख मिलता है। इसलिए हम देखते हैं कि प्रकृति ने बच्चे की सुरक्षा के लिए स्वयं परिवार की रचना की है। बच्चा यहीं पर समाज से प्रथम सम्पर्क स्थापित करता है। वह अधिकतर बातें परिवार के अन्य सदस्यों के अनुकरण से सीखता है।

आर्थिक सुरक्षा की संस्था—कुटुम्ब आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करता है। कुटुम्ब का प्रत्येक व्यक्ति उसके लिए कुछ न कुछ काम करता है। बाप अपने बच्चों के लिए धन पैदा करता है। माँ बच्चों के लिए खान-पान की व्यवस्था करती है। बेटे को अपने बाप की सम्पत्ति का उत्तराधिकार कुटुम्ब द्वारा ही मिलता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य की आर्थिक जरूरतें पूरी की जाती हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि कुटुम्ब एक प्रकार की बीमा कम्पनी है जिसमें परिवार के सब सदस्यों के हित सुरक्षित हैं। कुटुम्ब बूढ़ों, अपाहिजों तथा विधवाओं को शरण देता है।

अनुशासन का केन्द्र—प्रत्येक कुटुम्ब के कुछ अलिखित नियम होते हैं जिन पर परिवार के सभी सदस्य आचरण करते हैं। कुटुम्ब का अगुआ इस बात का ध्यान रखता है कि कोई सदस्य रास्ते से भटके नहीं। प्रत्येक

सदस्य से यह आशा की जाती है कि वह बडो की आज्ञा माने और उन नियमो का उल्लघन न करे जिन्हें परिवार स्वीकार करता है। कुटुम्ब एक प्रकार से छोटा-सा राज्य है जिसका राजा कुलपति या गृहस्वामी होता है। इस राज्य के सभी नागरिक—बच्चे, स्त्री तथा पुरुष—अपने राजा के अनुशासन में रहते हैं।

शिक्षा की पाठशाला

कुटुम्ब का सबसे बडा महत्व यह है कि यह नागरिकता के एक महान् शिक्षालय के रूप में काम करता है। कुटुम्ब की छत्रछाया में बडे-बडे नेता, दार्शनिक और विद्वान जन्म लेते हैं। शिवाजी को उनकी माता ने इस योग्य बनाया कि वे मुगल सत्ता की जडें खोखली कर दें। इब्राहम लिंकन को उसकी माता नें वह शिक्षा दी जिससे वह अमेरिकन राष्ट्र का महान् निर्माता बन सका। इसी प्रकार ससार के सभी नेताओ पर उनके पिता या माता की छाप रही है।

यही नही, कुटुम्ब में रहते हुए व्यक्ति में नागरिकता के गुणो का विकास होता है। वह सेवा, स्नेह, सहानुभूति, त्याग, सुहृदयता, सहिष्णुता इत्यादि नागरिक गुण सीखता है। नागरिकता के ये गुण मनुष्य में कुटुम्ब द्वारा विकसित होते हैं। यह कैसे?

सहयोग—सहयोग नागरिकता का सबसे बडा गुण है। यह हमारे सामाजिक जीवन का आधार है। सबसे पहले कुटुम्ब में बच्चा अपने माता-पिता को सहयोग से अपनी सेवा और पालन-पोषण करते हुए देखता है। घर में और भी सम्बन्धी होते हैं। वे सब मिलकर धनोपार्जन करते है और एक साथ रहकर खाते-पीते है। सहयोग की यह भावना जो उसे कुटुम्ब में दिखाई देती है, बडा होने पर उसी पर अमल करते हुए वह देश का एक अच्छा नागरिक बनता है।

स्नेह—स्नेह आदर्श नागरिकता का एक अनुपम गुण है। यह गुण बच्चे को माँ के चुम्बन और बाप के प्यार से मिलता है। वास्तव में कुटुम्ब निःस्वार्थ स्नेह का एक मन्दिर है। माँ और बाप दोनों ही दिन-रात बच्चे को पालन-पोषण में सलग्न रहते हैं। स्वय भूखी-प्यासी रहकर भी माँ बच्चे की उदर-पूर्ति करती है। स्नेह की यह दीक्षा लेकर बच्चा ससार में प्रवेश करता है।

सहानुभूति—कुटुम्ब में बच्चा सहानुभूति का भी प्रथम पाठ सीखता है। वह जब बीमार पडता है, तो उसकी माँ रात-रात भर आँखों में काट देती है। वह अपने बच्चे के लिए तड़पती है और भगवान से उसके स्वास्थ्य के लिए निरन्तर प्रार्थना करती है। कुटुम्ब में बच्चा पहली बार दूसरो के लिए रोना और दूसरो के लिए सहानुभूति अनुभव करना सीखता है।

सेवा—सहानुभूति सेवा के रूप में व्यक्त होती है। माता-पिता निःस्वार्थ भाव से अपने बच्चो की सेवा करते हैं। मनुष्य केवल अपने लिए नही जीता, वह दूसरो के लिए जीता है। अपने बडो को इस प्रकार से दिन-रात सेवा में व्यस्त रहते देखकर बच्चा भी यही रास्ता अपनाता है। निःस्वार्थ सेवा का भाव आदर्श नागरिकता का एक महत्वपूर्ण अग है।

त्याग—बिना त्याग के सेवा नही हो सकती। सेवा करने के लिये किसी न किसी रूप में हमें त्याग

करना ही पड़ता है। वह त्याग चाहे समय का हो, चाहे अर्थ का। माता-पिता अपने बच्चे के लिए महान् त्याग करते हैं। यदि वे गरीब हों, तो आप रूखी-सूखी रोटी खाकर भी बच्चे को पौष्टिक अन्न देने की चेष्टा करते हैं। यदि वे अमीर हों, तो अपने से अधिक बच्चों पर व्यय करते हैं। त्याग की यह शिक्षा आदर्श नागरिकता के लिए बड़ी उपयोगी है क्योंकि थोड़ा-बहुत त्याग किए बिना नागरिक जीवन चल नहीं सकता।

परिश्रम—कोई समाज या जाति बिना परिश्रम के उन्नति नहीं कर सकती। आदर्श नागरिक वही है, जो परिश्रम करके राष्ट्र की दौलत को बढ़ाए। बेकार और अकर्मण्य व्यक्ति राष्ट्र पर बोझ होते हैं। अपने आलस्य के कारण वे देश की सम्पत्ति को बढ़ाने के स्थान पर उसको व्यर्थ नष्ट ही करते हैं। परिश्रम करने का यह गुण भी मानव को अपने कुटुम्ब से ही मिलता है।

सहनशीलता—सब मनुष्य एक समान नहीं होते। कुछ लोग सरल प्रकृति के होते हैं और कुछ क्रोधी व झक्की। आदर्श नागरिक को हर प्रकार के स्वभाव के लोगों से निर्वाह करना पड़ता है। इसलिए उसमें सहनशीलता अथवा सहिष्णुता की भावना अवश्य होनी चाहिए। यह भावना उसे कहाँ मिलती है? परिवार में। परिवार में कई बार वह देखता है कि दादा क्रोधी स्वभाव के हैं अथवा चाचा बार-बार चिढ़ जाते हैं। भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले लोगों के साथ उसे परिवार में रहना पड़ता है। यहाँ वह सहनशीलता का पहला पाठ सीखता है।

निःस्वार्थ भावना—निःस्वार्थ भावना एक अच्छे नागरिक का गुण है। नागरिक जीवन के लिए यह जरूरी है कि हम निजी स्वार्थ को पीछे रखकर सामूहिक रूप से काम करें। बच्चे कुटुम्ब के प्रत्येक व्यक्ति को कुटुम्ब के सामूहिक हित के लिए काम करते हुए देखते हैं। कुटुम्ब के सदस्य अपने निजी स्वार्थों को त्याग कर सामूहिक उत्थान के लिए काम करते हैं।

सदाचार—कुटुम्ब में ही हमें सदाचार और नैतिकता की पहली शिक्षा मिलती है। माता-पिता बच्चे को सत्य, कर्तव्य तथा ईमानदारी की शिक्षा देते हैं। वे ही उन्हें पुण्य पाप और उचित अनुचित में अन्तर बताते हैं। यहाँ उसे सदाचार का पाठ मिलता है।

अनुशासन—कुटुम्ब में बच्चा सबसे पहले अनुशासन में रहना सीखता है। वह परिवार के सब सदस्यों को परिवार के अगुआ का कहना मानते हुए देखता है। इसलिए बच्चा भी आज्ञा तथा अनुशासन में रहना सीख जाता है।

कुटुम्ब के प्रति हमारा कर्तव्य

आपने देख लिया कि कुटुम्ब मानव के लिए कितना जरूरी है। अपने विकास और उन्नति के लिए हम कुटुम्ब के कितने ऋणी हैं। कुटुम्ब ही हमें पाल पोसकर बड़ा करता है। पशु और पक्षियों के बच्चों को बहुत देर तक अपने माँ-बाप पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। परन्तु मानव के बच्चे कुटुम्ब की छत्रछाया के बिना आगे नहीं बढ़ सकते। शैशवकाल और उसके बाद भी हमारे माता-पिता निरन्तर हमारे मानसिक तथा शारीरिक विकास के लिए प्रयत्न करते रहते हैं। वे हमें अच्छी आदतें तथा शिष्टाचार सिखाते हैं। हमारी शिक्षा पर वे बहुत धन व्यय करते हैं। कभी-कभी तो निर्धनता के कारण माता-पिता को बच्चों की शिक्षा के लिए

कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। जीवन में हमें जो भी स्थान, आदर या सफलता मिलती है, उसका श्रेय हमारे माता-पिता को ही है। कितने ऋणी हैं हम अपने कुटुम्ब के ? क्या हमारा कर्त्तव्य नहीं कि हम इस ऋण को उतारें ?

परिवार के प्रति अपने इस कर्त्तव्य को हम कई तरीकों से पूरा कर सकते हैं। हम निजी स्वार्थों को अपने परिवार के सुख तथा शान्ति के लिए त्याग सकते हैं। यदि त्याग तथा बलिदान द्वारा हम अपने माता पिता को सुखी कर सकते हैं, तो इसमें हमें तनिक सकोच नहीं होना चाहिए। परिवार के किसी सदस्य से हमें उपेक्षा का व्यवहार नहीं करना चाहिए। जो बीमार है, उनकी दवा-दारू करें और जो दुखी हैं, उन्हें सात्वना दें। सच तो यह है कि परिवार के प्रति अपना ऋण हम जीवन पर्यन्त नहीं चुका सकते।

अभ्यास के प्रश्न

(१) कुटुम्ब को नागरिकता की पाठशाला क्यों कहा जाता है ? यहां हम नागरिकता के कौन से गुण सीखते हैं ?

(२) सुखी कुटुम्ब के क्या आधार हैं ?

(३) "नागरिकता घर से शुरू होती है"—इस कथन की विवेचना कीजिए।

(४) कुटुम्ब सामाजिक गुणों की आधार भूमि है"—इस कथन को स्पष्ट कीजिए ?

: ३ :

स्थानीय स्वायत्त शासन (लोकल सेल्फ गवर्मेन्ट)

लोकतन्त्र का सर्वोत्तम शिक्षालय और उसकी सफलता की सर्वोत्तम सुरक्षा स्थानीय स्वायत्त शासन है।

—लार्ड ब्राईस

प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली में प्रत्येक नागरिक का अपना अस्तित्व होता है। वह अपने गाँव, नगर, प्रान्त या देश के शासन में बराबर का हिस्सेदार होता है। नागरिक का शासन से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने के लिये स्थानीय स्वायत्त शासन की विधि निकाली गई है। स्थानीय स्वायत्त शासन का क्या अभिप्राय है? इसका अर्थ है कि हम जहाँ रहते हैं उस स्थान का प्रबन्ध स्वयं करें। यदि हम गाँव में रहते हैं तो ग्राम पंचायतों के कार्यों में सक्रिय सहयोग दें। यदि हम नगर में रहते हैं, तो नगरपालिका अथवा म्यूनिस्पिल कमेटी की सरगर्मियों में उत्साहपूर्वक भाग लें। प्रजातन्त्र की सफलता एक नागरिक की जागरूकता पर निर्भर है। प्रजातन्त्र की प्राथमिक पाठशालाएँ स्थानीय स्वायत्त संस्थाएँ हैं। इन संस्थाओं से अनुभव प्राप्त व्यक्ति राज्य तथा देश के शासन को सुचारु रूप से चलाने में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

गाव का प्रबन्ध

प्राचीन काल से गाँव में व्यवस्था बनाए रखने के लिए ग्रामपंचायतें होती थी। परन्तु बड़े देहाती क्षेत्रों के प्रबन्ध के लिए कोई स्वायत्त शासन संस्था नहीं होती थी। वास्तव में उसकी विशेष जरूरत भी न थी क्योंकि यातायात की कठिनाइयों के कारण प्रत्येक गाँव एक प्रकार से स्वतन्त्र इकाई होता था। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वायत्त शासन का श्रीगणेश १८७१ में हुआ जब लार्ड मेयो ने प्रान्तीय सरकारों को देहाती इलाकों में स्थानीय कर लगाने के अधिकार दिए। परन्तु प्रान्तीय सरकारों ने विरोध के डर से इन अधिकारों का प्रयोग नहीं किया। १८७८ में लार्ड लिटन की सरकार ने प्रान्तीय सरकारों को जिला कमेटियाँ बनाने का अधिकार दिया, जिनमें कम से कम ६ व्यक्ति शामिल हों और जो एकत्र किए गए करों के व्यय की देखभाल तथा नियन्त्रण करें। लार्ड रिपन की सरकार एक कदम और आगे बढ़ी। १८८३ में एक कानून द्वारा प्रत्येक जिले में एक जिला बोर्ड (District Board) स्थापित करने का निश्चय हुआ। इन जिला बोर्डों के कम से कम दो-तिहाई सदस्य निर्वाचित हों। उनका कार्य-क्षेत्र बढ़ा दिया गया और उन्हें कर लगाने का अधिकार मिला।

ग्रामीण क्षेत्रों मे स्थानीय शासन

इस समय ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय शासन के लिये ये संस्थाएँ काम कर रही हैं

(१) जिला भर के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जिला बोर्ड

(२) सब-डिवीजन या तहसील के लिए लोकल बोर्ड

(३) कुछ एक गाँवो के लिए यूनियन बोर्ड

(४) एक या एक से अधिक गाँवो के लिए ग्राम पचायत

जिला बोर्ड

जिला बोर्ड में निर्वाचित तथा मनोनीत दोनो प्रकार के सदस्य होते हैं, परन्तु निर्वाचित सदस्यो का बहुमत होता हैं। मनोनीत सदस्य सरकार द्वारा नामजद किए जाते हैं। सदस्य अपने में से जिला बोर्ड का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुनते है। उत्तर प्रदेश में जिला बोर्ड का अध्यक्ष अब जनता द्वारा सीधे चुनाव में चुना जाता हैं। बोर्ड के सदस्यो का कार्यकाल तीन से चार वर्ष तक होता हैं। दैनिक काम-काज चलाने के लिए प्रत्येक बोर्ड अपना एक सचिव, जिला इजीनियर, जिला स्वास्थ्य अधिकारी इत्यादि नियुक्त करता है। इस समय भारतवर्ष में २०७ जिला बोर्ड हैं। प्रत्येक व्यक्ति को जो २१ वर्ष की आयु से अधिक हो, जिला बोर्ड के चुनाव मे वोट देने तथा निर्वाचित होने का अधिकार प्राप्त हैं। परन्तु जिला बोर्ड का कोई कर्मचारी या सरकारी नौकर, दिवालिया या पागल और बोर्ड के ठेको में हिस्सा लेनेवाला कोई व्यक्ति चुनाव में खडा नही हो सकता।

जिला बोर्ड का कार्य-क्षेत्र

१९१९ के सुधारो के बाद जिला बोर्डों के कार्य-क्षेत्र में बडा विस्तार हुआ था। जिला बोर्ड के काय मुख्य ये है

(१) जिला बोर्ड ग्रामीण क्षेत्रो में सडको, पुलो तथा आने जाने के अन्य साधनो के निर्माण तथा उनकी मरम्मत के लिए उत्तरदायी हैं।

(२) वे गाँवो में लडको तथा लडकियो के लिये स्कूल खोलते हैं।

(३) गाँवो में पीने के पानी की व्यवस्था के लिए वे तालाब और कुएँ खुदवाते हैं तथा ट्यूब वेल लगवाते हैं। गन्दे पानी के निकास के लिए नालियो की व्यवस्था की जाती है।

(४) स्वास्थ्य-सेवा के लिये जिला बोर्डों को अस्पताल, औषधालय खोलने चाहिएँ। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षित दाइयो का प्रबन्ध करना चाहिए और छूतछात की बीमारियो की रोक थाम के लिए टीका इत्यादि की व्यवस्था करनी चाहिए।

(५) उनसे आशा की जाती है कि वे यात्रियो के ठहरने के लिए सरायो की व्यवस्था करें।

(६) इसके अतिरिक्त सडको पर वृक्ष लगवाएँ, इत्यादि।

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त राज्य सरकार जिला बोर्डों को अन्य बहुत से काम सौंप सकती है, जैसे— मंडियो की देखभाल करना, मवेशियो के लिए पीने के पानी का प्रबन्ध, दुर्भिक्ष में सहायता, जन्म-मरण तथा शादी और मौत के रजिस्टर रखना, देहाती मेलो का सगठन तथा नावो की व्यवस्था इत्यादि।

जिला बोर्ड की आय के साधन

(१) जिला बोर्ड की आय का मुख्य साधन एक स्थानीय कर होता हैं। इसके अतिरिक्त जिला बोर्ड को फीसो से कुछ आय होती हैं जैसे स्कूलो की फीस, मेलो पर लगाई गई फीस, कृषि प्रदर्शनियो पर लगाई गई फीस इत्यादि।

(२) राज्य-सरकार समय-समय पर जिला बोर्डों को अनुदान देती रहती है।

(३) जिला बोर्ड अपने क्षेत्र में रहनेवाले ऐसे सब व्यक्तियों से जिनकी आय २०० रुपये वार्षिक से अधिक हो और जो भूमि-कर न देते हों, हैसियत टैक्स वसूल करता है।

(४) आय के अन्य साधन ये हैं—इक्के तांगे पर कर, पेड़ इत्यादि की बिक्री से आय, फैक्टरी टैक्स, पुलों, नावों, आदि से आय, इत्यादि।

जिला बोर्ड द्वारा व्यय की मुख्य मदें ये हैं—शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सड़कों तथा इमारतों की देखभाल, सहायता तथा पानी की सप्लाई।

सरकारी नियंत्रण

सरकार जिला बोर्ड के कार्य पर नियंत्रण रखती है। डिवीजन का कमिश्नर जिला-बोर्ड के बजट की स्वीकृति देता है और उनके हिसाब-किताब की पड़ताल प्रति वर्ष राज्य सरकार करवाती है। राज्य-सरकार किसी भी समय जिला बोर्ड के रिकार्ड की पड़ताल कर सकती है। जिला बोर्ड को अयोग्यता तथा अधिकारों के गलत प्रयोग के अभियोग में मुअत्तिल कर सकती है। जिला बोर्ड के किसी प्रस्ताव को स्थगित अथवा रद्द कर सकती है। जिन जिलों में स्वयं डिप्टी कमिश्नर जिला बोर्ड का अध्यक्ष होता है, वहाँ सरकार का जिला बोर्डों पर बड़ा नियंत्रण रहता है। परन्तु धीरे-धीरे जिला बोर्डों से सरकारी नियंत्रण कम करके उन्हें अधिकाधिक स्वतंत्रता दी जा रही है।

लोकल बोर्ड

उत्तर प्रदेश, पंजाब और बंबई को छोड़कर भारत के प्रत्येक राज्य में लोकल बोर्ड होते हैं। ये लोकल बोर्ड सब-डिवीजन में वही काम करते हैं, जो जिले में जिला बोर्ड। कहीं-कहीं लोकल बोर्ड एक ताल्लुका के लिए स्थापित किया जाता है। असम राज्य में जहाँ जिला बोर्ड नहीं हैं, लोकल बोर्ड ही उनका कार्य करते हैं। मद्रास और बंगाल में ताल्लुका बोर्ड के सदस्य जिला बोर्ड के सदस्य चुनते हैं।

ग्राम पंचायतें

पंचायतें भारत के गाँवों में शताब्दियों से काम कर रही हैं। उन्हें दीवानी तथा फौजदारी दोनों प्रकार के अधिकार प्राप्त थे। इस प्रकार गाँव केन्द्रीय सरकार से एक प्रकार से अलग-अलग स्वतंत्र जीवन व्यतीत करते थे। पंचायतें ही भूमि कर इकट्ठा करके राज्य कोष में जमा करा देती थीं। स्वास्थ्य और सफाई, धार्मिक स्थानों, धर्मशालाओं तथा मेलों इत्यादि का प्रबन्ध करती थीं। पंच निर्वाचित नहीं होते थे। गाँव के कुछ बड़े-बूढ़े तथा संभ्रान्त व्यक्ति पंच बनते थे। लोगों को भी पंचों में पूर्ण विश्वास था। "पंचों में परमेश्वर बसता है", यह कहावत उस जमाने में पंचायतों के महत्व को दरसाती है। सैकड़ों वर्ष बीत गए परन्तु पंचायतों का अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ। भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के बाद गाँवों का यह पृथक अस्तित्व नष्ट हुआ। जगह-जगह अदालतें कायम हो जाने से पंचायतों के हाथ से सत्ता निकल गई। उन्नीसवीं शताब्दी में पंचायतों की शक्ति निरन्तर कम होती गई। परन्तु बीसवीं शताब्दी में शासन में विकेन्द्रीकरण की नई नीति अपनाई गई। १९०९ में विकेन्द्रीकरण पर जो शाही कमिशन बैठा, उसने सिफारिश की कि गाँवों में पंचायतों को पुनः स्थापित किया जाए। परन्तु पंचायतों के पुनर्जन्म के मार्ग में बहुत-सी

कठिनाइयाँ थी। इसलिए यह कार्य १९१९ तक रुका रहा, जब कुछ प्रान्तो में पचायतो के पुन स्थापन के लिए कानून पास किए गए। परन्तु कोई विशेष प्रगति नही हुई। स्वतन्त्रता के बाद भारत के सविधान में यह निर्दिष्ट किया गया कि सरकार देश में ग्राम पचायतो के सगठन के लिए प्रयास करेगी। उन्हें ऐसे अधिकार सौंपे जाएँगे जिनसे वे स्वायत्त शासन की स्वतन्त्र इकाइयों के रूप में काम कर सकें। सविधान के इस निर्देशक सिद्धात के अनुरूप प्राय: भारत के सभी राज्यो में पचायतो की स्थापना कर दी गई है। उन्हें अच्छी तरह काम करने के लिए समुचित अधिकार दिए गए है।

भारत के योजना आयोग (प्लानिंग कमिशन) ने भी राज्यो से आग्रह किया है कि प्रत्येक गाँव या दो-चार गाँवो को मिला कर पचायतें स्थापित की जानी चाहिएँ। मार्च, १९५६ तक भारत में ११७,५९३ पचायतें स्थापित हो चुकी थी। १९६१ में दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्त तक पचायतो की सख्या २,४४,५६४ हो जाने की आशा है। पजाब, उत्तर प्रदेश, मैसूर और केरल के प्राय प्रत्येक गाँव में पचायत स्थापित हो चुकी हैं।

पंचायतो का सघठन

विभिन्न पचायतो में पचो की सख्या अलग-अलग होती है। सामान्यत उनकी सख्या ५ से ९ तक होती है। पंच ३ से ४ साल तक अपने पद पर रहते है। उनका चुनाव पचायत क्षेत्र में रहनेवाले सब वयस्क स्त्री-पुरुषो (२१ वर्ष से अधिक) के वोटो से होता है।

पचायत अपना सरपंच चुनती है जो एक वर्ष तक इस पद पर रहता है। उप-सरपच भी चुना जाता है। सरपच पचायत की बैठक बुलाता है। सब मामलो का फैसला बहुमत से होता है।

पचायतें क्या करती हैं ?

पचायतें दो प्रकार के कार्य करती हैं—शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी तथा अदालती। पचायतो के प्रबन्ध-कार्य निम्न है .

(१) घरेलू प्रयोग के लिए पानी का प्रबन्ध।

(२) गाँवो के सार्वजनिक कुओ, सडको, नालियो तथा अन्य स्थानो की सफाई।

(३) छोटी-मोटी सडको, पुलों तथा नालियों की मरम्मत तथा निर्माण।

(४) गाँव की स्वास्थ्य-रक्षा।

(५) गाँव के स्कूल की देखभाल, पशुओ की चरागाह का नियत्रण तथा गाँव में रोशनी इत्यादि का प्रबन्ध।

पचायतो को गाँव के पुस्तकालय की देखभाल का अधिकार है। वे छोटे-मोटे ग्राम-उद्योग भी शुरू कर सकती है। वे पशुओ की नसल सुधारने का प्रबन्ध करती है। उन्हें स्त्रियो तथा बच्चो की भलाई के केन्द्र चलाने का काम भी सौपा जा सकता है। वे गाँव में मेलो इत्यादि का सगठन कर सकती हैं। गाँव के छोटे-मोटे सरकारी कर्मचारियो, जैसे—चौकीदार, चपरासी, पुलिस के सिपाही आदि के विरुद्ध जाँच करके पचायतें सरकार को शिकायत कर सकती है। वे पटवारी के काम की देखभाल कर सकती हैं। सरकार किसी पचायत को उस जगल या बजर जमीन का प्रबध सौंप सकती है जो गाव की सीमा में स्थित हो। इसी

तरह पचायतो को ग्राम में सिंचाई की सुविधाएँ बढ़ाने अथवा नहरी पानी की उचित तकसीम का काम दिया जा सकता है। पचायतो से आशा की जाती है कि वे गाँव के स्कूल, दवाईखाने या अस्पताल का अच्छी तरह प्रबन्ध चलाएँ तथा सरकारी अधिकारियो को उनके काम में मदद दें।

ग्राम पचायतो से चकबन्दी, सामुदायिक विकास, सहकारिता, भूमि-सुधार, छोटी बचतों इत्यादि के मामलो में भी सहायता ली जा सकती है।

पचायतो को कुछ अदालती अथवा न्याय-सबधी अधिकार भी प्राप्त हैं। वे निम्न प्रकार के मामलों में किसी के विरुद्ध शिकायत सुनकर उसे सजा दे सकती हैं

(१) किसी सार्वजनिक स्थान पर कोई ऐसी कानून-विरुद्ध हरकत करना जिससे लोगो को नाराजगी हो।
(२) जान-बूझकर किसी को चोट लगाना या लोगो को भड़काना।
(३) चोरी के छोटे-मोटे मामले जिसमें चोरी के माल की कीमत ५० रुपये से अधिक न हो।
(४) गाँव की शान्ति-भग करना।
(५) सरकारी समनो की तामील से बचकर भाग जाना।
(६) सरकार के किसी अदालती अधिकारी के काम में रुकावट डालना अथवा उसका अपमान करना।
(७) ऐसी लापरवाही करना जिससे छूतछात की कोई बीमारी फैलने का डर हो।
(८) सार्वजनिक तालाब अथवा कुएँ के पानी को गन्दा करना।

पजाब सरकार ने अपने नए पचायत कानून में इस बात का प्रबन्ध किया है कि पचायतो को इससे भी अधिक अदालती अधिकार दिए जा सकें। पचायतो को ऐसे मुकदमे सुनने का अधिकार दिया जा सकता है जिनमें कैद की सजा दो साल से अधिक न हो। दो सौ रुपए तक के दीवानी या माली मुकदमों का फैसला भी पंचायतें कर सकती हैं। विशेष हालतों में ५०० रुपए तक के ऐसे मुकदमें पचायतो को सौंपे जा सकते हैं। परन्तु डिप्टी कमिश्नर पचायतो की समस्त अदालती कार्रवाइयो की देखभाल करता है। वह पचायत के किसी भी फैसले को रद्द कर सकता है।

पचायत-कोष

पचायतो के काम को चलाने के लिए सरकार ने धन की उचित व्यवस्था कर दी है। गाँव में जितना मालिया अथवा भूमि-कर इकट्ठा होता है, उसका दसवाँ भाग पचायतो को मिलता है। इसके अतिरिक्त सरकार तथा स्थानीय सस्थाओ द्वारा दी गई सब रकमें पचायत-कोष में जमा होती हैं। उन्हें चुल्हा-टैक्स लगाने का अधिकार प्राप्त है। सरकार की आज्ञा से पचायतें कोई नया टैक्स भी लगा सकती हैं। इस नए टैक्स की आमदनी वे जनता की भलाई के किसी काम पर ही खर्च कर सकती हैं। पचायतें यदा-कदा सरकार की आज्ञा लेकर कर्जा भी ले सकती हैं।

थाना पंचायत यूनियन

पजाब के नए पचायत-कानून के अन्तर्गत थाना पचायत यूनियनें भी स्थापित की गई हैं। एक थाना

पचायत यूनियन में उस थाने की सब पचायतो के सरपच शामिल होते हैं। वे अपना एक प्रधान तथा उप-प्रधान चुनते हैं।

सरकार का नियत्रण

पचायतो को उपरोक्त अधिकार दिए गए है, परन्तु इन अधिकारो के क्षेत्र में वे मनमानी नही कर सकती। डिप्टी कमिश्नर ग्राम-पचायत के किसी भी फैसले को रद्द कर सकता है। यदि कोई पचायत अपने कर्त्तव्य निभाने में लापरवाही दिखाए तो वह उसे चेतावनी दे सकता है। सचालक पचायत विभाग, पचायत या थाना पचायत यूनियन के किसी सदस्य को पदच्युत कर सकता है। यदि उस सदस्य के विरुद्ध कोई अभियोग सिद्ध हो जाए, तो उसे सदस्यता से हटाया जा सकता है। राज्य सरकार किसी पचायत को समाप्त भी कर सकती है। *पचायतों के काम-काज की देखभाल के लिए पचायत अफसर नियुक्त हैं।* साल में कम से कम दो बार पचायत के सब मतदाताओ की एक आम सभा होती है। इस सभा मे पचायत की प्रगति के बारे मे रिपोर्ट पढकर सुनाई जाती है और आगामी समय के लिए पचायत का कार्यक्रम निश्चित किया जाता है। लोगो को बताया जाता है कि पचायत ने गत छ महीनो में ग्राम की उन्नति के लिए क्या कुछ किया है और अगले छ महीनों में वह क्या कुछ करनेवाली है।

पचायतो के कार्य पर एक नजर

पिछले कुछ वर्षों में पचायतो के कार्य का अध्ययन करने पर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि पचायतो की सफलता के रास्ते में कुछ मूल अडचनें हैं। ये अडचनें ये है—गाँव में दलबन्दी, पचो में शिक्षा तथा अनुभव का अभाव, पचायतो के पास साधनो की कमी इत्यादि। परन्तु इन त्रुटियो के होते हुए भी पचायतें बडी लाभकारी सिद्ध हुई हैं। उन्होने कृषि के सुधार, सामुदायिक विकास, श्रमदान, भूदान, छोटी बचतो, भूमि की चकबन्दी इत्यादि के मामले में सरकार का महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। १९५७ में शिमले में राज्यो के स्थानीय स्वायत्त शासन मन्त्रियो का एक सम्मेलन हुआ था। इस सम्मेलन मे प्रशासनिक व न्याय सबधी मामलो तथा सामुदायिक विकास और नए सामाजिक ढाँचे की स्थापना के लिए पचायत को आधारभूत इकाई माना गया था। पजाब में पचायतो को आदर्श खेती के फार्म (माडल फार्म) स्थापित करने के लिए कुछ भूमि दी गई है। इससे पचायतो की आय बढेगी। उत्तर प्रदेश में श्रमदान आन्दोलन द्वारा भी पचायतो की आय बढी है। इसमें सदेह नही कि देश के विकास में पचायतें महत्वपूर्ण योग दे सकती है।

गाव के पदाधिकारी

गाँवो में शासन-व्यवस्था बनाए रखने के लिए सरकार ने कुछ पदाधिकारी नियुक्त कर रखे है जैसे लम्बरदार, पटवारी, चौकीदार, ग्रामसेवक और जैलदार।

लम्बरदार

लम्बरदार किसी गाँव का मुख्य अधिकारी होता है। गाँव में उसका बडा मान होता है। उसे जिले का डिप्टी कमिश्नर नियुक्त करता है। उसका कर्त्तव्य है कि गाँव की बडी-बडी घटनाओ के बारे में डिप्टी कमिश्नर और तहसीलदार को सूचना देता रहे। यदि ग्रामवासियो को कोई कष्ट हो तो उन्हें सहायता पहुँचाए। कोई चोरी, झगडा या लडाई हो जाये तो लम्बरदार को बुलाया जाता है। बडे-बडे

कर्मचारियों के आने पर लम्बरदार ही उन्हें गाँव दिखाता है। लम्बरदार का मुख्य कार्य जमींदारों से सरकारी भूमि कर इकट्ठा करके तहसीलदार द्वारा सरकारी खजाने में जमा करवाना है। गाँव में शान्ति बनाए रखना भी उसका काम है। वह गाँव के स्वास्थ्य का ध्यान रखता है। गाँव में जन्म लेने वाले तथा मृत्यु पानेवालों की सूचना भी थाने में देता है। वह सरकारी आज्ञाएँ गाँव के लोगों तक और लोगों की शिकायतें सरकार तक पहुँचाता है। वह गाँव की जनता और सरकार में सम्पर्क स्थापित करता है। लगान अथवा भूमिकर इकट्ठा करने के बदले लम्बरदारको पचोत्तरा अथवा पाँच रुपए प्रति सैकडा पारिश्रमिक मिलता है।

पटवारी

पटवारी गाँव का महत्वपूर्ण सरकारी कर्मचारी है। पटवारी गाँव की सारी भूमि के माप का नक्शा अपने पास रखता है। एक रजिस्टर में गाँव के प्रत्येक जमींदार की भूमि का ब्योरा लिखता है। फसल बोए जाने पर पटवारी सारे गाँव का दौरा करके देखता है कि किस-किस किसान ने अपने खेत में क्या बोया है। फिर उपज और भूमि के अनुसार वह भूमि-कर की पर्चियाँ बनाकर लोगों को देता है और लम्बरदार उन पर्चियों के आधार पर लोगों से लगान वसूल करता है। उसके पास एक और रजिस्टर होता है जिसे रोज-नामचा कहते हैं। इसमें वह गाँव में होनेवाली दैनिक घटनाएँ लिखता रहता है। ग्राम पंचायत, जिला बोर्ड और विधानमण्डल के चुनाव के लिए चुनाव-सूचियाँ भी वही तैयार करता है। भूमि सबधी झगडों को निपटाने के लिए वह अपने पास रखे हुए भूमि-कर के रजिस्टर के आधार पर उचित सलाह देता है। अदालतें जमीन के झगडों के मामलों में पटवारी के रजिस्टर पर बडा भरोसा करती हैं।

पटवारी की नियुक्ति माल-अफसर करता है। उसे सरकारी खजाने से निश्चित वेतन मिलता है।

चौकीदार

चौकीदार गाँव का साधारण परन्तु बडा ही लाभकारी कर्मचारी है। वह रात को जागकर गाँव में पहरा देता है। गाँव के लोगों को चोरी आदि से सावधान रखता है। गाँव के झगडों, अपराधों इत्यादि की सूचना थाने में पहुँचाता है। गाँव में जन्म लेने तथा मरनेवाले लोगों की सूची तारीख सहित वह अपने पास एक रजिस्टर में रखता है। उसे गाँव वालों से चौकीदार-कर लेकर कुछ साधारण वेतन दिया जाता है। इसके अतिरिक्त फसल के समय उसे प्रत्येक जमींदार थोडा-सा अनाज भी देता है। लम्बरदार और पटवारी उसे काम के लिए इधर-उधर भेज सकते हैं।

चौकीदार की नियुक्ति डिप्टी कमिश्नर की अनुमति से गाँव का लम्बरदार करता है।

ग्रामसेवक

अक्तूबर, १९५२ में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार ने सामुदायिक विकास का कार्यक्रम शुरू किया। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का अर्थ है देहाती क्षेत्रों में खेती, शिक्षा, ग्रामोद्योग, स्वास्थ्य, इत्यादि क्षेत्रों में सर्वतोन्मुखी उन्नति करना। इस समय भारत के साढे पाँच लाख गाँवों में से लगभग तीन लाख गाँवों में यह कार्यक्रम फैल चुका है। गाँव में इस कार्यक्रम का प्रतिनिधि ग्रामसेवक होता है। एक ग्रामसेवक पाँच से दस गाँवों के लिए नियुक्त किया जाता है। वह पढा-लिखा व्यक्ति होता है। नियुक्ति से पूर्व उसे ग्राम विकास

के प्रत्येक क्षेत्र में पूरा-पूरा प्रशिक्षण दिया जाता है। उसे सरकारी खजाने से वेतन मिलता है। सरकार का विचार है कि ग्राम विकास के लिए धीरे-धीरे प्रत्येक गाँव में एक ग्रामसेवक रखा जाए।

जैलदार

शासन-प्रबन्ध की सुविधा के लिए ४०-५० गाँवों को मिलाकर एक जैल बना दी जाती है। जैल का मुख्य अधिकारी जैलदार कहलाता है। वह अपने अधीन गाँवों में लम्बरदारों तथा पटवारियों के कार्य की देखभाल करता है। भूमि-सम्बंधी सूचियाँ तैयार करने में वह डिप्टी कमिश्नर की सहायता करता है आय-कर देनेवाले व्यक्तियों की सूची तैयार करता है। शान्ति-व्यवस्था बनाए रखने तथा अपराधियों की खोज में पुलिस की सहायता करता है।

जैलदार की नियुक्ति डिप्टी कमिश्नर करता है। उसे भूमि-कर से प्राय एक प्रतिशत वेतन के रूप में मिलता है। पजाब में जैलदार के पद का नाम बदलकर इलाकेदार कर दिया गया है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय शासन की कौन-कौन सी सस्थाएँ काम कर रही हैं? सक्षेप में उनके कार्यों पर प्रकाश डालो।

(२) पचायत-राज का क्या अर्थ है? पचायतें क्या काम करती हैं? पचायतों की स्थापना से क्या लाभ हुए हैं?

(३) गाँव के पदाधिकारियों के नाम व उनके काम लिखो।

(४) जिला बोर्ड क्या है? उसके कामों का विवरण लिखो।

(५) सक्षिप्त नोट लिखो
ग्रामसेवक, पचोतरा, रोजनामचा, जैलदार, पटवारी और लम्बरदार।

(२) म्युनिसिपल कमेटी पानी पर टैक्स लेती है। जहाँ बिजली का प्रबन्ध कमेटी के हाथ में होता है वहाँ बिजली की कीमत भी वसूल की जाती है।

(३) सरकार म्युनिसिपल कमेटियों को अनुदान या ऋण के रूप में कुछ रकम देती रहती है। ऐसी सहायता कोई विशेष लोक-हितकारी योजना हाथ में लेने पर ही मिलती है।

म्युनिसिपल अधिकारी

प्रत्येक म्युनिसिपल कमेटी का एक प्रधान तथा एक उप-प्रधान होता है जिन्हें कमेटी के सदस्य चुनते हैं। साधारणतया महीने में एक बार कमेटी की बैठक होती है, परन्तु यदि कुल सदस्यों का पाँचवाँ भाग लिखित रूप में कमेटी की विशेष मीटिंग बुलाने का आग्रह करे, तो विशेष बैठक बुलाई जा सकती है। प्रधान कमेटी की कार्रवाई चलाता है और प्रधान की अनुपस्थिति में उप-प्रधान। प्रधान तथा उप-प्रधान दोनों ही ही अवैतनिक पदाधिकारी होते हैं।

प्रत्येक म्युनिसिपल कमेटी में कितने ही स्थायी अधिकारी होते हैं, जो वेतन पर काम करते हैं। प्रति-दिन का काम चलाने के लिये एक सेक्रेटरी होता है। कमेटी का हैल्थआफिसर अथवा स्वास्थ्य अधिकारी शहर के स्वास्थ्य की देखभाल करता है। म्युनिसिपल इंजीनियर सड़कों तथा इमारतों का निर्माण करता है। वाटरवर्क्स इंजीनियर पानी की सप्लाई के लिए उत्तरदायी है। जहाँ बिजली की सप्लाई म्युनिसिपल कमेटी के हाथ में होती है, वहाँ एक म्युनिसिपल इलैक्ट्रिकल इंजीनियर भी होता है।

म्युनिसिपल कमेटियों का कार्य-क्षेत्र दिन-प्रति-दिन बढ़ता जा रहा है। बढ़ते हुए काम की देख-रेख के लिए कई कमेटियाँ बना दी जाती हैं। एक एक्जिक्यूटिव आफीसर सारे काम की देखभाल करता है। उसकी नियुक्ति साधारणतया सदस्यों के ⅔ के बहुमत से होती है। यदि इतना बहुमत किसी को प्राप्त न हो सके तो सरकार स्वयं एक्जिक्यूटिव आफीसर नियुक्त कर देती है। जहाँ-जहाँ भी एक्जिक्यूटिव आफीसर लगाए गए हैं, वहाँ म्युनिसिपल प्रबन्ध में काफी सुधार हुआ है।

म्युनिसिपल कमेटियाँ मनमानी नहीं कर सकतीं। प्रत्येक राज्य में स्वायत्त शासन मंत्री जिले के डिप्टी कमिश्नर तथा डिवीजन के कमिश्नर द्वारा सब स्थानीय संस्थाओं पर नियंत्रण रखता है।

सरकारी नियन्त्रण

म्युनिसिपल कमेटियों के सारे हिसाब-किताब की पड़ताल सरकार करवाती है। कुप्रबन्ध के किसी भी समय म्युनिसिपल कमेटी को हटाया जा सकता है। इस अवस्था में सरकार अपना एक प्रशासक नियुक्त कर देती है।

राज्य सरकार किसी म्युनिसिपल कमेटी के बजट (आय-व्यय का वार्षिक लेखा) में अदल-बदल कर सकती है। जिले का डिप्टी कमिश्नर कमेटी के किसी प्रस्ताव या निर्णय को अस्वीकृत कर सकता है। वह कमेटी से समय-समय पर उसके काम की रिपोर्ट माँगता है और कमेटी के रिकार्ड की पड़ताल कर सकता है।

इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट (सुधार-न्यास)

हम पहले बता चुके हैं कि म्युनिसिपल कमेटियों के कार्य-क्षेत्र का दिन-प्रति दिन विस्तार हो रहा है। अतएव बड़े-बड़े नगरों में वे उन समस्याओं को हल नहीं कर पातीं जो प्रति दिन उनके सम्मुख उपस्थित होती

है। इसलिए नगर की हालत को सुधारने और उन्हें अधिक सुन्दर बनाने के उद्देश्य से कुछ शहरों में इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बनाए गए हैं। ऐसे ट्रस्ट कलकत्ता, बम्बई, कानपुर, दिल्ली, अमृतसर इत्यादि बडे नगरो में होते हैं।

इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट का उद्देश्य सडको को चौडा बनाकर नगर में भीड-भाड कम करना होता है। इसके अतिरिक्त वह खुले तथा हवादार मकान बनाने की योजनाएँ तैयार करता है।

जिन नगरो की जनसख्या २०,००० से कम और १०,००० से ज्यादा हो, वहाँ टाउन एरिया कमेटी स्थापित की जाती है। इसे स्माल टाउन कमेटी भी कहते है। इस कमेटी में ५ से ७ सदस्य होते हैं। टाउन एरिया कमेटी के अधिकार म्यूनिसिपल कमेटी से कम होते हैं। सरकारी नियत्रण अधिक होता है। टाउन एरिया कमेटी के कर्तव्य भी नगरपालिका जैसे होते हैं। परन्तु इसके साधन कम होने के कारण यह अधिक कार्य हाथ में नही ले सकती।

जिन नगरो की आबादी १०,००० से कम और ५,००० से अधिक हो, वहाँ नोटीफाइड एरिया कमेटी स्थापित होती हैं। इसमें तीन या चार सदस्य होते है। एक अध्यक्ष होता है। यह भी टाउन एरिया कमेटी की तरह काम करती है।

छावनी बोर्ड (कन्टोनमेंट बोर्ड)

ऐसे नगरो में जहाँ फौज की छावनियाँ होती हैं, स्थानीय शासन के लिए छावनी बोर्ड स्थापित किए जाते है। छावनी बोर्ड छावनी के क्षेत्र का ही प्रबन्ध करता है, सारे नगर का नही। उदाहरण के रूप में अम्बाला शहर में एक म्यूनिसिपल कमेटी काम करती है, परन्तु अम्बाला छावनी में कन्टोनमेंट बोर्ड का प्रबन्ध है। बोर्ड का अध्यक्ष कोई फौजी अफसर होता है। कुछ सदस्य चुने जाते है और कुछ को सरकार नामजद करती है। यह बोर्ड भी नगरपालिका की तरह रोशनी, पानी, सफाई, स्वास्थ्य इत्यादि का प्रबन्ध करता है।

पोर्ट ट्रस्ट

भारत के कुछ बडे-बडे बन्दरगाहों जैसे कलकत्ता, बम्बई, मद्रास इत्यादि में पोर्ट ट्रस्ट स्थापित हैं। ये ट्रस्ट बन्दरगाहो सबधी समस्याओ को हल करते है। इसके कुछ सदस्य कारपोरेशन द्वारा भेजे जाते है और कुछ राज्य सरकार द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। राज्य सरकार ही पोर्ट ट्रस्ट का अध्यक्ष नियुक्त करती है। पोर्ट ट्रस्ट की आय के मुख्य साधन माल पर कर, जहाजो पर कर, गोदामो के किराए इत्यादि है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) नगरों में कौन-कौन सी स्थानीय संस्थाएँ काम करती है?
(२) कारपोरेशन किसे कहते है? उसके ढाँचे तथा कर्तव्यों का वर्णन करो।
(३) म्यूनिसिपल कमेटी किसे कहते है? म्यूनिसिपल कमेटी क्या काम करती है?
(४) सक्षिप्त नोट लिखो
टाउन एरिया कमेटी, पोर्ट ट्रस्ट, कन्टोनमेंट बोर्ड।
(५) स्थानीय संस्थाओ की क्या समस्याएँ है? उन्हें किस प्रकार अधिक सफल बनाया जा सकता है

: ५ :

हमारा संविधान

संविधान सभा का इतिहास

भारत का संविधान तैयार करने के लिये संविधान सभा स्थापित करने का विचार सर्वप्रथम महात्मा गांधी ने १९२२ में प्रस्तुत किया था। १९३५ में इण्डियन नेशनल कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार से मांग की कि वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित एक संविधान सभा स्थापित की जाए जो भारत का नया संविधान तैयार करे। ब्रिटिश सरकार दूसरे महायुद्ध के अन्त तक इस मांग का विरोध करती रही। तथापि युद्ध के अन्तिम दिनों में सर स्टैफोर्ड क्रिप्स द्वारा प्रस्तुत योजना में ब्रिटिश सरकार ने संविधान सभा का विचार स्वीकार किया। लार्ड पैथिक लारेंस की अध्यक्षता में जो कैबिनेट मिशन भारत आया, उसने संविधान सभा के विचार को मूर्त रूप दिया और अगस्त, १९४६ में भारत का नया संविधान बनाने के लिए संविधान सभा की स्थापना हुई। भारत की संविधान सभा का पहला अधिवेशन ९ दिसम्बर, १९४६ को हुआ। २२ जनवरी, १९४७ को इस सभा ने अपना उद्देश्य सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया। प्रस्तावित संविधान के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में छानबीन करने के लिए कई समितियाँ बनाई गईं। इन समितियों की रिपोर्टों के आधार पर संविधान सभा की प्रारूप समिति ने संविधान का प्रारूप तैयार किया। १५ अगस्त, १९४७ को सत्ता के हस्तान्तरण के फलस्वरूप हमारी संविधान सभा सब बन्धनों से मुक्त हो गई और उसने एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न संस्था के रूप में भारत का संविधान तैयार करने का उत्तरदायित्व सम्भाला। २६ नवम्बर, १९४९ को संविधान सभा ने अन्तिम रूप से भारत का संविधान स्वीकार किया। यह संविधान २६ जनवरी, १९५० को देश में लागू हुआ। इस संविधान में ३९५ अनुच्छेद तथा ८ अनुसूचियाँ हैं।

संविधान का उद्देश्य

संविधान की प्रस्तावना में भारत में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य की घोषणा की गई है। इसका अर्थ है कि भारत अब पूर्ण रूप से आजाद है और इसमें गणराज्य की प्रणाली या लोकतन्त्र स्थापित हुआ है। सम्पूर्ण सत्ता जनता के हाथ में है। संविधान का उद्देश्य देश के नागरिकों के लिए निम्नलिखित बातें सुरक्षित करना है :

(१) न्याय—सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक।

(२) स्वतन्त्रता—विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और उपासना की।

(३) समानता—सामाजिक और अवसर की।

(४) भ्रातृत्व—व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता बढ़ानेवाली बन्धुता को बढ़ाना।

सघ और उसके राज्य

भारत राज्यो का एक सघ है। उसमें १४ राज्य तथा ६ सघीय प्रदेश शामिल हैं। राज्यो के नाम ये हैं—आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, बम्बई, केरल, मध्य प्रदेश, मैसूर, मद्रास, उडीसा, पजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बगाल और जम्मू तथा काश्मीर। दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, मणीपुर, त्रिपुरा, अन्दमन तथा निकोबार द्वीपसमूह और लकादीव, मिनिकाय तथा अमीनोदीवी द्वीपसमूह आदि सघीय क्षेत्र हैं।

नागरिकता तथा मताधिकार

सविधान में सारे देश के लिए एक जैसी नागरिकता की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक व्यक्ति जो भारत में पैदा हुआ हो अथवा सविधान लागू होने से ठीक पहले ५ वर्ष तक भारत का निवासी होने की शर्त्त पूरी करे, वह भारत का नागरिक बन सकता है। पाकिस्तान से आए हुए व्यक्ति भी कुछ शर्तों की पूर्ति पर भारत के नागरिक बन सकते हैं।

मौलिक अधिकार (Fundamental Rights)

सविधान ने भारत के प्रत्येक नागरिक को ७ प्रकार के मूल अधिकार दिए हैं

(१) **समानता का अधिकार**—जाति, धर्म, रग और व्यवसाय के आधार पर किसी व्यक्ति से भेदभाव नही किया जाएगा। राज्य की दृष्टि में सभी नागरिको को एक समान माना गया है। परन्तु पिछडी हुई जातियो को उन्नत करने के लिए थोडे समय के लिए उन्हें कुछ विशेषाधिकार दिए गए हैं। अग्रेजो के समय में जिन लोगो को उपाधियाँ इत्यादि मिली हुई थी, वे समाप्त कर दी गई हैं। सविधान द्वारा छूतछात का निषेध कर दिया गया है। छूतछात के अपराध में लोगो को दण्ड दिया जा सकता है।

स्वतंत्रता

भाषण की धर्म की सभा की

(२) **स्वतन्त्रता का अधिकार**—भारत के सब नागरिको को अपने विचार लिखकर अथवा बोलकर प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता है। लोग इच्छानुसार कोई भी काम-धन्धा अपना सकते हैं और किसी भी धर्म का अनुकरण कर सकते हैं। सकट काल अथवा विशेष परिस्थितियो में नागरिक की इस स्वतन्त्रता पर कुछ रोक *लगाई जा सकती है, परन्तु एक सीमा के अन्दर।*

(३) **शोषण से स्वतन्त्रता का अधिकार**—सविधान के अनुसार सबको काम का पूरा-पूरा प्रतिफल मिलेगा। किसी भी व्यक्ति से बेगार नही ली जाएगी।

(४) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार—प्रत्येक भारतीय नागरिक अपनी इच्छानुसार ईश्वरोपासना कर सकता है। वह जो भी धर्म चाहे, अपना सकता है। किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं कि वह दूसरे के धर्म की निन्दा करे।

(५) संस्कृति तथा शिक्षा सम्बन्धी अधिकार—प्रत्येक नागरिक को अपना विश्वास, संस्कृति, भाषा और लिपि बनाए रखने का अधिकार है। अल्पसंख्यक अपनी रुचि के अनुसार अपनी शिक्षण संस्थाओं को स्थापित कर सकते हैं और चला सकते हैं। राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पानेवाली किसी शिक्षा संस्था में किसी नागरिक के प्रवेश पर धर्म, वंश या जाति के आधार पर रोक नहीं लगाई जा सकती।

(६) सम्पत्ति का अधिकार—संविधान ने राज्य द्वारा किसी को सम्पत्ति से वंचित किए जाने का निषेध कर दिया है। तथापि जनहित की दृष्टि से व्यक्ति की सम्पत्ति पर सरकार कब्जा कर सकती है, पर उसका उचित मुआवजा देना जरूरी है।

(७) संविधानिक उपचारों का अधिकार—प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय के अधिकार मिले हैं। यदि सरकार किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों में हस्तक्षेप करे, तो उस व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने का अधिकार प्राप्त है।

इन व्यवस्था के अन्तर्गत कानून की दृष्टि में प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार प्राप्त हैं। सब पर एक ही तरह का कानून लागू होगा। धर्म, जाति, लिंग अथवा जन्मस्थान के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव नहीं बरता जाएगा।

निर्देशक सिद्धान्त (Directive Principles)

संविधान ने कुछ निर्देशक सिद्धान्त स्वीकार किए हैं। यद्यपि ये सिद्धान्त न्यायालयों द्वारा लागू नहीं किए जा सकते किन्तु राज्य की नीति और नियम बनाते समय उनका ध्यान रखना जरूरी है। मुख्य निर्देशक सिद्धान्त निम्नलिखित हैं

(१) राज्य यथासम्भव ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करने की चेष्टा करेगा जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का पालन हो।

(२) राज्य का कर्तव्य है कि वह प्रत्येक नागरिक को जीवन-यापन के लिए यथेष्ट और समान अवसर दे।

(३) प्रत्येक नागरिक को समान कार्य के लिए समान पारिश्रमिक अथवा वेतन मिले।

(४) देश की आर्थिक क्षमता तथा विकास की सीमा के अनुसार सभी नागरिकों को काम करने का समान अधिकार मिले और बेरोजगारी दूर हो।

(५) बुढ़ापे तथा बीमारी की अवस्था में सबको समान रूप से आर्थिक सहायता मिले।

(६) सब को निर्वाह योग्य मजदूरी मिले।

इन निर्देशों में ऐसे भी अनेक विषय हैं, जिनकी इस देश की जनता दीर्घकाल से माँग करती थी। जैसे —(१) आधुनिक तथा वैज्ञानिक ढंग से कृषि तथा पशु-पालन का संगठन करना, (२) ग्रामीण क्षेत्रों

में कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देना, (३) नशे की चीजो तथा नशेवाली दवाइयो को रोकना, (४) चौदह साल की आयु तक के सभी बच्चो के लिए नि शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना, (५) ग्राम पचायतें बनाना (६) रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना, (७) राष्ट्रीय और ऐतिहासिक महत्व के स्मारकों का सरक्षण एव दुधारु और वाहक पशुओ के वध का निषेध।

देश की उच्च सदाचारिक परम्पराओ और उसकी विश्वशान्ति की इच्छा को दृष्टिगत रखते हुए निर्देश दिया गया है कि भारत अपनी विदेश नीति द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने का सदा प्रयास करेगा।

राजभाषा

सविधान के अनुसार देवनागरी में लिखित हिन्दी सघ की सरकारी भाषा होगी। सरकारी उद्देश्यो के लिए भारतीय अको के अन्तर्राष्ट्रीय रूप का प्रयोग होगा। परन्तु १५ वर्ष तक सघ के सब अधिकृत कार्यों के लिए अग्रेजी भाषा का प्रयोग होता रहेगा।

सविधान की विशेषताएं

भारतीय सविधान का ढाँचा सघीय है। इसके दो क्षेत्र हैं—सघ और उसकी इकाइयाँ राज्य। दोनो के अधिकार क्षेत्रों का उल्लेख स्पष्ट रूप मे सविधान में कर दिया गया है। एक स्वतन्त्र न्यायपालिका (जूडिशियरी) की व्यवस्था की गई है। यह न्यायपालिका सविधान की सुरक्षा तथा केन्द्र और राज्यो के बीच उठनेवाले विवादो का निर्णय करेगी। परन्तु भारत सघ अमेरिका की तरह पूर्ण रूप से सघीय नही। राज्य केन्द्र से अलग-अलग इकाइयाँ नही हैं। यद्यपि सविधान के अन्तर्गत सभी राज्यो को अपने क्षेत्र में पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त है, किन्तु सकट के समय राज्य सरकारो को भग किया जा सकता है। राष्ट्रपति को विशेष अधिकार प्राप्त हैं जिनके प्रयोग से वह आवश्यकता पडने पर राज्यो का शासन अपने हाथ में ले सकता है।

हमारा सविधान लचकदार (Flexible) है। यदि सविधान में कभी परिवर्तन की आवश्यकता पडे, तो ससद के दोनों सदनो के दो-तिहाई मत से तुरन्त सशोधन किया जा सकता है। सविधान में सशोधन की एक सरल प्रक्रिया अपनाई गई है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि ससद की स्वीकृति मे अब तक हमारे सविधान में ७ सशोधन कानून पास हो चुके हैं।

अन्य सघ राज्यो की भाँति भारत में दोहरी नागरिकता नही है। प्रत्येक भारतीय चाहे वह भारत के किसी भी राज्य का रहनेवाला हो, उसे सारे भारत में समान अधिकार प्राप्त हैं। सविधान में नागरिको के मूल अधिकार निश्चित करके बडा उपकार किया गया है। सारे सघ राज्यो में एक ही प्रकार की न्याय व्यवस्था स्थापित करके देश की एकता को बल दिया गया है। हमारे सविधान का आधार राष्ट्रीय है। साम्प्रदायिक निर्वाचन का अन्त कर दिया गया है। पिछडी हुई जातियो को थोडी देर के लिए कुछ विशेषाधिकार दिए गए है, परन्तु वे केवल अल्पकालिक हैं। धर्म के आधार पर किसी से भेदभाव नही रखा गया। एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र की स्थापना हुई है। अस्पृश्यता का अन्त किया गया है और ग्राम पंचायतो द्वारा ग्राम स्वराज्य की ओर एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है।

इस संविधान की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि किसी भी राज्य को संघ से अलग होने और अपना स्वतन्त्र विधान बनाने का अधिकार नहीं। यह एक अविछिन्न संघ है। परन्तु संसद की अनुमति से राज्यों की सीमा में अदल-बदल हो सकती है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारतीय संविधान कब स्वीकृत हुआ था? इसमें किस प्रकार के राज्य की कल्पना की गई है?

(२) भारतवर्ष के संविधान में कौन से मूल अधिकार स्वीकृत हुए हैं? विस्तार से लिखो।

(३) निर्देशक सिद्धान्त क्या होते हैं? भारत के संविधान में किन निर्देशक सिद्धान्तों का वर्णन है?

(४) भारतीय संविधान की क्या विशेषताएँ हैं? उदाहरण देकर बताओ।

(५) मूल अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों में क्या अन्तर है? उदाहरण देकर लिखो।

: ६ :

संघ (केन्द्रीय) शासन

भारत कई राज्यों का संघ है। १ नवम्बर, १९५६ से पूर्व भारत में चार प्रकार के राज्य थे। 'क' श्रेणी (Part A States) के १० राज्य थे—बम्बई, मद्रास, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, उड़ीसा, असम, मध्य प्रदेश और आन्ध्र।

'ख' श्रेणी के राज्य (Part B States) पहले देशी राज्य थे या कई देशी राज्यों को मिलाकर बनाए गए थे। इनके नाम ये थे—हैदराबाद, मैसूर, जम्मू-काश्मीर, राजस्थान, मध्य भारत, पेप्सू, सौराष्ट्र और त्रिवांकुर कोचीन।

'ग' श्रेणी के राज्य (Part C States) केन्द्र द्वारा शासित राज्य थे जैसे—दिल्ली, अजमेर, कुर्ग, विन्ध्य प्रदेश आदि।

चौथी श्रेणी में अन्दमान तथा निकोबार द्वीपसमूह थे।

भारत के इन राज्यों की सीमाएँ शासनिक सुविधाओं को सामने रख कर निर्धारित की गई थी। राज्यों के निर्माण में भाषा तथा संस्कृति की एकता का कोई ध्यान नहीं रखा गया था। स्वतन्त्रता से पूर्व कांग्रेस ने अपने उद्देश्य-पत्र में घोषणा कर रखी थी कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद देश में राज्यों को भाषा तथा संस्कृति के आधार पर संगठित किया जाएगा। स्वतन्त्रता के बाद कुछ राज्यों में भाषा के आधार पर राज्य बनाने के आन्दोलन ने जोर पकड़ा—विशेष रूप से मद्रास राज्य के तेलुगु भाषी क्षेत्र में। ये लोग तेलुगु भाषी लोगों का पृथक् आन्ध्र प्रदेश बनाना चाहते थे। जगह-जगह दंगे हुए। अन्त में सरकार ने तेलुगु भाषी आन्ध्र प्रदेश स्थापित करने की माँग स्वीकार कर ली। इसके साथ ही भारत सरकार ने राज्य पुनर्गठन के प्रश्न पर विचार करने के लिए नवम्बर, १९५३ में राज्य पुनर्गठन आयोग की स्थापना की। इस आयोग के तीन सदस्य थे—सैयद फजलअली (अध्यक्ष), श्री हृदयनाथ कुंजरू और श्री के० एम० पणिक्कर। आयोग ने १०४ स्थानों का दौरा किया और ९,००० से अधिक व्यक्तियों से बातचीत की। डेढ़ लाख से ज्यादा प्रार्थनापत्रों, स्मरण-पत्रों इत्यादि पर विचार किया। ३० सितम्बर, १९५५ को इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट पेश की। साधारण परिवर्तन के पश्चात् संसद ने इस आयोग की सभी सिफारिशें मान लीं। १ नवम्बर, १९५६ को नए कानून के अनुसार राज्यों का पुनर्गठन हुआ।

इस पुनर्गठन के फलस्वरूप अब भारत संघ में १४ राज्य तथा केन्द्रीय प्रशासित ६ प्रदेश हैं। पुनर्गठन विधेयक द्वारा असम, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और जम्मू व काश्मीर की सीमाओं में कोई अदल बदल नहीं किया गया। पुराने तिरुवांकुर-कोचीन राज्य ने केरल का रूप धारण किया। आन्ध्र राज्य में कुछ और इलाका मिला कर इसे आन्ध्र प्रदेश का नाम दिया गया। कन्नड़ भाषी लोगों को मैसूर राज्य के अन्तर्गत इकट्ठा

कर दिया गया है। पुनर्गठन आयोग ने बम्बई और विदर्भ के दो अलग-अलग राज्य बनाने का सुझाव दिया था, परन्तु संसद ने बम्बई और विदर्भ को मिलाकर विशाल बम्बई राज्य स्थापित किया है। हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, मणीपुर, त्रिपुरा, लकादीव, मिनिकाय तथा अमीनीदीवी द्वीप समूह केन्द्रीय प्रदेश रहेंगे।

राज्य	क्षेत्रफल (वर्गमीलों में)	जनसंख्या (लाखों में)
अन्दमान तथा निकोबार द्वीपसमूह	३,२१५	०.३
दिल्ली	५७८	१७.४
हिमाचल प्रदेश	१०,६००	११.०
लकादीव, अमीनदीवी तथा मिनिकाय द्वीप	१०	०.२
मणिपुर	८,६२८	५.७
त्रिपुरा	४,०३२	६.३
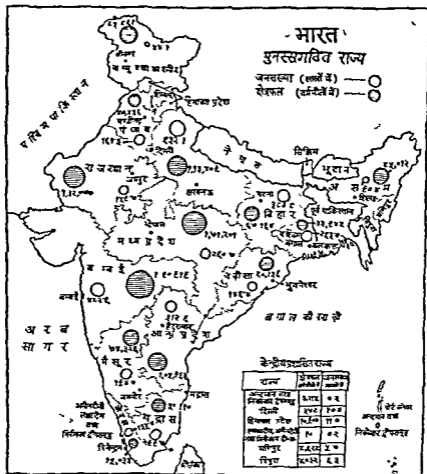
हिमाचल प्रदेश, मणीपुर और त्रिपुरा के केन्द्रीय प्रदेशों में प्रादेशिक समितियाँ स्थापित की गई हैं और दिल्ली में एक कारपोरेशन बना दिया गया है। इन संस्थाओं के सदस्य वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने जाते हैं।

राज्यों का अलग-अलग क्षेत्रफल और उनकी जनसंख्या इस प्रकार है .

राज्य	क्षेत्रफल (वर्गमीलों में)	जनसंख्या	राजधानी
१ आन्ध्र प्रदेश	१,०५,९६३	३,१२,६०,६०५	हैदराबाद
२ असम	८५,०१२	९०,४३,७०७	शिलांग
३. बिहार	६७,३००	३,८७,७९,५६२	पटना
४. बम्बई	१,९०,९१९	४,८२,६३,५१५	बम्बई
५ जम्मू तथा काश्मीर	९२,७८०	४४,१०,०००	श्रीनगर
६ केरल	१५,०३५	१,३५,५०,९३१	त्रिवेन्द्रम
७ मध्य प्रदेश	१,७१,२०१	२,६०,७२,३४०	भोपाल
८. मद्रास	५०,११०	२,९९,७४,१५५	मद्रास
९. मैसूर	७४,३२६	१,९३,९९,३६३	बंगलोर
१० उड़ीसा	६०,१३६	१,४६,४५,९४६	भुवनेश्वर
११ पंजाब	४७,४५६	१,६१,३४,८९०	चंडीगढ़
१२ राजस्थान	१,३२,०७८	१,५९,७१,९९७	जयपुर
१३ उत्तर प्रदेश	१,१३,४०९	६,३२,१५,७४२	लखनऊ
१४ पश्चिम बंगाल	३३,८०५	२,६३,०६,६०२	कलकत्ता
१ अन्दमन और निकोबार द्वीपसमूह	३,२१५	३०,९७१	पोर्ट ब्लेयर
२. दिल्ली	५७८	१७,४४,०७२	दिल्ली
३. हिमाचल प्रदेश	१०,९०४	११,०९,४६६	शिमला
४ लकादीव, मिनिकाय और अमीनीदीवी द्वीप समूह	१०	२१,०४१	——
५. मणीपुर	८,६२८	५,७७,६३५	इम्फाल
६ त्रिपुरा	४,०३२	६,३९,०२९	अगरतल्ला

क्षेत्रीय परिषद (Zonal Councils)

राज्यों में आपसी सहयोग बढ़ाने तथा आपसी मतभेद दूर करने के लिए पाँच क्षेत्रीय परिषदों की स्थापना की गई है

(१) उत्तरी क्षेत्र में पंजाब, हिमाचल प्रदेश, काश्मीर, दिल्ली और राजस्थान।

(२) केन्द्रीय क्षेत्र में उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश।

(३) पूर्वी क्षेत्र में विहार, उड़ीसा, पश्चिम वगाल, असम, उत्तर पूर्वी सीमान्त एजेंसी, त्रिपुरा और मणीपुर।

(४) पश्चिमी क्षेत्र में वम्वई और मैसूर।

(५) दक्षिणी क्षेत्र में आन्ध्र, मद्रास, और केरल।

पजाव में विधान सभा की दो प्रादेशिक समितियाँ (Regional Committees) स्थापित की गई हैं। इनमें से एक समिति पजाव के हिन्दी भाषी इलाके का प्रतिनिधित्व करेगी और दूसरी पजावी भाषी क्षेत्र का। विधान सभा के हिन्दी भाषी इलाके से निर्वाचित सदस्य हिन्दी भाषी प्रादेशिक समिति के सदस्य होंगे और पजावी भाषी इलाके से निर्वाचित सदस्य पजावी क्षेत्रीय समिति के। मुख्य मंत्री किसी भी समिति का सदस्य नहीं होगा।

राज्य पुनर्गठन के परिणामस्वरूप देश में छोटे-छोटे राज्य समाप्त करके वड़े-वड़े राज्य स्थापित हुए हैं। वडे राज्यों में आर्थिक विकास आसानी से हो सकता है और राष्ट्रीयता की भावना को प्रोत्साहन मिलता है। राजप्रमुखों को हटा दिया गया है। काश्मीर को छोड़कर प्रत्येक राज्य के लिए अब राज्यपाल अथवा गवर्नर की नियुक्ति हुई है।

सघ कार्यपालिका (Union Executive)

संविधान के अनुसार भारत सरकार की रचना ससदात्मक (Parliamenatry) ढंग की है। भारतीय ससद के दो सदन हैं—लोकसभा और राज्य सभा। सघ की शासन व्यवस्था चलाने का काम सघ की कार्यपालिका करती है। हमारे गणराज्य की कार्यपालिका में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति तथा प्रधान मन्त्री के नेतृत्व में एक मन्त्रिपरिषद सम्मिलित है। प्रत्येक मन्त्री एक या एक से अधिक विभागों की देखभाल करता है। मन्त्रिपरिषद सामूहिक रूप से ससद की लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है। दूसरे शब्दों में यदि एक मन्त्री कोई भूल करता है, तो सारी मन्त्रिपरिषद उसके लिए उत्तरदायी होती है।

राष्ट्रपति

राष्ट्रपति भारतीय सघ का वैधानिक शासक है। २६ जनवरी, १९५० से पहले भारत सरकार का सबसे बडा अधिकारी गवर्नर जनरल होता था। १५ अगस्त, १९४७ को जब देश स्वतन्त्र हुआ, तो भारत ने लार्ड माउण्टबेटेन को ही स्वतन्त्र भारत का गवर्नर-जनरल रखा। लार्ड माउण्टबेटेन के रिटायर होने पर श्री चक्रवर्ती सी० राजगोपालाचारी भारत के पहले गवर्नर-जनरल बने। देश में नए सविधान के अनुसार गवर्नर-जनरल का पद हटाकर राष्ट्रपति का नया पद स्थापित किया गया। डा० राजेन्द्रप्रसाद २६ जनवरी, १९५० को भारत के पहले राष्ट्रपति बने।

भारत में राष्ट्रपति का वही स्थान है जो ब्रिटिश सविधान में ब्रिटिश सम्राज्ञी का। वह राष्ट्र का मुखिया है, परन्तु कार्यपालिका का मुखिया नही। कार्यपालिका के सब अधिकार प्रधान मंत्री और उसके मन्त्रिपरिषद में निहित हैं। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है, परन्तु शासक नही।

वह केन्द्रीय ससद के दोनो सदनों के सदस्यो तथा राज्यो की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्यो के

सम्मिलित मण्डलों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली (Proportional Representation) द्वारा चुना जाता है।

योग्यता तथा कार्यकाल

भारत का कोई भी नागरिक जिसकी आयु ३५ वर्ष से कम न हो और जो संसद की लोकसभा का सदस्य चुने जाने की शर्तों को पूरा करता हो, राष्ट्रपति के पद के लिए उम्मीदवार खड़ा हो सकता है। राष्ट्रपति संसद के किसी सदन अथवा राज्य के विधान-मण्डल का सदस्य नहीं रह सकता। कोई सरकारी कर्मचारी इस पद के लिए उम्मीदवार खड़ा नहीं हो सकता।

राष्ट्रपति पाँच वर्ष के लिये चुना जाता है। पाँचवें वर्ष, चुनाव अवधि पूरी होने से पहले ही इस पद के लिए फिर चुनाव होता है। एक व्यक्ति दो बार राष्ट्रपति चुना जा सकता है। राष्ट्रपति का वेतन १०,००० रुपये प्रति मास होता है। उसको एक सरकारी निवासस्थान तथा अन्य सुविधाएँ प्राप्त होती हैं।

अधिकार

राष्ट्रपति जल, थल और नभ की सेनाओं का प्रधान सेनापति है। वह राज्यपालों, राजदूतों, न्यायाधीशों तथा संघीय लोक सेवा आयोग के सदस्यों इत्यादि की नियुक्ति करता है। राष्ट्रपति चुनाव, वित्त तथा हर प्रकार के अन्य कमीशन नियुक्त करता है। विदेशों से आए हुए राजदूतों को वह स्वीकार करता है। उसे कोई सजा माफ करने या घटाने का अधिकार प्राप्त है।

राष्ट्रपति को संसद के दोनों सदनों का अथवा किसी एक सदन का अधिवेशन बुलाने अथवा स्थगित करने और उसमें भाषण देने का अधिकार है। वह लोक सभा को भंग कर सकता है।

संसद जो बिल पास करती है, वे राष्ट्रपति के पास जाते हैं। राष्ट्रपति चाहे तो किसी बिल पर पुनर्विचार के लिये उसे वापस लौटा सकता है। परन्तु यदि संसद एक बिल को दो बार पास कर दे, तो राष्ट्रपति उसे अस्वीकार नहीं कर सकता।

जब संसद का अधिवेशन न हो रहा हो, तो राष्ट्रपति अध्यादेश (आर्डिनेन्स) जारी कर सकता है।

वित्तीय अधिकार राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना संसद किसी प्रकार के व्यय के लिए कोई धन स्वीकार नहीं कर सकती। आय-कर से जो धन प्राप्त होता है, उसको राज्यों में बाँटने का अधिकार भी राष्ट्रपति को ही प्राप्त है।

विशेषाधिकार —राष्ट्रपति को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं। संकट की अवस्था में वह सारे देश के किसी भाग का शासन अपने हाथ में ले सकता है। यदि किसी राज्य में वैधानिक शासन चलाने में कोई बाधा हो, तो राष्ट्रपति उस राज्य का शासन स्वयं सम्भाल लेता है। युद्ध, आक्रमण, विप्लव और अर्थ-संकट इत्यादि की अवस्था में राष्ट्रपति को बड़े विस्तृत अधिकार प्राप्त हैं। ऐसी अवस्था में वह सारे देश अथवा देश के किसी राज्य का शासन ६ महीने के लिए अपने हाथ में ले सकता है। संसद की स्वीकृति से राष्ट्रपति के शासन का कार्य-काल छ-छ महीने करके तीन साल तक बढ़ाया जा सकता है।

उप-राष्ट्रपति

संविधान के अनुसार भारत का एक उप-राष्ट्रपति भी होता है। उसे संसद के दोनों सदनों के सदस्य एक संयुक्त अधिवेशन में आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर चुनते हैं। उप-राष्ट्रपति भी ३५ वर्ष की आयु से कम नहीं होना चाहिए। उप-राष्ट्रपति बनने के लिए भी वही योग्यताएँ जरूरी हैं, जो राष्ट्रपति के चुनाव के लिये हैं। उप-राष्ट्रपति का कार्य-काल भी पाँच वर्ष का होता है। वह पदेन राज्य-सभा का सभापति होता है। राष्ट्रपति की बीमारी, अस्वस्थता अथवा किसी कारण से कार्य न कर सकने की अवस्था में उप-राष्ट्रपति राष्ट्रपति के रूप में काम करता है।

मन्त्रिपरिषद

संविधान में एक मन्त्रिपरिषद् की व्यवस्था की गई है, जो राष्ट्रपति को उनके कार्य-संचालन में सहायता तथा परामर्श देती है। प्रधान मंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। प्रधान मंत्री अन्य मंत्रियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को परामर्श देता है। यद्यपि मन्त्रिपरिषद का कार्य-काल राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर है, तथापि जब तक मन्त्रिपरिषद को लोकसभा का बहुमत प्राप्त है, उसे हटाया नहीं जा सकता। प्रत्येक मन्त्री के लिये संसद के किसी एक सदन का सदस्य होना जरूरी है। यदि कोई मंत्री सदन का सदस्य न हो, तो ६ महीने के अन्दर उसे किसी एक सदन का सदस्य निर्वाचित होना पड़ेगा। अन्यथा वह मन्त्री परिषद का सदस्य नहीं रह सकता।

मन्त्रियों को निश्चित मासिक वेतन और भत्ता आदि मिलता है। राष्ट्रपति प्रधान मंत्री द्वारा किसी भी मन्त्री को पदच्युत करा सकता है। प्रधान मंत्री मन्त्रियों में विभाग बाँट देता है। प्रत्येक मंत्री अपने विभाग के लिए [illegible] जिम्मेदार होता है, परन्तु मन्त्रिपरिषद लोकसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। यदि [illegible]रिषद को लोक सभा में बहुमत प्राप्त नहीं रहा, तो उसे त्यागपत्र देना पड़ता है। तदोपरांत राष्ट्रपति [illegible]सभा के उस सदस्य को मन्त्रिपरिषद बनाने का निमंत्रण देते हैं जिसे बहुमत प्राप्त होने की सम्भावना हो।

शासन-व्यवस्था का भार मन्त्रिपरिषद् पर है। जो कानून संसद पास करे, उन्हें मन्त्रिपरिषद् कार्यान्वित करती है। वह राज्य की व्यवस्था के लिये संसद के सम्मुख कानून तथा बजट पेश करती है। प्रधान मंत्री राष्ट्रपति को राज्य की नीति और विभागों के कार्यों से अवगत कराता रहता है। मन्त्रिपरिषद् देश की आर्थिक अवस्था पर नियंत्रण रखती है और संसद के सदस्यों के आक्षेपों का उत्तर देती है। मन्त्री देश की उन्नति के लिए विकास योजनाएँ तैयार करते हैं। सच तो यह है कि देश की सारी शासन-व्यवस्था का भार मन्त्रिपरिषद के कन्धों पर होता है।

प्रधान मन्त्री और उसके कर्तव्य

प्रधान मन्त्री मन्त्रिपरिषद का नेता होता है। वह राष्ट्रपति और मन्त्रिपरिषद के मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को मन्त्रिपरिषद बनाने का निमन्त्रण देता है।

प्रधान मंत्री किसी एक सदन के सदस्यों में से चुना जा सकता है। परन्तु सामान्यतः प्रधानमन्त्री लोकसभा का सदस्य होता है। प्रधान मंत्री के कर्तव्य निम्नलिखित हैं।

(१) **मन्त्रिपरिषद बनाना**—राष्ट्रपति प्रधान मंत्री की सलाह से मन्त्री नियुक्त करता है। राष्ट्रपति को मन्त्री नियुक्त करने का जो अधिकार है, वह केवल नाम का ही अधिकार है। वास्तव में प्रधान मंत्री ही मंत्री नियुक्त करता है। प्रधान मन्त्री जब चाहे तब मन्त्रिपरिषद में अदल-बदल कर सकता है।

(२) **मन्त्रिपरिषद की प्रधानता**—प्रधान मन्त्री मन्त्रिपरिषद की बैठकों का सभापति होता है। इस तरह वह संसद और मन्त्रिपरिषद के बीच सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है। वह इस बात का निश्चय करता है कि मन्त्रिपरिषद की बैठक में किन बातों पर बहस हो और किन विषयों पर विचार किया जाए। विभिन्न मन्त्रियों के बीच मतभेद पैदा होने पर वह अन्तिम निर्णय देता है।

(३) **लोकसभा का नेतृत्व**—लोकसभा के नेता के रूप में प्रधान मंत्री सरकार की महत्वपूर्ण नीतियों के बारे में प्रमुख घोषणाएँ करता है।

(४) **नियुक्तियाँ**—प्रधान मंत्री विभिन्न भागों के सचिवों तथा अध्यक्षों की नियुक्ति की स्वीकृति देता है। राज्यपालों, राजदूतों तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भारत के प्रतिनिधियों की नियुक्ति के बारे में वह राष्ट्रपति को सलाह देता है।

(५) **राष्ट्रपति और मन्त्रिपरिषद के मध्य सम्पर्क**—प्रधान मन्त्री राष्ट्रपति और मन्त्रिपरिषद के मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। वह राष्ट्रपति का मुख्य सलाहकार है। राष्ट्रपति सब मामलों में उसकी सलाह पर चलता है।

प्रधान मन्त्री सब मन्त्रालयों के काम की साधारण देख-भाल करता है। थोड़े शब्दों में यह कहना उचित होगा कि प्रधान मंत्री ही देश का वास्तविक शासक होता है। शासन का कार्य भार वह अपने मन्त्रियों के सहयोग से चलाता है। मन्त्रियों से उसका बराबर का सम्बन्ध होता है, न कि अफसर और अधीन का। वह मन्त्रिपरिषद का मुख्य स्तम्भ है। वह इसे बनाता है वह ही इसके जीवन तथा समाप्ति के लिये जिम्मेदार है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में राज्यों का पुनर्गठन कैसे हुआ है? नए राज्यों के नाम बताओ। उनकी राजधानियों के नाम भी लिखो।

(२) कार्यपालिका किसे कहते हैं? कार्यपालिका के मुख्य अंग क्या हैं?

(३) भारत के राष्ट्रपति को किस तरह चुना जाता है? उसके क्या अधिकार हैं?

(४) भारत का प्रधान मंत्री कैसे बनता है? प्रधान मंत्री के क्या अधिकार हैं? देश की शासन-व्यवस्था में उसकी क्या स्थिति है?

(५) संक्षिप्त नोट लिखो :—

उप-राष्ट्रपति, मन्त्रिपरिषद, प्रादेशिक समितियाँ, क्षेत्रीय परिषद, राज्य पुनर्गठन आयोग।

: ७ :

संसद (पार्लियामेंट)

आप प्रति दिन समाचारपत्रों में पढ़ते हैं कि भारतीय संसद ने अमुक कानून पास किया। संसद ने अमुक बिल अस्वीकृत कर दिया। क्या आपने कभी यह जानने की चेष्टा की है कि हमारे देश की संसद का क्या रूप है? उसके सदस्य कैसे चुने जाते हैं? और वे लोग कानून किस प्रकार बनाते हैं?

संसद केन्द्रीय विधानमण्डल का नाम है। अंग्रेजी में हम इसे पार्लियामेन्ट कहते हैं। हमारी पार्लियामेंट का ढांचा भी ब्रिटिश पार्लियामेंट जैसा है। इसके दो सदन हैं—उच्च सदन जिसे राज्य सभा अथवा कौंसिल आफ स्टेट्स कहते हैं और निम्न सदन जिसे लोकसभा अथवा हाउस आफ रिप्रेजेन्टेटिव्ज का नाम दिया जाता है। राष्ट्रपति और ये दोनों सदन मिलकर संसद का रूप धारण करते हैं। इन सदनों द्वारा स्वीकृत प्रत्येक विधेयक तबतक कानून नहीं बन सकता, जब तक राष्ट्रपति उसकी औपचारिक अनुमति न दे दें। साधारणतया राष्ट्रपति दोनों सदनों द्वारा पास बिल की स्वीकृति नहीं रोकते परन्तु उनकी औपचारिक अनुमति जरूरी है। यह परम्परा भी हमने ब्रिटिश पार्लियामेंट से ली है जहाँ पार्लियामेंट द्वारा पास प्रत्येक बिल औपचारिक स्वीकृति के लिए सम्राट या साम्राज्ञी के पास जाता है।

राज्य सभा

राज्य सभा में संघ के विभिन्न राज्यों तथा अन्य प्रदेशों के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। यह एक स्थायी संस्था है। जिसके २५० सदस्य होते हैं। एक तिहाई सदस्य हर दो साल बाद रिटायर हो जाते हैं। राष्ट्रपति १२ सदस्यों को देश के उन गणमान्य व्यक्तियों में से मनोनीत करते हैं, जो विज्ञान, साहित्य, कला, समाज सेवा इत्यादि के क्षेत्र में ख्यातिप्राप्त हों। राज्य पुनर्गठन विधेयक के अन्तर्गत राज्य सभा के सदस्यों की संख्या २३२ निर्धारित हुई थी जिनमें से १२ राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। उनका चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से राज्य के विधानमंडलों के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली से होता है। उप-राष्ट्रपति अपने पदाधिकार से राज्य सभा के अध्यक्ष होते हैं। सदस्य एक उप-सभापति भी चुनते हैं, जो सभापति की अनुपस्थिति में राज्य सभा का कार्य-संचालन करते हैं। इस समय उप-राष्ट्रपति डा० सर्वपल्लि राधाकृष्णन राज्यसभा के अध्यक्ष हैं।

लोकसभा

संविधान में लिख दिया गया है कि भारत के १४ राज्यों से निर्वाचित लोकसभा के अधिक से अधिक सदस्य ५०० होंगे। ये वयस्क मताधिकार के आधार पर राज्यों के निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष चुनाव से निर्वाचित होते हैं। निर्वाचन क्षेत्र ऐसे ढंग से बनाए गए हैं कि प्रत्येक ५ से ७॥ लाख लोगों के पीछे एक सदस्य चुना जाए। इसके अतिरिक्त केन्द्र द्वारा शासित प्रदेशों के प्रतिनिधित्व के लिए ज्यादा से ज्यादा २० सदस्य

संसद

राज्य परिषद
अधिकतम सदस्य संख्या २५०
१२ सदस्य राष्ट्रपति द्वारा नाम निर्दिष्ट
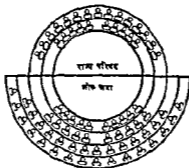
शेष राज्यों के प्रतिनिधि
उपराष्ट्रपति पदेन
राज्यपरिषद का सभापति है

लोक सभा

५०० सदस्य, जो प्रति पांच वर्ष पश्चात वयस्क मताधिकारियों द्वारा निर्वाचित किये जायेंगे। प्रत्येक सदस्य ५ लाख से ७।। लाख लोगों तक का प्रतिनिधि होगा।

लोक सभा बजट स्वीकृत करती है, और उसे ही वित्तीय मामलों में सर्वोच्च अधिकार प्राप्त है।

संसद के दोनों सदनों का अधिवेशन वर्ष में कम से कम दो बार अवश्य होगा।

संसद संघ सूची और समवर्ती सूची में उल्लिखित किसी विषय पर विधि का निर्माण कर सकती है।

वह राज्य सूची के भी किसी विषय पर विधि का निर्माण कर सकती है यदि राज्य परिषद दो तिहाई के बहुमत से उसे राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक घोषित कर दे।

यदि राष्ट्रपति आपात अवस्था की घोषणा कर दे तो संसद राज्य सूची के किसी भी विषय पर विधि निर्माण कर सकती है।

संसद द्वारा निर्धारित विधि से चुने जा सकते हैं। वर्तमान लोकसभा के सदस्यों की संख्या ५०५ है। ५०० राज्यों तथा केन्द्रीय शासित प्रदेशों से निर्वाचित हैं और ५ एंग्लो-इण्डियन लोगों, असम के कबायली लोगों तथा अन्दमान, लकादीव, मिनिकाय आदि द्वीपसमूहों के रहनेवाले लोगों के प्रतिनिधित्व के लिए राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए गए हैं।

कार्यकाल

लोकसभा का कार्यकाल यदि इसे समय से पूर्व भंग न किया जाए, तो ५ वर्ष होता है। परन्तु संकट काल में इसका कार्य एक समय एक साल तक बढ़ाया जा सकता है। इसका अधिवेशन साल में दो बार अवश्य होता है। दो अधिवेशनों के बीच छ मास से ज्यादा की अवधि नहीं हो सकती। प्रत्येक बात का फैसला बहुमत से होता है। सभा का कोरम १० प्रतिशत है। अर्थात् संसद की कार्रवाई जारी रखने के लिए १० प्रतिशत सदस्यों का बैठक में उपस्थित होना आवश्यक है।

योग्यता

लोकसभा का सदस्य बनने के लिए निम्न योग्यताएँ होनी चाहिए .

(१) भारत का नागरिक हो, (२) २५ वर्ष से कम आयु न हो। यदि कोई व्यक्ति सरकारी नौकर हो, दिवालिया हो, किसी दूसरे देश का नागरिक बन गया हो, अथवा पागल हो जाए तो वह लोकसभा का सदस्य नहीं बन सकता। राज्य सभा की सदस्यता के लिये ३० वर्ष की आयु होना जरूरी है।

लोकसभा के अधिकारी

लोकसभा के मुख्य अधिकारी ये हैं—अध्यक्ष (स्पीकर) और उपाध्यक्ष (डिप्टी स्पीकर)। लोकसभा अपने सदस्यों में से एक को अध्यक्ष और एक को उपाध्यक्ष चुनती है। इस समय लोकसभा के अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम आयंगार हैं और उपाध्यक्ष सरदार हुकमसिंह। अध्यक्ष लोकसभा का सभापतित्व करता है। वह भवन में अनुशासन स्थापित रखता है तथा भवन के नियमों और गौरव का संरक्षण करता है। वह वक्ताओं को बोलने का अवसर देता है। वह सदन में विधेयकों तथा अन्य विषयों पर मतदान कराता है और मतदान के परिणाम की घोषणा करता है। अध्यक्ष किसी पक्ष में अपने वोट का प्रयोग नहीं करता। जब दोनों पक्षों के वोट बराबर-बराबर हों तो वह अपने निर्णायक (कास्टिंग) वोट का किसी ओर प्रयोग कर सकता है।

सदस्यों के विशेषाधिकार

संसद के नियमों तथा संविधान के आदेशों के अन्दर रहते हुए संसद के प्रत्येक सदस्य को विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता है। संसद या संसद की किसी समिति में विचार प्रकट करने के अभियोग में किसी सदस्य पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। संसद में किए दिए गए भाषण के प्रकाशन पर भी कोई रोक-टोक नहीं। संसद के सदस्यों के वेतन अथवा भत्ते का निर्णय समय-समय पर संसद करती है। संसद भवन में अध्यक्ष की आज्ञा के बिना किसी सदस्य को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता।

संसद के कार्य

संसद के कामों को मुख्य रूप से चार शीर्षकों के अन्तर्गत बाँटा जा सकता है :

(१) कानून बनाना—संसद देश के सुशासन के लिए सब प्रकार के कानून बनाती है।

(२) कार्यपालिका पर नियन्त्रण—संसद कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रियों के कामों पर कड़ा नियन्त्रण रखती है। संसद किसी भी मन्त्री अथवा सारे मन्त्रिपरिषद में अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत करके उसे पद-च्युत कर सकती है। संसद के पास असन्तोष प्रगट करने के और भी कई साधन हैं जैसे स्थगित प्रस्ताव, बजट में कटौती प्रस्ताव, प्रश्न इत्यादि।

(३) व्यय पर नियन्त्रण—संसद देश का बजट पास करती है। इसकी स्वीकृति के बिना सरकार न कोई ऋण ले सकती है और न ही कोई व्यय कर सकती है। इस प्रकार संसद का सरकार पर पूरा-पूरा नियन्त्रण रहता है।

(४) विविध—इन मुख्य कार्यों के अतिरिक्त संसद को कुछ और अधिकार भी प्राप्त हैं जैसे राष्ट्र-पति को चुनना, राष्ट्रपति पर महाभियोग की सुनवाई करना, उच्चतम या उच्च न्यायालयों के जजों को हटाना इत्यादि। संसद को संविधान में संशोधन करने का अधिकार प्राप्त है। संसद ही देश की गृह तथा विदेश नीति का निर्माण करती है।

संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि संसद प्रशासन का केन्द्रबिन्दु है। यह सरकार का सबसे सबल अंग है। ब्रिटिश पार्लियामेंट की तरह हम भारतीय संसद के बारे में भी कह सकते हैं कि "स्त्री को पुरुष और पुरुष को स्त्री बनाने के अतिरिक्त संसद और सब कुछ कर सकती है।"

संसद किन विषयों पर कानून बना सकती है ?

संविधान में संसद तथा राज्य विधान मण्डलों के क्षेत्र को स्पष्ट रूप से बाँट दिया गया है। संविधान में विधायिनी शक्तियों को तीन भागों में बाँटा गया है। संघी सूची में ९७ विषय हैं। इन पर केवल संसद ही कानून बना सकती है। समवर्ती सूची में ४७ विषय हैं। इनका प्रबन्ध सामान्यतः राज्यों द्वारा ही होता है परन्तु केन्द्र भी यदि चाहे तो इनके बारे में नियम बना सकता है। राज्य सूची में ६६ विषय हैं। इनका प्रबन्ध पूर्ण रूप से राज्यों के अधीन है। इन्हें छोड़कर जो विषय बचे हैं, उन्हें अवशिष्ट कहा जाता है। उनके बारे में केन्द्र ही नियम बना सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) संसद किसे कहते हैं ? संसद क्या काम करती है ?

(२) संसद के क्या अधिकार हैं ? यह सरकार पर किस तरह नियन्त्रण रखती है ?

(३) संसद सरकार का सबसे सबल अंग है। क्यों ?

(४) लोकसभा का संगठन किस प्रकार होता है ? लोकसभा और राज्य सभा में किसे अधिक शक्ति प्राप्त है ? उदाहरण सहित बताओ।

(५) राज्य सभा के बारे में आप क्या जानते हैं ?

: ८ :

राज्यों का शासन

पिछले एक अध्याय में हम बता चुके हैं कि किस प्रकार हमारे देश में राज्यों का पुनर्गठन हुआ है। इस पुनर्गठन के परिणामस्वरूप देश के सभी राज्यों में एक तरह की शासन व्यवस्था स्थापित हुई है। भारत को १४ राज्यों में बाँट दिया गया है। देश का ९८ प्रतिशत इलाका इन राज्यों के अन्तर्गत है। केवल २ प्रतिशत भू भाग केन्द्रीय शासन के अधीन है। जिस प्रकार केन्द्र में राष्ट्रपति शासन का मुखिया होता है, उसी तरह प्रत्येक राज्य में राज्यपाल शासन का मुखिया होता है। राज्यों की शासन-व्यवस्था में राज्यपाल का वही स्थान है, जो केन्द्र में राष्ट्रपति का। अधिकांश राज्यों में विधानमंडल के दो सदन हैं। राज्य विधानमण्डलों के सदस्यों के भी वही अधिकार होते हैं, जो संसद-सदस्यों के। विधानमंडल के सदस्यों में से एक मन्त्रिपरिषद् चुनी जाती है जो सामूहिक रूप से विधान सभा के सम्मुख उत्तरदायी होती है। विधान सभा मन्त्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास करके मन्त्रिपरिषद् को भंग कर सकती है।

राज्यों में कार्यपालिका के दो अंग हैं—राज्यपाल और मंत्रिमंडल। राज्यों के शासन प्रबन्ध को समझने के लिए इन दोनों के अधिकारों को भली भांति जान लेना जरूरी है।

राज्यपाल

राष्ट्रपति राज्यपाल की नियुक्ति करता है। यदि राज्यपाल पहले त्यागपत्र न दे दे तो वह साधारणतः ५ वर्ष तक अपने पद पर रहता है। राज्यपाल के पद पर नियुक्ति के लिये जरूरी है कि वह भारतीय नागरिक हो और कम से कम ३५ वर्ष की आयु का हो। उसे किसी विधान सभा का सदस्य नहीं होना चाहिए। राज्यपाल को ५,५०० रुपये मासिक वेतन तथा अन्य भत्ते इत्यादि प्राप्त होते हैं।

अधिकार

प्रशासन सम्बन्धी राज्यपाल मुख्य मन्त्री को और उसकी सलाह से अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करता है। वह महाधिवक्ता (एडवोकेट जनरल) को भी नियुक्त करता है। वह राज्य के प्रशासन के लिए नियम बना सकता है। वह कुछ अवस्थाओं में क्षमा प्रदान कर सकता है, और दण्डादेश को स्थगित कर सकता या कम कर सकता है।

वैधानिक वह राज्य के विधान मण्डल के दोनों सदनों के सत्र का आरम्भ अथवा अवसान करता है। वह विधानसभा का विघटन करता है। विधानमण्डल द्वारा स्वीकृत किसी बिल की स्वीकृति देता है या राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए उसे सुरक्षित रखता है। वह किसी बिल को विधानमण्डल में पुनर्विचार के लिए भेज सकता है और दोनों सदनों को सन्देश भेज सकता है अथवा सबोधित कर भाषण दे सकता है। विधानमण्डल की बैठक न हो रही हो, तो राज्यपाल को अध्यादेश (आर्डिनेन्स) जारी करने की शक्ति है।

वित्तीय राज्यपाल की सिफारिश के बिना न कोई धन सम्बन्धी विधेयक या बिल सदन में पेश किया जा सकता है और न किसी अनुदान (ग्राण्ट) की माँग की जा सकती है।

विविध : केन्द्र के समान, राज्यपाल को उसके कामों में सहायता तथा मन्त्रणा देने के लिए मन्त्रियों की एक परिषद् होती है। जब विधान सभा का चुनाव हो चुकता है, तो राज्यपाल बहुमत प्राप्त पार्टी के नेता को मन्त्रिमण्डल बनाने का निमन्त्रण देता है। उसकी सलाह से राज्यपाल मन्त्रिमण्डल की नियुक्ति करता है। मन्त्रिमंडल राज्यपाल को प्रशासन-सम्बन्धी सभी मामलों के बारे में सूचना देता रहता है। राज्यपाल इस बात का ध्यान रखता है कि केन्द्रीय सरकार के सब निर्देशों का भली भाँति राज्य सरकार द्वारा परिपालन हो। आपत काल में राष्ट्रपति राज्यपाल को सब राज-काज सम्भालने का आदेश दे सकता है।

राज्यपाल अपनी सब शक्तियों का प्रयोग मन्त्रिमंडल की सलाह से करता है। वास्तव में मन्त्रिमंडल जो कहता है, वही राज्यपाल करता है। हाँ, यह अपने अनुभव तथा योग्यता के आधार पर मन्त्रिमंडल को उचित परामर्श दे सकता है। शासन में राज्यपाल की तुलना मन्दिर के उस देवता से की जाती है, जो स्वयं कुछ नहीं करता परन्तु उसकी उपस्थिति के कारण मन्दिर का सब काम-काज भली भाँति चलता रहता है। वास्तव में मन्त्रियों ने अनुभवी तथा सुयोग्य राज्यपालों की मन्त्रणा से काफी लाभ उठाया है।

जम्मू और काश्मीर को छोड़कर भारत के शेष सभी राज्यों में राज्यपाल नियुक्त है। जम्मू और काश्मीर राज्य के मुखिया को सदरे रियासत कहते हैं। सदरे रियासत को जम्मू और काश्मीर की विधान सभा चुनती है। इस राज्य में केन्द्र के अधिकार उन्हीं विषयों तक सीमित हैं जिनके बारे में भारत सरकार और राज्य सरकार में समझौता हो चुका है। परन्तु दोनों सरकारों की सहमति से इन अधिकारों को बढ़ाया जा सकता है।

मन्त्रिपरिषद

संघ सरकार की तरह राज्यों की सरकार का आधार भी सभात्मक है। यहाँ भी दोहरी कार्यपालिका है। वैधानिक तथा वास्तविक। वैधानिक कार्यपालिका के रूप में राज्यपाल काम करता है और वास्तविक कार्यपालिका के रूप में मन्त्रिपरिषद।

राज्यपाल मन्त्रिपरिषद की नियुक्ति करता है। चुनावों का परिणाम घोषित हो जाने के बाद राज्यपाल विधान मंडल के उस सदस्य को मन्त्रिमंडल बनाने का निमन्त्रण देता है, जो उसके विचार में विधान सभा का बहुमत प्राप्त कर सकता है। इस व्यक्ति को राज्यपाल मुख्य मन्त्री नियुक्त करता है। मन्त्रिपरिषद के शेष सदस्य मुख्य मंत्री के परामर्श से राज्यपाल नियुक्त करता है। ये मन्त्री मुख्य मंत्री के राजनीतिक दल अथवा उसके समर्थक राजनीतिक दलों के होते हैं।' मन्त्रियों के लिए जरूरी है कि वे विधान मंडल के किसी एक सदन के सदस्य हों। राज्यपाल बाहर के किसी आदमी को मन्त्री नियुक्त कर सकता है, परन्तु उसे ६ मास के अन्दर-अन्दर किसी एक सदन का सदस्य निर्वाचित होना पड़ता है। मन्त्रिपरिषद के सदस्यों की संख्या पर कोई सीमा नहीं।

मन्त्रि परिषद तथा विधान मंडल . मन्त्रियों का वेतन इत्यादि राज्यों के विधान मंडल समय-समय प निश्चित करते हैं। मन्त्री सामूहिक रूप से विधानमंडल के सम्मुख उत्तरदायी होते हैं। यदि विधान

किसी एक मन्त्री में अविश्वास प्रस्ताव पास कर दे तो समूचे मन्त्रिमंडल को त्याग पत्र देना पड़ता है। दूसरे राज्यों में मन्त्रियों के लिए कोई निश्चित कार्यकाल नहीं। वे तब तक ही मन्त्री हैं जब तक उनके दल को विधान-मंडल में बहुमत प्राप्त है।

मुख्य मन्त्री राज्यों में विधान परिषद के नेता को मुख्य मन्त्री कहते हैं। केन्द्रीय मन्त्रिपरिषद का नेता प्रधानमन्त्री कहलाता है। राज्य में उसका कार्यक्षेत्र वही होता है, जो केन्द्र में प्रधान मन्त्री का। वह राज्यपाल और मन्त्रिपरिषद में सम्पर्क स्थापित रखता है। राज्यपाल को राज्य के सभी मामलों के बारे में सूचित रखता है। वह राज्यपाल को नियुक्ति के लिए अन्य मन्त्रियों के नाम देता है। वह मन्त्रियों में विभागों का बंटवारा करता है। वह मन्त्रिपरिषद की बैठकों का सभापतित्व करता है। मन्त्रिपरिषद के सम्मुख विचार के लिए विषय रखता है। मुख्य मन्त्री का कर्तव्य है कि वह अन्य मन्त्रियों के काम की देखभाल करे। यदि किसी मन्त्री में उसे भरोसा न रहे, तो मुख्य मन्त्री उसे त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकता है। मुख्य मन्त्री के रूप में वह विधान सभा में राज्य की नीति के बारे में महत्वपूर्ण घोषणाएँ करता है।

वास्तव में राज्य के शासन में मुख्य मन्त्री का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्यपाल राज्य का केवल आकारिक मुखिया होने के कारण वास्तविक शासन भार मुख्य मन्त्री के कन्धे पर ही पड़ता है। किसी राज्य सरकार की सफलता और असफलता उस राज्य के मुख्य मन्त्री की योग्यता पर निर्भर है।

संविधान के अनुसार केन्द्र की तरह राज्य की व्यवस्थापिका में भी राज्यपाल तथा विधान मंडल के एक या दो सदन शामिल हैं। भारत संघ के १४ राज्यों में से ९ में विधान मंडल के दो सदन हैं। इन राज्यों के नाम ये हैं—बिहार, बम्बई, मध्यप्रदेश, मद्रास, मैसूर, पंजाब, उत्तरप्रदेश, पश्चिमी बंगाल तथा जम्मू और काश्मीर। शेष ५ राज्यों—असम, केरल, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा और राजस्थान में एक ही सदन है। राज्यों में उच्च सदन को विधान परिषद कहते हैं और निम्न सदन को विधान सभा। दोनों को मिलाकर विधान मंडल का नाम दिया जाता है। इस सम्बन्ध में यह बता देना जरूरी है कि संविधान सभा में राज्यों में दो सदन स्थापित करने के प्रश्न पर मतभेद था। अन्त में संविधान सभा ने यह प्रश्न राज्यों की स्वेच्छा पर छोड़ दिया है। फलस्वरूप कुछ राज्यों ने द्वि-सदन प्रणाली अपनाई है और कुछ ने एक ही सदन रखा है। परन्तु संविधान में इस बात का प्रबन्ध किया गया है कि यदि किसी राज्य की विधान सभा के दो तिहाई सदस्य उच्च सदन को समाप्त करने का प्रस्ताव पास करें तो संसद इस सिफारिश को मानकर राज्य विधान परिषद खत्म कर दे। इसी प्रकार उन राज्यों में जहाँ एक सदन है, विधान सभा के दो तिहाई सदस्य एक प्रस्ताव द्वारा विधान परिषद स्थापित करवा सकते हैं।

विधान सभा

प्रत्येक राज्य में विधान सभा वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनी जाती है। सदस्य सीधे चुनाव द्वारा चुने जाते हैं। साधारणतया ७५,००० की आबादी के पीछे विधान सभा का एक सदस्य चुना जाता है। चूंकि प्रत्येक राज्य की जनसंख्या भिन्न-भिन्न है, अतः प्रत्येक राज्य की विधान सभा में सदस्यों की संख्या भी अलग-अलग है। अनुसूचित जातियों तथा कबीलों के लिए कुछ स्थान सुरक्षित रखे गए हैं। पंजाब विधानसभा के १५४ सदस्य हैं।

अवधि : प्रत्येक विधान सभा की अवधि पाँच वर्ष होती है। परन्तु राज्यपाल इसे समय से पहले भग कर सकता है। आपत-काल में राष्ट्रपति इसकी अवधि एक समय में एक वर्ष के लिए बढ़ा सकते है।

विधान सभा का सदस्य बनने के लिए जरूरी है कि उम्मीदवार (१) भारतवर्ष का नागरिक हो, (२) २५ वर्ष की आयु से कम न हो, (३) विधान सभा के लिए राज्य के किसी निर्वाचन क्षेत्र में वोटर के रूप में उसका नाम दर्ज हो।

सदस्यो के विशेषाधिकार—विधान सभा के सदस्यो के भी वही अधिकार हैं, जो ससद सदस्यो के होते हैं। विधान सभा की बैठक में कुछ कहने के अभियोग में उनपर मुकदमा नहीं चल सकता है।

विधान सभा के अधिकारी प्रत्येक विधान सभा सदस्यों में से अपना एक अध्यक्ष (स्पीकर) और उपाध्यक्ष (डिप्टी स्पीकर) चुनती है। लोक सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष की भाँति ये अधिकारी विधान सभा की कार्यवाही का सचालन करते हैं। उन्हें अविश्वास प्रस्ताव द्वारा विधान सभा पदच्युत कर सकती है।

विधान सभा के अधिवेशन —सविधान के आदेशानुसार राज्य विधान सभा या राज्य विधानमडल की साल में दो बार अवश्य बैठक होनी चाहिए। राज्यपाल समय-समय पर इनके अधिवेशन बुलाता है। राज्यपाल को विधान मडल भग करने का भी अधिकार है। प्रत्येक अधिवेशन के प्रारम्भ में राज्यपाल विधान-मडल के सदस्यो के सम्मुख भाषण देता है। राज्यपाल के इस भाषण पर विधान मडल के दोनो सदनो में बहस हो सकती है।

विधान सभा के कार्य

वैधानिक —विधान सभा राज्य सूची में सम्मिलित प्रत्येक विषय पर कानून बना सकती है। इसके अतिरिक्त समवर्ती सूची में शामिल विषयो पर भी वह कानून बना सकती है।

कार्यपालिका पर नियत्रण —*विधान सभा कार्यपालिका पर नियत्रण रखती है क्योकि कार्यपालिका* विधान सभा के सम्मुख उत्तरदायी है। विधान सभा अविश्वास प्रस्ताव द्वारा मन्त्रिपरिषद को त्याग पत्र देने पर विवश कर सकती है।

वित्त सम्बन्धी —प्रत्येक वर्ष के आरम्भ में वित्तमन्त्री विधान सभा के सम्मुख आय-व्यय का अनुमानित ब्योरा पेश करता है। इसे बजट कहते हैं। वित्तीय मामलो में विधान सभा को विधान परिषद् के मुकाबिले में अधिक अधिकार प्राप्त है। विधान सभा द्वारा बजट पास होने पर ही राज्य की ओर से कोई व्यय किया जा सकता है। राज्य में नए कर लगाने के लिए विधान सभा की अनुमति अनिवार्य है।

विधान परिषद

सविधान के अनुसार किसी राज्य मे विधान परिषद के सदस्यों की सख्या विधान सभा के सदस्यों की सख्या के एक तिहाई भाग से अधिक नही हो सकती। विधान परिषद के सदस्यो के चुनाव के लिए ये नियम निश्चित किए गए है (क) विधान परिषद के एक तिहाई सदस्य स्थानीय सस्थाओ (जिला बोर्ड, म्युनिसिपल कमेटियाँ इत्यादि) के सदस्यों द्वारा चुने जाते है। (ख) एक तिहाई सदस्य विधान सभा के सदस्यो द्वारा चुने जाते हैं। (ग) कुल सख्या का बारहवाँ भाग यूनिवर्सिटी के ग्रेजुएटो द्वारा चुना जाता है। (घ) कुल सख्या का बारहवाँ भाग ऐसे अध्यापको द्वारा चुना जाता है, जो कम से कम सैकण्डरी स्कूल में पढ़ाते

हैं। (इ) शेष सदस्य राज्यपाल राज्य के उन प्रतिष्ठित नागरिकों में से मनोनीत करता है जो कला, साहित्य, विज्ञान अथवा समाज सेवा के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। विभिन्न राज्यों में विधान परिषद् के सदस्यों की संख्या अलग-अलग है। विधान परिषद् के सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली से एकल संक्रमणीय मत द्वारा चुने जाते हैं। विधान परिषद एक स्थायी संस्था है। इसके सदस्य ६ वर्ष के लिए चुने जाते हैं। एक तिहाई सदस्य हर दो वर्ष के बाद अवकाश ग्रहण करते हैं।

विधान सभा और विधान परिषद में सम्बन्ध —राज्य की विधान सभा और विधान परिषद में प्रायः वही सम्बन्ध है, जो राज्य सभा और लोकसभा में। साधारण बिल दोनों में से किसी एक सदन में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। परन्तु वित्तीय बिल पहले विधान सभा में पेश होने चाहिए। वहाँ पास होने के बाद ही वे विधान परिषद् में भेजे जाते हैं। दोनों सदनों में स्वीकृत होने के बाद बिल राज्यपाल की मंजूरी के लिए जाता है। राज्यपाल के हस्ताक्षर हो जाने के उपरान्त वह कानून का रूप धारण करता है।

विधान सभा के विधान परिषद् की अपेक्षा अधिक अधिकार हैं। विधान सभा यदि चाहे, तो दो तिहाई मत से विधान परिषद् भंग करने का प्रस्ताव पास कर सकती है। केन्द्रीय संसद इस सिफारिश के आधार पर विधान परिषद् को भंग कर सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारतीय संविधान में राज्यपाल का क्या स्थान है? उसके अधिकारों के बारे में आप क्या जानते हैं?
(२) राज्यपाल मन्त्रिपरिषद की नियुक्ति कैसे करता है?
(३) राज्य का मन्त्रिपरिषद कैसे बनता है। मुख्य मंत्री क्या कार्य करता है। आपके राज्य का मुख्य मंत्री कौन है?
(४) विधान मंडल से क्या अभिप्राय है?
(५) विधान सभा और विधान परिषद में क्या अन्तर है। दोनों का निर्माण कैसे होता है?
(६) विधान सभा क्या काम करती है। उसका क्या महत्व है?

: ९ :

न्यायपालिका

"किसी सरकार की उत्तमता का सबसे बड़ा चिह्न उसका उत्तम न्याय विभाग है : साधारण नागरिक को इस बात का भरोसा होना चाहिये कि उसके हितों तथा उसकी सुरक्षा के लिए शीघ्र और उचित न्याय होगा।" —लार्ड ब्राइस

पिछले एक अध्याय में आपने पढ़ा था कि भारत के नागरिकों को कुछ मौलिक अधिकार प्राप्त हैं। ये अधिकार एक नागरिक की अमूल्य निधि हैं। यदि इन अधिकारों के संरक्षण की कोई गारण्टी न हो, तो ये केवल मात्र कागज का एक टुकड़ा बन कर रह जाते हैं। भारत के संविधान में इन अधिकारों की सुरक्षा की व्यवस्था की गई है। देश के न्यायालयों को जनता के मूल अधिकारों की सुरक्षा का कार्य सौंपा गया है। न्यायालयों के इस संगठन को न्यायपालिका कहते हैं। यही नहीं, हमारे संघीय शासन के अन्तर्गत न्यायाधीश हमारे संविधान के भी संरक्षक हैं। वे कार्यपालिका तथा विधान सभाओं को अपनी-अपनी सीमा के अन्दर रखते हैं। न्यायपालिका सरकार को मनमानी करने से रोकती है। इसी तरह यदि कोई विधानसभा ऐसा कानून बनाए, जो संविधान के विरुद्ध हो तो न्यायपालिका उसे तुरन्त रद्द कर सकती है।

भारत में न्यायपालिका का वर्तमान संगठन ब्रिटिश राज्य की देन है। १८५७ के स्वतन्त्रता-संग्राम के उपरान्त अंग्रेजों ने अदालतों का एक केन्द्रीय ढांचा स्थापित किया। विभिन्न कानूनों को एक जगह पर इकट्ठा करके देश को एक सुयोग्य न्याय-संगठन मिला। सारे भारत में एक जैसे कानून लागू हो जाने के कारण देश की एकता को बल मिला।

उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट)

भारतीय न्यायालय एक सीढ़ी की तरह है जिसमें सबसे ऊपर उच्चतम न्यायालय अथवा सुप्रीम कोर्ट है। उसके नीचे राज्यों में उच्च न्यायालय अथवा हाई कोर्ट होते हैं। उच्च न्यायालयों के अधीन राज्य के सब छोटे-बड़े न्यायालय होते हैं। केन्द्रीय न्यायपालिका को भारत का सर्वोच्च न्यायालय कहा जाता है। इसमें एक मुख्य न्यायाधिकारी (चीफ जस्टिस) तथा १० न्यायाधीश (जज) होते हैं। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। न्यायाधीश ६५ वर्ष की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं। न्यायाधीश के पद पर भारत के किसी ऐसे नागरिक को नियुक्त किया जा सकता है, जो किसी उच्च न्यायालय में ५ वर्ष तक न्यायाधीश रहा हो अथवा देश के किसी उच्च न्यायालय में १० वर्ष तक प्रैक्टिस करता रहा हो या देश का कोई प्रमुख कानूनदाँ हो। न्यायाधीश को सिद्ध कदाचार अथवा असमर्थता के आधार पर अपने पद से अलग किया जा सकता है परन्तु यह तभी सम्भव है जब संसद के प्रत्येक सदन में उसके विरुद्ध समावेदन (एड्रैस) पेश किया जाए।

न्यायाधीश की निष्पक्षता और ईमानदारी को सुनिश्चित करने के लिए संविधान ने उन्हें रिटायर होने के बाद भारत के किसी भी न्यायालय में वकालत करने से रोक दिया है। मुख्य न्यायाधिपति को ५,०००

रुपये तथा अन्य न्यायाधीशों को ४,००० रुपये मासिक वेतन मिलता है। इसके अतिरिक्त न्यायाधीशों के रहने के लिए निःशुल्क निवास आदि की भी व्यवस्था है।

उच्चतम न्यायालय साधारणतया दिल्ली में रहता है, परन्तु समय-समय पर ऐसे अन्य स्थानों पर भी कार्य कर सकता है, जिनका निर्धारण मुख्य न्यायाधिपति राष्ट्रपति की सम्मति से करेंगे।

उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार

संघीय न्यायालय के रूप में

भारतीय संविधान के अनुसार हमारे उच्चतम न्यायालय को संसार के किसी भी सर्वोच्च न्यायालय से, अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट से भी अधिक, व्यापक शक्ति प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय को संघीय न्यायालय के रूप में प्रारंभिक क्षेत्राधिकार (Original Jurisdiction) प्राप्त है। प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार उन विषयों की ओर संकेत करता है, जिनके संबंध में मुकदमा उच्चतम न्यायालय के अतिरिक्त कहीं और नहीं सुना जा सकता। उदाहरण के रूप में यदि संघीय सरकार तथा राज्य की एक या एक से अधिक सरकारों में किसी विषय पर मतभेद हो जाए, तो इन झगड़ों का फैसला करने का अधिकार केवल उच्चतम न्यायालय को ही है। इसी प्रकार राज्यों की सरकारों में भी आपसी झगड़ों का फैसला उच्चतम न्यायालय ही कर सकता है। संघीय सरकार अथवा राज्यीय सरकारों द्वारा स्वीकृत कोई कानून या आदेश केवल उच्चतम न्यायालय में ही चैलेंज किया जा सकता है। यदि उच्चतम न्यायालय समझे कि कोई कानून संविधान के विरुद्ध है, तो वह उसे रद्द कर सकता है। इस अधिकार के प्रयोग द्वारा उच्चतम न्यायालय संविधान की रक्षा करता है।

मूल अधिकारों का संरक्षक

संविधान के अन्तर्गत भारतीय नागरिकों को कुछ मूल अधिकार दिए गए हैं। उच्चतम न्यायालय का कर्तव्य है कि वह सरकार द्वारा इन अधिकारों का अपहरण होने पर नागरिकों की रक्षा करे।

अपीलीय न्यायालय के रूप में

उच्चतम न्यायालय देश का अन्तिम अपीलीय न्यायालय है। इस रूप में उसका क्षेत्राधिकार तीन प्रकार का है। सांविधानिक, व्यावहारिक और आपराधिक। यदि किसी मुकदमे के संबंध में कोई उच्च न्यायालय घोषित करे कि इसमें संविधान की किसी धारा के उचित अर्थ के विषय में शंका उठाई गई है तो उस मुकदमे के विरुद्ध अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है। उच्चतम न्यायालय स्वयं भी इस प्रकार की अपीलें सुने जाने की आज्ञा प्रदान कर सकता है। इन दोनों परिस्थितियों में उच्चतम न्यायालय संविधान की व्याख्या करता है। इसलिए हम इन्हें सांविधानिक अपीलें कहते हैं।

आपराधिक अपीलें फौजदारी मुकदमों से सम्बन्धित होती हैं।

दीवानी मुकदमों के सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय दो परिस्थितियों में अपीलें सुन सकता है। पहली, यदि किसी राज्य का उच्च न्यायालय किसी मुकदमे के बारे में यह प्रमाणित कर दे कि उस मुकदमे की राशि का मूल्य २०,००० रुपये से ज्यादा है। दूसरी, यदि उच्च न्यायालय यह प्रमाणित कर दे कि किसी मुकदमे का सम्बन्ध ऐसे विषय से है, जिस पर उच्चतम न्यायालय का विचार आवश्यक है।

परामर्शदाता समिति के रूप में

राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय से किसी साविधानिक या अन्य कानूनी प्रश्न के बारे में राय ले सकता है।

उच्च न्यायालय

सविधान ने प्रत्येक राज्य में एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था की है। भारत का कोई भी नागरिक जो १० वर्ष तक किसी अदालत में जज के रूप में काम कर चुका हो या १० वर्ष तक किसी उच्च न्यायालय में प्रैक्टिस कर चुका हो, उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त हो सकता है। राष्ट्रपति न्यायाधीशो की नियुक्ति भारत के मुख्य न्यायाधिपति और राज्य के राज्यपाल से परामर्श करने के बाद करते हैं।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को ४,००० रुपए और प्रत्येक न्यायाधीश को ३,५०० रुपये मासिक वेतन मिलता है। उन्हें रिटायर होने के बाद किसी अदालत में प्रैक्टिस करने की आज्ञा नहीं।

प्रत्येक उच्च न्यायालय को दो कार्य करने पडते हैं। पहला, न्याय सबधी और दूसरा प्रबध सबधी।

न्याय संबंधी :—न्याय के क्षेत्र में उच्च न्यायालयो को कुछ मामलो में प्रारंभिक क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं, जैसे बडी-बडी रकमो के मुकदमे। दूसरे शब्दो में ये मुकदमे केवल उच्च न्यायालय में ही सुने जा सकते है, निचली अदालतों में नही। बम्बई हाईकोर्ट २५,०००) या इससे अधिक रकम के झगडो के मुकदमे स्वय सुनता है। इसके अतिरिक्त नागरिक के मूल अधिकार सम्बन्धी मुकदमे भी सीधे उच्च न्यायालय में पेश होते है।

अपीलीय अदालत के रूप में उच्चतम न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायालयो के निर्णयो की अपील सुनते है। प्रत्येक उच्च न्यायालय को अधीन न्यायालयो के दीवानी, फौजदारी तथा माल-सम्बन्धी मुकदमो के फैसलो के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार प्राप्त है। फौजदारी मुकदमो में मृत्युदण्ड के आदेश का फैसला केवल उच्च न्यायालय द्वारा ही हो सकता है। इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय नागरिको के मूल अधिकारो की रक्षा के लेख (Writs) जारी कर सकता है। उसे अपने अवमान के लिए दण्ड देने की शक्ति प्राप्त है।

प्रबंध सम्बन्धी :—उच्च न्यायालय राज्य के अधीन न्यायालयो की देख-भाल करता है। उसे अधिकार है कि यह अधीन न्यायालयो से किसी भी मुकदमे से सम्बन्धित कागज मँगाकर निरीक्षण करे। अधीन न्यायालयों के काम को ठीक ढग से चलाने के लिए वह नियम बना सकता है। जिला न्यायालयो तथा उनसे छोटे न्यायालयो के अधिकारियो की नियुक्ति और उनके वेतन, तरक्की इत्यादि के बारे में नियम बनाता है। एक अदालत से दूसरी अदालत में मुकदमे भेज सकता है या स्वय उस मुकदमे की जाँच-पडताल अपने हाथ में ले सकता है।

अधीन न्यायालय

उच्च न्यायालय के नीचे प्रत्येक राज्य में दो प्रकार के न्यायालय होते हैं—दीवानी और फौजदारी। प्रत्येक जिले में न्यायपालिका का अध्यक्ष जिला जज होता है जिसकी नियुक्ति राज्यपाल उच्च न्यायालय की सलाह से करते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) न्यायपालिका का क्या अभिप्राय है? न्यायपालिका से क्या लाभ होते हैं?
(२) भारत में न्यायपालिका के सगठन के बारे में आप क्या जानते हैं?
(३) भारत के उच्चतम न्यायालय के संगठन तथा कार्यक्षेत्र के बारे में सविस्तार लिखो।
(४) उच्च न्यायालयों के क्या कर्तव्य हैं? वे किस प्रकार नागरिकों के मूल अधिकारो की रक्षा करते हैं?

: १० :

चुनाव कैसे होते हैं

जनता की व्यापक शिक्षा तभी सम्भव है यदि सबको वोट देने का अधिकार प्राप्त हो । —जॉन स्टुअर्ट मिल

भारत में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य स्थापित हुआ है। लोकतन्त्र का अर्थ है जनता का राज्य या अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के शब्दों में "जनता का राज्य, जनता द्वारा और जनता के लिए।" परन्तु जनता स्वयं राज नहीं कर सकती। उसे कुछ प्रतिनिधि चुनने होते हैं जो उसकी ओर से निश्चित समय के लिये कार्य भार चलाते रहें। अतः जनता को मतदान का अधिकार मिल जाता है। मतदान द्वारा लोग अपने प्रतिनिधि चुनते हैं। इन्हीं प्रतिनिधियों में से कुछ मन्त्रिपरिषद बनाते हैं और वह मन्त्रिपरिषद् देश का शासन भार सम्हालती है।

वयस्क मताधिकार

संविधान ने भारत के प्रत्येक वयस्क नागरिक को वोट देने का अधिकार दिया है। इनमें स्त्रियाँ भी शामिल हैं। कोई व्यक्ति कब वयस्क होता है, इस बारे में भिन्न-भिन्न देशों में अलग-अलग आयु निश्चित है। भारत में यह आयु २१ वर्ष है जब कि रूस में १८, नार्वे में २३ और हालैण्ड में २५। इंग्लैण्ड और अमेरिका में भी वयस्क होने की आयु २१ वर्ष मानी जाती है।

चुनाव आयोग

भारत में ठीक तथा निष्पक्ष ढंग से चुनाव कराने के लिए चुनाव आयोग (इलैक्शन कमिशन) नियुक्त है। संविधान के अन्तर्गत यह एक स्वतन्त्र संस्था है। मुख्य चुनाव आयुक्त (चीफ इलैक्शन कमिश्नर) तथा आयोग के अन्य सदस्य राष्ट्रपति मनोनीत करता है। यह आयोग वोटरों की सूचियों की तैयारी अपनी देख-रेख में करवाता है। चुनाव क्षेत्रों का विभाजन करता है और चुनाव के झगड़ों को तय करता है। देश में चुनावों तथा उप-चुनावों की व्यवस्था भी इसी आयोग द्वारा की जाती है। मुख्य चुनाव आयुक्त को अपने पद से अलग नहीं किया जा सकता। इसे सिर्फ उच्चतम न्यायालय के जज की भाँति मुकदमा चलाकर ही पद से अलग कर सकती है। चुनाव के प्रादेशिक कमिश्नर मुख्य चुनाव आयुक्त की अनुमति के बिना सरकार द्वारा पद से अलग नहीं किए जा सकते।

चुनाव प्रणाली

सामान्यतः लोकसभा तथा राज्य सभाओं के चुनाव इस प्रकार होते हैं सर्वप्रथम राज्यों में वोटरों की सूचियाँ तैयार की जाती हैं। एक निश्चित तिथि को जो लोग २१ वर्ष के हो चुके हों, उनका नाम इस सूचीमें दर्ज कर लिया जाता है। सूची में दर्ज किए जाने के लिए जरूरी है कि वह आदमी उस निर्वाचन क्षेत्र में जहाँ उसका नाम दर्ज किया जा रहा है, सूची की तैयारी से पूर्व कम से कम १८० दिन रहा हो। तदोपरान्त जनता

को अधिकार है कि वह इन सूचियो पर आपत्तियाँ या आलोचना करें। जिन लोगों के नाम छूट गए हो, उन्हें दोबारा दर्ज कर लिया जाता है और जिन लोगो को गलती से वोटर बना लिया गया है, उनके नाम काट दिए जाते हैं। चुनाव सूचियो को प्रतिवर्ष सशोधित किया जाता है। वोटरों की सूचियों के बारे में प्रारम्भिक आपत्तियाँ सुनने के बाद चुनाव की तिथि निश्चित की जाती है।

१९५७ के प्रारम्भ में भारत में दूसरे आम चुनाव हुए। चुनाव आयोग ने १९ जनवरी को चुनावों की तिथि घोषित की। उम्मीदवारो से कहा गया कि २९ जनवरी तक अपने नामजदगी के कागज सम्बन्धित अफसरो को पेश कर दें। कागज पेश हो जाने के ७ दिन के अन्दर उनकी पडताल हो गई। पडताल के उपरात उम्मीदवारो को नाम वापस लेने के लिए तीन दिन की अवधि दी गई। एक और सशोधन द्वारा उम्मीदवारो को आज्ञा दी गई कि वे चुनाव से १० दिन पूर्व तक अपने नाम वापस ले सकते थे, परन्तु इस अवस्था में उन्हें जमानत का रुपया वापस नही मिलेगा।

सब कागजी कार्रवाई सम्पूर्ण हो जाने के बाद विभिन्न राज्योंमें प्रबन्ध की सुविधाओं का ध्यान रखते हुए चुनाव की तिथियाँ निश्चित की जाती हैं। देश में दूसरे आम चुनाव १४ फरवरी, १९५७ को शुरू हुए और १४ मार्च, १९५७ को समाप्त हुए। हिमाचल प्रदेश के कुछ बर्फानी इलाको में चुनाव बर्फ पिघलने पर मई में हुए थे।

चुनाव के नियम

चुनाव निष्पक्षता के साथ शान्तिपूर्वक करवाने के लिये कुछ नियम बनाए गए हैं। किसी उम्मीदवार को इस बात की आज्ञा नही कि वह वोटरो को सवारी गाडी में बिठाकर लाए। वह वोटरो को भोजन इत्यादि नही दे सकता। लोगों को धर्म या ईश्वर का डर दिखाकर वोट नही ले सकता। चुनाव के बूथो के निकट लाउडस्पीकर लगाने या नारेबाजी करने की इजाजत नही। जाली वोटो के भुगतान को रोकने के लिए प्रत्येक वोटर की उगली पर न मिटनेवाली स्याही का एक धब्बा लगा दिया जाता है। इस धब्बे के कारण एक वोटर दूसरी बार जाली वोट डालने नही आ सकता। उम्मीदवारो द्वारा चुनाव पर खर्च की अधिकाधिक सीमा निश्चित है। इन कडे प्रतिबन्धों के कारण चुनाव ठीक तरीके से बिना किसी दबाव या डर के सम्पन्न होते हैं।

चुनाव आयोग वोटरो की सुविधा का पूरा-पूरा ध्यान रखता है। इस बात का प्रबन्ध किया जाता है कि वोटरो को चुनाव के स्थान पर पहुँचने के लिए अधिक चलना न पडे। चुनाव बूथ प्रत्येक ४ वर्गमील के क्षेत्र में एक हजार वोटरो के पीछे स्थापित किए जाते हैं। स्त्रियों के लिए अलग चुनाव बूथों की व्यवस्था की जाती है।

राज्य विधान सभाओ तथा लोक सभा के लिए चुनाव एक साथ हो जाता है। एक वोटर को दो पर्चियाँ दी जाती हैं—एक विधान सभा के लिए और दूसरी लोक सभा के लिए। विधान सभा की पर्ची वह विधान सभा के एक डिब्बे में डाल देता है और लोक सभा की पर्ची लोक सभा के डिब्बे में। हमारे मतदाताओं की अधिक संख्या अनपढ है। वे उम्मीदवारो के नाम नहीं पढ सकते। अत चुनाव आयोग ने चुनाव की एक बडी सरल प्रणाली निकाली है। प्रत्येक उम्मीदवार को एक चिन्ह मिल जाता है। वह वोटरो में अपने चिन्ह का प्रचार करता है। वोटर अन्दर जाकर उसी डिब्बे में अपनी पर्ची डालता है जिस पर उसके उम्मीद-

वार का चिन्ह छपा होता है। उदाहरण के रूप में पिछले चुनाव में कांग्रेस का चिन्ह था हल में जुते हुए दो बैल, प्रजा सोशलिस्टों का वृक्ष, जनसंघ का दीपक और कम्यूनिस्ट पार्टी का गेहूँ की बेल। पार्टियाँ अपने चिन्हों से जनता को भली भाँति अवगत करा देती हैं। वोटर उस कमरे में जाता है, जहाँ पर्चियाँ डालने वाले डिब्बे पड़े होते हैं और चुपके से अपनी पर्ची अपने मनचाहे उम्मीदवार के डिब्बे में डालकर लौट आता है। उसे ऐसा करते हुए कोई नहीं देख सकता। चुनाव अधिकारी भी नहीं। इस प्रकार वह बिना किसी दबाव के वोट डालता है। हाल ही में कुछ उपचुनावों में वोट डालने की एक नई विधि की परीक्षा की गई है। सब उम्मीदवारों का एक बड़ा-सा डिब्बा होता है। प्रत्येक वोटर को एक पर्ची दी जाती है जिस पर उम्मीदवारों के नाम तथा चिह्न छपे होते हैं। वोटर अपनी मर्जी के उम्मेदवार के चिह्न के आगे निशान लगाकर पर्चियों के डिब्बे में डाल कर लौट आता है। यह तरीका अधिक सुविधाजनक सिद्ध हुआ है।

आम चुनाव

भारत में आम चुनाव हर पाँच वर्ष के बाद होते हैं। संविधान के अनुसार हमारे पहले आम चुनाव १९५१ में हुए थे और दूसरे १९५७ में। पहले चुनाव में वोटरों की संख्या साढ़े १७ करोड़ थी, दूसरे में १९ करोड़ ३१ लाख। वोटरों की इतनी बड़ी संख्या दुनिया के अन्य किसी देश में नहीं। इसलिए भारत को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतन्त्र कहते हैं। दूसरे आम चुनाव में लोक सभा के निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या ४०३ और विधान मण्डलों के निर्वाचन क्षेत्रों की २,५१८ थी। कई निर्वाचन क्षेत्रों से दो सदस्य चुने जाते हैं। द्विसदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र हरिजन सदस्यों के निर्वाचन के लिए बनाए गए थे। इस चुनाव में २५,००० उम्मीदवारों ने भाग लिया। १४ राजनीतिक दल चुनावों के दंगल में कूदे। पर केवल चार दलों को अखिल भारतीय मान्यता प्राप्त थी—कांग्रेस, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी, कम्यूनिस्ट पार्टी और जनसंघ। अखिल भारतीय मान्यता केवल उन राजनीतिक दलों को मिली जिन्होंने पहले आम चुनावों में कम से कम ३ प्रतिशत वोट प्राप्त किए थे। इस चुनाव में कांग्रेस को सबसे अधिक वोट प्राप्त हुए। केरल को छोड़कर कांग्रेस भारत के सभी राज्यों और केन्द्र में सरकारें स्थापित करने में सफल हुई। केरल विधान सभा में कम्यूनिस्ट पार्टी का बहुमत हो जाने से वहाँ कम्यूनिस्ट पार्टी की सरकार कायम है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में चुनाव किस प्रकार होते हैं? लोकसभा की चुनावप्रणाली के बारे में आप क्या जानते हैं?
(२) वयस्क मताधिकार का क्या अर्थ है? विस्तार से लिखिए।
(३) दूसरे आम चुनावों के बारे में एक संक्षिप्त निबन्ध लिखो।

द्वितीय खण्ड

भारत का नव-निर्माण

: ११ :

हमारी खाद्य समस्या

आज दुनिया भूखे और नंगे लोगो से भरी पडी है। दक्षिण पूर्वी एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के बहुत बडे भाग में लोगो को २,४०० कैलोरीज प्रति व्यक्ति से भी कम भोजन उपलब्ध है। इन देशों में दुनिया की दो तिहाई जनसख्या रहती है। लोगो का साधारण स्वास्थ्य कायम रखने के लिए कम से कम २,८०० कैलोरीज प्रति व्यक्ति के हिसाब से भोजन की आवश्यकता होती है। हमारे भारत में एक औसत हिन्दुस्तानी को खाने के लिए १३ ६ औंस खाद्यान्न मिलना है और ६·७ औंस अन्य पदार्थ जैसे मास, दूध इत्यादि। इस भोजन की ताकत केवल १,६४० कैलोरीज ही है। आप अनुमान लगा सकते हैं कि हमारे देशवासियो को अपने स्वास्थ्य के लिए कितना कम पौष्टिक भोजन मिलता है।

खाद्य के इस भयकर सकट का आखिर क्या कारण है? क्या धरती इस दुनिया में रहने वाले लोगो के लिए समुचित अनाज पैदा नही कर सकती? इसमें सदेह नही कि ससार में खाद्यान्न के उत्पादन में बडी वृद्धि हुई है, लेकिन दुनिया की जनसख्या भी कम तेजी से बढ नही रही। सयुक्त राष्ट्र सघ के जनसख्या विभाग का अनुमान है कि दुनिया की आबादी प्रति वर्ष १ ३ प्रतिशत बढ जाती है। दूसरे शब्दों में हर ५० से ६० वर्ष में दुनिया की आबादी दुगुनी हो जाती है। इतनी तेजी से बढती हुई आबादी के लिए समुचित मात्रा में अन्न पैदा करना कोई आसान काम नही। वास्तव में दुनिया के अधिकतर देश अपनी आवश्यकता से कम अनाज पैदा करते हैं। अमरीका, अर्जनटाइना, रूस आदि कुछ ही देश ऐसे है, जो अपनी जरूरत से ज्यादा अन्न पैदा करते हैं।

भारत की खाद्य स्थिति —१९५४-५५ के नवीनतम आंकडो के अनुसार भारत में कुल ८० ६ करोड एकड भूमि है। इसमें से ७१ ९ करोड एकड भूमि के बारे में आंकडे उपलब्ध हैं। १२ ४ करोड एकड भूमि जगलो के अन्तर्गत है। ३१ ६ करोड एकड भूमि में खेती होती है। खेती के अन्तर्गत कुल भूमि में से केवल ५·४ करोड एकड भूमि अथवा खेती के अन्तर्गत कुल भूमि के १७ प्रतिशत भाग में सिंचाई की व्यवस्था है। शेष भूमि में यदि वर्षा हो जाए, तो सब ओर हरा-भरा दिखाई देता है अन्यथा दुर्भिक्ष पड जाता है।

अनुमान है कि भारत में ४६·७ करोड एकड भूमि खेती के योग्य है। यदि इस सारे क्षेत्रफल में खेती की जाए, तो देश पूर्ण रूप से आत्म निर्भर हो जाएगा। यह भूमि प्रति व्यक्ति १ २ एकड बैठती है।

खाद्य उत्पादन और जनसंख्या · परन्तु वास्तविक स्थिति कुछ और ही है।

की जितनी भी कोशिश की जाती है, जनसंख्या उससे भी अधिक तीव्र गति से बढ़ती जाती है। १९३१ से १९४१ के बीच भारत की आबादी १४ ३ प्रतिशत बढ़ी। १९४१ से १९५१ के १० वर्षों में इस आबादी में १३ ३ प्रतिशत वृद्धि हुई। स्पष्ट है कि इन २० वर्षों में भारत की जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ी है परन्तु खाद्य का उत्पादन इस तेजी से नहीं बढ़ पाया। खेती के अन्तर्गत भूमि में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई और न ही अनाज की विभिन्न फसलों के उत्पादन में कोई विशेष वृद्धि हुई है। यदि हम मान लें कि १९५१ से १९६१ में हमारी जनसंख्या १२ ५ प्रतिशत बढ़ेगी, इससे अगले १० वर्षों में १३ ३ प्रतिशत और १९७१ और १९८१ के मध्य १४ प्रतिशत तो १९७६ तक भारत की आबादी ५० करोड़ हो जाएगी। यह आबादी १९२१ में भारत की आबादी से दुगुनी होगी। आबादी तो बढ़ती जा रही है लेकिन भूमि को खींच कर तो बढ़ाया नहीं जा सकता। इसलिए खाद्य के उत्पादन में वृद्धि का एकमात्र उपाय यही रह जाता है कि खेती के तरीकों को सुधारा जाए और इस प्रकार जो भूमि उपलब्ध है, उसी से अधिकाधिक अनाज पैदा किया जाए।

प्रति एकड़ उत्पादन • यद्यपि भारत में भिन्न-भिन्न प्रकार की फसलें होती हैं परन्तु हमारे देश में प्रति एकड़ उत्पादन बहुत ही कम है। विश्व खाद्य संगठन ने १९५४ में भारत में प्रति एकड़ उत्पादन के कुछ आँकड़े तैयार किए थे। इन अनुमानों के अनुसार भारत में एक एकड़ के पीछे ६७० पौण्ड गेहूँ पैदा होता है जब कि मिस्र में एक एकड़ में २,०४० पौण्ड गेहूँ उत्पन्न होता है और जापान में २,०१६ पौण्ड। चीन जैसा देश भी एक एकड़ भूमि से ७६६ पौण्ड गेहूँ पैदा कर लेता है। भारत में एक एकड़ भूमि से जितना चावल पैदा होता है उससे चार गुना ज्यादा इटली और तीन गुना ज्यादा जापान में पैदा होता है। जावा में एक एकड़ भूमि से जितना गन्ना पैदा किया जाता है, उसका एक चौथाई भाग भारत की एक एकड़ भूमि में उत्पन्न होता है।

गेहूँ का प्रति एकड़ उत्पादन

670lb. 766lb. 2016lb 2040lb.

भारत चीन जापान मिस्र

यह कमी क्यों ?—आप पूछेंगे कि खेती-बाड़ी के मामले में हम इतने पिछड़े हुए क्यों हैं ? हमारे देश में यह अन्न संकट कैसे आया ? हमारा देश तो युगों-युगों से संसार का अन्न भंडार कहलाता रहा है।

वेदो और शास्त्रो में इस देश में दूध की नदियाँ बहने और फल-फूल तथा अन्न के भरपूर उत्पादन की गाथाएँ पढने को मिलती है। अब ये दूध की नदियाँ और हरे-भरे खेत भारतवासियो का पेट क्यो नही भरते ? इस बारे में ठीक तरह से जानकारी प्राप्त करने के लिए आपको पिछले कुछ वर्षों में भारत की खाद्य समस्या के इतिहास को पलटना पडेगा।

अन्न सकट के कारण—१९४७ में भारत का बँटवारा हुआ था। इस बँटवारे के परिणामस्वरूप हमारे देश के बहुत से उपजाऊ इलाके हमसे कट गए। सिन्ध और पजाब के नहरो से सिंचित उपजाऊ प्रदेश हमसे छिन गए। बँटवारे के परिणामस्वरूप हमें भारत की कुल आबादी का ८२ प्रतिशत भाग मिला, परन्तु हमें देश में जितने इलाके में सिंचाई की व्यवस्था थी उसका केवल ६९ प्रतिशत भाग मिला। गेहूँ तथा चावल पैदा करनेवाले कुल क्षेत्रफल का ६५ प्रतिशत भाग ही हमें मिला। कपास और पटसन के मामले में हमारी स्थिति इससे भी खराब थी। यद्यपि कपडे तथा पटसन की मिलें भारत में थी, परन्तु इन फसलो को पैदा करने वाले इलाके अधिकतर पाकिस्तान के हिस्से में आ गए थे। विभाजन ने भारत के लिए अन्न सकट के रूप में एक महान समस्या खडी कर दी। यह समस्या विभाजन से पूर्व भी थी। आपने दूसरे महायुद्ध में बगाल के अकाल के बारे में तो सुना ही होगा। बर्मा पर जापान का कब्जा हो जाने के कारण वहाँ से चावल का आना बन्द हो गया था। इससे देश में अन्न का ऐसा सकट पैदा हुआ कि बगाल में ४० लाख से ज्यादा लोग भूख से बिलख-बिलख कर मर गए। जब देश आजाद हुआ, तब अनाज की कमी के कारण कीमतें धडाधड बढ रही थी। देश में बडे पैमाने पर राशन व्यवस्था थी। हमें विदेशों से भारी मात्रा में अनाज मँगवाना पडता था। १९४६ से लेकर १९५३ के बीच में हमने विदेशो से २,२० लाख टन अनाज मँगवाया। इस अनाज की रुपयो में कीमत आकी जाए, तो ९५० करोड रुपए बैठती है। यह राशि इतनी बडी है कि इससे भाखडा नगल जैसी ५ योजनाएँ कार्यान्वित की जा सकती है।

भूमि पर दबाव—आखिर हमारी खेती इतनी पिछडी हुई क्यो है ? इसके कई कारण है। सबसे बडा कारण तो यह है कि भारत के किसान बहुत गरीब है। खेती-बाडी के मामले में विज्ञान ने बहुत उन्नति की है। परन्तु वैज्ञानिक यत्र बहुत महँगे है और हमारे किसान प्राय अशिक्षित है। गरीबी तथा अज्ञानता के कारण हमारे देश में खेती के इन नए अनुसधानो का पूरा उपयोग नही हो रहा। फसलो मे उपज बहुत साधारण होती है, जिसके परिणामस्वरूप किसान को कोई बचत नही होती। यदि बचत न हो, तो वह खेती-बाडी को सुधारे कैसे ?

हमारी खेती-बाडी के पिछडा होने का दूसरा बडा कारण यह है कि भूमि पर दबाव बहुत ज्यादा है अर्थात् खेती में इतने आदमी लगे हुए है, जितनो की आवश्यकता नहीं है। १८८१ में लगभग ६० प्रतिशत भारतवासी कृषि पर निर्भर थे। परन्तु १९५१ मे ७२ प्रतिशत भारतवासी खेती पर निर्वाह करते थे। *इससे आप अन्दाजा लगा सकते है कि खेती तो बढी नही है लेकिन उसमें आदमी अधिक जुट गए है।* यही नही, आबादी बढने के कारण खानेवालो के मुँह भी बढ गए हैं।

खेतो का बँटवारा—हमारी खेती की एक बहुत बडी त्रुटि यह है कि जमीन बहुत छोटे-छोटे भागो में बँटी हुई है। आप जानते है कि जब बाप मर जाता है, तो उसकी सारी सपत्ति उसके बेटो में बँट जाती है।

मान लीजिए एक किसान के पास २० एकड़ भूमि है, उसके ४ बेटे हैं। बाप के मरने पर यह भूमि बँट जाएगी। वैसे तो इस भूमि को केवल चार टुकड़ों में बँटना चाहिए लेकिन वास्तव में यह इससे भी अधिक कई टुकड़ों में बँट जाती है। यह २० एकड़ भूमि सारी एक जैसी नहीं होती। कुछ खेतों को पानी मिलता है तो कुछ को नहीं, कुछ अधिक उपजाऊ होते हैं कुछ कम, इसलिए इस किसान की २० एकड़ भूमि ८–१० भागों में बँट जाती है। यह सिलसिला सदा जारी रहता है। समय-समय पर भूमि के इस तरह बँटने के कारण यदि आप किसी गाँव का नक्शा देखें, तो आपको मालूम होगा कि सारा गाँव टेढ़े-मेढ़े छोटे-छोटे खेतों में बँटा हुआ है। किसी किसान का एक खेत इस कोने में है, तो दूसरा खेत गाँव के दूसरे कोने में। स्पष्ट है कि वह अपने सब खेतों की देख-भाल अच्छी तरह नहीं कर पाता और उपज भी कम होती है। इसलिए बहुत से किसानों को तो जिन्दा रहने के लिए दूसरों के खेतों में मजदूरी करनी पड़ती है।

ऋण की सुविधाएं —विदेशी राज में किसानों को आवश्यकता पड़ने पर ऋण की कोई सुविधा प्राप्त नहीं थी। उन्हें भागा-भागा गाँव के साहूकार के पास जाना पड़ता था। यह साहूकार उनसे मनचाहा ब्याज लेता और धीरे-धीरे उनकी जमीनों को भी हड़प कर जाता था। मण्डियों में उन्हें अनाज बेचने की कोई सुविधा नहीं थी। आढ़ती लोग उन्हें बुरी तरह ठग लेते थे।

थोड़े शब्दों में, जब भारत आजाद हुआ, तो हमारे यहाँ खेती की हालत यह थी —उत्पादन बहुत कम था, भूमि पर दबाव बहुत ज्यादा था, खेती के तरीके बहुत पुराने और घटिया थे, खेती योग्य कुल भूमि के $\frac{४}{५}$ भाग में सिंचाई की कोई व्यवस्था नहीं थी। किसानों के पास खेती के अतिरिक्त कोई अन्य काम-धन्धा नहीं था और जमींदार तथा आढ़ती किसानों की सारी कमाई को खा जाते थे।

पासा पलट गया —स्वतन्त्रता मिलते ही हमारे नेताओं ने सबसे पहले भारत के खेती-बाड़ी के साधनों को सुव्यवस्थित करने का काम हाथ में लिया। १९५१ में देश की जो पहली पंचवर्षीय योजना बनी उसमें खेती को सबसे पहला स्थान दिया गया। गाँव में नई जाग्रति लाने के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम का श्रीगणेश हुआ। सिंचाई की अधिकाधिक सुविधाएँ देने का प्रबन्ध किया गया। पहली पंचवर्षीय योजना में यह माना गया कि खेती हमारा आधारभूत उद्योग है जिससे हमें कुल राष्ट्रीय आय का ५० प्रतिशत भाग मिलता है। इस योजना के अन्तर्गत हमें काफी सफलता प्राप्त हुई। पहली पंचवर्षीय योजना में हमने उत्पादन बढ़ाने के जो लक्ष्य निर्धारित किए थे, हम उनसे भी आगे बढ़ गए।

उत्पादन बढ़ जाने के कारण खाद्य के आयात में भी कमी हुई। १९५४ में हमने विदेशों से केवल ८ लाख टन अनाज मँगवाया, जब कि १९५१ में हमें ४७ लाख टन अनाज मँगवाना पड़ा था। उत्पादन बढ़ने के परिणामस्वरूप कीमतों में भी थोड़ी सी कमी हुई।

दूसरी पंचवर्षीय योजना —पहली पंचवर्षीय योजना में जो सफलता प्राप्त हुई उसके आधार पर दूसरी पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्न बढ़ाने का लक्ष्य और भी ऊँचा निर्धारित किया गया है। पिछले दो-एक सालों में बाढ़ तथा अन्य प्राकृतिक आपत्तियों के कारण खेती के उत्पादन में फिर कुछ कमी हुई है। इसे पूरा करने के लिए दूसरी योजना में उत्पादन वृद्धि के लिए अधिक धन की व्यवस्था की गई है। जहाँ १९५४–५५ में भारत में ६.६६ करोड़ टन अनाज पैदा हुआ था वहाँ १९५५–५६ में अनुमानतः केवल ६.४ करोड़ टन अनाज पैदा हुआ था।

दूसरी पचवर्षीय योजना में खाद्य उत्पादन का लक्ष्य ८·१ टन रखा गया है। जहाँ पहली पचवर्षीय योजना में खेती-बाड़ी के लिए २४३ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी, दूसरी योजना में इसके लिए ३५० करोड़ रुपए रखे गए हैं।

खेती पर इस व्यय के अतिरिक्त सामुदायिक विकास और सिंचाई की मदों में भारी रकमों की व्यवस्था की गई है। जहाँ पहली पचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिए ९० करोड़ रुपए रखे गए थे वहाँ दूसरी पचवर्षीय योजना में २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था हुई है। साथ ही सिंचाई की छोटी-बड़ी योजनाओं के लिए ३५८ करोड़ रुपए रखे गए हैं। दूसरे शब्दों में १९५६ से १९६१ के ५ वर्षों में गाँवों के विकास पर कुल ९०८ करोड़ रुपए खर्च होंगे।

इससे स्पष्ट है कि सरकार देश की खाद्य समस्या को हल करने पर तुली हुई है। यदि जनता का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ, तो आनेवाले चन्द सालों में भारत खाद्य के मामले में पूर्ण रूप से आत्म निर्भर हो सकता है। परन्तु इसके लिए हमें भगीरथ प्रयास करना पड़ेगा। १९५८ के शुरू में भारत सरकार ने श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में जो खाद्यान्न जाँच कमेटी नियुक्त की थी उसने अनुमान लगाया है कि १९६०–६१ में हमें ७·९ करोड़ टन अनाज की आवश्यकता होगी जब कि उस समय हम केवल ७·७ करोड़ टन अनाज पैदा कर पाएँगे। इस तरह दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्त में भी २० लाख टन अनाज विदेशों से मँगवाना पड़ेगा। याद रखिए दूसरी पचवर्षीय योजना में हमारा अनाज उत्पादन का लक्ष्य ८·१ करोड़ टन है। यदि भारत के किसान भरपूर चेष्टा करें, तो खाद्यान्न जाँच समिति की यह भविष्यवाणी निश्चय ही गलत साबित हो सकती है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत के अन्न संकट के बारे में आप क्या जानते हैं? यह अन्न संकट क्यों पैदा हुआ?

(२) भारत खाद्य के मामले में आत्म निर्भर क्यों नहीं? हमारे देश की खेती-बाड़ी में क्या त्रुटियाँ हैं? उन्हें कैसे सुधारा जा सकता है?

(३) दूसरी पचवर्षीय योजना में खाद्यान्न के उत्पादन के क्या लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं? क्या हम उन्हें प्राप्त कर सकेंगे?

(४) खाद्य भारत की सबसे बड़ी समस्या है। क्यों? इस समस्या को हल करने के लिए उपाय लिखो।

: १२ :

भारत में खेती-बाड़ी का सुधार

एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ने कहा है कि भारत एक समृद्ध देश है परन्तु उसके निवासी गरीब हैं। यह एक अर्थपूर्ण कथन है। सचमुच ही हमारा यह शस्य श्यामल देश धन्य-धान्य से भरपूर रहा है परन्तु समय ने कुछ ऐसा मुह मोड़ा है कि इस देश के निवासी अपना तथा अपने बाल-बच्चो का पेट भी पूरी तरह भर नहीं पाते। कृषि हमारा सबसे बड़ा उद्योग है। इसमें हमारे ७० प्रतिशत देशवासी लगे हुए हैं। इससे हमें ५० प्रतिशत राष्ट्रीय आय प्राप्त होती है। इसलिए कृषि की हालत सुधारना हमारा पहला कर्त्तव्य बन जाता है। पिछले अध्याय में आपने पढ़ा है कि किस प्रकार भारत सरकार पहली और दूसरी योजनाओं के अन्तर्गत खेती को सुधारने की चेष्टा कर रही है। यहाँ हम आपको बताएँगे कि हमारी खेती की कौन सी मुख्य समस्याएँ हैं और उन्हें हम कैसे हल कर सकते हैं।

सिंचाई

खेती को पानी चाहिए, चाहे वह कुओं से, तालाबों से, नलकूपों से, नहरों से या बाँधों से मिले। पानी के बिना खेती बेकार है। इसलिए जब हम खेती की उन्नति के बारे में सोचते हैं, तो सबसे पहले हमारा ध्यान सिंचाई की ओर जाता है। हमारे देश में प्राचीन काल से खेती प्राय वर्षा पर ही निर्भर रही है। इसलिए भारतीय खेती को मौनसून का जुआ कहा जाता है। पर वर्षा का वितरण तो एक जैसा होता नहीं। कहीं इतनी वर्षा हो जाती है कि सब ओर जल-थल हो जाता है और कहीं इतनी भी नहीं जिससे कुछ पत्तियाँ फूट सकें। जरूरत इस बात की है कि वर्षा उपयुक्त समय पर पर्याप्त मात्रा में हो। इसलिए भारतीय कृषि का भाग्य हमेशा अनिश्चित रहा है। परिणामस्वरूप देश में भयकर अकाल पड़ते रहे हैं। पिछले महायुद्ध में बगाल के अकाल में तो ४० लाख लोगों ने बिलख-बिलखकर भूख से प्राण त्याग दिए। खेती की इस
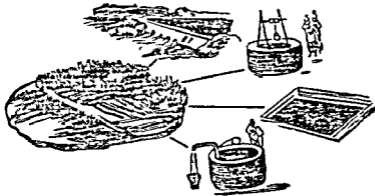
अनिश्चितता को दूर करने के लिए सिंचाई की नई-नई योजनाएँ हाथ में ली गई हैं। १९५१ में खेती के अन्तर्गत क्षेत्रफल का केवल १७ प्रतिशत भाग ही अथवा ५५ करोड एकड भूमि में सिंचाई होती थी। यह सिंचाई नहरों, तालाबो, कुओं तथा नलकूपों इत्यादि से होती थी। शेष सारा क्षेत्रफल मौनसून के बादलों पर निर्भर था। पहली पचवर्षीय योजना में बहुत-सी नदी-घाटी योजनाएँ हाथ में ली गई। इन नदी-घाटी योजनाओं से पानी के अतिरिक्त बिजली भी प्राप्त करने की व्यवस्था थी। इसके अतिरिक्त हजारो छोटी-छोटी सिचाई योजनाएँ आरम्भ की गई। इनमें नए-नए तालाब और कुएँ खोदना, अधिक नलकूप लगाना, छोटे-मोटे बाँध बनाना तथा नहरें खोदने का कार्यक्रम शामिल था। नदी-घाटी योजनाओं का विस्तृत विवरण हम अगले अध्याय में करेंगे। परन्तु यहाँ यह बता देना ही काफी है कि इन नदी घाटी योजनाओं के सम्पूर्ण होने पर कुल ७६५ करोड रुपए खर्च होंगे। पहली पचवर्षीय योजना में ६४६ करोड रुपए खर्च हो चुके हैं। जब ये बाँध बिल्कुल तैयार हो जाएँगे, तो इनसे १ करोड ६९ लाख एकड अतिरिक्त भूमि को सिंचाई प्राप्त होगी। इनमें से कुछ एक नदी-घाटी योजनाओं से तो सिंचाई के लिए पानी अब भी उपलब्ध हो रहा है।

पहली पचवर्षीय योजना में सिंचाई की जो छोटी-बडी योजनाएँ कार्यान्वित हुई हैं, उनके परिणामस्वरूप १ करोड ६३ लाख एकड अतिरिक्त भूमि को सिंचाई प्राप्त हुई है। अब खेती के अतर्गत कुल क्षेत्रफल के २२ प्रतिशत भाग को सिंचाई की सुविधाएँ मिल गई हैं। दूसरी पचवर्षीय योजना में सिंचाई की इन सुविधाओ को २ करोड १० लाख एकड अतिरिक्त भूमि में फैलाने का लक्ष्य है।

अधिक अन्न कैसे पैदा हो

पहले अध्याय में हमने आपको बताया था कि दूसरे प्रगतिशील देशो के मुकाबले में हमारे यहाँ प्रति एकड खेती का उत्पादन बहुत कम है। परन्तु इस उत्पादन को बढाना कठिन नही। यह कैसे सम्भव है? इसके लिए हमें अपने खेतो को खाद तथा अन्य उर्वरक देने होंगे। अच्छे बीजो का प्रयोग करना पडेगा। खेती के अच्छे औजार इस्तेमाल करने होंगे और फसलो को कीडो इत्यादि से बचाना होगा। जो बजर भूमि पडी है, उसे खेती के अतर्गत लाना होगा। यह कोई कठिन काम नहीं है। चीन जैसे पिछडे हुए देश ने पिछले कुछ सालों में इतनी उन्नति की है कि हमारे प्रधान मत्री श्री जवाहरलाल नेहरू वहाँ जाकर दग रह गए। चीन के बारे में उन्होने कहा "कृषि उत्पादन के क्षेत्र में चीन ने आश्चर्यजनक उन्नति की है। मैं नही समझता कि हम भी ऐसी उन्नति क्यो नही कर सकते। हमारे पास मानव-शक्ति का अपार खजाना है। हम उत्साही नवयुवको को गाँव में भेजकर देहातियो को अच्छे बीज और उर्वरक इस्तेमाल करने के लिए तैयार कर सकते हैं।" इसलिए विद्यार्थियो पर खेती का उत्पादन बढाने का विशेष उत्तरदायित्व है। यदि आपके घरवाले खेती करते है, तो आप खेती के सम्बन्ध में हो रहे नए वैज्ञानिक अनुसधानो का प्रयोग करने के लिए अपने माता-पिता को तैयार कर सकते हैं।

बजर भूमि का सुधार

अनुमान लगाया गया है कि भारत में लगभग ८ करोड ५० लाख एकड भूमि बजर पडी है, जिसका कोई प्रयोग नही हो रहा। इसमें लगभग १ करोड एकड ऐसी भूमि है, जो उपजाऊ है और जिसमें खेती हो

सकती है। पहली पंचवर्षीय योजना में इस बजर भूमि को खेती के अन्तर्गत लाने के कई प्रयत्न किए गए। १९५५–५६ के अन्त तक केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय की ट्रैक्टर संस्था ने १० लाख एकड़ बजर भूमि को खेती योग्य बनाया था। इसके अतिरिक्त लगभग इतनी ही भूमि को राज्य सरकारों ने खेती के योग्य बनाया था। पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में भारत में खेती योग्य क्षेत्रफल ३२ करोड़ २० लाख एकड़ से बढ़ कर ३५ करोड़ २० लाख एकड़ हो गया।
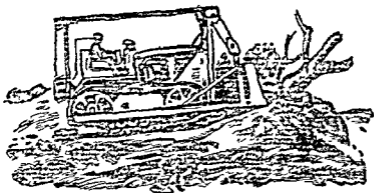
ट्रैक्टर

खाद

हम जानते हैं कि खेती का उत्पादन बहुत हद तक खाद पर निर्भर है। यह सच है कि पौधे को हवा से भी खुराक मिलती है परन्तु वह खुराक के लिए अपनी जड़ों पर अधिक निर्भर है। हम युगों-युगों से धरती माता से अधिकाधिक अन्न प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं। परन्तु हमने धरती को उसकी खुराक से वंचित रखा है। धरती को पशुओं के गोबर और मनुष्य के मैले की आवश्यकता होती है। हम पशुओं का गोबर चूल्हे में जला देते हैं और मनुष्य का मैला उसे देते नहीं। रसायनिक उर्वरकों के बारे में हमें कोई ज्ञान ही नहीं था। इसलिए हमने धरती को भूखा रखा। धरती ने बदले में हमें आज का अन्न-संकट दिया है। हम पेट भरने के लिए अमरीका, बर्मा और कनाडा के मोहताज हैं। खाद से क्या लाभ होते हैं यह आपको इस उदाहरण से पता चल जायगा।

एक एकड़ भूमि के खेत को बिना किसी खाद के जोता गया, तो उसमें १७ मन अनाज पैदा हुआ। जब उसमें गाय का गोबर डाला गया, तो खेत के उसी टुकड़े ने ४४ मन अनाज पैदा किया। परन्तु जब गाय के गोबर के स्थान पर कुछ रसायनिक उर्वरक डाले गए तो यह उत्पादन ५४ मन हो गया। इससे आपको खाद तथा उर्वरकों के महत्व का पता चल जाएगा। सरकार ने पहली पंचवर्षीय योजना में रसायनिक तथा साधारण दोनों प्रकार के खादों को लोकप्रिय करने की चेष्टा की है। रसायनिक खाद बनाने के लिए सिन्द्री (बिहार) में एक कारखाना खोला गया। यहाँ अमोनियम सल्फेट नामक रसायनिक खाद बनता है। वह किसानों में बहुत लोकप्रिय हुआ है।

अच्छे बीज

उत्पादन बढ़ाने का एक और महत्वपूर्ण तरीका है—अच्छे और सुधरे हुए बीजों का इस्तेमाल। यदि

हम वैज्ञानिक ढंग से उत्पन्न किए हुए अच्छे बीजों का इस्तेमाल करें, तो उनसे न केवल अधिक उत्पादन ही होता है बल्कि यह फसलों के कीड़ों तथा फसलों की बीमारियों का भी अधिक दृढ़ता से मुकाबला कर सकते हैं। हमारे किसान अच्छे बीजों के महत्व को भलीभाँति जानते हैं इसलिए सरकार को इन्हें लोकप्रिय बनाने में कोई दिक्कत नहीं होती। अनुमान लगाया गया है कि यदि अच्छे बीज बोए जाएँ, तो उत्पादन आसानी से १० से २० प्रतिशत बढ़ जाता है और कई मामलों में तो इससे भी ज्यादा। पिछले कुछ सालों में विभिन्न राज्यों के कृषि विभागों ने किसानों को ज्यादा से ज्यादा अच्छे बीज देने की व्यवस्था की है। सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत क्षेत्रों में अच्छे बीजों के प्रचार के लिए प्रशंसनीय कार्य हुए हैं।

जापानी ढंग से धान की खेती—भारत में धान की खेती का जापानी तरीका पहले पहल १९५३–५४ में ४ लाख एकड़ भूमि में इस्तेमाल हुआ था। धान की खेती के इस तरीके के प्रयोग से धान की पैदावार प्रति एकड़ १७.३४ मन बढ़ गई है। धान की खेती की इस प्रणाली को लोकप्रिय बनाने के लिए १९५६–५७ में सरकार ने १० लाख रुपए खर्च किए। जगह-जगह नमूने के फार्म स्थापित किए जा रहे हैं।

पौधों की रक्षा

आप जानते हैं कि भूमि जोत देने से और बीज बो देने से खेती का काम समाप्त नहीं हो जाता। जिस प्रकार बच्चे के जन्म के बाद उसके माँ-बाप उसकी रक्षा करते हैं, उसी प्रकार किसान को पौधों के उगने पर उनकी कदम-कदम पर देखभाल करनी पड़ती है। यदि ऐसा न हो, तो फसलों के कीड़े और उनकी बीमारियाँ उन्हें खा जाएँ। अनुमान लगाया गया है कि हम जितनी फसल पैदा करते हैं, उसका १० से २० प्रतिशत तक भाग प्रति वर्ष इन कीड़ों और बीमारियों के कारण विनष्ट हो जाता है। सरकार खेती की इस समस्या के प्रति पूर्ण रूप से जागरूक है। उसने फसलों के कीड़ों तथा बीमारियों की रोकथाम के लिए कई अनुसंधान संस्थाएँ खोल रखी हैं—जैसे दिल्ली की एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्स्टीट्यूट। इन अनुसंधान संस्थाओं में फसलों के ऐसे बीज निकाले जाते हैं, जो फसलों की बीमारियों तथा कीड़ों से बचे रहें। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी दवाइयाँ तैयार की जाती हैं, जिन्हें फसलों पर छिड़क देने से यह कीड़े मर जाते हैं।

पौधों पर दवाई छिड़की जा रही है

खेती के अच्छे औजार

आप जानते हैं कि दुनिया के सब प्रगतिशील देशों में खेती करने के नए-नए औजारों का आविष्कार हुआ

है। परन्तु हम इन औजारों को अच्छी तरह इस्तेमाल नहीं कर सकते। इसका एक कारण यह है कि हमारे देश में किसानों के पास जमीनों के बहुत छोटे-छोटे टुकड़े हैं। दूसरे यहाँ मानव शक्ति की कोई कमी नहीं। उदाहरण के रूप में एक ट्रैक्टर २०० एकड़ भूमि में हल चला सकता है। भारत में कितने किसान हैं, जिनके पास इतनी अधिक भूमि है? यदि ट्रैक्टरों का प्रयोग किया जाये, तो खेती पर काम करने वाले हजारों मजदूर बेकार हो जाएँ। फिर भी कुछ ऐसे औजार हैं जिनके उपयोग से खेती अधिक आसान हो गई
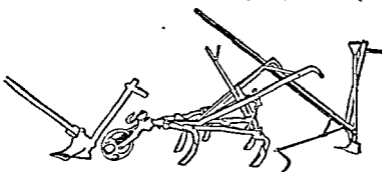
खेती के कुछ आधुनिक औजार

है जैसे सुधरे हुए हल व जमीन को समतल बनानेवाली मशीनें आदि। नरम भूमि को जोतने के लिए ट्रैक्टर बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में खेती-बाड़ी की बहुत सी सहकारी संस्थाएँ बनाने की व्यवस्था है। इन संस्थाओं की स्थापना से खेती में नई-नई मशीनों के उपयोग की अधिक सम्भावना है।

पशु-पालन

भारत में पशु खेती के आधार हैं। वे हल चलाते हैं और कुओं से पानी खींचते हैं। गाय और भैंस से किसान को दूध मिलता है और अतिरिक्त आय भी। भारत में पशुओं की कोई कमी नहीं। हमारे देश में लगभग १५ करोड़ पशु हैं—इतने और दुनिया में कहीं भी नहीं। परन्तु दुर्भाग्यवश इनमें से अधिकतर बीमार, अर्ध-भूखे और बड़े कमजोर स्वास्थ्य वाले पशु हैं। इसका कारण यह है कि हमारे देश में पशुओं की नस्ल सुधारने की ओर कभी ध्यान नहीं दिया गया। न ही उन्हें खाने को पर्याप्त चारा मिलता है।

इस समस्या को सुलझाने के लिए दो पग उठाए गए (१) पशुओं की नस्ल सुधार के लिए ६०० ग्राम केन्द्र तथा कृत्रिम गर्भाधान के १५० केन्द्र खोले गए। (२) बूढ़े और बेकार पशुओं के लिए दूर दराज के जंगली प्रदेशों में २५ गो सदन खोले गए हैं। ग्राम केन्द्र वहाँ खोले जाते हैं जहाँ आस-पास के गाँवों में गर्भ धारण करने योग्य ५००० गाएँ मौजूद हों। यहाँ अच्छी नस्ल के सांड रखे जाते हैं। इस प्रदेश में अन्य जितने सांड होते हैं, उन्हें बधिया कर दिया जाता है। नस्ल सुधार के काम को तेजी से करने के लिए कृत्रिम गर्भाधान का कार्य भी किया गया है।

भूमि सम्बन्धी सुधार

पंजाब के एक किसान ने कहा था, "मुझे रेगिस्तान का मालिक बना दो, मैं उसे एक उद्यान में बदल दूंगा।" यह बात है भी सच। भूमि का उत्पादन बढ़ाने में किसान को तभी दिलचस्पी हो सकती है, जब जमीन उसकी अपनी हो। जब भारत आजाद हुआ, तो भारत की कुल खेती योग्य जमीन केवल ५ प्रतिशत

जमींदारों के हाथ में थी। शेष ९५ प्रतिशत खेतिहर मुजारों के रूप में खेतों को जोतते थे। वे दिन-रात मेहनत करते परन्तु उन्हें मेहनत का कोई फल नहीं मिलता था। स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद सरकार ने भूमि की मिल्कियत संबंधी कानूनों को सुधारने की ओर ध्यान दिया। हमारे संविधान का एक निर्देशक सिद्धान्त यह भी है कि जमींदारों को मुआवजा देकर धीरे-धीरे जमींदारी प्रथा खत्म कर दी जाए।

भारत के प्राय सब राज्य सरकारों ने जमींदारी खत्म करने के बारे में कानून पास किए हैं। विभिन्न राज्यों में स्थानीय आवश्यकताओं को सामने रखते हुए विभिन्न कानून पास किए गए हैं। परन्तु इससे भूमि-हीन किसानों की समस्या हल नहीं हुई। आज भी हमारे देश में लगभग ५ करोड भूमिहीन किसान हैं।

जमींदारी खत्म करने का यह अर्थ नहीं कि हरेक जमींदार से जमीन छीन कर दूसरे को दी जा रही है। इसका तो उद्देश्य केवल यह है कि जमीन कुछ ही हाथों में न रहे। बडे जमींदारों के पास उतनी जमीन छोड दी जाती है जितनी वह अपने परिवार तथा नौकरों के सहयोग से आसानी से जोत सकते हैं। शेष जमीन भूमिहीन किसानों को दे दी जाती है। राज्य सरकारों ने ऐसे कानून पास किए हैं, जिनके अनुसार एक व्यक्ति जितनी अधिक से अधिक भूमि रख सकता है उसकी सीमा निश्चित कर दी गई है। प्रत्येक राज्य में एक जैसी सीमा नहीं है। राज्य सरकारों ने स्थानीय हालतों को दृष्टिगत रखते हुए ये सीमाएँ निश्चित की हैं।

भूदान आन्दोलन

जहाँ सरकार ने भूमि हीन किसानों को जमीन देने के लिए जमींदारी समाप्त करने के कानून पास किए है वहाँ आचार्य विनोबा भावे का भूदान आन्दोलन भी इस समस्या को हल करने में बडा सहयोगी सिद्ध हुआ है। भूदान आन्दोलन का जन्म कैसे हुआ, इसका एक रोचक इतिहास है।

१९५१ के वसन्त ऋतु की बात है। एक पतला सा कमजोर आदमी हैदराबाद राज्य के तैलगाना प्रदेश में पदयात्रा कर रहा था। इस प्रदेश में आतंक फैला हुआ था। भूमिहीन किसानों ने भूमि के दोबारा बाँटे जाने के लिए एक हिंसात्मक आन्दोलन शुरु कर रखा था। इस पतले से कम-जोर आदमी की रक्षा के लिए न कोई पुलिस थी और न ही कोई अग रक्षक। निडर होकर वह प्रत्येक झोंपडी में जाता और प्रत्येक गाँव में घूमता। वह स्त्रियों और पुरुषों सबसे बातचीत करता। बडे ही सब्र से उनकी दुखभरी कहानी सुनता। वह उनकी समस्याओं को समझना चाहता था। यह पतला-सा आदमी आचार्य विनोबा भावे ही थे। आप गाधीजी के प्रमुख शिष्यों में से एक है। एक दिन आचार्य भावे पचमपल्ली नामक एक गाँव में से गुजर रहे थे। इस गाँव के लगभग ४० हरिजन परिवारों ने आपको घेर लिया।

आचार्य विनोबा भावे

आचार्य ने उनसे पूछा—"आप क्या चाहते हैं ?"

उन्होंने उत्तर दिया—"भूमि।"

आचार्य के पास तो कोई भूमि नहीं थी। वह चुप हो गए। थोड़ी देर के बाद उन्होंने लोगों से कहा—"मैं सरकार से इस बारे में बात करूँगा।" परन्तु यह भी कोई जवाब था ! काफी देर तक वहाँ पर खामोशी छाई रही। आचार्य गहरे सोच में पड़े हुए थे। थोड़ी देर बाद उन्होंने अपनी आँख उठाई और उपस्थित लोगों से पूछा—"क्या आप में से कोई जमींदार है ?"

आचार्य चाहते थे कि कोई जमींदार अपनी भूमि का कुछ हिस्सा इन अभागे लोगों की जरूरतें पूरी करने के लिए देने को तैयार हो जाए। इस बलिदान के लिए भला कौन तैयार हो सकता था ? सब लोग एक बार फिर खामोश हो गए।

लोगों के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा जब उपस्थित लोगों में से एक आदमी उठा और कहने लगा, "मैं अपनी भूमि में से १०० एकड़ भूमि इन लोगों के लिए दूंगा।"

इस प्रकार भू-दान यज्ञ का यह महान आन्दोलन प्रारम्भ हुआ जिसने दुनिया को अचम्भे में डाल दिया है। विदेशियों को इस बात ने हैरानी होती है कि कैसे कोई आदमी स्वेच्छा से अपनी जमीन दूसरे को दे सकता है। भूदान यज्ञ में दान देने वाले इस पहले जमींदार का नाम श्री वी० आर० रेड्डी था। जबसे लेकर अब तक भूदान आन्दोलन निरन्तर प्रगति कर रहा है। आचार्य विनोबा के विचार में भूमि दान करने का यह काम एक पवित्र यज्ञ है। वैसा ही यज्ञ जैसा कि हम लोग अपने घरों में करते हैं। भूदान आन्दोलन से यह सिद्ध हो गया है कि भूमि की यह समस्या अहिंसात्मक ढंग से हल हो सकती है। उसने जनता को आने वाली नई सामाजिक और आर्थिक क्रांति के लिए तैयार कर दिया है। यह क्रांति जोर-जबर से नहीं होगी, बल्कि लोगों की स्वेच्छा से होगी। यह एक ऐसी क्रांति है, जिसका उदाहरण दुनिया के इतिहास में नहीं मिलता।

अब तक भू-दान यज्ञ में लगभग ९० लाख एकड़ भूमि और १२०० गाँव प्राप्त हो चुके हैं। इस यज्ञ में प्राप्त भूमि में से ६ लाख एकड़ भूमि किसानों में बाँटी जा चुकी है। आचार्य विनोबा का लक्ष्य भू-दान के रूप में ५ करोड़ एकड़ भूमि प्राप्त करना है। यह कहना कठिन है कि आचार्य जी का यह लक्ष्य कब पूरा होगा परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि भू-दान आन्दोलन ने जन-साधारण को नई आर्थिक क्रांति के लिए मानसिक रूप से तैयार कर दिया है।

सहकारी खेती

चीन में ऐसी सहकारी कृषि संस्थाएँ हैं, जहाँ १०—१२ या ५० किसान मिलकर अपनी सारी जमीन सामूहिक रूप से जोतते हैं। खेती के औजार, बीज, पशु इत्यादि सब साझे में होते हैं। इससे उत्पादन बढ़ता और सब किसानों को अपने-अपने हिस्से के अनुसार लाभ मिल जाता है। आपको यह जानकर हैरानी होगी कि चीन में ९२ प्रतिशत देहाती परिवार ऐसी कृषि संस्थाओं के सदस्य हैं। वहाँ पर सरकारी कृषि संस्थाओं की संख्या १० लाख से भी अधिक है। भारत में भी हमें ऐसी सहकारी कृषि संस्थाएँ स्थापित करनी चाहिएँ। दूसरी पंचवर्षीय योजना में ऐसी सहकारी कृषि संस्थाओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन देने का लक्ष्य रखा गया है। मार्च १९५६ के अन्त तक भारत में इस प्रकार की केवल ६०० सहकारी कृषि संस्थाएँ थीं।

सहकारी खेती का लाभ

हमारे देहातों में सहकारिता के आन्दोलन को ज्यादातर कर्ज के क्षेत्र में ही सफलता मिली है। कृषि की सहकारी संस्थाएँ बनाने में हमारे किसान उत्साह नहीं दिखा रहे हैं। शायद इसका कारण यह है कि भारतीय किसान ज्यादातर व्यक्तिवादी हैं। हमारे प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के विचार में भारतवासी ऐसी कृषि संस्थाएँ स्थापित किए बिना विशेष उन्नति नहीं कर सकते। १९५७ के आरम्भ में कलकत्ता की एक सभा में भाषण देते हुए आपने कहा था, "मुझे अपने मस्तिष्क में इस बारे में तनिक भी संदेह नहीं कि भारत के सामने सहकारिता के आधार पर खेती के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं। हम जमीन के छोटे-छोटे टुकड़ों में खेती के आधुनिक अनुसंधानों का प्रयोग नहीं कर सकते। इनका प्रयोग तभी संभव है यदि हम इन छोटे-छोटे टुकड़ों को मिलाकर एक बहुत बड़ा फार्म बनाएँ। ऐसा करना सरकार द्वारा ही संभव है। इसमें घबराने की कोई बात नहीं। आइए, हम इस काम को छोटे पैमाने पर शुरू करें। मुझे भारत के किसानों की बुद्धि में पूरा पूरा विश्वास है। यदि उन्हें कृषि में सहकार का उपयोग अच्छी तरह समझा दिया जाए, तो मुझे तनिक भी संदेह नहीं कि वे इसका स्वागत करेंगे।"

चकबन्दी

पिछले अध्याय में हमने आपको बताया था कि उत्तराधिकार के कारण किस प्रकार जमीन छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट गई है। अधिकतर गाँवों की यह हालत है कि खेती के अन्तर्गत सारी भूमि टेढ़े मेढ़े छोटे-छोटे

खेतों में विभक्त है। किसान को जगह-जगह बिखरी हुई अपनी जमीन की व्यवस्था करने में बडी कठिनाई होती है। खेतों की इस त्रुटि को दूर करने के लिए चकबन्दी का काम शुरू किया गया है। बहुत से राज्यों में विशेष रूप से पंजाब में चकबन्दी कानून पास किए गए हैं। इन कानूनों के अन्तर्गत चकबन्दी अनिवार्य करार दे दी गई है। जब किसी गाँव की चकबन्दी होती है, तो गाँव की सारी जमीन को इकट्ठी करके
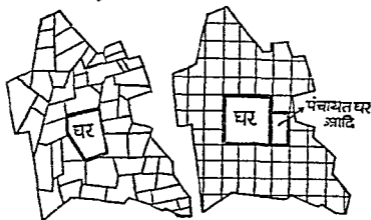
चकबंदी से पहले चकबंदी के बाद

उसे प्रत्येक किसान के हिस्से के आधार पर पुनः बाँट दिया जाता है। मौके का फायदा उठाते हुए सड़कें, पंचायतघर, स्कूल, अस्पताल, खेल के मैदान इत्यादि के लिए भूमि सुरक्षित रख ली जाती है। भूमि की चकबन्दी से खेती करना बहुत सुगम हो गया है। पंजाब में चकबन्दी के योग्य लगभग ४ करोड एकड भूमि है। इसमें से आधी से ज्यादा भूमि की चकबन्दी हो चुकी है। ऊपर एक ही गाँव के दो चित्र दिए गए हैं—एक चकबन्दी से पहले का और दूसरा चकबन्दी के बाद का। इससे आपको अनुमान हो जाएगा कि चकबन्दी से किसी गाँव का कितना लाभ होता है।

मण्डियों की सुविधा

किसान जो कुछ पैदा करते हैं, मण्डी में जाकर उसे बेचना पडता है। हमारे अधिकतर किसान अशिक्षित हैं, वे मण्डी के आढतियों के हथकण्डों को नहीं जानते। इसलिए आढती लोग पिछले समय में उन्हें बुरी तरह लूटते रहे हैं। परन्तु अब बहुत से राज्यों में मण्डियों सम्बन्धी कानून (मार्केटिंग एक्ट्स) पास किए गए हैं। इन कानूनों के अन्तर्गत मण्डियों के व्यापारियों पर सरकार कडा नियंत्रण रखती है। कुछ किसानों ने सहकारी मार्केटिंग संस्थाएँ भी स्थापित की हैं। इन संस्थाओं के हाथ वे उचित दामों पर अपनी उपज को बेच सकते हैं।

फसल प्रतियोगिता

उत्पादन बढाने के लिए किसानों में प्रतियोगिता की भावना पैदा करने के लिए सरकार ने फसल

प्रतियोगिता की एक योजना १९४९ में प्रारम्भ की थी। ये प्रतियोगिताएँ मुख्य-मुख्य फसलों में की जाती हैं जैसे गेहूँ, धान, आलू, चने इत्यादि। प्रतिवर्ष जो किसान किसी फसल में सब से ज्यादा अनाज पैदा करता है, उसे ५,००० रुपये नकद इनाम तथा "कृषि पण्डित" की उपाधि मिलती है। फसल प्रतियोगिता की इस योजना से देश में अधिक अन्न पैदा करने के आन्दोलन को प्रोत्साहन मिला है।

ऊपर के वृत्तान्त से स्पष्ट हो जाता है कि हमारे पास खेती की उन्नति करने के लिए समुचित साधन हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि हम ठीक तरह से उनका प्रयोग कर पाएँ। खेती के अन्तर्गत क्षेत्रफल को हमें तेजी से बढ़ाना होगा। सिंचाई की सुविधाओं को भारत के कोने-कोने में पहुँचाना होगा। खेती के नवीनतम साधनों के उपयोग से देश के उत्पादन में वृद्धि करनी होगी। परन्तु हमारी ये सब चेष्टाएँ असफल ही रहेंगी यदि हमारी जनसंख्या बे-रोक-टोक बढ़ती रही। यदि जनसंख्या को नियन्त्रित करने के उपाय तत्काल नहीं किये गये, तो इसमें सन्देह नहीं कि खाद्य संकट के बादल सदा ही भारत पर मँडराते रहेंगे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में खेती की मुख्य समस्याएँ क्या हैं? इन्हें कैसे हल किया जा सकता है?

(२) भारत में खेती-बाड़ी की उन्नति के लिए सरकार क्या-क्या पग उठा रही है?

(३) भूदान आन्दोलन के बारे में आप क्या जानते हैं?

(४) भूमिहीन किसानों की समस्या को हल करने के लिए सरकार क्या कर रही है?

(५) सहकारी खेती किसे कहते हैं? इससे क्या लाभ हो सकता है?

(६) भारत में खेती का उत्पादन किन उपायों से बढ़ाया जा सकता है? क्या हम उत्पादन बढ़ाने में सफल रहे हैं?

(७) पशुओं की नस्ल-सुधार के बारे में सरकार क्या काम कर रही है?

: १३ :

भारत की नदी-घाटी योजनाएँ

१९५०–५१ में जब भारत की प्रथम पचवर्षीय योजना शुरू हुई थी, तो देश में केवल ५ करोड ४० लाख एकड भूमि में सिंचाई होती थी। यह क्षेत्रफल भारत में खेती के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल का छठा भाग था। पहली पचवर्षीय योजना में सिंचाई की जो छोटी-बडी योजनाएँ शुरू की गई, उनके परिणामस्वरूप सिंचित क्षेत्रफल ६ करोड ५५ लाख एकड हो गया। इसी दौरान में भारत में उपलब्ध विद्युत शक्ति भी २३ लाख किलोवाट से बढ़कर ३४ लाख किलोवाट हो गई।

दूसरी पचवर्षीय योजना में सिंचाई, बिजली तथा बाढ नियत्रण के लिए ९१० करोड रुपए की व्यवस्था की गई है। इस काल में सरकार २०० नई सिंचाई योजनाएँ और १८० विद्युत योजनाएँ शुरू कर रही है। अनुमान है कि १९६०–६१ तक देश के सिंचित क्षेत्रफल में २ करोड १० लाख एकड की वृद्धि हो जाएगी। देश की उपलब्ध विद्युत शक्ति भी दुगुनी हो जाएगी।

भारत में सिंचाई के अन्तर्गत ६ ५ करोड एकड भूमि है। दुनिया के किसी भी देश में इतने विशाल क्षेत्रफल में सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध नही। भारत की नदियो में जितना पानी उपलब्ध है, उसका केवल ५ ६ प्रतिशत ही इस समय सिंचाई के लिए उपयोग हो रहा है। अत अभी सिंचाई का विस्तार करने की बडी सभावना है। नदियो के पानी को सिंचाई और बिजली के लिए इस्तेमाल करने के लिए सरकार ने देश के विभिन्न भागो में बहुत सी नदी घाटी योजनाएँ शुरू की है।

भारत की मुख्य नदी घाटी योजनाओ का सक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है।

भाखडा नगल

पजाब की एक बडी नदी है सतलुज। तूफान की सी तेजी से बहती है। हिमालय से निकलकर लम्बा चक्कर काटती हुई, भाखडा नामक एक स्थान पर यह मैदानो में दाखिल होती है। यहाँ पर एक तग घाटी है। नदी का पाट छोटा है। दोनो ओर ऊँची-ऊँची चोटियाँ हैं। यहाँ दोनो ओर के पहाडो को काटकर दो सुरगें बनाई गई हैं। इन सुरगो में से सतलुज का पानी गुजारा गया है। इस प्रकार नदी में से पानी को सुखा देने के बाद सतलुज की गोदी में ७४० फीट ऊँचा भाखडा बाँध खडा किया जा रहा है। यह दुनिया का सबसे ऊँचा बाँध होगा। जब बाँध बन जाएगा, तो पुन सतलुज को अपने पुराने मार्ग से गुजारा जाएगा। बाँध पानी को रोक लेगा। इसलिए यहाँ पानी जमा होता रहेगा। इस प्रकार ६० वर्गमील लम्बी चौडी एक विशाल झील बन जाएगी। झील का नाम गोविन्द सागर रखा गया है। इस झील में नावें चलेंगी। गोविन्द सागर सैर के लिये अनुपम स्थान होगा। झील का पानी आवश्यक्तानुसार बाँध के द्वारा से नदी में डाला जाया करेगा। भाखडा बाँध आधे से अधिक बन चुका है। अनुमान है कि १९६० तक यह बाँध बिल्कुल तैयार हो जाएगा। इस समय इस बाँध के निर्माण पर २४ घटे काम होता है।

भाखड़ा से आठ मील नीचे सतलुज नदी पर ९५ फीट ऊँचा एक और बांध बनाया गया है। इसे नगल बाँध कहते हैं। यहाँ से एक बड़ी नहर निकाली गई है। यह नहर रोपड़ तक जाती है। रोपड़ के आगे सारे पजाब व राजस्थान में छोटी-बड़ी नहरों का जाल बिछा दिया गया है। इन सब नहरों की लम्बाई तीन हजार मील से भी अधिक है। ये नहरें लगभग ३६ लाख एकड़ प्यासी धरती को सींच रही हैं। भाखड़ा और नगल दोनो स्थानों मे प्रचुर मात्रा में बिजली भी पैदा की जा रही है। अनुमान है कि इस योजना पर १७५ करोड़ रुपए खर्च होंगे। भाखड़ा नागल योजना से जो सिंचाई होगी उससे ११ लाख टन अतिरिक्त अनाज और कपास की आठ लाख अतिरिक्त गाठें प्रति वर्ष पैदा होंगी। यह अतिरिक्त वार्षिक उत्पादन ८९ करोड़ रुपये के बराबर है।
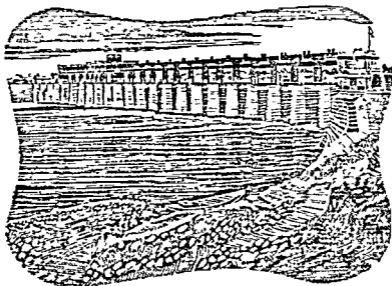
भाखड़ा नगल

अभी हमने बताया कि भाखड़ा बाँध ससार का सबसे बड़ा बाँध होगा। बाँध की विशालता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि इस बाँध में दिल्ली के कुतुबमीनार जैसे ५ मीनार समा सकते हैं। गोविन्दसागर में जो पानी जमा होगा, वह समस्त भारतवासियों की एक वर्ष की घरेलू आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त है।

दामोदर घाटी

भाखड़ा-नगल से पजाब और राजस्थान को पानी तथा बिजली मिलेगी तो दामोदर घाटी योजना से बिहार और बंगाल को। दामोदर नदी को बिहार का अभिशाप कहा जाता है। प्रति वर्ष दामोदर नदी में

बाढ़ आ जाती है जिससे सर्वत्र तबाही मच जाती है। दामोदर घाटी योजना द्वारा इस नदी को मिधाया जा रहा है। नदी पर आठ स्थानों पर बाँध लगाकर पानी जमा किया जाएगा। यह पानी सिंचाई के काम आएगा।

दामोदर नदी घाटी योजना की १,५०० मील लम्बी नहरें होंगी। वे १० लाख एकड़ भूमि को सींचेंगी। बाँधों के साथ-साथ बिजली घर भी स्थापित किए जा रहे हैं।

हीराकुड

उड़ीसा में एक नदी है। उसका नाम है महानदी। हीराकुण्ड बाँध महानदी पर बाँधा गया है। यह स्थान उड़ीसा के नगर सम्भलपुर से ६ मील ऊपर है।

जहाँ भाखड़ा दुनिया का सबसे ऊँचा बाँध है, वहाँ हीराकुण्ड सबसे लम्बा। आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि इस बाँध की लम्बाई तीन मील है। परन्तु ऊँचाई कहीं भी ५० फीट से ज्यादा नहीं।

हीराकुण्ड का जलाशय भी भारत में सबसे विशाल है। यहाँ से उड़ीसा की सात लाख एकड़ से अधिक प्यासी धरती को पानी मिल रहा है।

मयूराक्षी योजना

मयूराक्षी नदी बिहार से होती हुई बंगाल में जाती है। इस नदी को बिहार के मसजोर नामक एक स्थान पर बाँधा गया है। कुछ नीचे जाकर पश्चिम बंगाल में तिपरा के स्थान पर भी एक बाँध बना है। यहाँ से सिंचाई के लिये नहरें निकाली गई हैं। जब यह योजना पूरी हो जायगी, तो इससे पश्चिम बंगाल की ७ लाख एकड़ भूमि सींची जाएगी और बिहार की २५ हजार एकड़।

चम्बल योजना

चम्बल योजना को शुरू हुए बहुत देर नहीं हुई। इस योजना के अन्तर्गत चम्बल नदी को साधा जा रहा है। योजना की पूर्ति पर राजस्थान और मध्य भारत की १४ लाख एकड़ भूमि सींची जा सकेगी। राजस्थान और मध्य भारत की सीमा पर एक विशाल बाँध बन रहा है। इसका नाम गाँधीसागर बाँध रखा गया है।

नागार्जुन सागर योजना

नागार्जुन सागर योजना से आन्ध्र राज्य में लगभग २१ लाख एकड़ जमीन को सींचा जा सकेगा। दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी कृष्णा पर नन्दीकोण्डा गाँव के पास एक विशाल बाँध बाँधा जा रहा है।

तुंगभद्रा योजना

तुंगभद्रा योजना से मुख्यतः दो राज्यों को लाभ होगा—मैसूर और आंध्र। तुंगभद्रा नदी पर होस्पत के स्थान पर लगभग ८,००० फीट लम्बा एक बाँध बनाया गया है।

लोअर भवानी

यह मद्रास राज्य की योजना है। भवानी नदी पर भवानी सागर के स्थान पर एक बाँध बाँधा गया है। यहाँ से मद्रास राज्य की दो लाख एकड़ से भी ज्यादा भूमि को सिंचाई के लिए पानी मिलता है।

कोसी

कोसी बिहार की सबसे खतरनाक नदी है। प्रति वर्ष इसमें बाढ़ आती है जिससे लाखों लोग बे घर हो जाते हैं। इस नदी को काबू में लाने के लिए नेपाल में कोसी पर एक बाँध बाँधा जा रहा है। इससे बाढ़ रुक जाएगा। साथ ही बिहार और नेपाल में लगभग तेरह लाख एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी।

ऊपर हमने कुछ एक बडी-बडी योजनाओं का उल्लेख किया है। इनके अतिरिक्त और भी छोटी बडी कितनी ही योजनाएँ हैं जहाँ जनता के सपने साकार हो रहे हैं।

आपने देख लिया कि सिंचाई तथा बिजली की ये योजनाएँ कितनी लाभकारी हैं। वे धरती की प्यास बुझा रही हैं। कारखानों को विद्युत शक्ति देती हैं। वे इन्सान का पेट भर रही हैं। इसलिए वे पूजा और आदर की पात्र हैं। अत यदि हम उन्हें नए भारत के तीर्थस्थान कहते हैं, तो यह कोई बडी बात नहीं। हमें अवश्य ही इन तीर्थस्थानों के दर्शन के लिए जाना चाहिए। इससे हमें पता चलेगा कि नया भारत कितनी तेजी से आगे बढ़ रहा है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) नदी-घाटी योजनाओं को तीर्थ-स्थान क्यों कहते हैं ? इन योजनाओं से भारत को क्या लाभ होगा ?

(२) भाखड़ा नंगल योजना पर एक निबन्ध लिखो। इससे देश को क्या लाभ होगा ?

(३) भारत की पाँच प्रमुख नदी-घाटी योजनाओं के नाम बताओ ? उनके बारे में संक्षिप्त विवरण भी लिखो।

भारत का औद्योगिक विकास

> संसार में भारत का औद्योगिक विकास अद्वितीय होगा क्योंकि भारत ने न केवल उद्योगों के निजी तथा सरकारी क्षेत्रों के अन्तर को सफलता से दूर कर लिया है बल्कि बड़े तथा छोटे उद्योगों के बीच अच्छा सामंजस्य स्थापित कर लिया है। —डा० पट्टाभि सीतारमैया

वर्तमान मशीन युग में किसी देश की आर्थिक उन्नति औद्योगिक विकास के बिना सम्भव नहीं। जन-साधारण के जीवन-स्तर को ऊँचा करने के लिए जरूरी है कि देश में अधिक से अधिक बड़े-बड़े उद्योग स्थापित किए जाएँ जिनसे उत्पादन बढ़े और देश अमीर हो। सैकड़ों वर्षों की आर्थिक गुलामी के बाद अब भारत अपने औद्योगिक विकास की ओर ध्यान दे रहा है। लेकिन अभी हमें औद्योगिक उन्नति की दिशा में काफी रास्ता तय करना है। भारत प्रति वर्ष ७०० करोड़ रुपए के मूल्य की चीजें विदेशों से मँगवाता है जिनमें से अधिकतर ऐसी औद्योगिक वस्तुएँ हैं, जो हम अपने देश में बना सकते हैं।

औद्योगीकरण की आवश्यकता

किसी देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ और सन्तुलित बनाने के लिए औद्योगीकरण जरूरी है। आज हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था का आधार खेती है। खेती आप जानते हैं कितना अनिश्चित व्यवसाय है। उद्योग-धंधों का विकास किए बिना हम देश के आर्थिक ढाँचे में स्थिरता नहीं ला सकते और न ही देश से गरीबी दूर कर सकते हैं। यही नहीं, खेती के विकास के लिए भी औद्योगीकरण जरूरी है। रोजगार के अन्य साधन न होने के कारण एक घर के सब लोग खेती में जुट जाते हैं। इतने आदमियों की खेती में आवश्यकता नहीं होती। परिणामस्वरूप खेती का भार बढ़ता जाता है। खेत बँटकर छोटे हो जाते हैं और किसान को अपनी मेहनत का बहुत कम फल मिलता है। यदि देश का औद्योगीकरण हो जाए, तो परिवार के सब सदस्यों को खेती करने की आवश्यकता नहीं। एक भाई खेती कर सकता है, दूसरा कारखाने में काम करे, तीसरा

भारत की औद्योगिक परम्परा

भारत प्राचीन काल से 'ससार की उद्योगशाला' के नाम से प्रसिद्ध रहा है। वह किसी जमाने में सारी दुनिया के व्यापार का केन्द्र था। ससार के प्रत्येक भाग में हमारे देश के माल की माँग थी। भारत में अग्रेजी राज के प्रारम्भ के साथ हमारे उद्योग-धन्धो का ह्रास हुआ। ब्रिटिश सरकार की नीति के फलस्वरूप भारत केवल कच्चा माल पैदा करनेवाला देश ही रह गया।

१८५० और १८५५ के बीच के ५ वर्ष भारत के औद्योगीकरण के इतिहास में महत्वपूर्ण हैं। इन सालो में हमारे देश में कुछ कपडा तथा पटसन मिलें स्थापित हुई और लोहे की कुछ खानो में भी काम शुरू हुआ। पिछले ७५ वर्षों में इन उद्योगो ने अभूतपूर्व उन्नति की है। इन उद्योगो की स्थापना के बाद देश में चमडा, कागज, लोहा, इस्पात इत्यादि के उद्योग भी धीरे-धीरे स्थापित होते गए।

प्रथम महायुद्ध और उसके बाद भारतीय उद्योगो को उन्नति का अच्छा अवसर मिला। १९४५ में जब दूसरा युद्ध समाप्त हुआ तो दुनिया के औद्योगिक देशों में भारत आठवाँ स्थान प्राप्त कर चुका था। भारतीय कारखानो मे ४५ लाख आदमी काम करते थे। १९४७ में भारत के विभाजन ने हमारे कुछ उद्योगो की कमर तोड दी। उदाहरण के रूप में पटसन की मिलें तो कलकत्ता में थी परन्तु पटसन पैदा करनेवाला प्रदेश पाकिस्तान के हिस्से आया था। इसी तरह हमारी कपडा मिलें भी पाकिस्तानी रुई की मोहताज हो गईं। इस सकट पर काबू पाने के लिए हमारी राष्ट्रीय सरकार ने दिसम्बर १९४७ में मालिकों, मजदूरो तथा सरकार के प्रतिनिधियो की एक कान्फ्रेंस बुलाई। इस कान्फ्रेंस में फैसला किया गया कि वर्तमान साधनो का अधिकाधिक उपयोग करके औद्योगिक उत्पादन बढाया जाए। इस काम में सब ने एक दूसरे का हाथ बँटाने का सकल्प किया। १९४८ में सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा कर दी। इस घोषणा में एक ऐसी मिली-जुली अर्थ-व्यवस्था की कल्पना की गई है, जिसमें उद्योगो के आयोजित विकास तथा राष्ट्र के हित में उनके नियमन का सरकार पर उत्तरदायित्व रहेगा।

उद्योगो को तीन क्षेत्रो में बाँट दिया गया। पहले प्रकार के उद्योगो में अस्त्र-शस्त्र तथा गोला-बारूद, अणु शक्ति, नदी-घाटी योजना कार्य तथा रेलें सम्मिलित थी। इन पर सरकार का एकाधिकार होगा। दूसरे प्रकार के उद्योगो में कोयला, लोहा, तथा इस्पात, विमान, टेलीफोन, तार, बेतार, जहाज निर्माण तथा खनिज तेल इत्यादि शामिल थे। इन उद्योगो के बारे में निर्णय किया गया कि भविष्य में केवल सरकार ही इन उद्योगो को शुरू करेगी। परन्तु इस श्रेणी में जो निजी उद्योग पहले से काम कर रहे हैं, उन्हें कम से कम दस वर्ष के लिए और जारी रहने दिया जाएगा। इसके बाद स्थिति पर दोबारा विचार होगा। शेष सब उद्योग निजी क्षेत्र में छोड दिए गए। उपरोक्त उद्योगो के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति निजी रूप से किसी उद्योग को शुरू कर सकता है। उद्योगो के उपरोक्त विभागीकरण के अनुसार सरकार के अधीन उद्योगो को सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग (Public Sector) कहा जाता है और साधारण लोगो द्वारा सचालित उद्योगो को निजी क्षेत्र के उद्योग (Private Sector) का नाम दिया जाता है।

सरकार और उद्योग

सरकार देश के औद्योगीकरण के महत्व को जानती है। अतः पहली तथा दूसरी दोनों ही पंचवर्षीय योजनाओं में उद्योगों के विकास के लिए भरपूर चेष्टा की गई है। पहली पंचवर्षीय योजना में खाद्य संकट के कारण खेती और सिंचाई को प्रथम स्थान दिया गया था। दूसरी पंचवर्षीय योजना में उद्योगों का सबसे ऊँचा स्थान है।

पहली योजना में उद्योगों तथा खनिज पदार्थों के विकास के लिए कुल राशि का ७ प्रतिशत भाग निश्चित किया गया था। आशा थी कि प्रथम योजना काल (१९५१–५६) में सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योगों पर ९४ करोड़ रुपए खर्च किए जाएँगे। परन्तु वास्तव में केवल ५६ करोड़ रुपए ही खर्च हुए। निजी क्षेत्र में २३३ करोड़ रुपए व्यय किए जाने का अनुमान था। यह लक्ष्य पूरा हो गया है। पहली योजना काल में उद्योगों पर कुल मिलाकर २९३ करोड़ रुपए व्यय किए गए, जबकि योजना में ३२७ करोड़ रुपए खर्च करने का लक्ष्य था।

पहली योजना की अवधि में विभिन्न उद्योगों में उत्पादन के जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे वे अधिकतर उद्योगों में न केवल प्राप्त कर लिए गए बल्कि लक्ष्य से भी अधिक सफलता प्राप्त हुई। इस काल में भारत ने औद्योगिक क्षेत्र में जो उन्नति की उसका अनुमान क्रमशः बढ़ते हुए इन सूचक अंकों से लगाया जा सकता है। इस तालिका के आधार पर मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि १९५० और १९५५ के मध्य हमारे देश में औद्योगिक उत्पादन ५६ प्रतिशत से अधिक बढ़ा।

औद्योगिक उत्पादन के सूचक अंक
(आधार १९४६=१००)

वर्ष	सूचक अंक
१९५०	१०५
१९५१	११७·२
१९५२	१२८·९
१९५३	१३५·३
१९५४	१४६·६
१९५५	१६१·४

दूसरी योजना में

प्रथम योजना में जो सफलता प्राप्त हुई है, उससे उत्साहित होकर सरकार ने दूसरी योजना (१९५६–१९६१) में औद्योगीकरण का एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम बनाया है। इस योजना में सरकार ने बड़े उद्योगों के विकास के लिए कुल मिलाकर १,०९४ करोड़ रुपए लगाने का ध्येय रखा है। इसमें से ५५९ करोड़ रुपए सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों पर खर्च होंगे और ५३५ करोड़ रुपए निजी क्षेत्र में।

भारत के कुछ बड़े-बड़े उद्योग

सूती वस्त्र मिल उद्योग

सूती-वस्त्र मिल उद्योग भारत का सबसे बडा मिल उद्योग है। इस उद्योग में भारतीय रेलो को छोडकर सब उद्योगो से अधिक कर्मचारी काम करते हैं। इसमें लगभग १०४ करोड रुपए की पूजी लगी हुई है और ७४३,००० कर्मचारी काम करते हैं। देश में ४६१ कपडा मिलें हैं। इनमें २०० के लगभग मिलें बम्बई राज्य में हैं। मद्रास राज्य में ९० मिलें हैं।

पिछले कुछ वर्षों से भारत ससार में सूती कपडे का मुख्य निर्यातक देश बन गया है। १९५० में भारत ने १११ करोड गज कपडा विदेशो को भेजा। इससे अधिक कपडा किसी और देश ने निर्यात नही किया था। जापान, इग्लैण्ड और अमेरिका का स्थान क्रमश दूसरा, तीसरा और चौथा था। इस कपडे के निर्यात से भारत ने १३४ करोड रुपया कमाया। १९५० के बाद भारत के वस्त्र निर्यात में निरन्तर कमी होती गई। १९५३ में स्थिति कुछ सुधरी और १९५४ में पुन भारत का वस्त्र निर्यात में दूसरा स्थान था। जापान ने, जिसका पहला स्थान था, १३१ करोड गज कपडा निर्यात किया और भारत ने ९० करोड गज।

भारत में सूती कपडा मिल उद्योग का इतिहास १८५४ से शुरू होता है जब बम्बई में सूती कपडे की एक मिल पहली बार स्थापित हुई थी। १८७७ के बाद ऐसी मिलें नागपुर, अहमदाबाद इत्यादि स्थानो में शुरू हुईं। स्वदेशी आन्दोलन ने भारतीय कपडा मिलो को पनपने में बडी सहायता दी। द्वितीय महायुद्ध में इस उद्योग को और भी बढने का मौका मिला। तब से लेकर अब तक यह उद्योग निरन्तर उन्नति कर रहा है। इसका उत्पादन बढता जा रहा है जैसा कि निम्न तालिका से प्रगट है :

(कपडा करोड गजों में)

वर्ष	उत्पादन
१९५०–५१	३६७
१९५१–५२	४३०
१९५२–५३	४७१
१९५३–५४	४९६
१९५४–५५	५०६
१९५५–५६	५०७

द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १९६०-६१ में भारत में ८५० करोड गज सूती कपडा बनाने का लक्ष्य निश्चित किया गया है।

अब भारत में मिलों तथा हाथ करधा पर जितना कपडा बनता है, यदि वह भारतवासियों में बराबर-बराबर बाँटा जाए तो सबके हिस्से में १५ गज कपडा आता है। १९५१ में जितना कपडा बनता था यदि वह इस तरह बाँटा जाता, तो सबको ९ गज से ज्यादा न मिलता। कितनी उन्नति हुई है इन पाँच सालो में!

लोहा तथा इस्पात उद्योग

किसी देश की औद्योगिक उन्नति का मूल इस्पात है। आज किसी उद्योगपति से पूछिए औद्योगीकरण के लिए सब से ज्यादा किस चीज की जरूरत है? उत्तर मिलेगा—इस्पात। चाहे रेलवे इंजन बनाना हो, या छोटा-सा पिन! प्रत्येक मशीन उद्योग में आपको लोहे और इस्पात की जरूरत होगी। लोहा, आधुनिक औद्योगिक सभ्यता का आधार है। वास्तव में किसी देश की भौतिक उन्नति का अनुमान उसके लोहे और इस्पात के उत्पादन से लगाया जा सकता है। अमेरिका और रूस की समृद्धि का आधार लोहे और इस्पात का उत्पादन है। भाग्यवश भारत में इस उद्योग की उन्नति के सब साधन प्रस्तुत हैं। यहाँ कच्चे लोहे की कमी नहीं। कच्चे लोहे को गलाने के लिए कोयला भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। लोहे और कोयले की खानें एक दूसरे से दूर नहीं। अतः भारत के लिए कम से कम अपनी आवश्यकता के लिए पर्याप्त लोहा और इस्पात तैयार करना कठिन नहीं है।

भारतवर्ष के लिए इस्पात बनाना कोई नई बात नहीं। प्रोफेसर विलसन ने सिद्ध किया है कि भारत में ईसा से ६०० साल पूर्व भी लोहा ढाला जाता था। भारत में लोहा ढालने का एक बढ़िया उदाहरण दिल्ली के कुतुबमीनार के पास लोहे का एक बहुत पुराना स्तम्भ है जो सम्भवतः सम्राट अशोक ने बनवाया था।

भारत में आधुनिक ढंग से इस्पात का निर्माण सर्वप्रथम स्वर्गीय जमशेदजी नौशेरवानजी टाटा ने १९०७ में टाटा आयरन एण्ड स्टील वर्क्स खोलकर शुरू किया था। पहले महायुद्ध में इस उद्योग को काफी लाभ पहुँचा। टाटा कम्पनी ने अपना भारी विकास किया। उनकी देखा-देखी कुछ और लोहे के कारखाने खुले। १९२३ में मैसूर में भी एक लोहे का कारखाना खुला। द्वितीय महायुद्ध में इस उद्योग को सरकार ने भारी आर्डर मिले क्योंकि युद्ध के कारण बाहर से इस्पात का आना बिल्कुल बन्द हो गया था। लोहे की माँग इतनी ज्यादा थी कि सरकार को लोहे और इस्पात का राशन करना पड़ा।

पिछले कुछ वर्षों में भारत में लोहे तथा इस्पात के उत्पादन में निरन्तर वृद्धि हुई है, जैसा कि निम्न तालिका से प्रगट है।

वर्ष	उत्पादन (टनों में)
१९५०	१,००४,५८६
१९५१	१,०७६,०२१
१९५२	१,१०१०,०८
१९५३	१,०२५,५१५
१९५४	१,२४३,४६७
१९५५	१,२००,०००

भारत लोहे तथा इस्पात के मामले में आत्म निर्भर नहीं। अब भी हमें प्रति वर्ष २० लाख टन लोहा और इस्पात विदेशों से मँगवाना पड़ता है। उत्पादन तथा माँग के इस अन्तर को पाटने के लिए सरकार लोहे और इस्पात के वर्तमान कारखानों को विकास के लिए भारी आर्थिक सहायता दे रही है। सरकार कुछ विदेशी
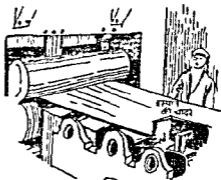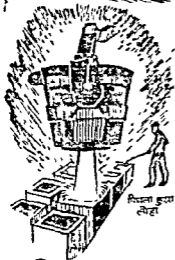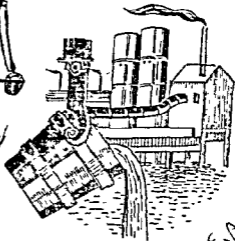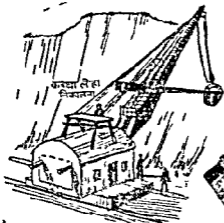
कच्चा लोहा निकालना
पिघला हुआ लोहा
इस्पात की चादर
लोहा
और
इस्पात
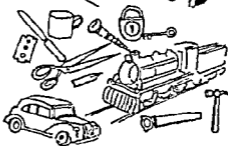
फर्मों की सहायता से लोहे और इस्पात के तीन नए कारखाने लगा रही है। इनमें से एक उड़ीसा में रूरकेला के स्थान पर स्थित है, दूसरा मध्य प्रदेश में भिलाई के स्थान पर और तीसरा पश्चिमी बंगाल में दुर्गापुर के स्थान पर। इस्पात के तीन कारखानें पहले ही से भारत में मौजूद हैं। जमशेदपुर में टाटा का कारखाना है, दूसरा बर्नपुर में इण्डियन आयरन और स्टील कम्पनी के नाम से प्रसिद्ध है और तीसरा मैसूर आयरन एण्ड स्टील वर्क्स सरकारी कारखाना है। अनुमान है कि १९६०-६१ तक भारत प्रति वर्ष ४५ लाख टन लोहा और इस्पात बनाने लगेगा। इस उत्पादन का मुकाबला कीजिए अमेरिका से जो प्रति वर्ष १००० लाख टन लोहा और इस्पात पैदा करता है और रूस से जो ४०० लाख टन लोहा और इस्पात पैदा करता है।

इंजीनियरिंग उद्योग

लोहे और इस्पात से सम्बन्धित इंजीनियरिंग उद्योगों के विकास के लिए भी सरकार प्रयास कर रही है। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप भारत में सिलाई की मशीनें, डीजल इंजन, मोटर गाड़ियाँ, साइकिलें, साइकिलों तथा मोटरों के पुर्जे आदि खूब बनने लगे हैं।

हवाई तथा समुद्री जहाज

किसी देश की सुरक्षा के लिए दो उद्योग बड़े जरूरी हैं—हवाई जहाज बनाना और समुद्री जहाज बनाना। सरकार ने हवाई जहाज बनाने का एक कारखाना बंगलोर में बनाया है। यहाँ ट्रेनिंग देने वाले अच्छे हवाई जहाज बनने लगे हैं। इन जहाजों के लिए विदेशों से भी माँग आई है। समुद्री जहाज विशाखापट्टनम् में सरकार द्वारा संचालित हिन्दुस्तान शिपयार्ड नामक कारखाने में बनते हैं। बंगलोर की हवाई जहाज फैक्टरी में रेल के डिब्बे भी बनते हैं। बंगलोर में टेलीफोन बनाने की एक फैक्टरी भी १९४८ में स्थापित की गई थी। इसके अतिरिक्त मद्रास राज्य में पैराम्बूर के स्थान पर रेल के डिब्बे बनाने का एक और कारखाना स्थापित हुआ है।

रेलवे इंजन

१९५० में सरकार ने बंगाल में रेलवे इंजन बनाने के लिए चितरंजन लोकोमोटिव वर्क्स खोला था। इस कारखाने में प्रति वर्ष लगभग २०० रेलवे इंजन बनते हैं।

कल-पुर्जे इत्यादि

देश का औद्योगीकरण कल-पुर्जे बनाए बिना मुकम्मल नहीं हो सकता। यदि मशीन का कोई पुर्जा टूट जाए, तो वह तत्काल उपलब्ध होना चाहिए। इसलिए भारत सरकार ने कल-पुर्जे बनाने के दो कारखाने स्थापित किए हैं। एक बंगलोर के पास जलहाली में और दूसरा बम्बई राज्य में अम्बरनाथ के स्थान पर।

अभ्यास के प्रश्न

(१) औद्योगीकरण की क्या आवश्यकता है? इस दिशा में भारत में क्या कुछ हो रहा है?
(२) सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) और निजी क्षेत्र (Private Sector) में क्या अन्तर है?
(३) भारत सरकार देश के औद्योगिक विकास के लिए क्या प्रयत्न कर रही है?
(४) भारत सरकार ने देश में अपने अधीन कौन-कौन से बड़े उद्योग शुरू किए हैं?
(५) संक्षिप्त नोट लिखो।
(क) लोहा और इस्पात उद्योग, (ख) सूती वस्त्र उद्योग, (ग) चितरंजन, (घ) जमशेदपुर।

: १५ :

हमारे कुटीर उद्योग

इस देश की कोई भी नारी आपको बता सकती है कि चर्खे के लोप के साथ भारत से सुख का लोप भी हो गया।

—गांधीजी

पिछले अध्याय में हमने भारत में बडे-बडे उद्योगो की उन्नति की कहानी पढी। भारत बडी तेजी से एक पिछडे हुए कृषि देश से औद्योगिक देश बनता जा रहा है। दुनिया के औद्योगिक देशो में अब भारत का नम्बर आठवाँ है और एशिया में दूसरा। औद्योगिक दृष्टि से हम चीन से आगे हैं।

परन्तु भारत जैसे विशाल देश की समस्या केवल बडे-बडे उद्योगो की उन्नति से ही नही हल हो सकती। हमारे यहाँ जन-बल की कमी नही। यदि हम हर एक काम पर मशीनें लगा दें, तो मनुष्यो को रोजगार कहाँ से मिलेगा? इस समय भारत के बडे-बडे उद्योगो में ६० लाख लोग काम करते हैं। हम बहुत चेष्टा करेंगे, तो अगले पाँच वर्षो में एक करोड आदमियो को इन उद्योगो में खपा सकेंगे। परन्तु हमारा उद्देश्य तो अधिकाधिक लोगो को रोजगार देना है। दूसरी पचवर्षीय योजना में एक करोड लोगो को रोजगार दिलाने का लक्ष्य है। यह लक्ष्य कैसे प्राप्त हो? इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तो हमें कुटीर उद्योगो को प्रोत्साहन देना होगा क्योंकि यह ही एक क्षेत्र है, जहाँ ज्यादा से ज्यादा लोग खप सकते है।

प्राचीन भारत में कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योग भारत के लिए नए नही। प्राचीन काल से भारतीय कारीगर अपने कला-कौशल के लिये दुनिया में प्रसिद्ध रहे हैं। प्रथम शताब्दी ईस्वी में प्लिनी नामक एक रोमन इतिहासकार ने लिखा था कि भारत का बना हुआ माल सौ गुना कीमत पर रोम में बिकता है। इससे रोम का सोना धडाधड भारत को जा रहा है। रोम से भारत को मुख्यत सूती और रेशमी वस्त्र तथा ऐश्वर्य का अन्य सामान भेजा जाता था। मध्य युग में भी हमारे कुटीर उद्योगो का बोलबाला रहा। मार्कोपोलो ने अपनी भारत-यात्रा में हमारे कुटीर उद्योगो की बडी प्रशसा की है। मुगल काल में भारत का बना हुआ कपडा, चमडे का सामान तथा सोने-चाँदी की वस्तुएँ विदेशो को भेजी जाती थी। वस्त्र उद्योग तो इतना उन्नत था कि प्राय प्रत्येक घर एक कारखाना था। स्त्री, पुरुष और बच्चे वस्त्र-निर्माण में लगे रहते थे क्योकि देश-विदेश में भारतीय कपडे की माँग थी। ढाके की मलमल जगत् विख्यात है। इसके बारे में किवदन्ती है कि ढाके की मलमल का एक पूरा थान एक अगूठी में से गुजर जाता था। काश्मीर में बहुत बढिया ऊनी कपडे बनते थे। लाहौर में शाल-दुशाले तैयार किए जाते थे। बगाल में रेशमी कपडा बनता था। मुगल काल में भारतीय उद्योग-धधो के वैभव का अकबर के दरबारी रत्न अबुलफजल ने बडा रोचक वर्णन किया है। कुटीर उद्योगो के अतिरिक्त भारत के कारीगर बहुत बडी नौकाएँ और जहाज भी बनाते थे।

कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योगों का पतन

परन्तु भारत में अंग्रेजी राज के प्रारम्भ के साथ कुटीर उद्योगो का अधःपतन शुरू हुआ। इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति हो चुकी थी। इंग्लैण्ड को अपने कारखानो में बने माल की खपत के लिए मण्डियों की जरूरत थी। इसलिए भारतीय उद्योग-धधो को जान-बूझ कर कुचल दिया गया। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इग्लैण्ड की पार्लियामेंट ने एक कानून पास किया था जिसके अतर्गत इग्लैण्ड में भारतीय कपडे के क्रय-विक्रय पर रोक लगा दी गई। भारतीय कपडे खरीदने और बेचनेवालो को जुर्माना किया जाता था। यही नही, भारत में इग्लैण्ड से कपडे के आयात पर कोई चुगी नही थी परन्तु इग्लैण्ड को भारतीय कपडे के निर्यात पर ४०० प्रतिशत चुगी थी। यही हाल भारत के अन्य उद्योगो का हुआ। अंग्रेजी राज में भारतीय उद्योगो का धीरे-धीरे गला घोट दिया गया।

महात्मा गांधी और कुटीर उद्योग

जब गाधीजी भारत के राजनीतिक मच पर आए, तो भारत के मृतप्राय कुटीर उद्योगो में जान आने लगी। बापू ने चर्खे को भारत की मुक्ति का प्रतीक माना। उन्होने प्रत्येक भारतवासी से कहा कि वह हाथ का कता और बुना हुआ शुद्ध खादी पहने। बापू ने अखिल भारत चर्खा सघ तथा ग्रामोद्योग सघ स्थापित करके ग्राम उद्योगो को पुनर्जीवित करने का भागीरथ प्रयास किया। बापू कहते थे कि कुटीर उद्योगो के बिना देश का कल्याण सभव नही। देश के इस अपार जन-समूह को कुटीर-उद्योगो में ही खपाया जा सकता है। वे प्रत्येक गाँव को अपनी आवश्यकता के लिए आत्म-निर्भर बनाना चाहते थे। वह तब ही सभव था यदि गांव के लोग खेती-बाडी के अतिरिक्त अपनी आवश्यकता के अनुसार कपडा बुनें, गुड तैयार करें, दूध और घी उत्पन्न करें, कृषि के औजार बनाएँ, धान कूटें और आटा पीसें। गाँवो को पूर्ण रूप से आत्म निर्भर करने के बारे में बापू का सपना तो पूरा नहीं हुआ, परन्तु इसमें सदेह नही कि महात्मा गाधी के कुटीर उद्योग आन्दोलनो ने सरकार को कुटीर उद्योगो की सुध लेने पर विवश कर दिया।

गाधीजी का मत था कि जो लोग बडे-बडे कारखानों में काम करते हैं उनके व्यक्तित्व का विकास नही हो पाता। मिल में काम करने वाला मजदूर वहाँ बनी हुई चीज को अपनी नही समझता क्योंकि वह चीज बीसियो हाथो से गुजरती है। अत उसके बनाने में उसे न कोई आनन्द होता है और न ही उसमें स्वावलम्बन की भावना आती है। कारखाने के दूषित वातावरण में रहकर वह न केवल अपना स्वास्थ्य ही खो देता है, बल्कि चरित्र भी।

हमारी अर्थ-व्यवस्था में कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योगो का आज भी हमारे आर्थिक जीवन में कम महत्व नही। देश के कारीगरो में ८० प्रतिशत अब भी कुटीर उद्योगो में लगे हुए हैं। निम्नलिखित आँकडे अपनी कहानी आप कहते हैं -

कुटीर उद्योग का नाम	कारीगरो की सख्या
वस्त्र	५५ लाख
चमडा	२४ ,,
लकडी	२१ लाख

कुटीर उद्योग का नाम	कारीगरों की संख्या
धातु	४२ ,,
मिट्टी के बरतन, ईंटें बनाना इत्यादि	२० ,,
तेल निकालना	१० ,,
खाद्य, धान कूटना इत्यादि	२० ,,
कपड़े सीना इत्यादि	११ ,,
विविध, जेवर बनाना इत्यादि	१७ ,,
	कुल २ करोड २० लाख

कुटीर उद्योग क्या है ?

कुटीर उद्योगों की ठीक-ठीक परिभाषा करना बहुत कठिन है। साधारणत उन सब उद्योगों को जो फैक्टरी उद्योगों की परिभाषा में नही आते, कुटीर उद्योग का नाम दिया जाता है। इस समय हमारे देश में तीन प्रकार के कुटीर उद्योग देखने में आते हैं। पहले ग्रामोद्योग, जैसे चर्खा कातना, धान कूटना, बढ़ईगीरी अथवा लोहार का काम, चमड़ा तैयार करना इत्यादि। ये धन्धे ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के आवश्यक अग हैं। दूसरे दस्तकारी के काम जैसे, हाथी दाँत के खिलौने बनाना, शाल बनाना, मीनाकारी, नक्काशी, जरदोजी इत्यादि कला-कौशल के काम। तीसरे, मशीनो की मरम्मत करना, ताले बनाना, साबुन बनाना, बरतन बनाना इत्यादि। इन सब उद्योगो की समस्याएँ प्राय एक-सी हैं। इसलिए हम उन्हें कुटीर उद्योगो का नाम देते हैं।

कुटीर उद्योगो की सहायता

देश की दोनो पचवर्षीय योजनाओ में कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देने की व्यवस्था की गई है। पहली पचवर्षीय योजना में इस काम के लिए ३१ करोड रुपए की व्यवस्था की गई थी। परन्तु दूसरी पचवर्षीय योजना में यह रकम बढ़ाकर २०० करोड रुपए कर दी गई है।

आप पूछेंगे कि कुटीर उद्योगो को सरकार किस प्रकार लोकप्रिय बना रही है। कुटीर उद्योगो की सहायता करने का एक तरीका यह है कि उन्हें मिलो के मुकाबले से बचाया जाए। कुछ कुटीर उद्योगो को बचाने के लिए मिलो में बनी चीजों पर टैक्स लगाए जा रहे हैं। उदाहरण के रूप में खद्दी के कपडे को सुरक्षा देने के लिए मिल के कपडे पर टैक्स लगाया गया है। इसके अतिरिक्त कुटीर उद्योगो में काम करनेवाले कारीगरो को प्रशिक्षण दिया जा रहा है जिससे वे अच्छा माल तैयार कर सकें। छोटे उद्योगो में काम करने वाले कारीगरों की सहकारी संस्थाएँ बनाई जा रही हैं। इसके अलावा सरकार यथासम्भव कुटीर उद्योगो में बनी वस्तुएँ खरीदने की चेष्टा करती है।

भारत में भिन्न-भिन्न प्रकार के ग्राम तथा कुटीर उद्योग हैं। उनकी देखभाल करने के लिए सरकार ने छ अखिल भारतीय बोर्ड बना रखे हैं। प्रत्येक बोर्ड एक या एक से अधिक कुटीर उद्योगो की उन्नति के लिए काम करता है। उदाहरण के रूप में खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड खादी उद्योग के अतिरिक्त हाथ से धान कूटने, गुड बनाने, साबुन, दियासलाई और कागज बनाने के गृह उद्योगो की उन्नति का निरीक्षण करता है। खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड ने नए ढग के एक चर्खे का आविष्कार किया है जिसे अम्बर चर्खा कहते हैं। यह चर्खा

साधारण चर्खे की अपेक्षा पाँच गुना अधिक सूत कात सकता है। इस चर्खे पर काम करनेवाला आदमी सुगमता से प्रतिदिन डेढ़ रुपया कमा सकता है। अनुमान है कि दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि में ५० लाख व्यक्तियों को अम्बर चर्ख द्वारा रोजगार मिलेगा। यह सख्या बम्बई, मद्रास और दिल्ली की कुल आबादी के बराबर है।

सरकार ने कुटीर उद्योगों के विकास के लिए एक हाथ करघा उद्योग-बोर्ड Handloom Board) की स्थापना भी कर रखी है। इस बोर्ड के प्रयास के परिणामस्वरूप देश में खड्डियों पर बनने वाले कपडे का उत्पादन दुगुना हो गया है। दूसरी पचवर्षीय योजना में भारत में कपडे का उत्पादन १५ गज प्रति व्यक्ति से बढ़ाकर १८ गज प्रति व्यक्ति करने का कार्यक्रम है। यह फालतू कपडा हाथ करघा द्वारा ही पैदा होगा।

अम्बर चर्खा

भारत सरकार का दस्तकारी बोर्ड (Handicraft Board) पुरानी दस्तकारियों को पुनर्जीवित करने में सलग्न है। ग्रामीण कारीगरों को कला-कौशल के नए तरीके सिखाए जा रहे हैं। उन्हें अपने काम को सुधारने के लिए आधुनिक औजार भी दिए जाते हैं। दस्तकारियों का सामान बेचने के लिये सहकारी बिक्री सस्थाएँ बनाई गई हैं। इस बोर्ड के प्रयासों से खिलौने, चूड़ियाँ, धातुओं का सामान बनाने, हाथी दाँत में काम इत्यादि के कुटीर उद्योगों को बडी सहायता मिली है।

इसी तरह रेशम बोर्ड (Silk Board) रेशम के कुटीर उद्योगों की सहायता करता है और नारियल की छाल का बोर्ड (Coir Board) नारियल की छाल से चटाइयाँ इत्यादि बनाने के गृह उद्योगों की सहायता करता है।

उपर्युक्त बोर्ड के अतिरिक्त छोटे पैमाने के उद्योगों की सहायता के लिए एक बोर्ड और है जिसे छोटे उद्योगों का बोर्ड (Small Scale Industries) कहते हैं। इस बोर्ड द्वारा सगठित छोटे उद्योगों को सहायता मिलती है, जैसे खेलों का सामान बनाने का उद्योग, चमडे का उद्योग, ताले, बल्ब, बाइसिकल और रेडियो के पुर्जे बनाने के छोटे उद्योग। इस प्रकार के छोटे पैमाने के उद्योग बहुत से नगरों में स्थापित हो गए हैं। इस बोर्ड ने चार प्रादेशिक सस्थाएँ बनाई हैं, जो इस तरह के छोटे उद्योगों को परामर्श तथा सहायता देती हैं। अगले कुछ वर्षों में इस तरह की १६ अन्य प्रादेशिक सस्थाएँ बनाने का कार्यक्रम है।
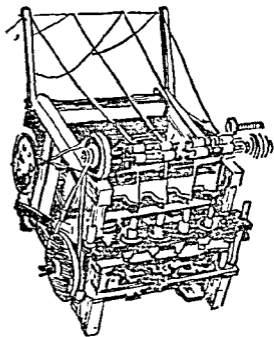
कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देने का यह अभिप्राय नहीं कि सरकार बड़े उद्योगों का गला घोट रही है। हमने ऐसी अर्थ-व्यवस्था स्थापित की है जिसमें सब के लिए स्थान है—कुटीर उद्योगो के लिए, बड़े निजी उद्योगों के लिए तथा सरकारी उद्योगों के लिए भी। सबको अपने-अपने क्षेत्र में देश के निर्माण का कार्य करना है। ऐसा प्रबन्ध किया गया है, जिससे कि एक दूसरे के हित आपस में नहीं टकरायें।

वस्त्र उद्योग

यह भारत का सबसे बड़ा कुटीर उद्योग है। कुटीरो में कपड़ा या तो खादी के रूप में बनता है अथवा हाथ करघा पर। इस उद्योग में ५५ लाख से अधिक व्यक्ति लगे हुए हैं। १९५५–५६ में हाथ-करघो पर हमारे देश में १७० करोड़ गज कपड़ा तैयार हुआ था। इसके अतिरिक्त हर वर्ष देश में ३ करोड़ ४० लाख गज खादी तैयार होता है जिसका मूल्य लगभग ५ करोड़ रुपए बैठता है। दूसरी पचवर्षीय योजना में खादी का उत्पादन ६ करोड़ गज हो जाने की सम्भावना है।

भारत के अन्य प्रमुख कुटीर उद्योग ये हैं—चमड़ा उद्योग, गाँवो में घानी से तेल निकालना, कागज बनाना, मधुमक्खी पालना, नारियल के छिलके से चटाइयाँ बनाना, गुड़ बनाना, साबुन बनाना, मिट्टी और धातु के बरतन बनाना, दियासलाई बनाना इत्यादि।

कुटीर उद्योगों की उन्नति कैसे हो

इसमें सन्देह नहीं कि भारत जैसे देश में जहाँ जन-शक्ति की कमी नहीं, कुटीर उद्योगो का विकास अनिवार्य है। यदि उचित ढंग से उनका संगठन किया जाए, तो कुटीरो में बनाई गई चीजें कारखानों में बनाई गई चीजों से महँगी नहीं बैठती। स्विट्जरलैण्ड, और जापान इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। इन दो देशो में लोगों को घर बैठे काम मिल जाता है। वे स्वतन्त्रता से अपने घर काम करते हैं। बाद में कुटीरों से बने हुए कल-पुर्जों को कारखाने में एकत्र करके अन्तिम रूप दे दिया जाता है। स्विट्जरलैण्ड में घड़ियों के अधिकतर पुर्जे लोगों के घरों में बनते हैं। जापान में रेडियो, मोटर और साइकल के पुर्जे भी किसानों के घरो में बनते हैं। कुटीर उद्योगों के विकास के बारे में कांग्रेस के महामन्त्री श्री श्रीमन्नारायण ने लिखा है—"हमारे मस्तिष्क में इस बारे में तनिक भी सन्देह नहीं होना चाहिए कि भारत की राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में छोटे उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान होगा। छोटे उद्योगों का अस्तित्व कोरी भावुकता पर निर्भर नहीं। वे तो सीधा-सादा हिसाब तथा वास्तविकता है। जितनी जल्दी हमारे अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ इस मूल तथ्य को समझ लें उतना ही उनके तथा देश के लिए हितकर है।"

अभ्यास के प्रश्न

(१) कुटीर उद्योग किसे कहते हैं? भारत के मुख्य कुटीर उद्योग क्या हैं?
(२) भारत की अर्थ-व्यवस्था में कुटीर उद्योगों का क्या स्थान है?
(३) कुटीर उद्योगों के विकास के लिए भारत सरकार क्या कुछ कर रही है?
(४) गांधीजी ने ग्रामोद्योगों को पुनर्जीवित करने के लिए क्या किया?

: १६ :

भारत के विद्युत तथा खनिज साधन

आधुनिक मशीन युग में सस्ती बिजली औद्योगिक विकास का मूल मन्त्र है। आजकल किसी देश की आर्थिक समृद्धि का अनुमान इस बात से लगाया जाता है कि वहाँ पर बिजली की कितनी खपत है। भारत में बिजली का वार्षिक उत्पादन प्रति व्यक्ति ३० किलोवाट घंटे है। इसके मुकाबले में नार्वे प्रति व्यक्ति ६,५०३ किलोवाट बिजली पैदा करता है; कनाडा ४,८९०, ब्रिटेन १,५७३, जापान ७१५ और तुर्की ६० किलोवाट घंटे बिजली उत्पन्न करता है।

बिजली तीन स्रोतों से मिलती है—तेल, कोयला और पानी। हमारे देश में तेल का उत्पादन नाम-मात्र का ही है। कोयला भी बहुत मात्रा में उपलब्ध नहीं। कोयले की खानें देश भर में नहीं फैली हुई हैं। वे देश के कुछ हिस्सों तक ही सीमित हैं। इसलिए कोयले से पैदा की गई बिजली बहुत महँगी पड़ती है। सौभाग्य से हमारे देश की नदियों से अपरिमित मात्रा में बिजली मिल सकती है। नवीनतम अनुमानों के अनुसार हम देश की नदियों से ४ करोड़ किलोवाट बिजली पैदा कर सकते हैं। परन्तु अभी तक हम केवल ५ लाख किलोवाट बिजली ही प्राप्त कर पाए हैं। धीरे-धीरे हम अपनी नदियों में छिपी हुई बिजली को निकाल कर देश का औद्योगिक विकास करेंगे।

जलशक्ति से चलने वाला एक आधुनिक बिजली घर

बिजली उद्योगों के ही काम नहीं आती, यह घरों में भी काम आती है। नल-कूपों द्वारा भूमि के नीचे से सिंचाई के लिए पानी निकालने के काम आती है। इससे रेलगाड़ियाँ चलाई जा सकती हैं। सच तो यह है कि बिजली इस युग की सबसे बड़ी देन है। अब तो बिजली के बिना जीवन की कल्पना करना भी कठिन है।

भारत में सबसे पहले जल-विद्युत की एक कम्पनी १८९७ में दार्जिलिंग में स्थापित की गई थी। १८९९

में कलकत्ते में भी एक बिजली कम्पनी स्थापित हुई। १९०३ में मैसूर राज्य में कावेरी नदी पर एक जल-विद्युत केन्द्र स्थापित हुआ। १९२५ तक देश में विद्युत विकास का कार्य मुख्यतः निजी कम्पनियों के हाथ में रहा। पिछले २० सालों में कुछ राज्यों ने विद्युत विकास की योजनाएँ अपने हाथ में ली हैं। १९५५ में भारत में जितनी बिजली पैदा होती थी उसके ८५ प्रतिशत भाग पर निजी कम्पनियों का ही स्वामित्व था।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत में विद्युत के विकास में बड़ी उन्नति हुई है। बिजली उत्पादन का काम धीरे-धीरे प्राइवेट कम्पनियों से राज्य सरकारें ले रही हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में विद्युत विकास की ३४४ योजनाएँ शामिल थीं। इनमें बहुत-सी बहुद्देशीय नदी-घाटी योजनाएँ थीं जिनसे प्रचुर मात्रा में बिजली मिली है।

भारत में बिजली के विकास का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि १९५० में पंचवर्षीय-योजना के प्रारम्भ के समय भारत में बिजली का कुल उत्पादन २३ लाख किलोवाट था। पिछले पाँच वर्षों में इसमें ११ लाख किलोवाट की वृद्धि हुई है। अनुमान लगाया गया है कि अगले पाँच सालों में बढ़ती हुई माँग पूरा करने के लिए हमें हर साल २० प्रतिशत विद्युत उत्पादन बढ़ाना होगा। अतः दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक विद्युत का उत्पादन-लक्ष्य ६९ लाख किलोवाट रखा गया है। दूसरी योजना काल में कुल मिलाकर ८२ विद्युत उत्पादन योजनाएँ शुरू की जाएँगी जिनमें ३२ जल-विद्युत योजनाएँ होंगी और शेष वाष्पशक्ति योजनाएँ होंगी। अनुमान है कि आनेवाले पाँच वर्षों में भारत में प्रति व्यक्ति बिजली का उपभोग दुगुना हो जाएगा।

खनिज साधन

पिछले अध्याय में हमने उद्योगों के विकास के बारे में विचार किया है। अब हम उन पदार्थों के बारे में विचार करेंगे जिनसे औद्योगीकरण सम्भव होता है। इस्पात उद्योग ही लीजिए। इस्पात कच्चे लोहे से बनता है। इस्पात बनाने के लिए लोहे को बड़ी-बड़ी भट्टियों में गलाना पड़ता है। इन भट्टियों में जलाने के लिये कोयला चाहिए जो खानों से प्राप्त होता है। लोहे और कोयले की तरह भूगर्भ ने हमें और भी बहुत-सी धातुएँ मिलती हैं जैसे सोना, चाँदी, अभ्रक, तांबा, शोरा, काँच, जस्त, टीन, मैंगनीज, नमक इत्यादि।

लोहा

सौभाग्य से खनिज पदार्थों की दृष्टि से भारत एक समृद्ध देश है। हमारे देश में संसार के उच्च कोटि के लोहे के भण्डार उपलब्ध हैं। भारत के धाड़वाड़ तथा कड़प्पा प्रदेशों में कच्चे लोहे के संसार के सबसे बड़े भण्डार हैं। लौह मिश्रित हेमाटाइट और मैगनेटाइट देश में धरती के नीचे भरे पड़े हैं, जिनमें ६० से ७० प्रतिशत लोहा प्राप्त हो सकता है। उत्तरी उड़ीसा की पहाड़ियों तथा बिहार के सिंहभूम जिले के कई महत्व-पूर्ण स्थानों में कच्चे लोहे के सम्बन्ध में जाँच-पड़ताल की जा रही है। कच्चे लोहे का यह क्षेत्र दक्षिण में छत्तीसगढ़, बस्तर और दक्षिणी मध्यप्रदेश तक फैला हुआ है। अनुमान है कि इन स्थानों से कुल मिलाकर ४५० करोड़ टन उच्च कोटि का कच्चा लोहा मिलेगा। दामोदर घाटी, सलेम, मैसूर रत्नगिरि और कमायूँ

में मध्य और निम्न कोटि का कच्चा लोहा पाया जाता है जिससे २५ से ६५ प्रतिशत लोहा निकाला जा सकता है। अनुमान लगाया गया है कि कुल मिलाकर भारत में कच्चे लोहे का भण्डार १,००० करोड़ टन के करीब है।

कोयला

संसार के कोयला पैदा करने वाले देशों में भारत का सातवाँ स्थान है। भारत में अधिकतर कोयला झरिया और रानीगंज की कोयले की खानों से मिलता है। मद्रास के तटवर्ती मैदानों में भी लिगनाईट के रूप में कोयले की जाँच पड़ताल हो रही है। १९५५ में भारत की कोयले की खानों में से ५० करोड़ रुपए के मूल्य का ३८२ लाख टन कोयला निकाला गया।

मैंगनीज

मैंगनीज के उत्पादन में भारत का तीसरा स्थान है। मैंगनीज अधिकतर मध्य प्रदेश में मिलता है। अनुमान है कि भारत में भूमि के नीचे कच्चे मैंगनीज के लगभग २०० लाख टन के भण्डार है।

इसके अतिरिक्त भारत की धरती के नीचे क्रोमाइट, वैनेडियम, मैगनेसाइट, क्यानाइट इत्यादि धातुओं के अपार भण्डार हैं। क्रोमाइट रसायनिक कामों में काम आता है या मिश्र धातु के रूप में प्रयुक्त होता है। यह मुख्यतः बिहार और मैसूर में मिलता है।

अलौह धातु

अलौह धातुएँ हमारे देश में कम है। सोना, तांबा, अल्यूमीनियम बहुत थोड़ी मात्रा में मिलते हैं। सोना मुख्यतः मैसूर में कोलार तथा हुट्टी से प्राप्त होता है। तांबा जमशेदपुर के पास तथा उत्तरी राजस्थान, सिक्किम, गढ़वाल और कुल्लू में पाया जाता है। मध्य प्रदेश में बढ़िया किस्म का बाक्साइट मिलता है, जो एल्यूमिनियम बनाने के काम आता है। निकल, कोबाल्ट, टंगस्टन और टीन आदि धातुएँ प्रायः अप्राप्य हैं।

अभ्रक

भारत दुनिया में सबसे अधिक अभ्रक पैदा करता है। यहाँ संसार का ७० से ८० प्रतिशत अभ्रक मौजूद है। यह अधिकतर बिहार के हज़ारीबाग जिले में पैदा होता है।

अच्छे प्रकार का नमक राजस्थान में साँभर झील और पचभद्रा से मिलता है। यह देश के कुल उत्पादन का छठा भाग है। शेष नमक जो बम्बई और मद्रास के तटवर्ती समुद्री जल को सुखाकर बनाया जाता है घटिया किस्म का होता है।

अन्य अलौह खनिज पदार्थों में बेरिल और मोनाजाइट का नाम उल्लेखनीय है। ये दोनों पदार्थ अणु-विखण्डन के काम आते हैं। बेरिल राजस्थान में और मोनाजाइट केरल में मिलता है। बिहार के गया जिले में यूरेनियम मिलता है। इसके अतिरिक्त जिप्सम और एपाटाइट नामक खनिज पदार्थ भी मिलते हैं। एपाटाइट उर्वरक के रूप में प्रयोग होता है और जिप्सम उर्वरक के अतिरिक्त सीमेंट बनाने के काम भी आता है।

तेल

.. तेल के मामले में हमारी स्थिति असंतोषजनक है। असम में डिगबोई के पास ही तेल के कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। देश में प्रति वर्ष ६५० से ७०० लाख गैलन पेट्रोल पैदा होता है। यह पेट्रोल हमारी आवश्यकता का केवल ७ प्रतिशत भाग है, शेष ९३ प्रतिशत पेट्रोल हमें विदेशों से मँगवाना पड़ता है। भारत के कई प्रदेशों में तेल के लिए जाँच हो रही है। पंजाब के कांगड़ा जिले के एक स्थान ज्वालामुखी में भी तेल की खोज के लिए पड़ताल हो रही है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) औद्योगिक विकास में बिजली का क्या महत्व है।
(२) भारत में बिजली का उत्पादन कैसे बढ़ाया जा रहा है?
(३) भारत की खनिज पदार्थों के मामले में कैसी स्थिति है? हमारे मुख्य खनिज पदार्थ क्या हैं?
(४) निम्नलिखित खनिज पदार्थ कहाँ मिलते हैं?
लोहा, कोयला, अभ्रक, तेल, मैंगनीज, सोना।

: १७ :

भारत में शिक्षा की प्रगति

६ से १४ वर्ष की आयु तक भारत के प्रत्येक बच्चे के लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। —भारतीय संविधान

शिक्षा लोकतन्त्र का मूल है। यह मनुष्य को लोकतन्त्र का महत्व समझने और उसके उत्तरदायित्व निभाने के योग्य बनाती है। आर्क बिशप आफ यार्क ने एक बार कहा था कि अशिक्षित जनता सब प्रकार की राज्य प्रणालियों के लिए खतरनाक है, क्योंकि अशिक्षित जनता राज्य के सब कार्यों के प्रति उदासीन रहती है और अपना सहयोग नहीं देती। परिणामस्वरूप देश की राजसत्ता किसी स्वार्थी व्यक्ति या दल के हाथ चली जाती है। शिक्षा पर लोकतन्त्र की सफलता ही निर्भर नहीं, यह बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के लिए भी अनिवार्य है। अच्छी शिक्षा बच्चे को अक्षर-ज्ञान ही नहीं कराती, बल्कि उसके दिल, दिमाग और हाथों को जीवन के आने वाले संघर्ष के लिए भी तैयार करती है।

इस पुस्तक के पहले भाग में योरोपियन इतिहास के मध्य युग को हमने अन्धकार-युग कहा था क्योंकि उस युग में बहुत कम लोग पढ़ने-लिखने थे। योरोप में यह अन्धकार युग सोलहवीं शताब्दी से समाप्त होना शुरू हुआ। अब वहाँ प्रायः सभी देशों में शत-प्रतिशत लोग लिखना-पढ़ना जानते हैं। परन्तु हमारे देश से अन्धकार का यह आवरण अब हटना शुरू हुआ है। इसमें सदेह नहीं कि ब्रिटिश राज में शिक्षा का प्रसार हुआ परन्तु वह शिक्षा अधिकतर शहरों तक ही सीमित रही। १९४७ में आजादी के बाद भारत में शिक्षा के प्रसार की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। हमारे देश के संविधान का निर्देश है कि १९६१ तक ६ और १४ वर्ष तक की आयु के सभी बालक-बालिकाओं के लिए पूर्ण रूप से निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाए। संविधान के इस निर्देश का १९६१ तक पूर्ण रूप से परिपालन होना कठिन है। परन्तु इसमें सदेह नहीं कि इस तिथि तक इस आयु के ५० प्रतिशत बच्चे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त कर रहे होंगे।

प्राचीन काल में शिक्षा

भारत में सदा ही इस प्रकार का अज्ञान नहीं रहा। प्राचीन आर्यों ने मनुष्य के जीवन को चार आश्रमों में बाँट रखा था। प्रथम, ब्रह्मचर्य आश्रम में बच्चा २५ वर्ष तक शिक्षा प्राप्ति के लिए उद्योग करता था। नियमित रूप से बच्चे की शिक्षा ८ वर्ष की आयु से उपनयन संस्कार के साथ आरम्भ होती थी जो २५ वर्ष की आयु तक जारी रहती थी। कुछ प्रतिभाशाली विद्यार्थी ३५ वर्ष की आयु तक ज्ञानार्जन करते थे। शिक्षा प्राप्त करना सब के लिए अनिवार्य था। भारत में बहुत से विश्वविद्यालय थे जैसे तक्षशिला, नालन्दा, काची, मथुरा, विक्रमशिला, मिथिला, वाराणसी इत्यादि। शिक्षा के लिए गुरु के आश्रम में जाना पड़ता था। अमीर गरीब प्रत्येक विद्यार्थी को घर का सुख त्याग कर गुरु के आश्रम या कुटिया में रहना पड़ता था जहाँ व्याकरण, शास्त्र तथा अन्य विद्याएँ पढ़ाई जाती थी।

के साथ-साथ दस्तकारियों तथा अन्य व्यवसायों की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया है। कुछ वर्तमान माध्यमिक स्कूलों को बहुद्देशीय (Multi-purpose) स्कूलों में परिवर्तित कर दिया गया है और इस ढंग के कुछ नए स्कूल भी खोले गए हैं। जहाँ पहली पंचवर्षीय योजना में ४७० बहुद्देशीय स्कूल खुले थे, वहाँ दूसरी योजना में ११८० ऐसे स्कूल शुरू करने की व्यवस्था है।

माध्यमिक शिक्षा के लिए ११ वर्ष का कोर्स रखा गया है। १७ वर्ष की आयु तक के सभी विद्यार्थियों को माध्यमिक शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। इसके बाद तीन वर्ष का डिग्री (बी० ए०) कोर्स होगा।

उच्च शिक्षा

विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा तथा शोध के पवित्र मन्दिर हैं। यहाँ ही देश के नेता तैयार किए जाते हैं। इसलिए विश्वविद्यालयों की शिक्षा का सुधार आवश्यक है। इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखकर १९४८ में भारत सरकार ने उच्च शिक्षा के पुनर्गठन के लिए डा० एस० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में यूनिवर्सिटी एजुकेशन कमीशन नियुक्त किया था। इस कमीशन के मुख्य सुझाव ये थे—(१) उपयुक्त विद्यार्थी ही विश्वविद्यालयों में दाखिल किए जाएँ। (२) कालेजों में प्रोफेसरों के वेतन बढ़ाए जाएँ जिससे योग्य व्यक्ति शिक्षा का व्यवसाय अपनाएँ। (३) वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक (Technological) शिक्षा के विस्तार के लिए विशेष चेष्टा की जाए। (४) कालेजों और यूनिवर्सिटियों में पुस्तकालय, प्रयोगशाला, रंगमंच, खेल के मैदान इत्यादि की सुविधाएँ बढ़ाई जाएँ। (५) एक यूनिवर्सिटी ग्रान्ट्स (अनुदान) कमीशन नियुक्त किया जाए जो विश्वविद्यालयों के काम देखकर उन्हें सरकारी सहायता प्रदान करे। कमीशन के पहले सुझाव पर अभी कुछ अमल नहीं हो सका परन्तु शेष चारों सुझावों पर अमल किया जा रहा है। १९५४–५५ के अन्त में भारत में ३१ विश्वविद्यालय, ६५७ कला तथा विज्ञान कालेज, २९१ व्यावसायिक शिक्षा देने वाले कालेज और १०६ विशेष शिक्षा देने वाले कालेज थे। १९५६ में विश्वविद्यालयों की संख्या ३१ से बढ़कर ३४ हो गई थी।

ग्राम विद्यापीठ

राधाकृष्णन कमीशन ने सुझाव रखा था कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कुछ ग्रामीण विश्वविद्यालय स्थापित होने चाहिएँ। सरकार ने इस सुझाव को तो माना है परन्तु फिलहाल ग्राम विश्वविद्यालयों के स्थान पर १० ग्राम विद्यापीठ स्थापित करने का निश्चय किया गया है। ये विद्यापीठ १९५६ में स्थापित किए गए थे। अब इनमें व्यावहारिक ग्राम-सेवा की शिक्षा दी जाती है। साधारण उच्च शिक्षा के अतिरिक्त यहाँ कला, विज्ञान, कृषि, ग्रामोद्योग, इंजीनियरिंग और स्वास्थ्य इत्यादि विषय पढ़ाए जाते हैं।

टेकनिकल शिक्षा

आप जानते हैं कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में भारी औद्योगिक विकास होगा। औद्योगिक विकास का अर्थ है अधिक मशीनें। मशीनों के लिए हमें प्रशिक्षित कारीगरों और इंजीनियरों की आवश्यकता होगी। अतः सरकार देश में टेकनिकल अथवा प्रौद्योगिक शिक्षा की अधिकाधिक सुविधाएँ प्रदान करने की चेष्टा कर रही है।

इंजीनियरिंग की शिक्षा देने वाली संस्थाओं में अब प्रति वर्ष डिग्री पाठ्यक्रमों के लिए ५,४०० विद्यार्थी

तथा डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिये ८,८०० विद्यार्थी भरती किए जाते हैं जब कि १९५१ में इनकी संख्या क्रमशः ४,००० तथा ५,००० थी। इंजीनियरी की शिक्षा समाप्त करके प्रतिवर्ष ३,४०० विद्यार्थी स्नातक की उपाधि तथा ४,१०० विद्यार्थी डिप्लोमा प्राप्त कर रहे हैं।

समाज शिक्षा

१९५१ की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरों की संख्या केवल १६.६ प्रतिशत थी। पुरुषों के मुकाबिले में स्त्रियाँ बहुत कम साक्षर हैं। पुरुषों में २४.९ प्रतिशत साक्षरता थी तो स्त्रियों में केवल ७.९ प्रतिशत। यह बड़े ही दुर्भाग्य की बात है। शहरों और गाँवों में इससे भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण अन्तर है। शहरों में ३४.६ प्रतिशत लोग साक्षर हैं जब कि गाँवों में केवल १२.१ प्रतिशत। भारत की अनगिनत अशिक्षित जनता को सामान्य ज्ञान उपलब्ध कराने के लिए समाज शिक्षा प्रणाली निकाली गई है। इसके अन्तर्गत पचसूत्री कार्यक्रम बनाया गया है। (१) साक्षरता प्रसार, (२) स्वास्थ्य तथा सफाई के नियमों के ज्ञान का प्रसार, (३) वयस्क व्यक्तियों के आर्थिक स्तर की उन्नति, (४) नागरिकता की भावना तथा अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता को प्रोत्साहन देना तथा (५) समाज तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वस्थ मनोरंजन की व्यवस्था करना। समाज शिक्षा योजनाओं को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व राज्यों पर है, जब कि केन्द्र मार्गदर्शन तथा वित्तीय सहायता की व्यवस्था करता है। समाज शिक्षा का काम सब राज्यों में मुख्यतः सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत हो रहा है।

शिक्षा प्रसार के इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप देश में एक नई जागृति उत्पन्न हो रही है। शिक्षा के प्रसार के लिए सरकार ने पहली पचवर्षीय योजना में १६९ करोड़ रुपए की व्यवस्था की थी। दूसरी पचवर्षीय योजना में इस काम के लिए ३२० करोड़ रुपए की राशि निर्धारित की गई है।

शिक्षा का प्रसार इतना बढ़ा है कि १९५४–५५ में देश की सभी प्रकार की शिक्षा संस्थाओं की कुल संख्या ३,४३,०३१ थी। इनमें लगभग तीन करोड़ १५ लाख विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे जिन पर कुल १६५ करोड़ रुपया खर्च हुआ। औसतन प्रत्येक भारतवासी की शिक्षा पर साल में ४.३ रु० व्यय हुए जबकि प्रत्येक विद्यार्थी के पीछे सरकार ने लगभग ५३ रुपये खर्च किये।

अभ्यास के प्रश्न

(१) जनतन्त्र में शिक्षा का क्या महत्व है ?
(२) बुनियादी शिक्षा (Basic Education) का अर्थ क्या है ? इसके प्रसार के लिए भारत में क्या चेष्टा हो रही है। इससे क्या लाभ होगा ?
(३) भारत में उच्च शिक्षा के प्रसार के लिये सरकार ने क्या प्रयत्न किए हैं ?
(४) प्रौद्योगिक (Technological) शिक्षा का क्या महत्व है ?
(५) भारत में शिक्षा के प्रचार के लिए [illegible] हो रहे हैं, उनका ब्योरा ५०० शब्दों में लिखो ?
(६) संक्षिप्त नोट लिखो : [illegible] माध्यमिक शिक्षा (ग) यूनिवर्सिटी एजुकेशन।

: १८ :

एक नए समाज का निर्माण

शताब्दियों से भारत की निरीह जनता रजवाड़ों, जागीरदारों, सरकारी कर्मचारियों और धर्म के ठेकेदारों द्वारा शोषित होती रही है। १९४७ में भारत की स्वतन्त्रता से इस देश के रहनेवालों के लिए एक नए प्रातःकाल का प्रारम्भ हुआ। १९४९ में भारत का जो संविधान स्वीकृत हुआ, उसमें भारतीय जनता को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुरक्षा का वचन दिया गया। समाज के प्रत्येक सदस्य को समान अधिकार प्राप्त हुए। इस लक्ष्य को मूर्त रूप देने के लिए १९५४ में भारत सरकार ने घोषणा की कि देश में 'समाजवादी ढंग के समाज' की स्थापना की जाएगी।

हमारा समाजवाद

परन्तु भारत का समाजवाद किसी विदेशी समाजवाद की नकल नहीं। यह हमारी प्राचीन संस्कृति और परम्पराओं पर आश्रित है। भगवद्गीता में भगवान कृष्ण ने कहा था, "जो व्यक्ति बिना काम किए खाता है, वह चोरी का भोजन खाता है।" आधुनिक युग में महात्मा गांधी ने ऐसी ही समाजवादी प्रणाली को प्रतिपादित किया था। वे कहते थे कि भूमि और संपत्ति उनकी है जो उसके लिए काम करते हैं। अमीर आदमी सम्पत्ति के मालिक नहीं केवल संरक्षक हैं।

मोटे रूप से भारतीय समाजवाद के मुख्य उद्देश्य ये हैं

(१) एक ऐसे समाज की स्थापना जिसमें अमीर-गरीब का कोई अन्तर न हो और व्यक्ति की आज़ादी, समानता तथा सम्मान की रक्षा हो।

(२) उत्पादन बढ़ाकर देशवासियों के जीवन स्तर को ऊँचा करना। लोगों को उन्नति के समान अवसर देना।

(३) उद्योगों के राष्ट्रीयकरण द्वारा निजी मुनाफे की भावना को समाप्त करना।

(४) समाज में दौलत का न्यायपूर्ण बँटवारा।

(५) सबके लिए काम।

(६) सामुदायिक विकास तथा सरकारी आन्दोलनों द्वारा श्रेणियों के आपसी संघर्ष को समाप्त करके समाज में भ्रातृत्व की स्थापना।

गरीबी से संघर्ष

समाजवाद के ये लक्ष्य केवल कोरी घोषणाएँ ही रह जाती हैं यदि देश से गरीबी को खतम न किया जाए। गरीबी दूर करना आसान काम नहीं। इस समय भारत में लोगों का जीवन स्तर दुनिया के सब देशों से नीचा है। उदाहरण के लिए १९५५-५६ में भारतवासियों की कुल आय १०,४२० करोड़ रुपए थी जो अमेरिका की राष्ट्रीय आय का ३ प्रतिशत है और इंग्लैण्ड की राष्ट्रीय आय का ८९ प्रतिशत। स्मरण रहे कि भारत

तथा डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिये ८,८०० विद्यार्थी भरती किए जाते हैं जब कि १९५१ में इनकी संख्या क्रमश: ४,००० तथा ५,००० थी। इंजीनियरी की शिक्षा समाप्त करके प्रतिवर्ष ३,४०० विद्यार्थी स्नातक की उपाधि तथा ४,१०० विद्यार्थी डिप्लोमा प्राप्त कर रहे हैं।

समाज शिक्षा

१९५७ की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरो की संख्या केवल १६.६ प्रतिशत थी। पुरुषों के मुकाबिले में स्त्रियाँ बहुत कम साक्षर हैं। पुरुषों में २४.९ प्रतिशत साक्षरता थी तो स्त्रियों में केवल ७.९ प्रतिशत। यह बडे ही दुर्भाग्य की बात है। शहरो और गाँवों में इससे भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण अन्तर है। शहरों में ३४.६ प्रतिशत लोग साक्षर हैं जब कि गाँवो में केवल १२.१ प्रतिशत। भारत की अनगिनत अशिक्षित जनता को सामान्य ज्ञान उपलब्ध कराने के लिए समाज शिक्षा प्रणाली निकाली गई है। इसके अन्तर्गत पचसूत्री कार्यक्रम बनाया गया है। (१) साक्षरता प्रसार, (२) स्वास्थ्य तथा सफाई के नियमो के ज्ञान का प्रसार, (३) वयस्क व्यक्तियों के आर्थिक स्तर की उन्नति, (४) नागरिकता की भावना तथा अधिकारो एव कर्तव्यों के प्रति जागरूकता को प्रोत्साहन देना तथा (५) समाज तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वस्थ मनोरजन की व्यवस्था करना। समाज शिक्षा योजनाओ को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व राज्यो पर है, जब कि केन्द्र मार्गदर्शन तथा वित्तीय सहायता की व्यवस्था करता है। समाज शिक्षा का काम सब राज्यो में मुख्यत सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत हो रहा है।

शिक्षा प्रसार के इन प्रयत्नो के परिणामस्वरूप देश में एक नई जागृति उत्पन्न हो रही है। शिक्षा के प्रसार के लिए सरकार ने पहली पचवर्षीय योजना में १६९ करोड रुपए की व्यवस्था की थी। दूसरी पचवर्षीय योजना में इस काम के लिए ३२० करोड रुपए की राशि निर्धारित की गई है।

शिक्षा का प्रसार इतना बढा है कि १९५४–५५ में देश की सभी प्रकार की शिक्षा संस्थाओं की कुल संख्या ३,४३,०७१ थी। इनमें लगभग तीन करोड १५ लाख विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे जिन पर कुल १६५ करोड रुपया खर्च हुआ। औसतन प्रत्येक भारतवासी की शिक्षा पर साल में ४·३ रु० व्यय हुए जबकि प्रत्येक विद्यार्थी के पीछे सरकार ने लगभग ५३ रुपये खर्च किये।

अभ्यास के प्रश्न

(१) जनतन्त्र में शिक्षा का क्या महत्व है ?

(२) बुनियादी शिक्षा (Basic Education) का अर्थ क्या है ? इसके प्रसार के लिए भारत में क्या चेष्टा हो रही है। इससे क्या लाभ होगा ?

(३) भारत में उच्च शिक्षा के प्रसार के लिये सरकार ने क्या प्रयत्न किए हैं ?

(४) प्रौद्योगिक (Technological) शिक्षा का क्या महत्व है ?

(५) भारत में शिक्षा के प्रचार के लिए जो प्रयत्न हो रहे हैं, उनका ब्योरा ५०० शब्दों में लिखो ?

(६) संक्षिप्त नोट लिखो : (क) समाज शिक्षा (ख) माध्यमिक शिक्षा (ग) यूनिवर्सिटी एजुकेशन।

: १८ :

एक नए समाज का निर्माण

शताब्दियों से भारत की निरीह जनता रजवाड़ों, जागीरदारों, सरकारी कर्मचारियों और धर्म के ठेकेदारों द्वारा शोषित होती रही है। १९४७ में भारत की स्वतन्त्रता से इस देश के रहनेवालों के लिए एक नए प्रातःकाल का प्रारम्भ हुआ। १९४९ में भारत का जो संविधान स्वीकृत हुआ, उसमें भारतीय जनता को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुरक्षा का वचन दिया गया। समाज के प्रत्येक सदस्य को समान अधिकार प्राप्त हुए। इस लक्ष्य को मूर्त रूप देने के लिए १९५४ में भारत सरकार ने घोषणा की कि देश में 'समाजवादी ढंग के समाज' की स्थापना की जाएगी।

हमारा समाजवाद

परन्तु भारत का समाजवाद किसी विदेशी समाजवाद की नकल नहीं। यह हमारी प्राचीन संस्कृति और परम्पराओं पर आश्रित है। भगवद्गीता में भगवान कृष्ण ने कहा था, "जो व्यक्ति बिना काम किए खाता है, वह चोरी का भोजन खाता है।" आधुनिक युग में महात्मा गांधी ने ऐसी ही समाजवादी प्रणाली को प्रतिपादित किया था। वे कहते थे कि भूमि और संपत्ति उनकी है जो उसके लिए काम करते हैं। अमीर आदमी सम्पत्ति के मालिक नहीं केवल संरक्षक हैं।

मोटे रूप से भारतीय समाजवाद के मुख्य उद्देश्य ये हैं

(१) एक ऐसे समाज की स्थापना जिसमें अमीर-गरीब का कोई अन्तर न हो और व्यक्ति की आज़ादी, समानता तथा सम्मान की रक्षा हो।

(२) उत्पादन बढ़ाकर देशवासियों के जीवन स्तर को ऊँचा करना। लोगों को उन्नति के समान अवसर देना।

(३) उद्योगों के राष्ट्रीयकरण द्वारा निजी मुनाफ़े की भावना को समाप्त करना।

(४) समाज में दौलत का न्यायपूर्ण बँटवारा।

(५) सबके लिए काम।

(६) सामुदायिक विकास तथा सरकारी आन्दोलनों द्वारा श्रेणियों के आपसी संघर्ष को समाप्त करके समाज में भ्रातृत्व की स्थापना।

गरीबी से संघर्ष

समाजवाद के ये लक्ष्य केवल कोरी घोषणाएँ ही रह जाती हैं यदि देश से गरीबी को खत्म न किया जाए। गरीबी दूर करना आसान काम नहीं। इस समय भारत में लोगों का जीवन स्तर दुनिया के सब देशों से नीचा है। उदाहरण के लिए १९५५-५६ में भारतवासियों की कुल आय १०,४२० करोड़ रुपए थी जो अमेरिका की राष्ट्रीय आय का ३ प्रतिशत है और इंग्लैण्ड की राष्ट्रीय आय का ८५ प्रतिशत। स्मरण रहे कि भारत

की आबादी अमेरिका से दुगुनी और इंग्लैण्ड से ६ गुनी है। यदि वह रकम हम सब भारतवासियों में बाँट दें, तो सबको २८१ रुपए मिलें। दूसरे शब्दों में एक औसत भारतीय की दैनिक आय १२ आने से ज्यादा नहीं। इसके मुकाबले में एक अमेरिकन एक भारतीय से तीस गुना ज्यादा कमाता है। अमेरिका तो बडा अमीर देश है। हमारे पडोसी देश लंका का एक निवासी हमसे चार गुणा अधिक कमाता है और एक मिस्री दो गुना ज्यादा। कितनी दयनीय स्थिति है हमारी !

आमदनी के साथ-साथ एक भारतीय को जीवन की अन्य सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं। स्वास्थ्यरक्षा के लिए अस्पतालों की संख्या बहुत कम है। हम अपने देश के सब बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सकते। करोडों लोगों के पास रहने के लिए अच्छे मकान नहीं। बम्बई जैसे बडे-बडे शहरों में तो लोग पटरियों पर सोते हैं या एक छोटे से कमरे में बहुत से लोग पडे रहते हैं। देश में करोडों लोग बेकार हैं। देहात में औसतन एक देहाती के पास छः मास से अधिक का काम नहीं।

इस भयानक स्थिति का सामना करना कोई आसान काम नहीं। परन्तु पचवर्षीय योजनाओं के रूप में सरकार ने गरीबी के इस विकराल भूत के विरुद्ध युद्ध छेड रखा है। पहली पचवर्षीय योजना में इस काम के लिए जो राशि निश्चित की गई थी, दूसरी योजना में उससे दुगुनी राशि अथवा ७,२०० करोड रुपये की व्यवस्था की गई है।

इन योजनाओं के अन्तर्गत समाज के आर्थिक और औद्योगिक निर्माण के बारे में आप पिछले अध्यायों में पढ चुके हैं। यहाँ हम आपको ग्रामीण क्षेत्रों में जो शान्त सामाजिक क्रान्ति पूर्ण हो रही है, उसका वर्णन करेंगे। इस क्रांति का श्रीगणेश सामुदायिक विकास आन्दोलन द्वारा हुआ था।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम

भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम (Community Development Programme) को प्रारम्भ हुए साढे पाँच वर्ष हो चुके हैं। १२ अक्तूबर १९५२ को छोटे से पैमाने पर जो कार्यक्रम देश के केवल १५,००० गाँवों में आरम्भ हुआ था, आज विकसित होकर वह लगभग तीन लाख गाँवों में फैल चुका है। भारत के १५ करोड से अधिक ग्रामीण इससे लाभ उठा रहे हैं। १९६१ तक सामुदायिक विकास कार्यक्रम को देश के समस्त ५ लाख ५० हजार गाँवों में फैला देने का सकल्प है। भारत की सारी ग्रामीण जनता इस शक्तिशाली आन्दोलन के अन्तर्गत आ जाएगी। शताब्दियों से सरकार को देश के किसानों से लगान इकट्ठा करने के अतिरिक्त अन्य कोई दिलचस्पी नहीं थी। आज नए भारत की समूची निर्माण शक्ति ग्रामसेवक के रूप में ग्रामीण के द्वार पर है। वह उसे स्व-सहायता के आधार पर विकास और उत्थान का आह्वान देती है। स्वतन्त्र भारत की सबसे बडी सफलता गाँवों में सामुदायिक विकास आन्दोलन है, जहाँ हम अपने करोडों देशवासियों को जबान और बाजू दे पाए हैं। वह कैसे ? जबान और बाजू दोनों उनके पास थे—परन्तु जकडे हुए। प्रशासन की हृदयहीनता को भली भाँति जानते हुए वे जबान हिलाने से डरते थे। बाजुओं को हरकत देने की वह आवश्यकता ही अनुभव नहीं करते थे, क्योंकि गाँव में सफाई या निर्माण के कार्य को वह लगान उगाहने वाली सरकार का ही सीधा उत्तरदायित्व मानते थे। रूढियों और परम्पराओं से जकडे हुए इन लोगों में यह परिवर्तन कैसे आया, इसकी कहानी इस प्रकार है।

सफलता की कहानी जब सामुदायिक विकास कार्यक्रम आरम्भ हुआ, तो लोगो ने इसके कर्मचारियों को भी उसी नजर से देखा, जिस नजर से वह सरकार के अन्य कर्मचारियों को देखा करते थे, जैसे पटवारी या दारोगा। परन्तु सामुदायिक विकास के कार्यकर्त्ताओ को जनता में भेजने से पूर्व प्रशिक्षण केन्द्रो में पूरा-पूरा प्रशिक्षण मिला हुआ था। उन्हें इन प्रारम्भिक कठिनाइयों के बारे में भली भाँति अवगत करा दिया गया था। उन्हें कृषि-विज्ञान के अतिरिक्त मनोविज्ञान की भी शिक्षा मिली थी। अत जब वे लोगो के सपर्क में आए तो जनता के तीक्ष्ण कटाक्षो तथा अवज्ञा से घबराए नही। उन्होंने अपने कार्यक्रम को साहस, दृढता और सहयोग से जारी रखा। इसका परिणाम धीरे-धीरे परन्तु निश्चित रूप से निकल रहा है जैसा कि असम राज्य की इस घटना से प्रगट है। असम के एक गाँव के लोग विकास कार्य में कोई सहयोग नही देते थे। वह सदा विकास कार्यकर्त्ताओं की कटु आलोचना करते रहते थे कि वे मोटरो में धूल उडाते रहते है और कोई काम-धन्धा नही करते। लेकिन इस बीच में पडोस के एक गाँव में विकास कार्यकर्त्ताओ ने देहाती गृह-प्रदर्शनी का आयोजन किया। कटु आलोचना करने वाले लोग भी प्रदर्शनी देखने के लिए गए। वहाँ उन्होंने देहाती घरो के सुन्दर तथा सस्ते नमूने देखे, जिनमें खिडकियो तथा रोशनदानो की व्यवस्था थी। प्रदर्शनी देख कर गाँव के कुछ लोगो ने अपने घरो में भी रोशनदान निकाल लिए। विकास कार्यकर्त्ताओ ने इस बारे में गाँव वालो से कुछ नही कहा, क्योकि वे जानते थे कि इसका उलटा असर होगा। एक दिन गाँव के एक सम्भ्रान्त परिवार का डाक्टर बेटा शहर से आया। अपने घर में रोशनदान देखकर वह हैरान सा रह गया। बाप से पूछा कि क्या प्राजेक्ट वालो ने रोशनदान निकालने में उनकी सहायता की है? बाप गर्व से बोला, "अजी प्राजेक्टवाले क्या करेंगे? ये तो सदा धूल फाँकते रहते है। मैंने यह रोशनदान स्वय अपने हाथों से लगाए है। पडोस के गाँव में गृह-प्रदर्शनी हुई थी। मैंने वहाँ ऐसे रोशनदान देखे, सोचा अपने घर में भी क्यो न लगा लें।" डाक्टर बेटा हँस पडा। सामुदायिक विकास आन्दोलन के प्रभाव से ऐसे लोग भी नही बच पाए। यह एक जीवित उदाहरण है।

इस तन्मयता से कार्य करने का उचित फल मिला है। अनजाने क्षेत्रो में ही नही—जाने-बूझे क्षेत्रो में भी। कुछ मुख्य परिणाम ये हैं—विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ४० हजार मील कच्ची और आठ हजार मील पक्की सड़कें बन चुकी हैं। २२ हजार मील वर्तमान सडको को सुधारा गया है। १५ हजार नए स्कूल खुले हैं और सात हजार वर्तमान स्कूलो को बेसिक स्कूलो में परिवर्तित किया गया है। ४१ हजार समाज शिक्षा केन्द्र खुले, जिनमें १२ लाख बालिगो को अक्षर-ज्ञान कराया जा चुका है। आठ सौ प्रारम्भिक-स्वास्थ्य केन्द्र और ५७८ प्रसव तथा शिशु केन्द्र खुल चुके हैं। सामुदायिक विकास-क्षेत्रो में ११,५४० पचायतें स्थापित की गई हैं और ३० हजार अन्य जनतन्त्री सस्थाएँ जैसे ग्राम सभा, विकास मण्डल इत्यादि। खेती-बाडी के क्षेत्र में उन्नति का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि सामुदायिक विकास के अन्तर्गत इलाको में उपज में औसतन २५ प्रतिशत वृद्धि हुई है। इस महान आन्दोलन में इस समय ग्राम सेवको से लेकर ऊपर तक डेढ लाख विकास कार्यकर्त्ता जुटे हुए हैं। द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्त तक इसमें ३॥ लाख व्यक्ति काम कर रहे होंगे।

जनता का सहयोग विकास कार्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है जनता का सहयोग। जनता का

सहयोग जुटाए बिना या उनका समर्थन प्राप्त किए बिना कोई कार्यक्रम हाथ में नहीं लिया जा सकता। प्रत्येक योजना के खर्च का एक भाग जो प्रायः ५० प्रतिशत से कम नहीं होता, जनता को देना पड़ता है, चाहे वह नकदी के रूप में हो अथवा श्रम के। विकास कार्यक्रम की विचारधारा के अनुसार जनता को किसी ऐसी वस्तु के प्रति मोह नहीं हो सकता, जहाँ उसका गाढ़ा पसीना न लगा हो। इस कारण यदि किसी कार्यक्रम के प्रति लोग उदासीन हों या अपना हिस्सा देने को तैयार न हों, तो उसे तब तक के लिए स्थगित रखा जाता है, जब तक लोगों का दृष्टिकोण न बदला जाए। कहने की आवश्यकता नहीं कि जनसाधारण ने विकास कार्यक्रम में बढ़-चढ़कर सहयोग दिया है, जो ऊपर दिए गए आँकड़ों से स्पष्ट है।

कार्यक्रम के दो रूप विकास कार्यक्रम के दो रूप हैं—सामुदायिक विकास योजना (कम्यूनिटी प्राजेक्ट) तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजना (नेशनल एक्सटेन्शन सर्विस)। दोनों का मुख्य उद्देश्य देहात में नए जीवन का संचार है। अन्तर केवल इतना ही है कि सामुदायिक विकास खण्ड में तीन वर्ष में जितने खर्च की व्यवस्था होती है उससे प्रायः आधे से कुछ कम की व्यवस्था राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड में होती है। काम वही है, कार्यक्रम वही है। केवल काम की मात्रा में कुछ कमी हो सकती है। राष्ट्रीय विस्तार की योजना इस प्रयोजन से तैयार की गई थी कि जल्दी से जल्दी सारे देश को विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत लाया जा सके। जिन राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों में अच्छा काम होता है, उन्हें सामुदायिक विकास खण्ड बना दिया जाता है।

एक विकास खण्ड सौ गाँवों का और प्रायः ६० से ७० हजार आबादी का होता है। सारे काम के संचालन का उत्तरदायित्व मुख्य अधिकारी जिसे ब्लाक डेवलपमेन्ट आफिसर कहते हैं, पर होता है। प्रत्येक पाँच या दस गाँव के लिए एक ग्राम सेवक नियुक्त है। वह एक गाँव में अपना मुख्य-कार्यालय बना लेता है और अन्य गाँवों में साइकिल पर अथवा पैदल बराबर दौरा करता रहता है। ग्रामसेवक की सहायता के लिए प्रत्येक ब्लाक में एक से तीन तक समाज-शिक्षा संगठन (सोशल एजुकेशन आर्गनाइजर) होते हैं जो लोगों को समाज शिक्षा कार्यक्रम के लिए तैयार करते रहते हैं—जैसे बालिग-शिक्षा, फिल्म शो, मेलों, प्रदर्शनियों द्वारा। खेतीबाड़ी, पशु चिकित्सा, गृह उद्योग, स्वास्थ्य इत्यादि विभिन्न जटिल समस्याओं के समाधान के लिए प्रत्येक खण्ड में इन विषयों के विशेषज्ञ होते हैं, जिनकी सेवाएँ हर समय ग्राम सेवक को उपलब्ध हैं। इस प्रकार ब्लाक आफिसर के नेतृत्व में विकास कार्यक्रम की यह टीम गाँवों से दरिद्रता दूर करने के लिए सामूहिक प्रयास करती है। जिलों में विकास कार्यक्रम की देख रेख कलेक्टरों के कन्धों पर है। प्रान्त या राज्य के कार्यक्रम का संचालन विकास आयुक्त (डेवलपमेन्ट कमिश्नर) करता है। विभिन्न राज्यों के कार्यक्रम में तालमेल रखने तथा मूल नीति निर्धारित करने के लिए केन्द्र में सामुदायिक विकास मन्त्रालय है। इस प्रकार यह राष्ट्रीय आन्दोलन एक सूत्र में बँधकर आगे बढ़ता है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने दक्षिण में कन्याकुमारी से लेकर उत्तर में कश्मीर तक, और पश्चिम में कच्छ से लेकर पूर्व में असम तक, भारत के सोते हुए देहात में एक नए जीवन का प्रारम्भ किया है। शताब्दियों से हमारे गाँव गहरी नींद में सोए पड़े थे। सामुदायिक विकास आन्दोलन ने सोए हुए गाँवों को जगाया है, पददलितों को साहस दिया है और संघर्ष के लिए नई स्फूर्ति प्रदान की है।

स्वास्थ्य

किसी देश की मजबूती उसके नागरिको के स्वास्थ्य पर निर्भर है। हमारे देश में स्वास्थ्य की बहुत कम सुविधाएँ प्राप्त है। १९५१ में भारत में कुल ८,६०० अस्पताल थे—४१,००० लोगो के लिए एक अस्पताल। स्पष्ट है कि अस्पतालों की यह सख्या आवश्यकता से कही कम है। पहली पचवर्षीय योजना में अस्पतालो की सख्या बढकर १०,००० हो गई। दूसरी योजना के अन्त तक यह सख्या १२,६०० हो जाने की आशा है।

मकान

मनुष्यों को तीन चीजो की जरूरत होती है। खाने के लिए रोटी, पहनने के लिए कपडा और रहने के लिए मकान। अनुमान लगाया गया है कि इस समय भारत के नगरो में ४५ लाख मकानो की कमी है। स्पष्ट है कि सरकार अपने सीमित साधनों से इतनी बडी सख्या में मकानो का निर्माण नही कर सकती। परन्तु इस दिशा में—विशेष रूप से कारखानो के मजदूरों के लिए मकान बनाने के लिए महत्वपूर्ण काम हुआ है। भारत की केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों तथा कारखानादारो को मकान बनाने के लिए सहायता देती है। सरकार की इस नीति के फलस्वरूप बडे-बडे औद्योगिक नगरो में मजदूरो की कुछ गन्दी बस्तियों और चालो के स्थान पर आधुनिक ढग की नई बस्तियो का निर्माण हुआ है? इसके अतिरिक्त कम आमदनीवाले लोगों को मकान बनाने के लिए प्रोत्साहन देने की दृष्टि से सरकार ने उदारता से ऋण दिए है। गाँवों में भी नए तथा पक्के मकान बनाने के लिए सहायता दी जा रही है।

मजदूरों की भलाई

योजनाओ की सफलता और असफलता मजदूरो पर निर्भर है। सन्तुष्ट मजदूर वर्ग देश के निर्माण में बडी सहायता कर सकता है। अत मजदूरो के हितों की रक्षा के लिए बहुत से कानून पास किए गए हैं। एक कानून के अनुसार मजदूरो के लिए कम से कम मजदूरी निश्चित की गई है। दूसरे कुछ कानूनो के अन्तर्गत बीमार हो जाने, घायल हो जाने अथवा बेकार हो जाने की अवस्था में उनकी आर्थिक सहायता की व्यवस्था है। मजदूरो के लिए काम के घण्टे निश्चित कर दिए गए है। सरकारी कर्मचारी नियमित रूप से कारखानो का निरीक्षण करते है, जिससे मजदूरों की भलाई सम्बन्धी सब कानूनों का परिपालन ठीक ढग से होता रहे। मजदूरों के लिए नए मकान बनाए जा रहे है।

पिछडे हुए लोगों को कल्याण कार्य

आप जानते हैं कि भारत में बहुत-सी पिछडी हुई जातियाँ हैं। हमारे सविधान निर्माताओ ने स्वीकार किया है कि भारत की जनता में कुछ ऐसे वर्ग हैं, जिन्हें विशेष अधिकार तथा पर्याप्त सुरक्षा की आवश्यकता है और जिनके कल्याण और विकास का दायित्व राष्ट्र पर होना चाहिए। ये चार वर्ग ये है अनुसूचित जातियाँ (हरिजन), जिनकी जनसख्या ५ ५१ करोड है, अनुसूचित आदिम जातियाँ, जिनकी सख्या २ २५ करोड है, भूतपूर्व अपराधी कबीले जिनकी जनसख्या ४० लाख है तथा अन्य पिछडे वर्ग जिनकी जनसख्या अभी अनिश्चित है।

इन लोगो की कैसे मदद की जा रही है? एक तरीका है। इनमें शिक्षा का प्रचार किया जाए।

इसलिए सरकार ने उनके लिए निःशुल्क तथा सस्ती शिक्षा की व्यवस्था की है जिससे पढ़ लिखकर वे भी काम-धंधे हासिल कर सकें। उन्हें टेकनिकल शिक्षा भी दी जा रही है। उच्च शिक्षा के लिए उन्हें वजीफे दिये जाते हैं। नौकरियों में उनके लिए स्थान सुरक्षित कर दिए गए हैं।

समाज-कल्याण

हरिजन तथा आदिम जातियों में ही ऐसे लोग नहीं जिन्हें सहायता की जरूरत है। हमारा कर्तव्य है कि सब दुखी लोगों की सहायता करें। हमारे देश में बहुत-सी स्त्रियां तथा बच्चे हैं, जिनका कोई सहारा नहीं। और भी लोग हैं जैसे लूले, लँगड़े, अन्धे तथा विकृत मस्तिष्क के लोग। क्या इन लोगों की सहायता करना हमारा धर्म नहीं?

दुखी लोगों की सहायता के कार्य को समाज-कल्याण कार्य कहते हैं। इससे पहले बहुत-सी स्वयंसेवक संस्थाएँ समाज-कल्याण का काम करती रही हैं। परन्तु उनके साधन इतने अधिक नहीं कि वे कोई व्यापक कार्य कर सकें। समाज कल्याण के इन बिखरे हुए कार्यों की आर्थिक सहायता करने तथा उन्हें एक लड़ी में पिरोने के हेतु सरकार ने नई दिल्ली में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की है। दूसरी योजना में समाज-कल्याण कार्य पर २८ करोड़ रुपए खर्च होंगे।

केन्द्रीय समाज-कल्याण बोर्ड भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के अधीन काम करता है। डाक्टर दुर्गाबाई देशमुख इसकी अध्यक्षा हैं।

सामाजिक बुराइया

उपरोक्त समाज-कल्याण कार्यों के अतिरिक्त सरकार कुछ सामाजिक बुराइयों को दूर करने की भी चेष्टा कर रही है। मद्य-निषेध राष्ट्र की मुख्य नीति मानी गई है। बम्बई में पूर्ण रूप से शराबबन्दी लागू है। अन्य राज्यों में धीरे-धीरे शराब के पीने पिलाने पर रोक लगाई जा रही है। स्त्रियों का अनैतिक व्यापार रोकने के लिए सरकार ने कुछ कड़े नियम बनाए हैं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारतीय समाजवाद का क्या अर्थ है? भारत में किस प्रकार के समाज की स्थापना की कल्पना की गई है?

(२) सामुदायिक विकास कार्यक्रम के बारे में आप क्या जानते हैं? इसके अन्तर्गत भारत के गाँवों में क्या कुछ हो रहा है?

(४) भारत में पिछड़े हुए लोगों की भलाई के लिए सरकार क्या काम कर रही है?

(५) समाज-कल्याण का क्या अर्थ है? समाज-कल्याण की दिशा में भारत में क्या काम हो रहा है?

(६) भारत एक लोकहितकारी राष्ट्र है। यहाँ कौन-कौन से लोकहितकारी काम हो रहे हैं?

: १९ :

भारत का सांस्कृतिक पुनरुत्थान

भारत की संस्कृति जितनी पुरानी है, उतनी समृद्ध भी। शताब्दियों की इस दौड़ में इसने बहुत से उतार-चढ़ाव देखे हैं। परन्तु फिर भी इसने अपना तारतम्य और एकरूपता बनाए रखी है। स्वाधीनता के बाद इस धरोहर को सुरक्षित बनाए रखने का उत्तरदायित्व देश की सरकार पर है। लोगों को अपनी इस महान सम्पत्ति के प्रति जागरूक बनाए रखने तथा कलाकारों और साहित्यकारों को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने कुछ उपाय किए हैं।

देश की कला और संस्कृति के विकास के लिए सरकार ने एक राष्ट्रीय संस्कृति न्यास (National Cultural Trust) की स्थापना की है। यह ट्रस्ट अपनी तीन अकादमियों द्वारा काम करता है। इन तीन अकादमियों के नाम ये हैं—संगीत नाटक अकादमी, ललित कला अकादमी और साहित्य अकादमी। यहाँ यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि कला तथा संस्कृति का विकास केवल सरकार का ही कार्यक्षेत्र नहीं, देश में बहुत-सी प्राइवेट संस्थाएँ भी इस काम में लगी हुई हैं। ये तीन अकादमियाँ देश की सांस्कृतिक गतिविधियों को संगठित करने की चेष्टा करती हैं।

संगीत नाटक अकादमी

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद देश में संगीत तथा नाट्य कला को विशेष प्रोत्साहन मिला। इस क्षेत्र में आकाशवाणी और संगीत नाटक अकादमी ने मिलकर काम किया है। संगीत नाटक अकादमी का जन्म जनवरी, १९५३ में हुआ था। इसका उद्देश्य भारतीय नृत्य, संगीत और नाटक (फिल्मों सहित) का विकास करना है। यह अकादमी इन कलाओं की प्रादेशिक संस्थाओं की गति-विधियों में समन्वय स्थापित करती है। इन कलाओं पर शोध करती है तथा प्रशिक्षण संस्थाएँ स्थापित करती है। अकादमी द्वारा संगीत, नृत्य तथा नाटक समारोह भी किए जाते हैं। इन समारोहों में देश के भिन्न-भिन्न भागों के कलाकारों को स्टेज पर इकट्ठा करके राष्ट्रीय एकता को बल दिया जाता है। प्रति वर्ष २६ जनवरी को गणतन्त्र दिवस पर नई दिल्ली में लोकनृत्यों का राष्ट्रीय पर्व होता है। अकादमी ने दिल्ली में एक राष्ट्रीय नाट्यशाला के निर्माण की योजना बनाई है। १९५४ में अकादमी ने एक राष्ट्रीय नाटकोत्सव का आयोजन किया था। अकादमी शास्त्रीय, सरल तथा लोक—तीनों प्रकार के संगीत के विकास के लिए जोरदार प्रयत्न कर रही है। १९५४ में अकादमी ने प्रथम राष्ट्रीय संगीतोत्सव मनाया था।

ललित कला अकादमी

ललित कला अकादमी अक्तूबर, १९५४ में शुरू की गई थी। इस अकादमी का उद्देश्य चित्रकला, मूर्तिकला और स्थापत्य कला आदि के अध्ययन तथा शोध को प्रोत्साहन देना है। इसके अतिरिक्त यह प्रादेशिक तथा राज्यीय अकादमियों में समन्वय स्थापित करती है। इन कलाओं से सम्बन्धित साहित्य का प्रका-

प्राप्त होता है। अकादमी ने देश के विभिन्न भागों में कला तथा दस्तकारी के सम्बन्ध में सर्वेक्षण और शोध कार्य शुरू किया है। प्राचीन मूर्तियों, इमारतों और चित्रों के फोटो प्राप्त किए जा रहे हैं। जो कलाकृतियाँ प्राय नष्ट हो गई हैं, उन्हें दोबारा तैयार करने के लिए कुशल कलाकारों की सेवा प्राप्त की जा रही हैं। अकादमी कलाकृतियों की राष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ भी करती हैं। मार्च, १९५४ में दिल्ली में आधुनिक कला के राष्ट्रीय संग्रहालय (National Gallery of Modern Art) की स्थापना हुई। अब इस गैलरी में भारत के लगभग १०० कलाकारों के चित्रों का संग्रह है। इनमें प्रमुख कलाकारों के नाम ये हैं—सर्वश्री रवीन्द्रनाथ टाकुर, नन्दलाल बोस, अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, यामिनी राय, अमृता शेरगिल, सुधीर खास्तगीर, चुगताई, हल्दार और एन० एस० बेन्द्रे।

साहित्य अकादमी

साहित्य अकादमी मार्च, १९५४ में शुरू की गई थी। इसका उद्देश्य भारतीय साहित्य का स्तर ऊँचा करना, सभी भारतीय भाषाओं में लिखे जाने वाले साहित्य को प्रोत्साहन देना तथा उनमें तालमेल स्थापित करना है। अकादमी जनता के सम्मुख समस्त भारतीय भाषाओं के साहित्य को भारतीय साहित्य के रूप में प्रस्तुत करती है। अकादमी बीसवीं शताब्दी में १४ भारतीय भाषाओं में प्रकाशित समस्त साहित्य की एक ग्रन्थ-सूची तैयार कर रही है। 'भारतीय कविता' शीर्षक से भारतीय भाषाओं में लिखित उत्कृष्ट कविताओं का एक संग्रह हिन्दी पद्यानुवाद सहित प्रकाशित हो चुका है। अकादमी अन्य भारतीय भाषाओं के ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करती है। एक रूसी-हिन्दी शब्दकोष भी तैयार किया गया है।

लोकप्रिय साहित्य के प्रकाशन के लिए हाल ही में सरकार ने राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (National Book Trust) स्थापित किया है। यह न्यास शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति तथा मानव विज्ञान सम्बन्धी प्रतिष्ठित ग्रंथों का प्रकाशन करेगा।

विदेशों से सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय में एक विभाग खोला गया है। इस विभाग का काम कलाकारों, विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा संसार के विभिन्न देशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करना है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए क्या काम हो रहा है ?

(२) संगीत नाटक अकादमी क्या काम करती है ?

(३) ललित कला अकादमी के बारे में आप क्या जानते हैं ?

(४) संक्षिप्त नोट लिखो।

क—साहित्य अकादमी

ख—राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (National Book Trust)

ग—आधुनिक कला का राष्ट्रीय संग्रहालय (National Gallery of Modern Art)

: २० :

भारत की पंचवर्षीय योजनाएं

शताब्दियों की गुलामी के बाद सन् १९४७ में जब हमारे देश को स्वराज्य मिला, तो लोग फूले नहीं समाए। अनजाने ही ये समझने लगे कि आजादी मिलते ही, विदेशी शासकों के चले जाते ही, हमारी सब समस्याएँ खुद ही हल हो जाएँगी। लेकिन उन्हें अपनी गलती महसूस करने में ज्यादा समय नहीं लगा। आजादी के साथ हमारी समस्याओं और जिम्मेदारियों ने पहले से कहीं अधिक व्यापक रूप धारण कर लिया था। देश में लगभग सभी आवश्यक वस्तुओं का अभाव था—अन्न की कमी थी, कपडों की कमी थी और लोगों के पास सिर छुपाने के लिए मकान नहीं थे। देश में लगभग सभी आवश्यक वस्तुओं का अभाव था। अगर पर्याप्त मात्रा में कोई वस्तु प्राप्त थी, तो वह थी दरिद्रता और भुखमरी। क्या यह हैरानी की बात नहीं थी कि वह देश जिसमें कभी दूध-घी की नदियाँ बहा करती थीं, अब अपने निवासियों को भर पेट भोजन देने के लिये अन्य देशों का मुह तक रहा था।

लेकिन हमारे नेताओं तथा विचारशील लोगों के लिए यह सब अनपेक्षित नहीं था। वे अच्छी तरह समझते थे कि आजादी का अर्थ क्या होता है। आजादी का मतलब है कठोर परिश्रम। स्वतन्त्रता की इस धरोहर की रक्षा के लिए नेहरु जी ने देशवासियों से कहा था, "आराम हराम है।" आजादी से कई साल पहले ही हमारे नेताओं ने इन समस्याओं को हल करने के बारे में सोचना शुरू कर दिया था। १९३८ में पण्डित जवाहरलाल की अध्यक्षता में कांग्रेस द्वारा एक राष्ट्रीय आयोजन समिति नियुक्त की गई थी। दूसरा महायुद्ध १९३९ में छिड जाने और समिति के कई सदस्यों की गिरफ्तारी के कारण समिति इन समस्याओं पर पूरी तरह विचार न कर सकी लेकिन समिति ने जो भी सामग्री इकट्ठी की थी, उसे पुस्तकों का रूप देकर छापा गया। उन्हीं दिनों भारत में पहले पहल 'आयोजन' शब्द सुनने में आया था। वैसे तो उससे पूर्व भी रूस की आयोजित साम्यवादी अर्थ-व्यवस्था से प्रेरणा पाकर कई लोगों ने आयोजन की चर्चा की थी। सन् १९३४ में श्री एम० विश्वेश्वरैया ने 'प्लाड इकानोमी फार इण्डिया' नामक पुस्तक में देश के विकास के लिए एक दसवर्षीय योजना पेश की थी। इसी विचार को सामने रखते हुए ही राष्ट्रीय आयोजन समिति की नियुक्ति हुई थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आयोजन को बहुत बल मिला। इससे पूर्व कांग्रेस या जो भी अन्य लोग देश के आर्थिक विकास के लिए योजनाएँ बनाते थे, उसका केवल कागजी महत्व होता था। विदेशी सरकार को हमारे देश की विकास की योजना में भला क्यों रुचि होने लगी। लेकिन अपनी सरकार बन जाने पर नक्शा ही बदल गया। सरकार ने दृढ़ संकल्प किया कि देश की दरिद्रता को दूर किया जाए और दरिद्रता दूर की जा सकती थी केवल आयोजित विकास द्वारा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए मार्च, १९५० में भारत सरकार ने योजना आयोग (Planning Commission) की स्थापना की। योजना आयोग के सुपुर्द देश के विकास के लिए एक के बाद दूसरी पचवर्षीय योजनाएँ बनाने का काम और उन्हें कार्यान्वित करने का भार सौंपा गया।

पता होता है। अकादमी ने देश के विभिन्न भागों में कला तथा दस्तकारी के सम्बन्ध में सर्वेक्षण और शोध कार्य शुरू किया है। प्राचीन मूर्तियों, इमारतों और चित्रों के फोटो प्राप्त किए जा रहे हैं। जो कलाकृतियाँ प्रायः नष्ट हो गई हैं, उन्हें दोबारा तैयार करने के लिए कुशल कलाकारों की सेवा प्राप्त की जा रही है। अकादमी कलाकृतियों की राष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ भी करती है। मार्च, १९५४ में दिल्ली में आधुनिक कला के राष्ट्रीय संग्रहालय (National Gallery of Modern Art) की स्थापना हुई। अब इस गैलरी में भारत के लगभग १०० कलाकारों के चित्रों का संग्रह है। इनमें प्रमुख कलाकारों के नाम ये हैं—सर्वश्री गगनेन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बोस, अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, यामिनी राय, अमृता शेरगिल, सुधीर खास्तगीर, चुगताई, हल्दार और एन० एस० बेन्द्रे।

साहित्य अकादमी

साहित्य अकादमी मार्च, १९५४ में शुरू की गई थी। इसका उद्देश्य भारतीय साहित्य का स्तर ऊँचा करना, सभी भारतीय भाषाओं में लिखे जाने वाले साहित्य को प्रोत्साहन देना तथा उनमें सामंजस्य स्थापित करना है। अकादमी जनता के सम्मुख समस्त भारतीय भाषाओं के साहित्य को भारतीय साहित्य के रूप में प्रस्तुत करती है। अकादमी बीसवीं शताब्दी में १४ भारतीय भाषाओं में प्रकाशित समस्त साहित्य की एक ग्रन्थ-सूची तैयार कर रही है। 'भारतीय कविता' शीर्षक से भारतीय भाषाओं में लिखित उत्कृष्ट कविताओं का एक संग्रह हिन्दी पद्यानुवाद सहित प्रकाशित हो चुका है। अकादमी अन्य भारतीय भाषाओं के ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करती है। एक अंग्रेजी-हिन्दी शब्दकोश भी तैयार किया गया है।

लोकप्रिय साहित्य के प्रकाशन के लिए हाल ही में सरकार ने राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (National Book Trust) स्थापित किया है। यह न्यास शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति तथा मानव विज्ञान सम्बन्धी प्रतिष्ठित ग्रंथों का प्रकाशन करेगा।

विदेशों से सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय में एक विभाग खोला गया है। इस विभाग का काम कलाकारों, विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा संसार के विभिन्न देशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करना है।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत में सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए क्या काम हो रहा है?

(२) संगीत नाटक अकादमी क्या काम करती है?

(३) ललित कला अकादमी के बारे में आप क्या जानते हैं?

(४) संक्षिप्त नोट लिखो।

क—साहित्य अकादमी

ख—राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (National Book Trust)

ग—आधुनिक कला का राष्ट्रीय संग्रहालय (National Gallery of Modern Art)

: २० :

भारत की पंचवर्षीय योजनाएं

शताब्दियो की गुलामी के बाद सन् १९४७ में जब हमारे देश को स्वराज्य मिला, तो लोग फूले नही समाए। अनजाने ही ये समझने लगे कि आजादी मिलते ही, विदेशी शासको के चले जाते ही, हमारी सब समस्याएँ खुद ही हल हो जाएँगी। लेकिन उन्हें अपनी गलती महसूस करने में ज्यादा समय नही लगा। आजादी के साथ हमारी समस्याओ और जिम्मेदारियो ने पहले से कही अधिक व्यापक रूप धारण कर लिया था। देश में लगभग सभी आवश्यक वस्तुओ का अभाव था—अन्न की कमी थी, कपडो की कमी थी और लोगो के पास सिर छुपाने के लिए मकान नही थे। देश में लगभग सभी आवश्यक वस्तुओं का अभाव था। अगर पर्याप्त मात्रा में कोई वस्तु प्राप्त थी, तो वह थी दरिद्रता और भुखमरी। क्या यह हैरानी की बात नहीं थी कि वह देश जिसमें कभी दूध-घी की नदियाँ बहा करती थी, अब अपने निवासियो को भर पेट भोजन देने के लिये अन्य देशो का मुंह तक रहा था।

लेकिन हमारे नेताओ तथा विचारशील लोगो के लिए यह सब अनपेक्षित नही था। वे अच्छी तरह समझते थे कि आजादी का अर्थ क्या होता है। आजादी का मतलब है कठोर परिश्रम। स्वतन्त्रता की इस धरोहर की रक्षा के लिए नेहरू जी ने देशवासियों से कहा था, "आराम हराम है।" आजादी से कई साल पहले ही हमारे नेताओं ने इन समस्याओ को हल करने के बारे में सोचना शुरू कर दिया था। १९३८ में पण्डित जवाहरलाल की अध्यक्षता में कांग्रेस द्वारा एक राष्ट्रीय आयोजन समिति नियुक्त की गई थी। दूसरा महायुद्ध १९३९ में छिड़ जाने और समिति के कई सदस्यो की गिरफ्तारी के कारण समिति इन समस्याओ पर पूरी तरह विचार न कर सकी लेकिन समिति ने जो भी सामग्री इकट्ठी की थी, उसे पुस्तको का रूप देकर छापा गया। उन्ही दिनो भारत में पहले पहल 'आयोजन' शब्द सुनने में आया था। वैसे तो उससे पूर्व भी रूस की आयोजित साम्यवादी अर्थ-व्यवस्था से प्रेरणा पाकर कई लोगो ने आयोजन की चर्चा की थी। सन् १९३४ में श्री एम० विश्वेश्वरैया ने 'प्लान्ड इकानोमी फार इण्डिया' नामक पुस्तक में देश के विकास के लिए एक दसवर्षीय योजना पेश की थी। इसी विचार को सामने रखते हुए ही राष्ट्रीय आयोजन समिति की नियुक्ति हुई थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आयोजन को बहुत बल मिला। इससे पूर्व कांग्रेस या जो भी अन्य लोग देश के आर्थिक विकास के लिए योजनाएँ बनाते थे, उसका केवल कागजी महत्व होता था। विदेशी सरकार को हमारे देश की विकास की योजना में भला क्यो रुचि होने लगी। लेकिन अपनी सरकार बन जाने पर नक्शा ही बदल गया। सरकार ने दृढ संकल्प किया कि देश की दरिद्रता को दूर किया जाए और दरिद्रता दूर की जा सकती थी केवल आयोजित विकास द्वारा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए मार्च, १९५० में भारत सरकार ने योजना आयोग (Planning Commission) की स्थापना की। योजना आयोग के सुपुर्द देश के विकास के लिए एक के बाद दूसरी पचवर्षीय योजनाएँ बनाने का काम और उन्हें कार्यान्वित करने का भार सौंपा

६३० लाख टन हुआ। इस प्रकार खाद्यान्न के क्षेत्र में पहली योजना के दौरान में लक्ष्य से अधिक वृद्धि हुई। रूई की गाँठो का उत्पादन १९५०–५१ में २९ लाख था, जो १९५५–५६ में ४० लाख हो गया। इसी अवधि में जूट का उत्पादन ३३ लाख गाँठो से बढकर ४१ लाख गाँठें हुआ। गुड और तिलहनो के उत्पादनमें भी वृद्धि हुई।

सिंचित क्षेत्र में १६० लाख एकड भूमि की वृद्धि हुई। बिजली का उत्पादन १९५०–५१ में २३ लाख किलोवाट से बढकर १९५५–५६ में ३४ लाख किलोवाट हो गया।

औद्योगिक क्षेत्र में पहली पचवर्षीय योजना की कुछ सफलताएँ निम्नलिखित है

(१) लगभग २३ करोड रुपये की लागत से सिन्दरी में खाद के एक कारखाने का निर्माण जिसमें ३ लाख टन से अधिक अमोनियम सल्फेट प्रति वर्ष तैयार होता है।

(२) अलवाय (केरल) की रेयर अर्थ्स फैक्टरी का निर्माण।

(३) रूपनारायणपुर (पश्चिम बगाल) में टेलीफोन के केबल बनाने का कारखाना।

(४) बंगलौर के टेलीफोन कारखाने का विस्तार और उत्पादन में वृद्धि।

(५) जलहाली (बगलोर के पास) मे मशीनी पुर्जो का कारखाना खोला गया।

(६) दिल्ली में डी॰ डी॰ टी॰ फैक्टरी और पिम्परी (पूना के पास) में पेनसिलीन का कारखाना खोला गया।

(७) मध्य प्रदेश में अखबारी कागज बनाने की एक मिल शुरू की गई।

दूसरी पचवर्षीय योजना

पहली योजना की पूर्ति के साथ ही हमारा काम खत्म नहीं हुआ। वास्तव में यह तो शुरू हुआ है। पहली योजना ने हमारे देश के भावी विकास की नीव रखी थी। योजना आयोग ने अब दूसरी योजना बनाई है। इस योजना के चार मूल उद्देश्य हैं

(१) राष्ट्रीय आय में इतनी वृद्धि करना जिससे देश के रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो,

(२) मूल और भारी उद्योगो के विकास पर जोर देते हुए देश का तेजी से औद्योगीकरण,

(३) रोजगार के अवसरो का अधिक विस्तार, और

(४) आय और सम्पत्ति की विषमताओ को दूर करके आर्थिक शक्ति का पहले से अधिक समान वितरण।

दूसरी योजना काल (१९५६–१९६१) में कुल खर्च ४,८०० करोड रुपये आका गया है। दूसरी योजना का मुख्य उद्देश्य पाच वर्ष की अवधि में राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत की वृद्धि सम्भव बनाना, आबादी की वृद्धि के परिणामस्वरूप श्रमिको की सख्या में जो वृद्धि होगी उनके लिए रोजगार के अवसर बढाना और औद्योगीकरण की दिशा में ऐसा कदम उठाना जिससे आनेवाली योजनाओ के लिए अधिक तेज प्रगति की भूमि तैयार हो सके। ४,८०० करोड रुपये की पूजी को विभिन्न मुख्य मदो पर इस प्रकार व्यय किया जाएगा

प्रथम योजना
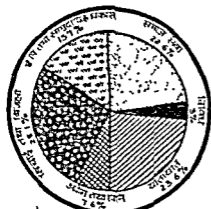
RS. 2356 CRORES

द्वितीय योजना
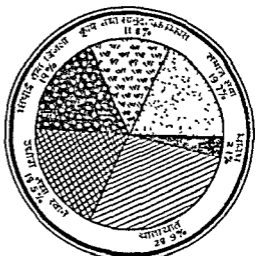
RS. 4800 CRORES

	पहली पंचवर्षीय योजना		दूसरी पंचवर्षीय योजना	
	कुल व्यय (करोड़ रुपए में)	प्रतिशत	कुल व्यय (करोड़ रुपए में)	प्रतिशत
१ कृषि और सामुदायिक विकास	३७२	१६	५६८	१२
२ सिंचाई और बिजली	६६१	२८	९१३	१९
३. उद्योग और खान	१७९	७	८९०	१८५
४ परिवहन और संचार	५५६	२४	१,३८५	२९
५ सामाजिक सेवाएँ	५४७	२३	९४५	१९५
६ विविध	४१	२	९९	२
योग	२,३५६	१००	४,८००	१००

निजी क्षेत्र में दूसरी योजना काल में २,४०० करोड़ रुपये खर्च होने की आशा है। इस प्रकार समूची योजना पर सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में ७,२०० करोड़ रुपये खर्च होने की सम्भावना है।

दूसरी पचवर्षीय योजना पर सरकार ४,८०० करोड़ रुपये खर्च कर रही है । आप पूछेंगे कि यह रुपया कहाँ से आएगा ? इसका लेखा इस प्रकार है

(१) चालू राजस्व की आय में से बचत	८००	करोड रुपये
(२) जनता से लिया गया ऋण	१२००	" "
(३) बजट के अन्य सूत्रो से आय	४००	" "
(४) विदेशो से सभावित सहायता	८००	" "
(५) घाटे का बजट बनाकर	१२००	" "
(६) कमी रह जायगी इसे देश के अपने साधनो से पूरा किया जायगा	४००	" "
	४८००	

दोनो योजनाओ का अध्ययन करते समय हमें इन बातो का ध्यान रखना चाहिए

(१) दूसरी योजना पहली योजना से कही अधिक बडी है । इसमें पहली योजना की अपेक्षा दुगुनी पूजी लगाने का कार्यक्रम है ।

(२) पहली योजना में जहाँ कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यक्रमो को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया गया था, वहाँ इस योजना में भारी उद्योगों और उनसे सम्बद्ध विषयो पर अधिक जोर दिया गया है ।

अभ्यास के प्रश्न

(१) हम आयोजन क्यो करते है ? भारत में आयोजन का सक्षिप्त इतिहास लिखो ।

(२) पहली पंचवर्षीय योजना का सक्षिप्त वर्णन करो । क्या हमारी पहली योजना सफल हुई थी ?

(३) दूसरी पचवर्षीय योजना का वर्णन करो । पहली और दूसरी योजनाओं में क्या अन्तर हैं ?

: २१ :

छोटी बचतों की योजनाएं

भारत में विकास की नई-नई योजनाएँ कार्यान्वित हो रही हैं। एक ओर भाखड़ा बाँध बन रहा है, तो दूसरी ओर सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत देहातों का रूप बदल रहा है। नई सड़कें बन रही हैं, नई रेलों का जाल बिछ रहा है और नए-नए कारखाने बन रहे हैं। देश में एक अभूतपूर्व क्रान्ति का जन्म हो रहा है। एक नया जीवन, नई स्फूर्ति लक्षित हो रही है समूचे भारत में।

छोटी बचतों का महत्व

इतना काम हो रहा है, परन्तु कभी आपने सोचा कि इन कामों के लिए सरकार रुपया कहाँ से लाती है। हम और तुम से? हम कर देते हैं, सरकार उन्हें इकट्ठा करके हमारी भलाई के लिए ही खर्च कर देती है। परन्तु जो काम हो रहा है, वह साधारण कामों से कई गुना अधिक है। ब्रिटिश राज में न इतने बड़े बाँध बने थे, न ग्रामों के विकास पर इतना ध्यान दिया गया था। आज जो कुछ हो रहा है, वह हमारी पंचवर्षीय योजना का फल है। परन्तु इस योजना पर जो धन व्यय होगा, उसका एक बड़ा हिस्सा छोटी बचतों की योजना से प्राप्त होता है हमारी तुम्हारी बचतों से। छोटी बचतों के लिए सरकार ने ऐसी स्कीमें बनाई हैं कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी थोड़ी-सी बचत जमा करा कर भारत के विकास-यज्ञ में आहुति दे सकता है। ५, १०, या १५ वर्ष बाद यही पूँजी बड़ा रूप धारण करके उसे वापस मिल जाती है।

भाखड़ा में कंक्रीट

आप विद्यार्थी हैं। अपने माँ-बाप से जेब खर्च के लिए प्रति मास कुछ रुपये लेते हैं। इन रुपयों में से हर महीने चार आने बचाकर भी आप देश के नव-निर्माण में सहायता दे सकते हैं—केवल चार आने! आप नहीं जानते कि आपके इन पैसों से भाखड़ा में बजरी पड़ती है या देहात के किसी स्कूल में ईंटें लगती हैं। छोटी बचतों द्वारा सरकार को जो रुपया मिलता है, वह आपके भविष्य को सुरक्षित करने में लगाया जाता है। कहीं अस्पताल खुल रहे हैं, तो कहीं समाज-सुधार केन्द्र, कहीं चिकित्सालय बन रहे हैं तो कहीं बालिगों के लिए शिक्षा के केन्द्र।

अपने भले के लिए

आपकी बचत से देश का भला तो होगा ही, आपका अपना भला भी होगा। छोटी-छोटी रकमें समय पाकर बड़ी रकमें बन जाएंगी। जरूरत पड़ने पर आपके काम आएंगी। वे सरकार के खजाने में सुरक्षित हैं। एक आदमी जो कुछ आज बचा रहा है, वह उसके बेटे की शिक्षा, बेटे के ब्याह और अपने बुढ़ापे में काम आएगा। सरकार को उसका यह लाभ होगा कि उसे लोहे के कारखाने, बिजलीघर, स्कूल और अस्पताल खोलने के लिए दुनिया के देशों के आगे हाथ फैलाने नहीं पड़ेंगे।

कैसे बचाएं

बचत के कई तरीके हैं। अपने घर की तरफ देखिए। हम कपडो, गहनो और मनोरंजन पर इतना व्यय करते है। इनमें दो चार रुपये महीने की बचत ही काफी है। ऐश्वर्य की वस्तुओ पर खर्च में हम आसानी से कमी कर सकते है। जीवन की आवश्यक्ताओ में कमी करने की कोई जरूरत नही। उनका पूरा-पूरा उपभोग करके भी हम थोडी-सी बचत कर सकते है।

बचत की योजनाए

छोटी बचतो की मुख्य योजनाएँ ये है

(१) १२ वर्षीय राष्ट्रीय योजना बचत सर्टिफिकेट (12 years National Plan Savings Certificates) इन सर्टिफिकेटो में लगाए हुए १०० रुपए १२ वर्ष बाद १६५ हो जाते हैं। ये सर्टिफिकेट पाँच रुपये से लेकर पाँच हजार की राशि में खरीदे जा सकते है। एक व्यक्ति एक समय २५,००० रुपए तक के ऐसे सर्टिफिकेट अपने पास रख सकता है। घर का प्रत्येक सदस्य इतनी रकम के बचत सर्टिफिकेट खरीद सकता है।

(२) १० वर्षीय ट्रेजरी सेविंग डिपाजिट (Treasury Savings Certificates) इस स्कीम के अन्तर्गत कोई भी व्यक्ति १०० रुपये या इससे अधिक रकम २५,००० रुपये तक जमा कर सकता है। इस पूंजी पर साढे चार प्रतिशत वार्षिक ब्याज मिलता है।

(३) पोस्ट आफिस सेविंग्स बैंक डाकखाने में हिसाब खोलकर भी आप देश के नव-निर्माण में योग देते है। डाकखाने में २ रुपये जमा कराकर आप अपना हिसाब खोल सकते हैं। २५ रुपये से लेकर १०,००० रुपये तक आप की जमाशुदा रकम पर प्रतिवर्ष ढाई प्रतिशत ब्याज बढता जाएगा। शेष पर २ प्रतिशत प्रतिवर्ष ब्याज मिलेगा। डाकखाने से रुपया निकालने की अधिकाधिक सुविधाएँ दी गई हैं। रुपया निकलवाने में कोई दिक्कत नही होगी। अब तो बडे-बडे शहरो में चेक से रुपया निकलवाने की प्रणाली भी शुरू की जा रही है।

बहुत छोटी बचतों को योजनाए

सरकार चाहती है कि देश के इस विकास महायज्ञ में बच्चे और बूढे सब अपना-अपना हिस्सा दें। गरीब से गरीब व्यक्ति भी देश की उन्नति के इस कार्यक्रम में हिस्सेदार बन सकता है। वह कैसे ? सरकार ने २५ नए पैसे, ५० नए पैसे और एक रुपए की बचत टिकटें जारी की हैं। कोई भी व्यक्ति इन टिकटो को समय-समय पर खरीद सकता है। जब पाँच रुपये की टिकटें इकट्ठी हो जाएँ, तो उन्हें पाँच रुपए के नेशनल प्लान सेविंग सर्टिफिकेट में बदलवाया जा सकता है। इस योजना से बच्चे ही लाभ नही उठा सकते, बल्कि हमारे देहाती भाई भी ऐसी टिकटें खरीद कर सरकार के साधनो को बढा सकते हैं। देहातों में राष्ट्रीय बचत योजना के सर्टिफिकेट खरीदने के बारे में ग्रामसेवक से परामर्श लिया जा सकता है। वह ये सर्टिफिकेट खरीदवाने में ग्रामवासियो की मदद करता है।

उपहार योजना

सरकार ने राष्ट्रीय बचत की एक और रोचक योजना निकाली है। इसे उपहार योजना कहते हैं। आपको अपने परिवार के किसी सदस्य को शादी पर, जन्म दिन पर अथवा किसी और मौके पर उपहार देना

है। आपको जगह-जगह उपहार खरीदने के लिए जाने की जरूरत नहीं। नजदीकी डाकखाने से ५, १०, १०० या १००० रुपये का एक उपहार कूपन खरीद लें। कूपन पर आप उस व्यक्ति का नाम लिख दें जिसे उपहार देना है और इस अवसर पर अपनी शुभ कामनाएँ भी लिख दें। यह उपहार छोटे-बड़े सबको दिया जा सकता है। इस उपहार को १२ वर्षीय राष्ट्रीय प्लान सर्टिफिकेटों में बदलवाया जा सकता है। इस प्रकार आपके उपहार की याद उस व्यक्ति के मन में १२ वर्ष तक बनी रहेगी। यही नहीं यह उपहार देकर आप उसके भविष्य के निर्माण में सहायता कर रहे हैं।

रुपया जमा कैसे कराएं

हमारे देश के भोले-भाले लोग बचत तथा राष्ट्रीय विकास के महत्व को जानते हैं। परन्तु बहुधा उन्हें यह नहीं मालूम होता कि अपनी जमा की हुई रकम को कहाँ लगाएँ। ग्रामों में अधिकतर लोग तो अपनी पूंजी को सोना-चाँदी खरीदने में लगा देते हैं और या फिर भूमि के नीचे गाड़ देते हैं। इस तरह वह रुपया जो भाखड़ा बाँध की नींव में कंक्रीट के रूप में पड़ना चाहिए, भूमि के नीचे बिना किसी उपयोग के पड़ा रहता है! यदि यही धन राष्ट्रीय बचतों में लगे तो प्रति दिन इसकी रकम बढ़ जाए। इसलिए हम आपको बताएँगे कि छोटी बचतों में रुपया कैसे लगाया जाता है।

सब से आसान तरीका तो यह है कि आप नजदीकी डाकखाने में जाएँ। वहाँ या तो अपना हिसाब खोल दें अथवा नेशनल प्लान सेविंग सर्टिफिकेट खरीद लें। ट्रेजरी सेविंग डिपाजिट सर्टिफिकेट खरीदने के लिए आपको निकटतम सरकारी खजाने, रिजर्व बैंक अथवा स्टेट बैंक की शाखा में जाना चाहिए। कर्मचारियों को आदेश है कि वे बचत सर्टिफिकेट खरीदनेवाले लोगों को ज्यादा से ज्यादा सुविधा दें।

स्त्रियों को राष्ट्रीय बचत योजना में लाने के लिए सरकार ने कुछ स्त्री-एजेन्ट रखे हैं। ये औरतें घर-घर जाकर अपनी बहनों को राष्ट्रीय बचत योजनाओं के बारे में जानकारी कराती हैं।

विद्यार्थी तथा छोटी बचतें

छोटी-छोटी बचतों की योजनाओं को लोकप्रिय बनाने में विद्यार्थी बड़ी सहायता दे सकते हैं। वे अपने माता-पिता को इनकी उपयोगिता समझा कर इनमें रुपया लगाने के लिये तैयार कर सकते हैं। अपने अनपढ़ पड़ोसियों को इनके बारे में जानकारी दे सकते हैं। इस प्रकार विद्यार्थी देश के प्रति अपना उत्तरदायित्व निभा सकते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) छोटी बचतों से देश को क्या लाभ होता है? हमें बचत क्यों करनी चाहिए?
(२) भारत सरकार ने छोटी बचत की कौन-कौन सी योजनाएँ चला रखी हैं? विद्यार्थी उनमें कैसे सहयोग दे सकते हैं?
(३) बचत की उपहार कूपन योजना के बारे में आप क्या जानते हैं?
(४) आपके पास बचत के केवल २५ नए पैसे हैं। उन्हें आप राष्ट्रीय विकास में कैसे लगाएँगे। विस्तार से लिखिए?

तृतीय खण्ड

आधुनिक युग में मानव जीवन

: २२ :

दुनिया में यातायात के साधनों का विकास

दुनिया का सबसे बड़ा आविष्कारक वह आदमी था जिसने सर्वप्रथम पहिये का आविष्कार किया।

—मुल्कराज आनन्द

आधुनिक युग को विज्ञान युग कहते हैं। इस युग में मानव ने प्रकृति पर बहुत हद तक विजय प्राप्त कर ली है। प्रकृति अब उसके इशारे पर चलती है। विज्ञान युग में मनुष्य की सबसे बड़ी सफलता है—दूरी पर विजय। निरन्तर प्रयास से मानव ने इतनी बड़ी दुनिया को अपने में समेट लिया है। प्रत्येक देश में रेलगाडियों का जाल-सा बिछ गया है। ऐसे-ऐसे हवाई जहाज बने हैं, जो एक घंटे में ६०० से भी अधिक मील की उड़ान कर लेते हैं। सड़कों पर दौड़ती हुई मोटरों ने मनुष्य को एक दूसरे के बहुत निकट ला दिया है, इसके अतिरिक्त संदेश-वाहन के साधनों में जो उन्नति हुई है, उसने तो ऐसा सम्भव कर दिया है कि दिल्ली में बैठकर हम अमेरिका में व्यापार करें। बच्चों को सात समुद्र पार से आनेवाली परियों की कहानियाँ सुनाई जाती थी। अब सात समुद्र पार किसी से भी आप बात कर सकते हैं!

पहिये का आविष्कार

क्या कभी आपने सोचा कि यातायात और सन्देशवाहन के साधनों का सर्वप्रथम कैसे और कहाँ आविष्कार हुआ होगा? दुनिया का सबसे बड़ा आविष्कारक वह मनुष्य था जिसने सर्वप्रथम पहिये का आविष्कार किया। पहिये के आविष्कार के बिना मानव अपनी उन्नति की यात्रा पर एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता था। पहिये ने मनुष्य को वे प्याले बनाने में सहायता दी जिनमें वह जल या दूध पीता है। पहिये की मदद से उसने कुएँ से पानी निकाल कर खेतों में सिंचाई करने की विधि निकाली। पहिये से ही उसकी बैलगाड़ी बनी, रेल बनी, मोटर और हवाई जहाज बने! कारखानों में हजारों पहिये चलते रहते हैं जिनसे मशीन युग की सब मशीनें बनती हैं।

यह कहना कठिन है कि पहला पहिया कहाँ, कैसे और कब बना। परन्तु हम कल्पना कर सकते हैं कि कैसे पहले पहिये का आविष्कार हुआ होगा। आज की तरह आदि मानव को भी अपना सामान ढोना पड़ता था। वह उसे अपने कन्धे पर डाल कर अपनी कन्दरा या झोंपड़ी में ले जाता था। जब तक पहिये का आविष्कार नहीं हुआ, मनुष्य अपने सरदार या राजा को भी एक ऐसी पालकी पर उठाकर ले जाता रहा

जिसे वह अपने कंधों पर उठाता था। शायद एक दिन किसी मनुष्य ने वृक्ष का एक तना काटा। उसे अपने कंधे पर उठाए-उठाए वह थक गया। थक कर उसने लकडी के उस तने को जमीन पर पटक दिया।

आदि मानव अपने सरदार को पालकी में बिठाकर ले जा रहे हैं

थोडी देर सुस्ताने के बाद वह उसे धकेलने लगा। उसे यह तरीका बडा सुलभ और सुविधाजनक प्रतीत हुआ। लकडी के इस गोल तने को इस तरह घूमता देखकर उसके मन में पहिया बनाने का विचार उत्पन्न हुआ।

पहिये का आविष्कार आज से चार-पाँच हजार वर्ष पूर्व हुआ होगा। मोहनजोदडो में मिट्टी के बहुत बढिया बरतन मिले हैं। निश्चय ही कुम्हार ने उन्हें पहियों की सहायता से गढा होगा। पहिये का विचार आते ही मनुष्य ने पहियेदार गाडियाँ बनाईं। पहले मनुष्य इन गाडियों को स्वयं खींचता था। प्रायः उसी समय उसने बोझा ढोने के लिए कुछ जानवरों को भी सिखा लिया था। रेगिस्तान में यात्रा के लिये मनुष्य ने ऊँट को पाला। अन्य स्थानों पर वह घोडों और गधों पर अपना सामान लाद कर एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने लगा। जानवर की पीठ पर अधिक सामान नहीं लादा जा सकता था। इसलिए उसने अपने पालतू घोडों और बैलों को गाडी में जोत लिया। धीरे धीरे अपनी सीधी सादी पहिया गाडी को सुधार कर रथ बनाए। महाभारत और रामायण में हम रथों का वर्णन पढते हैं। ये रथ बहुत भारी होते थे। आपने पढा होगा कि अर्जुन के रथ को स्वयं भगवान कृष्ण ने हाँका था। मिस्र, रोम और यूनान में भी ऐसे रथ बनाए गए थे।

सडकें

पहिये का आविष्कार हो गया। बैलगाडी, गधा गाडी और घोडा गाडी भी बन गई। परन्तु ऊबड-खाबड भूमि में उन्हें चलाने में बडी दिक्कत होती थी। इन गाडियों को भली भाँति चलाने के लिये मनुष्य

के मन में समतल मार्ग बनाने का विचार आया। इसलिए उसने सडक बनाई। जहाँ भी सडक बनी, वहाँ गाडियाँ अधिक सुविधा से चल सकती थी और ज्यादा बोझ उठा सकती थी। योरोप में रोमन साम्राज्य की छत्रछाया में नई-नई सडकें बनी और उनकी देखभाल की व्यवस्था भी की गई। रोमन राजाओं को अपने साम्राज्य के दूर-दूर के प्रदेशों से सम्पर्क स्थापित करना होता था। यह सम्पर्क सडको द्वारा भी सम्भव था। रोमनो द्वारा बनाई गई सडकों के अवशेष आज भी योरोप में कही-कही दिखाई देते हैं। भारत में कई सम्राटो ने सडको के निर्माण की ओर ध्यान दिया। सम्राट् अशोक तथा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने सडकें बनवाई और उनके दोनो ओर छायादार वृक्ष लगवाए। सोलहवी शताब्दी में शेरशाह सूरी ने हमारी वर्तमान ग्रांड ट्रंक रोड की नींव रखी थी। ग्रांट ट्रंक रोड इस समय भारत की सबसे लम्बी सडक है। इसकी लम्बाई १,५०० मील है। दुनिया की सबसे लम्बी सडक अमेरिका में है। इसकी लम्बाई ३,२१९ मील है।

नाव

स्थल पर यात्रा करने के लिए मनुष्य ने पहियेदार गाडी बनाई तो नदियो और समुद्रो में नावें डाली। मानव ने पहली नाव शायद वृक्ष के तने को खोखला करके बनाई होगी। आज भी ऐसी नावें दुनिया के कुछ पिछडे हुए भागो में मिलती हैं। भारत के पहाडी प्रदेशो में बहुधा हम देखते है कि मनुष्य कुछ लकडियों को जोड कर एक ढीली-सी नाव पर सामान रखकर नदी पार करते है। धीरे-धीरे मनुष्य ने बादबानो से चलने वाले जहाज बनाए। अठारहवी शताब्दी तक दुनिया के समुद्रो में ऐसे ही जहाज चलते रहे।

मध्य युग में यातायात

इतिहास के मध्य युग में मनुष्य प्राय यातायात के इन्ही साधनो से सन्तुष्ट रहा। घोडो और गधो पर सामान लाद कर धीमी गति से दूर-दूर के स्थानो को ले जाया जाता था। चीन और भारत से माल भूमध्य सागर की बन्दरगाहो में पहुँचता। व्यापारी यह माल छोटे-छोटे जहाजों में लादकर या तो समुद्र के रास्ते लाते अथवा रेगिस्तानो से होते हुए पहाडी दर्रों से गुजर कर वे वेनिस और जैनेवा पहुँचते थे। यहाँ से इस सामान को माल ढोने के छोटे-छोटे जहाज योरोप के अन्य भागो में पहुँचा देते थे। इस युग में जहाजो में कोई विशेष सुधार नही हुआ। यह जहाज तीव्र गति के लिए नही बनाए जाते थे। वे धीरे-धीरे समुद्रो में घूमा करते थे।

बादबानी जहाज

वाष्प शक्ति का आविष्कार

सडको के रास्ते सामान ढोना बहुत महँगा पडता था। इसलिए कुछ स्थानो पर विशेष रूप से इग्लैण्ड में यातायात के लिए नहरें बनाई गईं। नहरो की आवश्यकता इसलिए पडी कि इंग्लैण्ड ... ने
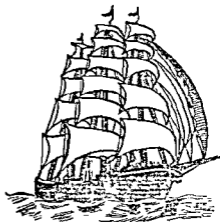
जो कोयला निकलता था, उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में बहुत अधिक व्यय पड़ता था। १७६१ में इंग्लैण्ड में एक नहर बनाई गई जिसके परिणामस्वरूप कोयला मैनचेस्टर नगर में आधे दामों पर मिलने लगा। तदोपरान्त इंग्लैण्ड में कई और नहरें बनाई गईं। नहरों से इंग्लैण्ड के औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला। परन्तु औद्योगीकरण अब इस स्थिति पर पहुँच चुका था कि उसे यातायात के अधिक बेहतर साधनों की आवश्यकता थी। १८०१ ईस्वी में रिचर्ड ट्रैविथिक ने कार्नवाल की सड़कों पर पहली बार एक वाष्प शक्ति से चलने वाले इंजन को दौड़ाया। इस इंजन को अपने आप चलते हुए देख कर लोग डर गए। वे कहने लगे कि यह शैतान का आविष्कार है। इससे पहले १७६९ में क्यूनो नामक एक फ्रांसीसी कारीगर ने वाष्प से चलने वाली गाड़ी बनाई थी। एक बार पेरिस की सड़क पर उस गाड़ी का इंजन उलट गया। इस घटना के फलस्वरूप फ्रांसीसी इससे डरने लगे और फ्रांस में वाष्प से चलने वाली गाड़ियों पर प्रयोग प्राय समाप्त हो गए। रिचर्ड ट्रैविथिक ने जो गाड़ी चलाई थी, वह बहुत सफल नहीं हुई। वाष्प से चलनेवाली पहली रेल बनाने का श्रेय एक अंग्रेज नवयुवक जार्ज स्टीफन्सन को प्राप्त है। वह खान में काम करनेवाला एक मजदूर था। उस नवयुवक ने एक ऐसी गाड़ी का निर्माण किया जो लोहे की पटरियों पर चलती थी और २४० टन सामान को चार मील प्रति घंटा की गति से ले जा सकती थी।

स्टीफन्सन के इस आविष्कार के बाद रेलवे की प्रगति काफी समय तक रुकी रही। समझा जाता था कि यदि इंजन की गति को बढ़ाया गया, तो इसमें व्यय बहुत होगा। स्टीफन्सन की यह गाड़ी ऐसी थी कि यदि सामने से तेज हवा का एक झोंका आ जाता तो यह रुक जाती थी। इसके उपयोग पर बहुत व्यय पड़ता था। इसलिए अधिकतर कम्पनियों ने जार्ज स्टीफन्सन के इस आविष्कार से लाभ उठाने की आवश्यकता नहीं समझी और घोड़ों द्वारा ही सामान इधर-उधर भेजा जाता रहा।

इंग्लैण्ड में रेलवे की वास्तविक उन्नति १८२५ में शुरू हुई जब स्टॉकटन और डार्लिंगटन के मध्य पहली बार एक रेलवे लाइन स्थापित हुई। यह रेलवे लाइन कोयला ढोने के लिए बनाई गई थी, परन्तु कोई भी व्यक्ति कुछ पैसे देकर इसमें सफर कर सकता था। इसकी रफ्तार ११ मील प्रति घण्टा थी। १८३० में स्टीफन्सन ने एक और इंजन बनाया जो लिवरपूल और मैनचेस्टर के मध्य ३५ मील प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ा।

जब शुरू-शुरू में रेलें चलने लगीं, तो जनता बड़ी भयभीत हो जाती थी। लोग इसे शैतान का ही एक करिश्मा समझते थे। लोगों के भय को दूर करने के लिए बृटिश पार्लियामेंट को एक कानून पास करना पड़ा जिसके अनुसार रेल के आगे-आगे हाथ में लाल झण्डी लेकर एक आदमी घोड़े पर चढ़कर भागता था। रोशनी की कोई सुविधा न होने के कारण पहली रेलगाड़ी दिन में ही चला करती थी। बाद में रोशनी के लिए गाड़ी के आगे एक बहुत बड़ी लकड़ी की अंगीठी जला दी जाती थी। शुरू के इंजनों में आज की तरह सीटी नहीं लगी होती थी। ड्राइवर छर्रेवाली बन्दूक चलाकर जानवरों को लाइन से भगाता था। उन दिनों गाड़ी की यात्रा बड़ी असुविधाजनक थी। उदाहरण के तौर पर, गाड़ी में कोयले के स्थान पर वाष्प पैदा करने के लिए लकड़ी जलती थी। यदि रास्ते में ईंधन खतम हो जाए तो लोग उतर कर जंगल से लकड़ियाँ इकट्ठी करते और फिर गाड़ी में आग जला कर आगे प्रस्थान करते। स्टेशन पर भी विचित्र वातावरण होता था। स्टेशन

मास्टर एक ऊँचे मचान पर चढ़कर गाड़ी को आते हुए देखता। जब गाड़ी दिखाई देती तो वह घण्टी बजा कर मुसाफिरों को गाड़ी के आने के बारे में सूचना देता था।

परन्तु ऐसी अवस्था कितने दिनों तक चल सकती थी। मनुष्य ने रेलवे को सुधारने की चेष्टा की। कुछ बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ मैदान में आईं। सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में रेलगाड़ियों का विकास प्रारम्भ हुआ। उसके बाद योरोप के अन्य देशों में रेलवे की पटरियाँ बिछने लगीं। भारत में पहली रेलगाड़ी १८५३ में चली।

आज की रेलगाड़ी की सुविधाओं का सौ वर्ष पहले की रेलगाड़ी से मुकाबला कीजिए? आधुनिक रेलगाड़ी में तो एक तरह से घर जैसा ही आराम प्राप्त है। कई गाड़ियाँ एयर कन्डीशन्ड होती हैं। इन गाड़ियों में तापमान इच्छानुसार किया जा सकता है। सर्दियों में गर्म और गर्मियों में ठण्डक पैदा की जा सकती है। गाड़ी के साथ ही खाने-पीने के होटल चलते हैं। सोने और आराम करने की पूरी सुविधाएँ प्राप्त हैं। रेलगाड़ी की रफ्तार भी बहुत बढ़ी है। साधारण रेलगाड़ियाँ ३० और ४० मील की रफ्तार से चलती हैं, परन्तु कुछ विशेष गाड़ियाँ तो ५०–६० मील की रफ्तार से भी सफर तय करती हैं।

जल यातायात

जब वाष्प शक्ति का प्रयोग रेलगाड़ियों में होने लगा, कुछ लोगों ने इसे पानी पर चलने वाले जहाजों में इस्तेमाल करने के प्रयोग आरम्भ किए। वाष्प से चलनेवाले जहाज के आविष्कार की कहानी रेलगाड़ी से भी ज्यादा रोचक है। जान फिच नामक एक अमेरिकन ने १७८७ ईस्वी में पहली बार वाष्प से चलनेवाली एक किश्ती नदी में चलाई। एक और अमेरिकन फोल्टन ने उसका अनुसरण करते हुए १८०७ में वाष्प से चलने-वाला पहला छोटा-सा जहाज चलाया। फोल्टन ने एक पनडुब्बी बनाने की भी चेष्टा की थी। वह पेरिस में नेपोलियन के पास आया और उसे बताया कि किस प्रकार अंग्रेजी बेड़े को पनडुब्बियों की सहायता से हराया जा सकता है। परन्तु नैपोलियन ने उसकी बात की ओर ध्यान नहीं दिया। फोल्टन ने वापस अमेरिका जाकर एक कम्पनी बनाई जो न्यूयार्क के आसपास के समुद्रों में वाष्प शक्ति से चलने वाले जहाज चलाती थी। फोल्टन इस धन्धे से करोड़पति बन गया। उसके मुकाबले में जान फिच जो आविष्कारों में ही पड़ा रहा, भूखों मरने लगा। आखिर में इस महान् आविष्कारक ने आत्महत्या कर ली। समुद्री यातायात के इतिहास में सन् १८१९ ई० एक महत्वपूर्ण वर्ष है। इस वर्ष एक अमेरिकन ने एक स्टीमशिप अथवा वाष्प-जहाज द्वारा अटला-टिक महासागर को पार किया। १८३३ में केवल २० दिन में रायल विलियम नामक एक जहाज ने अटलांटिक महासागर को पार किया। इससे पहले वाष्प से चलने वाले सब जहाज पैडल से चलते थे। १८३९ में एक ऐसा इंजन बनाया गया, जो अपने आप चलता था, उसे पैडलों से चलाने की आवश्यकता नहीं होती थी।

आपको यह सुनकर हैरानी होगी कि जिस व्यक्ति ने सबसे पहले वाष्प से चलने वाली किश्ती तैयार की थी, उसे लोगों ने पत्थर मारे। उस व्यक्ति का नाम डेनिस पेपिन था। वह जर्मनी का रहनेवाला था। आज से लगभग २०० वर्ष पूर्व उसने पहला वाष्प-पोत तैयार किया, परन्तु उसे अपने इस पोत की परीक्षा करने की भी आज्ञा नहीं मिली। जहाँ पेपिन अपने वाष्प-पोत को तैयार करता था, वहाँ एक दिन आसपास के नाविकों ने मिलकर धावा बोल दिया। उन्होंने उसकी स्टीम बोट के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और उसे जान

बचाकर भागना पडा। नाविकों को डर था कि भाप से चलनेवाली किश्ती के आविष्कार से उनका धन्धा चौपट हो जाएगा।

लोहे के जहाज

वाष्प से चलनेवाले जहाजों की शक्ति बहुत अधिक होती थी। परन्तु लकडी का बड़े से बडा जहाज २,००० टन से अधिक का नही होता था। इसलिए लोगो ने ऐसे जहाज बनाने की ओर ध्यान दिया जिनमें लकडी के स्थान पर लोहे का प्रयोग हो। इस सिलसिले में बहुत से परीक्षण किए गए। १८१७ ईस्वी में अमेरिका की क्लाइड नदी के किनारे विल्सन नामक एक बढई ने एक लुहार की सहायता से जहाज बनाने का कारखाना खोला। जब वह यह प्रयोग कर रहा था, तो लोग उसका मजाक उडाते थे। उन्हें विश्वास नही होता था कि लोहा पानी पर कैसे तैर सकता है? आखिरकार विल्सन अपना लोहे तथा काठ लकडी का जहाज बनाकर समुद्र में उतारने में सफल हुआ। अब वही लोग जो उसकी हँसी उडाते थे, विल्सन के प्रशसक बन गए। लोहे के प्रयोग से बडे-बडे जहाज बनने सम्भव हुए जिनमें ज्यादा से ज्यादा माल ढोया जा सके या सवारियाँ बैठाई जा सकें। लकडी के जहाज अब प्राय लुप्त हो गए हैं। १९२१ में ससार के समुद्रो में चलनेवाले जहाजो में से केवल पाँच प्रतिशत जहाज लकडी के थे। अनुमान है कि अब दुनिया में केवल एक प्रतिशत जहाज लकडी के होगे। अब अधिकतर समुद्री जहाजो में कोयले के स्थान पर पेट्रोल का इस्तेमाल होने लगा है क्योकि तेल से जहाज चलाने में खर्च कम पडता है और सफाई भी अधिक रहती है।

प्रारम्भ में किसी जहाज द्वारा समुद्र यात्रा करना कोई सुगम कार्य न था। जहाज में घूमने-फिरने और आराम करने की कोई सुविधाएँ न थी। रोशनी के लिये भी प्रत्येक मुसाफिर को अपनी मोमबत्ती जलानी पडती थी। परन्तु एक आधुनिक जहाज तो चलता-फिरता नगर है। इसमें आमोद-प्रमोद की सब सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, जैसे नहाने के तालाब, बैडमिन्टन इत्यादि खेलने के लान, वाचनालय, नृत्य भवन, सिनेमा तथा एक छोटा-सा बाजार भी।

मोटर गाडी

१८९० में इग्लैण्ड में वाष्प से चलनेवाली गाडियो का स्थान बिजली की ट्रामें लेने लगी। परन्तु अब सडको से बिजली की ये ट्रामें विलुप्त होती जा रही हैं और उनके स्थान पर पेट्रोल से चलनेवाली बसें आ गई हैं। जब ट्रैविथिक और उसके बाद के आविष्कारको ने इग्लैण्ड की सडको पर वाष्प शक्ति से चलने वाली गाडियाँ चलाईं तो लोग बहुत डर गए। १८६५ में पार्लियामेंट ने एक कानून पास किया जिसके अनुसार ऐसी गाडियों के आगे आगे एक आदमी लाल झण्डी लेकर भागता था। इन गाडियो को चार मील प्रति घटा से अधिक चलने की आज्ञा नही थी। १८८५ में डैमलर नामक एक व्यक्ति अपनी मोटर साइकल लेकर सडक पर आया। यह मोटर साइकल पेट्रोल के इजन से चलती थी। डैमलर की मोटर साइकल का प्रदर्शन १८८७ में पेरिस की एक प्रदर्शनी में हुआ। यहाँ पर एक फ्रांसीसी इजीनियर लेवासोर ने उसे देखा। इस इजीनियर ने एक ऐसे इजन का निर्माण किया जो हमारी आधुनिक मोटरकार का जन्मदाता सिद्ध हुआ। इसके बाद मोटर यातायात में धडाधड उन्नति होने लगी। शुरू-शुरू में मोटर गाडी १५ मील प्रति घण्टा

की रफ्तार से ज्यादा नहीं चलती थी। १९१५ में लन्दन शहर में केवल १९ मोटरगाड़ियाँ थी, परन्तु आज लन्दन के हर दसवें आदमी के पास एक मोटर गाडी है।

भाप से चलने वाली एक मोटर गाड़ी

मोटरगाडी का निर्माण मानव मस्तिष्क का एक महान् चमत्कार है। एक मोटर गाडी में १०,००० से अधिक कल-पुर्जे होते हैं। इन पुर्जों को ठीक-ठीक स्थान पर बैठाना और उनका सचालन और सुयोजन आसान काम नही। मोटर की रफ्तार स्थल पर चलनेवाली प्राय सभी गाडियो से तेज होती है। कुछ विशेष प्रकार की मोटर गाडियाँ तो २०० मील प्रति घण्टा की रफ्तार से भी चलती हैं। दुनिया में मोटर गाडियों की रफ्तार का रिकार्ड ३७० मील प्रति घण्टा है।

हवाई जहाज

हवा में उडने का विचार बिल्कुल नया नही। १७ वी शताब्दी में इटैलियन कलाकार ल्योनार्डो विन्सी ने सर्वप्रथम एक ऐसी मशीन का नक्शा तैयार किया था, जो हवा में उड सके। परन्तु विन्सी से पहले भी कुछ लोग हवा में उडने के स्वप्न लेते रहे हैं। उनमें इग्लैण्ड का एक पादरी था। उसे ख्याल था कि यदि वह पक्षियो की तरह पख लगाकर मीनार से कूदे तो वह सकुशल नीचे उतर सकता है। इस प्रयोग के परिणामस्वरूप वह बुरी तरह गिरा। उसके हाथ-पाँव टूट गए। ऐसे कई एक दुखद अनुभवों के बावजूद भी मानव ने हवा में उडने के प्रयत्न जारी रखे। फिर गुब्बारों का प्रयोग शुरू हुआ। प्राचीन काल से लोग गर्म हवा भर कर गुब्बारो को उडाते रहे हैं। फिर हाइड्रोजन गैस भर कर गुब्बारे उडाए जाने लगे। १८ वी शताब्दी में कुछ लोगो ने ऐसे गुब्बारो में बैठकर स्वय उडने का प्रयास किया। १८८४ में राबर्ट और चार्ल्स नामक दो व्यक्ति ऐसे ही किसी गुब्बारे में बैठे और १०,००० फीट की ऊँचाई तक उड गये। परन्तु

बचाकर भागना पड़ा। नाविकों को डर था कि भाप से चलनेवाली किश्ती के आविष्कार से उनका धन्धा चौपट हो जाएगा।

लोहे के जहाज

वाष्प से चलनेवाले जहाजों की शक्ति बहुत अधिक होती थी। परन्तु लकड़ी का बड़े से बड़ा जहाज २,००० टन से अधिक का नहीं होता था। इसलिए लोगों ने ऐसे जहाज बनाने की ओर ध्यान दिया जिनमें लकड़ी के स्थान पर लोहे का प्रयोग हो। इस सिलसिले में बहुत से परीक्षण किए गए। १८१७ ईस्वी में अमेरिका की क्लाइड नदी के किनारे विल्सन नामक एक बढ़ई ने एक लुहार की सहायता से जहाज बनाने का कारखाना खोला। जब वह यह प्रयोग कर रहा था, तो लोग उसका मजाक उड़ाते थे। उन्हें विश्वास नहीं होता था कि लोहा पानी पर कैसे तैर सकता है? आखिरकार विल्सन अपना लोहे तथा काठ लकड़ी का जहाज बनाकर समुद्र में उतारने में सफल हुआ। अब वही लोग जो उसकी हँसी उड़ाते थे, विल्सन के प्रशंसक बन गए। लोहे के प्रयोग से बड़े-बड़े जहाज बनने सम्भव हुए जिनमें ज्यादा से ज्यादा माल ढोया जा सके या सवारियाँ बैठाई जा सकें। लकड़ी के जहाज अब प्राय लुप्त हो गए हैं। १९२१ में संसार के समुद्रों में चलनेवाले जहाजों में से केवल पाँच प्रतिशत जहाज लकड़ी के थे। अनुमान है कि अब दुनिया में केवल एक प्रतिशत जहाज लकड़ी के होंगे। अब अधिकतर समुद्री जहाजों में कोयले के स्थान पर पेट्रोल का इस्तेमाल होने लगा है क्योंकि तेल से जहाज चलाने में खर्च कम पड़ता है और सफाई भी अधिक रहती है।

प्रारम्भ में किसी जहाज द्वारा समुद्र यात्रा करना कोई सुगम कार्य न था। जहाज में घूमने-फिरने और आराम करने की कोई सुविधाएँ न थी। रोशनी के लिये भी प्रत्येक मुसाफिर को अपनी मोमबत्ती जलानी पड़ती थी। परन्तु एक आधुनिक जहाज तो चलता-फिरता नगर है। इसमें आमोद-प्रमोद की सब सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, जैसे नहाने के तालाब, बैडमिन्टन इत्यादि खेलने के लान, वाचनालय, नृत्य भवन, सिनेमा तथा एक छोटा-सा बाजार भी।

मोटर गाड़ी

१८९० में इंग्लैण्ड में वाष्प से चलनेवाली गाड़ियों का स्थान बिजली की ट्रामें लेने लगीं। परन्तु अब सड़कों से बिजली की ये ट्रामें विलुप्त होती जा रही हैं और उनके स्थान पर पेट्रोल से चलनेवाली बसें आ गई हैं। जब ट्रेविथिक और उसके बाद के आविष्कारकों ने इंग्लैण्ड की सड़कों पर वाष्प शक्ति से चलने वाली गाड़ियाँ चलाईं तो लोग बहुत डर गए। १८६५ में पार्लियामेंट ने एक कानून पास किया जिसके अनुसार ऐसी गाड़ियों के आगे आगे एक आदमी लाल झण्डी लेकर भागता था। इन गाड़ियों को चार मील प्रति घंटा से अधिक चलने की आज्ञा नहीं थी। १८८५ में डैमलर नामक एक व्यक्ति अपनी मोटर साइकल लेकर सड़क पर आया। यह मोटर साइकल पेट्रोल के इंजन से चलती थी। डैमलर की मोटर साइकल का प्रदर्शन १८८९ में पेरिस की एक प्रदर्शनी में हुआ। यहाँ पर एक फ्रांसीसी इंजीनियर लेवासोर ने उसे देखा। इस इंजीनियर ने एक ऐसे इंजन का निर्माण किया जो हमारी आधुनिक मोटरकार का जन्मदाता सिद्ध हुआ। इसके बाद मोटर यातायात में धड़ाधड़ उन्नति होने लगी। शुरू-शुरू में मोटर गाड़ी १५ मील प्रति घण्टा

की रफ्तार से ज्यादा नही चलती थी। १९१५ में लन्दन शहर में केवल १९ मोटरगाडियाँ थी, परन्तु आज लन्दन के हर दसवें आदमी के पास एक मोटर गाडी है।

वाष्प से चलने वाली एक मोटर गाडी

मोटरगाडी का निर्माण मानव मस्तिष्क का एक महान् चमत्कार है। एक मोटर गाडी में १०,००० से अधिक कल-पुर्जे होते हैं। इन पुर्जों को ठीक-ठीक स्थान पर बैठाना और उनका सचालन और सुयोजन आसान काम नही। मोटर की रफ्तार स्थल पर चलनेवाली प्राय सभी गाडियो से तेज होती है। कुछ विशेष प्रकार की मोटर गाडियाँ तो २०० मील प्रति घण्टा की रफ्तार से भी चलती हैं। दुनिया में मोटर गाडियो की रफ्तार का रिकार्ड ३७० मील प्रति घण्टा है।

हवाई जहाज

हवा में उडने का विचार बिल्कुल नया नही। १७ वीं शताब्दी में इटैलियन कलाकार ल्योनार्डो विन्सी ने सर्वप्रथम एक ऐसी मशीन का नक्शा तैयार किया था, जो हवा में उड सके। परन्तु विन्सी से पहले भी कुछ लोग हवा में उडने के स्वप्न लेते रहे हैं। उनमें इग्लैण्ड का एक पादरी था। उसे ख्याल था कि यदि वह पक्षियो की तरह पख लगाकर मीनार से कूदे तो वह सकुशल नीचे उतर सकता है। इस प्रयोग के परिणामस्वरूप वह बुरी तरह गिरा। उसके हाथ-पाँव टूट गए। ऐसे कई एक दुखद अनुभवो के बावजूद भी मानव ने हवा में उडने के प्रयत्न जारी रखे। फिर गुब्बारों का प्रयोग शुरू हुआ। प्राचीन काल से लोग गर्म हवा भर कर गुब्बारो को उडाते रहे हैं। फिर हाइड्रोजन गैस भर कर गुब्बारे उडाए जाने लगे। १८ वी शताब्दी में कुछ लोगो ने ऐसे गुब्बारों में बैठकर स्वय उडने का प्रयास किया। १८८४ में रावर्ट और चार्ल्स नामक दो व्यक्ति ऐसे ही किसी गुब्बारे में बैठे और १०,००० फीट की ऊँचाई तक उड गये। परन्तु

गुब्बारों में उड़ने की सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि आप उन्हें इच्छानुसार मोड़ नहीं सकते थे। तदुपरान्त कुछ लोगों ने वाष्प इंजन का प्रयोग गुब्बारों में किया। १८९६ में वाष्प शक्ति से उड़नेवाला एक हवाई जहाज आसमान में उड़ा। वह वाशिंगटन के पास आध मील तक हवा में मँडराता रहा। परन्तु हवाई जहाज की विशेष प्रगति पेट्रोल इंजन लगने पर ही हुई। हवाई जहाज के आविष्कार का वास्तविक श्रेय विल्बर और आरविल राइट नामक दो भाइयों को प्राप्त है। इन्हें राइट बन्धु कहते हैं। १९०५
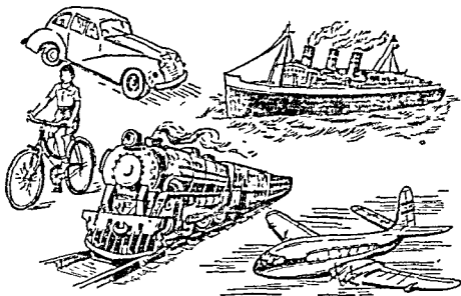
यातायात के आधुनिक साधन

में उन्होंने एक ऐसा हवाई जहाज उड़ाया जिसमें हाइड्रोजन गैस की आवश्यकता नहीं थी। वह केवल मशीन से उड़ता था। ये दोनों भाई एक मिनट तक अपने जहाज में हवा में उड़ते रहे। १९०९ में ब्लेरियट नामक एक व्यक्ति ने हवाई जहाज में सवार होकर ३१ मिनट में इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच के समुद्र को पार किया। उसी वर्ष एक और व्यक्ति ने ४ घण्टे हवा में रहकर १३४ मील का फासला तय किया। इस प्रकार हवाई यातायात में उन्नति होती रही। अब हवाई जहाज संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक प्रति दिन कितनी ही उड़ानें करते हैं। दूरी पर विजय पाने में हवाई जहाज ने मनुष्यों को जितनी सहायता दी है, उतनी यातायात के किसी और साधन से नहीं मिली। हवाई जहाज के कारण दुनिया सिकुड़ गई है। आज दुनिया में कोई स्थान ऐसा नहीं, जहाँ जहाज द्वारा पहुँचा न जा सकता हो। हवाई जहाज में सवार होकर मानव ने माउण्ट एवरेस्ट को पार किया तथा उत्तर और दक्षिण ध्रुवों में अपने शिविर स्थापित किए। दुनिया के सब देशों में निकटतम सम्पर्क स्थापित हो गया है। आज कोई भी देश अपने को किसी और देश से अलग नहीं रख सकता।

यातायात के ये साधन मनुष्य ने अपनी सुविधा और सुख के लिए बनाए थे। परन्तु अब यही साधन मनुष्य के लिए अभिशाप का कारण बन गए हैं। पिछले दो महायुद्धों में हवाई जहाजों तथा मोटरगाडियों की मदद से दुनिया में जो तबाही लाई गई, वह किसी से छिपी नहीं।

अभ्यास के प्रश्न

(१) दुनिया में स्थल यातायात का विकास कैसे हुआ ? मनुष्य को इस काम में क्या कठिनाइयाँ पैदा आईं और उसने उन पर किस तरह विजय प्राप्त की ?

(२) "संसार का सबसे पहला आविष्कारक वह व्यक्ति था जिसने पहिये का आविष्कार किया।" इस कथन की व्याख्या करो।

(३) हमारे जीवन में रेलगाड़ी का क्या महत्त्व है ? रेलगाड़ी का आविष्कार किसने किया और इसका विकास कैसे हुआ ?

(४) वाष्प शक्ति का आविष्कार कैसे हुआ ? वाष्प शक्ति किन-किन कामों के लिए प्रयुक्त होती है ?

(५) जल यातायात के विकास की कहानी संक्षेप में लिखो। आधुनिक जहाज किस तरह के होते हैं ?

(६) वायुयान का आविष्कार कैसे हुआ ? वायुयान के आविष्कार का दुनिया पर क्या प्रभाव पड़ा है ?

(७) पिछले २०० वर्षों में यातायात के साधनों में क्या उन्नति हुई है ? संक्षेप से लिखिए।

(८) यातायात के साधनों के विकास से दुनिया सिमट गई है। क्यों ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो ?

: २३ :

संचार साधनों का विकास

विज्ञान से यह सम्भव हो गया है कि मनुष्य तथा उसका सामान जल्दी से जल्दी दुनिया के किसी भी भाग में पहुँच सके। परन्तु इससे भी अधिक चमत्कारिक आविष्कार संचार साधनों का है जिनके द्वारा यह सम्भव हुआ है कि मनुष्य के विचारों का आदान-प्रदान तत्काल हो सके। शायद आज से १०,००० वर्ष पूर्व मनुष्य ने बोलना-चालना सीखा था। उसके कुछ हजार वर्ष बाद मानव ने लिपि का आविष्कार किया। कालान्तर में मनुष्य ने अपनी भाषाओं का विस्तार किया और लिपि को सुधारा। जब मनुष्य अपने विचार हाथ से लिख कर भावी सन्तति के लिए छोड़ जाता था। इस प्रकार मानव का ज्ञान एक से दूसरी नस्ल तक पहुँचता है। परन्तु इस स्थिति पर पहुँचने के बाद कई हजार वर्ष तक मानव की प्रगति प्रायः रुकी रही। १५ वीं शताब्दी में मानव ने विचारों के आदान-प्रदान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया। मनुष्य ने छापेखाने का आविष्कार करके किताबें छापनी शुरू की। छापेखाने के विकास से मनुष्यों में शिक्षा का प्रचार हुआ। आज हमारे जीवन में छापेखाने का जो महत्व है, उसके बारे में हम सभी भाँति परिचित है।

इस युग में हमें सन्देश पहुँचाने या विचारों के आदान-प्रदान की जो सुविधाएँ प्राप्त हैं, आज से २०० वर्ष पूर्व कोई व्यक्ति उनका स्वप्न भी नहीं ले सकता था। उस समय न तो मनुष्य के पास छापेखाने थे, न डाक और तार की व्यवस्था थी और न ही टेलीफोन और रेडियो थे। मनुष्य की दुनिया उसके घर या गाँव तक ही सीमित थी। न दुनिया के किसी अन्य भाग में होनेवाली घटनाओं का उसे पता चलता था और न ही वह उनसे प्रभावित होता था।

मानव जीवन को पलटने में छापेखाने का सबसे ज्यादा महत्व है। यदि आप ध्यान से देखें, तो दुनिया में जो भी प्रगति हुई है, वह छापेखाने के आविष्कार के बाद ही हुई है। छापेखाने के कारण पुस्तकें एक स्थान से दूसरे स्थान और एक देश से दूसरे देश में पहुँचने लगी हैं। फलस्वरूप एक देश के लोगों ने दूसरे देश के आविष्कारकों के ज्ञान से लाभ उठाया। आज तो छापेखाने के बिना मानव के जीवन की कल्पना ही असम्भव है। प्रातःकाल उठते ही हम अपने दैनिक समाचारपत्र की प्रतीक्षा करते हैं। १६ नये पैसे खर्च करके हम दुनिया के कोने-कोने में होनेवाली घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अमेरिका में आज जो घटना होती है, उसकी चर्चा चन्द ही घण्टों के बाद दिल्ली में होने लगती है। यह सब समाचार पत्रों का ही चमत्कार है। आजकल समाचार पत्र बड़े-बड़े छापेखानों में छपते हैं। छपाई की ऐसी मशीनों का आविष्कार हो चुका है, जो एक घण्टे में एक अखबार की ६०,००० से अधिक प्रतियाँ छाप सकती हैं।

डाक

मनुष्य प्राचीन काल से किसी न किसी तरीके से अपना सन्देश एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाता

रहा है। प्राचीन काल में राजा लोग अपने पत्र पहुँचाने के लिए विशेष सन्देशवाहक भेजा करते थे। परन्तु सन्देश भेजने की यह सुविधा जनसाधारण को प्राप्त नहीं थी।

इस समय दुनिया में संचार साधनों का सबसे सस्ता और सुगम साधन डाक है। किसी न किसी रूप में डाक-व्यवस्था प्राचीन काल से रही है। रोमन राजाओं ने अपने विशाल साम्राज्य में सन्देश भेजने के लिए विशेष हरकारे नियुक्त कर रखे थे। इसी तरह भारत में मौर्य तथा गुप्त काल में तथा बाद में मुगल काल में सम्राटों ने डाक एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने की व्यवस्था कर रखी थी। परन्तु सन्देश भेजने के ये साधन जनता को उपलब्ध नहीं थे। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में यातायात के साधनों का विकास हो जाने के कारण पहली बार योरोप के कुछ देशों में डाक की सुविधा जनता को मिली। १८३९ में इंग्लैण्ड में पैनी-पोस्टेज प्रणाली शुरू हुई। एक आने की टिकट लगाकर कोई भी व्यक्ति कहीं भी पत्र भेज सकता था। ज्यों-ज्यों यातायात के साधनों का विकास हुआ, त्यों-त्यों डाक-व्यवस्था भी अधिक सुव्यवस्थित होती गई।

परन्तु अभी दुनिया के एक देश से दूसरे देश में डाक भेजने का कोई उचित प्रबन्ध नहीं था। १८७४ में जर्मनी के एक नगर बर्न में एक अन्तर्राष्ट्रीय डाक सम्मेलन हुआ। इसमें डाक की अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की गई। ऐसे नियम बनाए गए जिससे एक देश से भेजी गई डाक दूसरे देश में बिना किसी रोक-टोक के बँट सके। इस समय दुनिया के प्राय सभी देश अन्तर्राष्ट्रीय डाक संघ (Univerasl Postal Union) के सदस्य है। यह संघ १८५७ में स्थापित हुआ था। १८५७ में लगभग पन्द्रह करोड पत्र एक देश से दूसरे देश को भेजे गए। १९५० में अन्तर्राष्ट्रीय पत्रों की संख्या बढ़कर ३ अरब अथवा २० गुना हो गई। १९२४ में हवाई जहाज द्वारा एक देश से दूसरे देश में पत्र पहुँचाने का प्रबन्ध हुआ। अब दुनिया के किसी भी देश में हवाई जहाज से पत्र भेजा जा सकता है। दिल्ली से भेजा गया पत्र तीन दिन में लन्दन पहुँच जाता है।

भारत में अब अधिकतर डाक हवाई जहाजों द्वारा ही ले जाई जाती है। १९५७ में हमारे देश में ५५,०४२ डाकघर थे।

तार

पन्द्रहवीं शताब्दी में छापेखाने के आविष्कार ने यह तो सम्भव कर दिया था कि मनुष्य के ज्ञान का आदान-प्रदान सुगमता से हो सके। परन्तु अभी कुछ और चमत्कार बाकी थे। तार के आविष्कार से लिखे हुए सन्देश को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की जरूरत ही नहीं रही। बस आप तारघर में जाइए, जो सन्देश भेजना हो बाबू के हवाले कीजिए। यह तत्काल ही आपके सन्देश को सैकड़ो-हजारों मीलों की दूरी पर बिजली की गति से पहुँचा सकता है।

आप जानना चाहेंगे कि तार द्वारा सन्देश एक स्थान से दूसरे स्थान पर कैसे पहुँचाए जाते हैं? वास्तव में तार द्वारा किसी भाषा में समाचार नहीं भेजे जाते। दो स्थान तारों से जुड़े रहते हैं। इनके एक सिरे पर भेजने वाला बार-बार बिजली का बटन दबाता है। इससे दूसरी ओर खट-खट होती रहती है। इस खटखट का एक कोड बनाया गया है। प्रत्येक आवाज का एक अर्थ होता है। इस कोड के आधार पर सन्देश पानेवाला व्यक्ति सन्देश का पूरा अर्थ निकाल लेता है।

तार द्वारा सन्देश एक शहर से दूसरे शहर को ही नहीं भेजे जाते, इस साधन द्वारा हम समुद्र पार भी

सन्देश भेज सकते हैं। ऐसे तार भेजने के लिए समुद्र के नीचे बड़े-बड़े तार बिछाए गए हैं जिन्हें केबल (Cable) कहते हैं।

भारत में सर्वप्रथम तार सेवा नवम्बर १८५३ में कलकत्ता और आगरा के बीच आरम्भ हुई थी। इस समय देश में लगभग १०,००० तारघर हैं, जहाँ प्रति वर्ष ३.३५ करोड़ अन्तर्देशीय तथा विदेशी तार प्राप्त किए जाते हैं अथवा भेजे जाते हैं।

टेलीप्रिंटर

तार के आविष्कार से समाचार पत्रों को सबसे अधिक लाभ हुआ है। अब तो इस बात का भी प्रबन्ध हो गया है कि तार प्रणाली से जो समाचार प्राप्त हों, वे साधारण लिपि में अपने आप कागज पर छापे जाएँ। इस यंत्र को टेलीप्रिंटर (Teleprinter) कहते हैं। किसी भी बड़े समाचार पत्र के दफ्तर
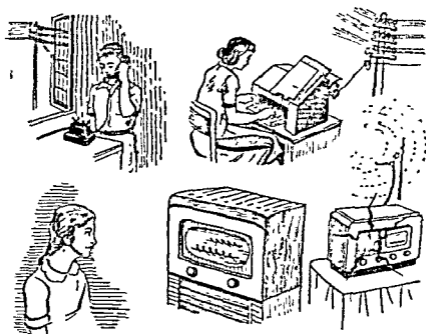
संचार के आधुनिक साधन

में जाकर आप टेलीप्रिंटर देख सकते हैं। इस टेलीप्रिंटर पर किसी व्यक्ति के बैठने की आवश्यकता नहीं। खटखट की आवाज़ के साथ कागज पर समाचार टाइप होते जाते हैं और कागज स्वयं आगे सरकता जाता है। सम्पादक कागज को साथ-साथ काटकर समाचारों का सम्पादन करते जाते हैं।

टेलीफोन

तार द्वारा मनुष्य के सन्देश को बिजली की तारो से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाना सम्भव हो सका है। जैसा कि हमने बताया तार से मनुष्य की वाणी एक स्थान से दूसरे स्थान तक नही पहुँचती। एक कोड है जिसकी आवाजो के आधार पर सन्देश को पढा जा सकता है। अब कुछ लोगो ने चेष्टा की कि मनुष्य की वाणी को ही क्यो न एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाया जाए। कई लोगो ने इस बारे में प्रयोग किए। परन्तु वास्तविक सफलता ग्राहम बैल नामक एक व्यक्ति को प्राप्त हुई। बैल ने सर्वप्रथम बोस्टन में अपने मकान के एक ऊपरी कमरे से नीचे के कमरे में अपने नए यन्त्र द्वारा सन्देश पहुँचाया। इस यन्त्र ने टेलीफोन का नाम धारण किया। यह १८७५ की बात है। तत्पश्चात् बैल इग्लैण्ड गया। उसने एक टेलीफोन कम्पनी स्थापित की। टेलीफोन द्वारा हम दूसरे शहरो में बैठे हुए लोगो से भी ऐसे ही बात कर सकते है, जैसे कि वे बिल्कुल ही हमारे सामने हो। टेलीफोन के आविष्कार से मनुष्य का जीवन काफी सुखमय हो गया है। जरा-सी तकलीफ होने पर आप डाक्टर को टेलीफोन कीजिए, घर पर पहुँच जाएगा। दोस्तो से बात चीत कीजिए, मित्रो को घर पर बुलाइए अथवा किसी व्यापारी से व्यापारिक बातचीत कीजिए। टेलीफोन सदा ही आपकी सेवा के लिए प्रस्तुत है।

तार की तरह टेलीफोन के भी तार होते है। उनमें विद्युत का प्रवाह होता है। टेलीफोन में यह सुविधा प्राप्त है कि आप उसे मुह के सामने रख कर विद्युत का प्रवाह पैदा कर सकते है। यही विद्युत जब तारो द्वारा सुननेवाले के पास पहुँचती है, तो ध्वनि में परिवर्तित हो जाती है। टेलीफोन पर बैठकर एक व्यक्ति बोल भी सकता है, सुन भी सकता है।

रेडियो

टेलीफोन के आविष्कार ने रेडियो के आविष्कार का रास्ता खोल दिया। टेलीफोन के रिसीवर में बिजली के कम्पनो को आवाज में बदलने की शक्ति होती है। बस इसी आधार पर इटली के एक युवक मारकोनी ने रेडियो का आविष्कार किया। आज आप जहाँ भी जाएँ, आपको रेडियो की आवाज सुनाई पडती है। रेडियो ने देश-विदेश के अन्तर को मिटा दिया है। बटन दबाने की जरूरत है, आप जिस देश में चाहें वहाँ विचर सकते है। उस देश का मधुर सगीत सुन सकते हैं और उस देश के विद्वानो के भाषण भी सुन सकते है।

बेतार के तार (Wireless)

वायरलेस अथवा बेतार के तार का नाम आपने बहुधा सुना होगा। रेडियो वायरलेस का ही एक रूप है। वायरलेस के आविष्कार ने मनुष्य को बहुत लाभ हुए हैं। हवाई यात्रा सुरक्षित हो गई है। हवा में उडते हुए हवाई जहाज का चालक वायरलेस द्वारा अपना सम्बन्ध स्थल से बनाए रखता है। जहाँ कही उसे कोई कठिनाई हो, वह नीचेवालो को सूचना दे सकता है। बर्फानी आर्कटिक प्रदेश अथवा ध्रुवो पर बैठे हुए वैज्ञानिक भी बेतार के तार द्वारा अपना सम्बन्ध मुख्यालयो से स्थापित रखते हैं।

टेलिवीजन (Television)

रेडियो द्वारा तो आप दूर स्थित एक व्यक्ति की आवाज ही सुन सकते हैं, परन्तु टेलीवीजन के आविष्कार

ने यह सम्भव कर दिया है कि उस व्यक्ति का मुख भी आप अपने टेलीवीजन यन्त्र पर देख सकें। टेलीवीजन पर हम किसी भी कलाकार को गाते, नाचते अथवा नाटक खेलते हुए देख सकते हैं। टेलीवीजन का प्रचार अभी तक संसार के बहुत समुन्नत देशों तक ही सीमित है। खयाल है कि अगले दो-तीन सालों में बम्बई में भी एक टेलीवीजन केन्द्र स्थापित हो जाएगा।

अभ्यास के प्रश्न

(१) दुनिया में संचार के मुख्य साधन क्या-क्या हैं? उनके विकास का संक्षिप्त वर्णन करो।

(२) आज की दुनिया में समाचारपत्र का क्या महत्त्व है? एक समाचारपत्र में कैसे काम होता है?

(३) तार का आविष्कार कब हुआ? केबल और टेलीप्रिंटर के बारे में आप क्या जानते हैं?

(४) टेलीफोन का आविष्कारक कौन था? टेलीफोन के आविष्कार की कहानी संक्षेप में लिखो?

(५) संचार के तीव्र गति साधनों ने दुनिया पर क्या प्रभाव डाला है?

(६) आज से सौ साल पहले के समय की कल्पना कीजिए। आज के यातायात तथा संचार के बिना लोगों का जीवन कैसे कटता होगा?

: २४ :

विश्व की एकता

कहने को दुनिया में आज बहुत से देश हैं। परन्तु ये देश अब केवल राजनीतिक इकाइयाँ रह गए हैं। वास्तव में दुनिया सिकुड कर स्वय एक देश बन गई है। यदि दुनिया के एक कोने में कोई घटना घटती है, तो शोर दूसरे कोने में उठता है। दूरी दूरी नही रही। मानव ने दूरी को जीत लिया है। प्रकृति को कदमो में झुका लिया है। दुनिया के नक्शे पर पडी हुई इन टेढी-मेढी लकीरो का मूल्य क्या रह जाता है जब हम देखते हैं कि भारत का एक नागरिक बिस्तर से उठते ही अपनी चाय का प्याला दिल्ली में पीता है, सुबह का नाश्ता कराची में करता है, दोपहर का खाना बगदाद में खाता है और रात काहिरा में बिताता है। जिस तरह पहले लोग एक शहर से दूसरे शहर में जाते थे, उसी तरह अब लोग एक देश से दूसरे देश में जाते हैं। ससार की अर्थ-व्यवस्था ऐसे ढग की हो गई है कि कोई भी देश दूसरो से कट कर अलग-थलग नही रह सकता। अगले पृष्ठ पर दुनिया के मानचित्र में ससार के मुख्य वायु तथा जल मार्ग देखिये। आपको पता लग जाएगा कि दुनिया अब कितनी सिमट गई है।

आर्थिक निर्भरता

यदि आपने दुनिया की आर्थिक निर्भरता का उदाहरण देखना हो, तो देश की किसी बडी बन्दरगाह में जाकर देखिए। बम्बई की बन्दरगाह में आपको इग्लैण्ड, अमेरिका, रूस, जापान, फ्रास, हालैण्ड—दुनिया के प्राय सभी देशो के जहाज मिलेंगे। कुछ जहाजो से माल उतारा जा रहा है तो कुछ में लादा जा रहा है। दुनिया की प्रत्येक सरकार विदेशी व्यापार को बढाने की चेष्टा करती है। यह आर्थिक निर्भरता मशीन युग की देन है। मशीनो के आविष्कार से कुछ देशो में आवश्यकता से अधिक माल बनने लगा। इस माल के लिए मण्डियो की आवश्यकता थी। अग्रेज सौदागर मण्डियो की खोज में एशिया और अफ्रीका आए और अन्त में यहाँ के बहुत बडे भू भाग के शासक बन गए। इन देशो से कच्चा माल ये अपने देशो में ले जाते थे, वहाँ से कारखानो में तैयार होकर यही माल उपनिवेशो पर ठोसा जाता था। मण्डियाँ ढूढने की यह होड योरोप के प्राय सभी देशों में चल निकली जिसके परिणामस्वरूप दुनिया के दो महायुद्ध हुए। दूसरे महा-युद्ध ने योरोपियन जातियो के इस साम्राज्यवाद को प्राय खत्म कर दिया है। परन्तु कहीं-कहीं अभी भी यह सिसकियाँ ले रहा है जैसे गोआ, अल्जीरिया, ट्यूनिस, मराक्को इत्यादि। साम्राज्यवाद तो मिटता जा रहा है, परन्तु जातियो की आर्थिक निर्भरता आगे से ज्यादा बढ गई है। उदाहरण के रूप में हमारा देश औद्योगिक रूप से अभी तक पिछडा हुआ है। इसलिए हमें नए-नए उद्योग स्थापित करने के लिए मशीनें योरोप और अमेरिका से मॅंगवानी पडती हैं। हमारे यहाँ खाद्यान्न की भी कमी है। अमेरिका और अर्जेन्टाइना जैसे देश अपनी आवश्यकता से अधिक अनाज पैदा करते हैं। हम यदि यह अनाज विदेशो से न मॅंगवाएँ, तो

संसार के
मुख्य जल तथा
वायुमार्ग
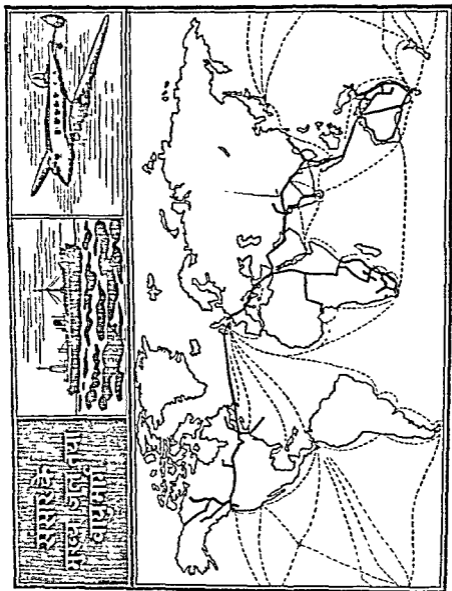
देश में भयंकर अकाल की आशंका है। बदले में अमेरिका और योरोप को हमारे कच्चे माल की जरूरत है। इसलिए आर्थिक रूप से हर एक देश कुछ हद तक दूसरों पर निर्भर हो चुका है।

यही नहीं, आर्थिक क्षेत्र में यदि एक देश कोई पग उठाता है, तो उसका प्रभाव तुरन्त ही दूसरे देश की अर्थ-व्यवस्था पर पड़ता है। अर्थ-व्यवस्था पर ही प्रभाव नहीं पड़ता है, राजनीतिक उलझनें भी पैदा हो जाती हैं। भारतीय रुपए का दुनिया की करन्सी से ब्रिटिश पौंड द्वारा ही ज्यादा सम्बन्ध है। जब इग्लैण्ड ने अपने पौंड की कीमत घटाई, तो भारत सरकार को भी तुरन्त ही अपने रुपए का अवमूल्यन करना पड़ा।

आपने देख लिया कि आर्थिक और व्यापारिक क्षेत्र में हम कितने निर्भर हैं एक दूसरे पर। आज इग्लैण्ड को विदेशों से अनाज मिलना बन्द हो जाए, तो इग्लैण्ड के रहनेवाले भूखों मरने लगें क्योंकि इग्लैण्ड अपनी जरूरत के लिए काफी अनाज पैदा नहीं करता।

राजनीतिक क्षेत्र में तो विशेष रूप से एक देश की घटना का दूसरे देश पर प्रभाव पड़ता है। १९४७ में भारत आजाद हुआ। भारत की आजादी का दुनिया के अन्य पराधीन देशों पर भी प्रभाव पड़ा। इण्डोनेशिया, मिस्र, सुडान, हिन्दचीनी इत्यादि देशों में भी आजादी के लिए अधिक जोर-शोर से संघर्ष होने लगा। मध्यपूर्व में सीरिया की सीमा पर एक छोटी-सी मुठभेड़ पर तुरन्त ही रूस और अमेरिका के राजनीतिज्ञ सिटपिटा उठते हैं। मिस्र ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण किया। स्वेज नहर मिस्र के प्रदेश में से गुजरती है। परन्तु मिस्र का यह घरेलू सवाल संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा के विचार का विषय बन गया। हंगरी में आन्तरिक विद्रोह हुआ परन्तु दुनिया के सभी देशों में हलचल सी होने लगी। कहने का अभिप्राय यह है कि आज कोई भी देश दुनिया की घटनाओं से आँखें नहीं मूँद सकता।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

अन्तर्राष्ट्रीय पारस्परिक निर्भरता के कारण अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग भी बढ़ा है। आज एक जहाज हजारों मीलों से माल तथा सामान ढोकर लाता है। उसे रास्ते में कई देशों की बन्दरगाहों में ठहरना पड़ता है। कहीं कोयला लेना होता है, कहीं पानी। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए दुनिया के सब देशों के जहाज एक समुद्र से दूसरे समुद्र में घूमते रहते हैं। यदि देशों में आपसी सहयोग न हो तो जहाजों का यह सफर असम्भव हो जाए। समुद्री जहाजों की भाँति हवाई जहाज भी कई देशों के ऊपर से होकर गुजरते हैं। रास्ते में इन्हें कई देशों में उतरना पड़ता है। अतः समुद्री तथा हवाई यातायात की सुविधा के लिए नियम बनाए गए हैं, जिनको संसार के सब देश मान्यता देते हैं। यदि ऐसा न हो, तो दुनिया का सारा व्यापार ठप हो जाए।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का एक अच्छा उदाहरण विश्व की डाक-व्यवस्था है। अन्तर्राष्ट्रीय पोस्टल यूनियन के तत्वावधान में ३ अरब पत्रों का आदान-प्रदान होता है। कुछ अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की शाखाएँ दुनिया के सब देशों में फैली हुई हैं—जैसे, विश्व मजदूर संघ।

युद्ध-सम्बन्धी आविष्कार

युद्ध-सम्बन्धी वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण दुनिया के देशों के सामने अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं रहा। दूसरे महायुद्ध में मनुष्य के पास बड़े-बड़े जंगी समुद्री जहाज तथा बमवर्षक विमान

थे। हजारों हवाई जहाज मिलकर किसी शहर पर हमला करते थे। परन्तु अब तो एटम बम तथा हाइड्रोजन बमों का आविष्कार हो चुका है। अमेरिका प्रशान्त महासागर के किसी दूरस्थ द्वीप में अपने हाइड्रोजन बम की परीक्षा करता है परन्तु उस परीक्षा का प्रभाव जापान पर पड़ता है। रूस ने ऐसे-ऐसे स्वचालित यंत्र बनाए हैं, जो एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप में बमों सहित गिराए जा सकते हैं। अब यदि कभी दुनिया में युद्ध हुआ तो वह वर्षों जारी नहीं रहेगा। वह केवल कुछ दिनों की बात होगी। कुछ ही दिनों में विधाता की इस हरी-भरी सृष्टि का नाश हो सकता है। आगामी युद्ध में कोई भी देश तटस्थ बनकर नहीं रह सकेगा। हाइड्रोजन बम भौगोलिक तथा अन्य राजनीतिक सीमाओं का लिहाज नहीं करता।

एक विश्व के नागरिक

मशीन युग ने मानव जाति की सबसे बड़ी इच्छा पूर्ण कर दी है—प्रकृति पर विजय पाने की इच्छा। मानव को अब अपनी दैनिक आवश्यकताओं के लिए सिर पटकने की कोई जरूरत नहीं। मशीन आदमी की आज्ञा पर सब कुछ करने के लिए तत्पर है। दुनिया के लोगों को अपने आर्थिक स्वार्थों के लिए एक दूसरे से लड़ने की अब कोई जरूरत नहीं। यदि ध्यान से देखा जाए, तो दुनिया के साधन इतने उन्नत हो चुके हैं, कि सबको खाने और पहनने के लिए मिल सकता है। इसलिए देशों का छोटी-छोटी बातों के लिए लड़ना एक मूर्खतापूर्ण हरकत नहीं तो और क्या है? जागृति के इस युग में किसी जाति का अपने आपको दूसरे से उत्तम समझना बेकार है। हम जिन चीजों का उपयोग करते हैं, वे दुनिया की विभिन्न जातियों के श्रम से तैयार होती हैं। उदाहरण के रूप में हमने जो गर्म कोट पहन रखा है, उसकी ऊन आस्ट्रेलिया से आई होगी। हम जो रोटी खा रहे हैं, उसका गेहूँ शायद अमेरिका के किसी किसान ने पैदा किया होगा। हमारे टोस्टों पर लगने वाला मक्खन न्यूजीलैण्ड से मँगवाया गया है। जिस समाचार पत्र से हम आज की खबरें पढ़ रहे हैं, उसका कागज स्वीडन में बना था। जो बनियान हम पहने हुए हैं, उसकी रुई मिस्र से आई थी। इसी तरह न्यूयार्क या लन्दन में रहनेवाला एक व्यक्ति कितनी ही भारतीय वस्तुओं का उपभोग करता है। स्पष्ट है कि हम सब एक विश्व के नागरिक हैं। मनुष्य को सृष्टि के कल्याण के लिए इसी विचारधारा को अपनाना होगा।

विज्ञान ने मानव को दो उपहार दिए हैं—बहुतात तथा एकता। इसमें सन्देह नहीं कि इस देन का मानव ने बड़ा दुरुपयोग किया है। बहुतात के इस युग में दुनिया के करोड़ों लोग भूखे और नंगे हैं। उन्हें काम नहीं मिलता। उन्हें शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त नहीं। वे नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस शोषण तथा गरीबी का एक ही परिणाम हो सकता है—युद्ध। मनुष्य मनुष्य का गला काटने को उतारू है। इस धरती के समृद्ध देशों को युद्ध और शान्ति में से एक रास्ता चुनना होगा। नहीं तो उनके लिए घाटा ही घाटा है।

क्या यह शर्मनाक बात नहीं कि जब दुनिया के आधे से ज्यादा लोग भूखे और नंगे हैं, कुछ शक्तिशाली देश धड़ाधड़ बम बनाने में लगे हुए हैं। भय, आशंका और अविश्वास से त्रस्त दुनिया की सरकारें संसार के प्रत्येक व्यक्ति की 'रक्षा' के लिए औसतन दो हजार रुपये प्रति मास खर्च करती हैं। परन्तु भारत में एक आदमी की औसत वार्षिक आमदनी २८० रुपए है। रक्षा पर खर्च होनेवाला धन यदि मानव की सेवा में

प्रयुक्त हो सकता, तो ससार मे युद्ध के कारण ही मिट जाएँ और धरती स्वर्ग बन जाए। क्या कभी यह सम्भव होगा ? शायद नही !

अभ्यास के प्रश्न

(१) आज भिन्न-भिन्न देश दुनिया के अन्य देशों पर क्यों निर्भर हैं ? क्या कोई देश बाकी दुनिया से कट कर रह सकता है ?

(२) आर्थिक दृष्टि से दुनिया के देश किस प्रकार एक-दूसरे पर निर्भर हैं ? उदाहरण देकर बताओ।

(३) क्या दुनिया के देशों में आपसी सहयोग बढ़ रहा है ? उदाहरण द्वारा स्पष्ट करो।

(४) विज्ञान ने हमें क्या कुछ दिया है ? क्या हम विज्ञान की देन का ठीक उपयोग कर रहे हैं ?

(५) ससार में स्थायी शान्ति कैसे स्थापित हो सकती है ?

: २५ :

दो विश्व युद्ध और शान्ति की आवश्यकता

गत ४० सालों में संसार में दो महायुद्ध हो चुके हैं। इन युद्धों के मुख्य कारण साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्द्धा और अन्धा राष्ट्रवाद था। पहला महायुद्ध १९१४ में शुरू हुआ और चार साल तक जारी रहा। इसमें जर्मनी की हार हुई और इंग्लैण्ड, फ्रांस, अमेरिका इत्यादि साथी राष्ट्र जीत गए। जर्मनी को सन्धि की जो शर्तें दी गईं वह बड़ी अपमानजनक थीं। जर्मन अपने अपमान का बदला चुकाने के लिए लालायित हो रहे थे। जर्मनी की इस मानसिक हालत का लाभ उठाकर हिटलर नामक एक उग्र राष्ट्रवादी जर्मनी का डिक्टेटर बन बैठा। इटली में मुसोलिनी नामक एक व्यक्ति पहले ही डिक्टेटर बना हुआ था। जर्मनी को पूरी तरह संगठन करने के बाद हिटलर ने योरप में पैर पसारने शुरू किए। १९३९ में जब उसने पोलैण्ड पर आक्रमण किया तो इंग्लैण्ड और फ्रांस को भी मैदान में आना पड़ा। इटली ने जर्मनी का साथ दिया। हिटलर की फौजों ने इंग्लैण्ड और रूस को छोड़कर प्रायः सारे योरप पर कब्जा कर लिया। १९४१ में हिटलर ने रूस पर हमला करने की भूल की। थोड़ी देर बाद जापान जर्मनी की ओर से और अमेरिका साथी राष्ट्रों की ओर से युद्ध में शामिल हो गए। जब इंग्लैण्ड और अमेरिका ने पश्चिमी योरप में दूसरा मोर्चा शुरू किया। एक ओर से रूस ने दबाव डाला और दूसरी ओर से साथी राष्ट्रों ने। १९४५ में जर्मनी और जापान ने हथियार डाल दिए। हिटलर आत्महत्या करके मर गया।

संसार के इन दो महायुद्धों में भयंकर तबाही हुई। प्रथम महायुद्ध में एक करोड़ व्यक्ति मरे और दो करोड़ घायल हुए। आर्थिक हानि का अनुमान लगाना प्रायः असम्भव है। दूसरे युद्ध में मरने वालों तथा घायल होने वालों की संख्या पहले महायुद्ध से अधिक थी। दोनों पक्षों की ओर से दो करोड़ सशस्त्र सिपाही मैदान में लड़ रहे थे। कितने भयानक थे ये दो महायुद्ध!

शान्ति की खोज

प्रथम महायुद्ध में जो भयंकर विनाश हुआ उसने दुनिया की आँखें खोल दीं। लोगों ने कोई ऐसा रास्ता ढूंढने का प्रयास किया जिससे दोबारा ऐसा युद्ध न हो। सब देशों ने अच्छी तरह जान लिया कि भावी युद्ध दो-चार देशों के बीच सीमित नहीं रहेगा। विज्ञान की प्रगति के कारण दुनिया सिकुड़ कर इतनी छोटी हो चुकी है कि कोई भी देश युद्ध से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। अतः युद्ध काल में ही विभिन्न देशों के बड़े-बड़े नेता तथा विचारक कोई ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन स्थापित करने के बारे में सोचने लगे जो विश्व में शान्ति बनाए रखने में सहायक हो।

राष्ट्रसंघ

१९१६ में जब पहला महायुद्ध हो रहा था, तो अमेरिका के राष्ट्रपति वुड्रो विल्सन ने शान्ति स्थापित

होने के बाद दुनिया की सब कौमों का एक मंच स्थापित करने का विचार प्रस्तुत किया। राष्ट्रपति विलसन के आग्रह पर युद्ध की समाप्ति पर वरसाई के सन्धि पत्र में ही लीग आफ नेशन्स की स्थापना की व्यवस्था कर दी गई। दुर्भाग्यवश आस्ट्रिया, हंगरी, बलगेरिया और टर्की जैसे पराजित देशों को तत्काल लीग में शामिल नहीं किया गया और न ही रूस को। इन्हें तब ही लीग में प्रवेश की अनुमति मिली जब इनके विरुद्ध दुश्मनी की भावना कुछ शान्त हुई।

लीग का प्रारम्भ अनुकूल वातावरण में नहीं हुआ। वुड्रो विलसन जिन्हें लीग आफ नेशन्स का पिता कहा जाता है, अमेरिका को इस संगठन में शामिल करने में सफल नहीं हुए। तो भी १९२० में अमेरिका के बिना ही लीग आफ नेशन्स की स्थापना हुई। शुरू में इसमें ३२ मित्र शक्तियाँ और १३ तटस्थ राष्ट्र सम्मिलित हुए। लीग की स्थापना तीन उद्देश्यों से की गई थी। पहला, शान्ति सन्धियों तथा अन्य समझौतों की शर्तों को अमल में लाना, दूसरा स्वास्थ्य, अर्थ-व्यवस्था, यातायात, संदेशवाहन इत्यादि के साधनों का विकास करके अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग बढ़ाना और तीसरा, युद्ध को रोकना तथा विभिन्न देशों के आपसी झगड़ों को शान्ति-पूर्ण ढंग से हल करना।

लीग आफ नेशन्स के मुख्य अंग चार थे। लीग असेम्बली (League Assembly) लीग कौंसिल (League Council) सचिवालय तथा एक स्थायी अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय।

लीग असेम्बली—असेम्बली में लीग आफ नेशन्स के सदस्य राष्ट्रों के प्रतिनिधि होते थे। सब छोटे-बड़े राष्ट्रों का एक ही वोट था। सबके समान अधिकार थे। यह असेम्बली लीग द्वारा किए जानेवाले सारे व्यय पर नियंत्रण रखती थी। इसमें लीग सम्बन्धी सब मामलों पर बहस हो सकती थी। नए सदस्यों के प्रवेश के बारे में भी यही असेम्बली दो-तिहाई बहुमत से फैसले करती थी। लीग के महामंत्री का निर्वाचन करती थी। निर्णय हुआ था कि लीग आफ नेशन्स के सब फैसले एकमत द्वारा हुआ करें। कभी-कभी इसके विशेष अधिवेशन भी बुलाए जाते थे। १९३१ में जब जापान ने मन्चूरिया पर हमला किया तो लीग असेम्बली का विशेष अधिवेशन बुलाया गया और १९३६ में इटली द्वारा अबीसीनिया पर हमले के समय भी। सर्व सम्मति से फैसला करने का उद्देश्य यह था कि लीग के सदस्यों में आपसी मतभेद न हो। परन्तु वास्तव में यह शर्त ही लीग के अन्त का एक महत्वपूर्ण कारण बनी। असेम्बली की बैठक साधारणत साल में एक बार होती थी।

लीग कौंसिल—लीग कौंसिल एक छोटी समिति थी। इसमें चार स्थायी सदस्य थे जो मुख्य मित्र राष्ट्र थे, और चार अस्थायी सदस्य थे जो असेम्बली के सदस्यों द्वारा चुने जाते थे। अस्थाई सदस्यों का चुनाव प्रति वर्ष होता था। १९२२ में सदस्यों की संख्या बढ़ाकर १० कर दी गई। दो नई सीटें छोटी जातियों को दी गईं। १९२६ में एक स्थायी सीट जर्मनी को दे दी गई। उसके साथ ही कौंसिल के अस्थायी सदस्यों की संख्या ९ कर दी गई। १९३३ और १९३६ में एक एक और अस्थायी सदस्य बढ़ाया गया। फलस्वरूप १९३६ में लीग कौंसिल के स्थायी सदस्य ५ थे और अस्थायी ११।

कौंसिल लीग आफ नेशन्स के सब कार्यों के लिए उत्तरदायी होती थी। वह लीग सचिवालय के काम

की देख-भाल करती थी। विभिन्न उप-समितियों के सदस्यों की नियुक्ति करती थी। सम्मेलन बुलाती थी और लीग के अन्य विभागों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्टों पर विचार करती थी।

सचिवालय—लीग का सचिवालय जेनेवा में था। इसे लीग की रीढ़ की हड्डी माना गया है। लीग का सारा काम सचिवालय द्वारा ही संचालित होता था। महामन्त्री की अध्यक्षता में सचिवालय के कई कर्मचारी थे। सचिवालय में भिन्न-भिन्न देशों के लोग काम करते थे।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय—एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की नींव रखी गई। इस न्यायालय का मुख्यालय हेग में था। इसमें १५ जज होते थे। यह न्यायालय अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों, अन्तर्राष्ट्रीय कानून तथा समझौतों इत्यादि की कानूनी व्याख्या करता था। इस न्यायालय के जज असेम्बली तथा कौंसिल की सम्मिलित बैठक में ९ वर्ष के लिए चुने जाते थे। यह न्यायालय आज भी प्रायः अपने पहले रूप में संयुक्त राष्ट्रसंघ के अंग के रूप में काम करता है।

लीग आफ नेशन्स के संगठन में उपरोक्त संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य विशेष संस्थाओं के लिए भी स्थान था जैसे निशस्त्रीकरण और संरक्षित प्रदेशों के सम्बन्ध में कमीशन, आर्थिक और वित्तीय संगठन, यातायात सम्बन्धी संगठन, स्वास्थ्य संगठन इत्यादि। इन्हें एक दूसरे से सम्बद्ध रखने का काम सचिवालय करता था।

इसके अतिरिक्त कुछ विशेष संस्थाएँ भी थीं जैसे—अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संघ संस्था (International Labour Organisation) इस संस्था ने बड़ा लाभकारी काम किया है। इसका उद्देश्य संसार में मजदूरों की भलाई के कानून बनवाना था। इस उद्देश्य में यह कुछ हद तक सफल भी हुई। यह संस्था आज भी पहले की तरह संयुक्त राष्ट्र संघ के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में काम कर रही है।

लीग का कार्य—लीग युद्ध को समाप्त तो नहीं कर सकती थी। अतः लीग का उद्देश्य युद्ध की सम्भावना कम करना ही रखा गया था। प्रारम्भ में लीग कई छोटे-मोटे झगड़ों को निपटाने में सफल हुई। यह कुछ प्रदेशों का संरक्षण भी करती थी जैसे डैनज़िग का स्वतन्त्र नगर इत्यादि। लीग कुछ अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में विभिन्न राष्ट्रों से सहयोग प्राप्त करने में सफल हुई जैसे अफीम के व्यापार की रोकथाम, मजदूरों की समस्याओं पर सहमति, महामारियों की रोकथाम इत्यादि।

(३) लीग कौंसिल के फैसलों के लिए सब सदस्यों का एकमत होना जरूरी था। दूसरे शब्दों में केवल एक राष्ट्र लीग के किसी फैसले को रद्दी की टोकरी में डलवा सकता था।

(४) लीग के पास अपने फैसले मनवाने के लिए कोई शक्ति नहीं थी। फ्रांस ने सुझाव रखा था कि लीग की एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना होनी चाहिए परन्तु अन्य सदस्यों ने इसे नहीं माना।

(५) जर्मनी के साथ जो वरसाई की सन्धि हुई थी वह अन्यायपूर्ण थी। इस सधि पत्र पर जर्मन प्रतिनिधियों से संगीनों के छाया में हस्ताक्षर कराए गए थे। लीग आफ नेशन्स की स्थापना इस सन्धि-पत्र का अंग बना दी गई। जो राष्ट्र इसमें शामिल होना चाहते थे, उन्हें इस सन्धि का समर्थन करना पड़ता था। वरसाई सन्धि के अन्याय के परिणामस्वरूप जर्मनी में उग्रवादी हिटलर का उदय हुआ। जर्मनी में हिटलर और इटली में मुसोलिनी ने लीग आफ नेशन्स की कोई परवाह नहीं की।

(६) लीग आफ नेशन्स के चौधरियों का अपना दामन साफ नहीं था। इंग्लैण्ड और फ्रांस के दुनिया भर में उपनिवेश फैले हुए थे। जर्मनी और इटली भी अपना आर्थिक स्तर ऊँचा करने के लिए दुनिया में फैलना चाहते थे। संघर्ष अनिवार्य था। लीग आफ नेशन्स इसे रोकने में असमर्थ सिद्ध हुई।

अभ्यास के प्रश्न

(१) लीग आफ नेशन्स क्यों स्थापित हुई। उसके उद्देश्य क्या थे?

(२) लीग आफ नेशन्स के संगठन के बारे में आप क्या-क्या जानते हैं? उसमें क्या त्रुटियाँ थीं?

(३) लीग आफ नेशन्स क्यों असफल रही?

(४) लीग आफ नेशन्स और संयुक्त राष्ट्र संघ में क्या अन्तर है?

: २६ :

संयुक्त राष्ट्र संघ (युनाइटेड नेशन्स)

संयुक्त राष्ट्र संघ एक महान तथा शक्तिशाली संस्था है। इसके घोषणापत्र में जो उद्देश्य और आदर्श लक्षित किए गये हैं वे इतनी सुन्दर भाषा में लिखे हैं कि उससे बेहतर उद्देश्य लिखना सम्भव नहीं।

—जवाहरलाल नेहरू

दूसरे महायुद्ध में जो विनाशकारी प्रलय आई उससे सब जातियों को विश्वास हो गया कि दुनिया में शान्ति स्थापित रखने के लिए एक बलशाली अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता है। यह संस्था प्रथम महायुद्ध के बाद स्थापित लीग आफ नेशन्स की तरह खोखली नही होनी चाहिए। किसी प्रबल अंतर्राष्ट्रीय संगठन की रूपरेखा तैयार करने के लिए एप्रिल २५ से जून २६, १९४५ तक अमेरिका के सानफ्रांसिस्को नगर में संसार के ५० देशों के ८५० प्रतिनिधियों की एक कान्फ्रेंस हुई। इसमें दुनिया की ८० प्रतिशत जनसंख्या के प्रतिनिधि शामिल थे। इस सम्मेलन ने संयुक्त राष्ट्र संघ का एक घोषणापत्र तैयार किया। जून १९४५ में संसार के ५१ राष्ट्रों ने राष्ट्रसंघ के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए। २४ अक्तूबर, १९४५ को संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना हुई। अतः दुनिया में २४ अक्तूबर प्रति वर्ष संयुक्त राष्ट्र दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों की संख्या ८१ है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य

संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र के अनुसार संघ के चार मुख्य उद्देश्य हैं

(१) अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा को बनाए रखना।

(२) विभिन्न राष्ट्रों में जातियों की समानता तथा आत्म-निर्णय के आधार पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना।

(३) आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक मामलों में पारस्परिक सहयोग। मानव के लिए आधारभूत मानवीय अधिकारों तथा स्वतन्त्रता को सुरक्षित करना।

(४) उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दुनिया की जातियों के लिए एक आकर्षण केन्द्र का काम करना।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मूल सिद्धान्त

संयुक्त राष्ट्र संघ का संगठन इन सिद्धान्तों के आधार पर हुआ है

(१) संयुक्त राष्ट्र संघ के सब सदस्य एक समान हैं।

(२) सब सदस्यो को ईमानदारी से सयुक्त राष्ट्र सघ के घोषणापत्र का परिपालन करना चाहिए ।
(३) सब सदस्य आपसी झगडे शान्तिपूर्वक निपटाएँगे ।
(४) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो में वे शक्ति के प्रयोग से या उसके प्रयोग की धमकी देने से सकोच करेंगे ।
(५) वे सयुक्त राष्ट्र सघ द्वारा उठाए गए हर पग में सहायता देंगे । सघ जिस देश के विरुद्ध पग उठाएगा, सब सदस्य इसमें सहयोग देंगे ।
(६) सयुक्त राष्ट्र सघ जातियो के आन्तरिक मामलो में हस्तक्षेप नही करेगा ।
(७) वह इस बात की भी व्यवस्था करेगा कि जो जातियाँ सघ की सदस्य नहीं, वे अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति को भग न करने पाएँ ।

१९४५ में सान फ्रासिस्को सम्मेलन में भाषण देते हुए अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति ट्रूमैन ने कहा था, "आप लोगो ने सयुक्त राष्ट्र के जिस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए हैं, वह ऐसा ठोस ढाँचा है, जिस पर हम एक अच्छी दुनिया का निर्माण कर सकते हैं ।"

संयुक्त राष्ट्र सघ का सगठन

सयुक्त राष्ट्र सघ के उपरोक्त लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए एक विशाल सगठन का निर्माण किया गया है । इसके छ प्रमुख विभाग हैं ।

(१) महा सभा (General Assembly)
(२) सुरक्षा परिषद (Security Council)
(३) आर्थिक तथा सामाजिक परिषद (Economic and Social Council)
(४) सरक्षण परिषद (Trusteeship Council)
(५) अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय (International Court of Justice)
(६) सचिवालय (Secretariat)

महासभा

सयुक्त राष्ट्र सघ की महासभा एक तरह से सदस्य राष्ट्रो की पार्लियामेंट है । इसमें सयुक्त राष्ट्र सघ के कुल ८१ सदस्य शामिल हैं । सब छोटे बडे राष्ट्रो का एक ही वोट होता है । इस सभा की बैठक साल में एक बार अवश्य होती है । सुरक्षा परिषद के सुझाव से अथवा सदस्य राष्ट्रो के बहुमत के आग्रह पर इसका विशेष अधिवेशन भी बुलाया जा सकता है । एक सदस्य राष्ट्र अपने पाँच प्रतिनिधि तथा पाँच स्थानापन्न प्रतिनिधि भेज सकता है परन्तु वोट किसी राष्ट्र का एक से ज्यादा नही होता है ।

महासभा सयुक्त राष्ट्र सघ की नीति निर्धारित करती है । वह सयुक्त राष्ट्र सघ के अन्य अगो के बारे में विचार-विमर्श करती है । सुरक्षा परिषद तथा सयुक्त राष्ट्र सघ की अन्य सस्थाएँ अपनी वार्षिक रिपोर्ट महासभा के सामने प्रस्तुत करती हैं । महासभा में अन्तर्राष्ट्रीय झगडो पर भी विचार होता है परन्तु यदि किसी झगडे पर सुरक्षा परिषद में विचार हो रहा हो, तो महासभा उस मामले पर विचार तो कर सकती है लेकिन अपनी सिफारिश तभी कर सकती है यदि सुरक्षा परिषद इस काम के लिए उसे कहे । उदाहरणार्थ,

हाल ही में जब इन्लैंड, फ्रांस इत्यादि ने मिस्र पर हमला किया तो महा सभा ने तुरन्त उस पर विचार करके इंग्लैण्ड और फ्रांस को रोक दिया। परन्तु काश्मीर का मामला पहले ही सुरक्षा परिषद के सम्मुख है। इस पर महासभा तब तक विचार नहीं कर सकती जब तक सुरक्षा परिषद् इसे ऐसा करने के लिए नहीं कहे। महासभा सुरक्षा परिषद के छ अस्थायी सदस्य निर्वाचित करती है, आर्थिक तथा सामाजिक परिषद के १८ सदस्य चुनती है। महासभा ही संयुक्त राष्ट्र संघ का बजट पास करती है।

सामान्यतः महासभा का निर्णय साधारण बहुमत से होता है। महत्वपूर्ण विषयों जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ में नए राष्ट्रों के प्रवेश पर दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। भारत की श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा की प्रधान रह चुकी हैं।

सुरक्षा परिषद

सुरक्षा परिषद के ११ सदस्य होते हैं। इनमें पांच बडे राष्ट्र स्थायी सदस्य हैं और छ सदस्य हर दो वर्ष के बाद महासभा द्वारा चुने जाते हैं। स्थायी सदस्य ये हैं—(१) अमेरिका, (२) इंग्लैण्ड, (३) सोवियत रूस, (४) चीन (फारमोसा वाला) और (५) फ्रांस।

सुरक्षा परिषद को अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की समस्याओं पर निरन्तर विचार करना पडता है। इसलिए इसका अधिवेशन प्रायः जारी रहता है। पन्द्रह दिन में कम से कम एक बैठक आवश्यक हो जाती है। सुरक्षा परिषद किसी भी ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय झगडे पर विचार कर सकती है, जिसमें दो या अधिक राष्ट्रों में लडाई छिड जाने का भय हो। इस बारे में कोई भी राष्ट्र अथवा संयुक्त राष्ट्र संघ के महामन्त्री सुरक्षा परिषद का ध्यान इस ओर आकर्षित करा सकते हैं। सुरक्षा परिषद झगडे की जाँच करती है और आपसी समझौते के लिए सुझाव प्रस्तुत करती है। यदि फिर भी झगडा तय नहीं हो पाए तो परिषद पंच अथवा मध्यस्थ नियुक्त करती है। लडाई छिड जाने पर सुरक्षा परिषद युद्ध करने वाले राष्ट्रों को युद्ध रोकने का आदेश दे सकती है। यदि कोई राष्ट्र यह आदेश न माने तो वह परिषद संघ के सदस्य राष्ट्रों को अवज्ञा करनेवाले राष्ट्र का आर्थिक बहिष्कार करने का आदेश दे सकती है। यदि फिर भी वह राष्ट्र अवज्ञा पर तुला रहे तो सुरक्षा परिषद् सदस्य राष्ट्रों को फौजी कार्रवाई करने की आज्ञा दे सकती है।

श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित

सुरक्षा परिषद में किसी फैसले के लिये आवश्यक है कि ११ में से ७ सदस्य इस बारे में सहमत हों। इन सात में से पाँच स्थायी सदस्यों की सहमति अनिवार्य है। यदि इन पाँच राष्ट्रों में से किसी एक को सुरक्षा

परिषद का कोई फैसला मान्य न हो, तो वह अपने निषेधाधिकार (Veto) का प्रयोग कर के इस फैसले को रद्द कर सकता है। हाल ही में आपने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा कि रूस ने काश्मीर के मामले में अपने निषेधाधिकार का प्रयोग करके इंग्लैंड तथा अमेरिका द्वारा प्रस्तुत एक प्रस्ताव को रद्द कर दिया था। बड़े राष्ट्रों की इस (Veto) शक्ति के कारण सुरक्षा परिषद प्रायः अपने आपको अन्तर्राष्ट्रीय झगड़े निबटाने में असमर्थ पाती है।

आर्थिक तथा सामाजिक परिषद

इस परिषद के १८ सदस्य होते हैं जिन्हें संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा निर्वाचित करती है। इस परिषद का मुख्य उद्देश्य ऐसे संसार का निर्माण है जहाँ अधिक खुशहाली, स्थिरता और न्याय हो। यह परिषद् आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और शिक्षा सम्बन्धी विषयों पर जाँच-पड़ताल और अध्ययन कराती है। इनके बारे में जो रिपोर्टें तैयार होती है, वे महासभा तथा अन्य सदस्य राष्ट्रों के पास भेजी जाती हैं। परिषद का कार्य क्षेत्र बड़ा विशाल है। इसलिए उसने भिन्न-भिन्न विषयों के लिए कई समितियाँ बनाई हुई हैं। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण यूनेस्को (United Nations Educational Scientific and Cultural Organisation, Unesco)है। यह संयुक्त राष्ट्र संघ का शिक्षा सम्बन्धी तथा सांस्कृतिक संगठन है। यह संस्था विश्व में शिक्षा तथा संस्कृति के प्रचार के लिए प्रयत्नशील रहती है। विज्ञान और कला को प्रोत्साहन देती है। आर्थिक तथा सामाजिक परिषद की कुछ अन्य विशिष्ट समितियों के नाम ये हैं —(१) विश्व खाद्य तथा कृषि संस्था (Food and Agricultural Organisation; FAO)। यह संस्था दुनिया में कृषि उत्पादन बढ़ाने तथा उसके बटवारे की व्यवस्था करती है। (२) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संस्था (International Labour Organisation, ILO) यह संस्था संसार में श्रमिकों की भलाई के नियम बनाती है। (३) विश्व स्वास्थ्य संस्था (World Health Organisation, WHO) विश्व स्वास्थ्य संस्था दुनिया में बीमारी की रोक थाम की चेष्टा करती है। (४) अन्तर्राष्ट्रीय बैंक तथा आर्थिक कोष (International Bank and Monetary Organisation)। यह संस्था आर्थिक सहयोग का कार्य करती है।

संरक्षण परिषद

संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक संरक्षण परिषद अथवा ट्रस्टीशिप कौंसिल बना रखी है, जो ऐसे देशों के हितों की देख-भाल करती है जिन्होंने अभी स्वराज्य प्राप्त नहीं किया। जिन राष्ट्रों के अधीन ये देश हैं उनसे आशा की जाती है कि वे अपने अधीन देशों की प्रगति के बारे में निश्चित रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ को रिपोर्ट दें। संरक्षण परिषद उस रिपोर्ट पर विचार करती है और बाद में उस पर महासभा में भी विचार होता है।

इस परिषद में वे सदस्य राष्ट्र शामिल होते हैं, जिनके संरक्षण में ऐसे प्रदेश होते हैं। इसके अतिरिक्त सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य तथा साधारण सभा द्वारा निर्वाचित कुछ सदस्य भी इसमें शामिल होते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय

संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक उच्च न्यायालय भी स्थापित कर रखा है। इसे अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय कहते हैं। इसमें १५ न्यायाधीश होते हैं। यह सदस्य राष्ट्रों में से महासभा तथा सुरक्षा परिषद द्वारा चुने जाते

है। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के फैसले का पालन करना पड़ता है। कोई भी राष्ट्र इस न्यायालय में मुकदमा पेश कर सकता है। इस न्यायालय का कार्य राष्ट्रों में समझौता कराना नहीं, अपितु सत्य-असत्य के बारे में सीधा निर्णय देना होता है। इसके अतिरिक्त यदि सुरक्षा परिषद्, महासभा या संयुक्त राष्ट्र संघ का अन्य कोई संगठन चाहे तो अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय से कानूनी राय ले सकता है। इस न्यायालय का मुख्यालय हालैंड की राजधानी हेग में है।

सचिवालय

संयुक्त राष्ट्रसंघ ने महान कार्य-भार संभाल रखा है। इस काम की देख-भाल के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का एक विशाल सचिवालय न्यूयार्क में स्थित है। सचिवालय का मुख्य प्रबन्धक महामन्त्री (Secretary General) है जो साधारण सभा द्वारा तीन वर्ष के लिए चुना जाता है। वह इस बात का ध्यान रखता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की नीतियों तथा कार्यक्रम का परिपालन ठीक तरह से हो। सचिवालय को कई भागों में बाँटा गया है। इन विभागों में प्रायः संसार के सभी देशों के नागरिक काम करते हैं।

खेद की बात है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के रहते हुए भी दुनिया तेजी से युद्ध की ओर जा रही है। इस समय संसार दो गुटों में बँटा हुआ है—रूसी गुट और अमेरिकन गुट। दोनों में शीत युद्ध चलता रहता है। दोनों पक्ष धड़ाधड़ हथियार बना रहे हैं। १९५९ में अमेरिका ने अपनी सुरक्षा का जो बजट तैयार किया उसका अनुमान ५० हजार करोड़ रुपये से भी ज्यादा था। यह राशि भारत के ५० वर्षों के बजट से भी अधिक है। अनुमान है कि दुनिया इस समय धरती पर रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की सुरक्षा पर २००० रु० प्रति मास खर्च करती है। कितना व्यय बैठता है हमारी तुम्हारी रक्षा पर! यदि यही धन दुनिया से गरीबी और बीमारी दूर करने पर व्यय हो, तो युद्ध की कोई आवश्यकता ही नहीं रहे।

अभ्यास के प्रश्न

(१) संयुक्त राष्ट्र संघ किसे कहते हैं? यह क्यों और कब स्थापित हुआ?

(२) संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य और सिद्धान्त क्या हैं?

(३) सुरक्षा परिषद के बारे में आप क्या जानते हैं। विस्तार से लिखो।

(४) संयुक्त राष्ट्र संघ का संगठन कैसा है। उसके मुख्य अंग क्या हैं?

(५) संयुक्त राष्ट्र संघ की सभा क्या काम करती है?

(६) संक्षिप्त नोट लिखो : यूनेस्को, ट्रस्टीशिप कौंसिल, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, विश्व स्वास्थ्य संस्था।

: २७ :

विश्व शान्ति और भारत

शान्ति के प्रति लगाव भारतीय जनता की ऐतिहासिक धरोहर ही नहीं, वरन यह तो हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक अटूट अंग है। वास्तव में शान्ति हमारे महान ऋषियों का वरदान है। ..अत: अपनी ऐतिहासिक परम्परा के अनुकूल हमने संयुक्त राष्ट्र संघ को यथा-शक्ति सहयोग दिया है।

—डा० राजेन्द्रप्रसाद

आज की दुनिया में कोई भी राष्ट्र संसार की घटनाओं से अलग-थलग नहीं रह सकता। हमारी दुनिया सिकुड़ कर इतनी छोटी हो चुकी है कि विश्व के एक भाग में जो कुछ होता है उसका प्रभाव हम पर हुए बिना नहीं रह सकता। संसार के किसी कोने में हुई छोटी से छोटी घटना एक ऐसे विस्फोट को जन्म दे सकती है, जो अपनी ज्वाला में समूची सभ्यता को जलाकर राख कर सकता है। इसलिए भारत को दुनिया की प्रत्येक घटना के बारे में चेतन और जागरूक रहना पड़ता है।

हमारी विदेश नीति

भारत की विदेश नीति का मूल मंत्र है शान्ति। शान्ति भारत की ऐतिहासिक धरोहर है। शान्ति इस युग की माँग है। वर्तमान युग का युद्ध सौ साल पुराना युद्ध नहीं। इस युग के युद्ध में मानव का जीवन ही खतरे में नहीं बल्कि वह सब कुछ खतरे में है जिसके लिए वह युगों-युगों से प्रयास करता रहा है। इसलिए भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू का सदा यह प्रयास रहा है कि दुनिया युद्ध के रास्ते पर अग्रसर न हो तथा दुनिया के देशों में आपसी सहयोग बढ़े।

स्वतन्त्रता से पूर्व भारत की विदेश नीति नाममात्र को ही थी। इस देश की विदेश नीति वही थी जो इंग्लैण्ड की। इण्डियन नेशनल कांग्रेस समय-समय पर विदेशी मामलों के बारे में प्रस्ताव पास करती रहती थी। परन्तु उनकी ओर दुनिया की कौमें ध्यान न देती थीं। सितम्बर १९४६ में पण्डित जवाहर-लाल नेहरू भारत की अन्तरिम सरकार में सम्मिलित हुए। उस समय उन्होंने भारत की विदेश नीति की व्याख्या इस प्रकार की—

"विदेशी मामलों में भारत एक स्वतन्त्र नीति का अनुसरण करेगा। वह बड़ी-बड़ी ताकतों की गुट-बंदियों में शामिल नहीं होगा। वह पराधीन लोगों की स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्नशील रहेगा और जहाँ कहीं भी नसली भेदभाव बरता जाएगा, उसका विरोध करेगा। वह दुनिया की अन्य शान्तिप्रिय जातियों के साथ मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा मैत्री बढ़ाने की चेष्टा करेगा। वह एक जाति द्वारा दूसरी जाति के शोषण का कड़ा विरोध करेगा।"

तब से लेकर अब तक भारत मूलत: इस नीति का अनुसरण करता रहा है। उसने बड़ी-बड़ी ताकतों के रोष की चिन्ता न करते हुए भी इस नीति को साहस से अपनाया है। दुर्भाग्य से संकीर्ण दृष्टिकोण के

दूसरे देशों ने कई बार भारत के विचारों को मान्यता नहीं दी। परन्तु दुनिया को उसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू के जीवनी लेखक फ्रैंक मोरेस ने लिखा है, "ऐसा मालूम होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में जवाहरलाल अपने समकालीन राजनीतिज्ञों से एक छलांग आगे सोचता है। शायद इसलिए अन्य राजनीतिज्ञ समझते हैं कि वह उनके साथ कदम मिलाकर नहीं चल सकता।"

बात दुरुस्त है। १९४६ में फिलस्तीन के सवाल पर दुनिया में बड़ा तनाव था। सयुक्त राष्ट्र सघ में कुछ लोग फिलस्तीन को यहूदी तथा अरब प्रदेशों में बाँटने पर तुले हुए थे और कुछ फिलस्तीन को एक इकाई के रूप में रखना चाहते थे। भारत की ओर से सुझाव रखा गया कि फिलस्तीन में सघीय ढग की एक सरकार हो। केन्द्र में अरबों का बहुमत हो। परन्तु सघ के दोनों भाग—अरब तथा यहूदी प्रदेश—आन्तरिक मामलों में पूरे रूप से स्वतन्त्र हों। आखिर जब बँटवारे का निश्चय होने लगा तब फिलस्तीन को एक रखने के पक्षपातियों ने भारतीय सुझाव को मान्यता दिए जाने का आग्रह किया। परन्तु अब तीर हाथ से निकल चुका था। सयुक्त राष्ट्र सघ की महासभा दो तिहाई बहुमत से बँटवारे के पक्ष में निर्णय दे चुकी थी।

इसी तरह १९५० में कोरिया में जब अमरीकन ३८ समानान्तर रेखा को पार करने लगे तो भारत ने अमरीका को चेतावनी दी कि यदि उन्होंने ऐसा किया, तो चीन की कम्युनिस्ट सरकार खुले रूप से युद्ध में शामिल हो जाएगी। अमरीका ने इस चेतावनी को चीन की एक गीदड़भभकी समझा। ३ साल बाद जब लगभग १ लाख अतिरिक्त अमेरिकन सैनिक हताहत हो चुके थे, तो अमरीका को उसी ३८ समानान्तर रेखा पर युद्ध-विराम करना पड़ा जिसके बारे में श्री जवाहरलाल नेहरू ने पहले सुझाव दिया था। ये दो उदाहरण जवाहरलाल नेहरू की दूरदर्शिता के उज्ज्वल प्रमाण हैं।

पचशील

भारत की विदेशी नीति का आधार 'पचशील' के पाँच नियम हैं। 'पचशील' के सिद्धातो का सर्वप्रथम १९५४ में तिब्बत के बारे में भारत और चीन के एक समझौते में आमुख के रूप में निरूपण हुआ था। तिब्बत की स्थिति के बारे में भारत और चीन में कुछ मतभेद था। दोनों राष्ट्रों ने इस मतभेद को पारस्परिक मैत्री तथा सहयोग से सुलझा लिया। इस समझौते में भारत-चीन सम्बन्धों के बारे में हुए मूल सिद्धान्त निश्चित किए गए थे। बाद में इन्हीं सिद्धान्तों को 'पचशील' का नाम मिला और ऐतिहासिक महत्व भी। ये पाँच सिद्धान्त निम्नलिखित हैं —

(१) एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और प्रभु-सत्ता का सम्मान करना,
(२) एक दूसरे के विरुद्ध आक्रमक कार्रवाई न करना,
(३) एक दूसरे के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप न करना,
(४) समानता और परस्पर लाभ की नीति का पालन करना,
(५) शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति में विश्वास रखना।

यों कहने को तो ये सिद्धान्त दो पड़ोसी राष्ट्रों के व्यापार-व्यवहार समझौते का अंग थे, परन्तु इनमें विश्व-शान्ति और विश्व-सहयोग का मार्ग, मूर्त और प्रशस्त करने के वास्तविक तत्त्व भी विद्यमान हैं। इसीलिए उन्हें इतना अपूर्व गौरव मिला है।

इस समझौते के कुछ दिन बाद इण्डोनेशिया के प्रधान मन्त्री डा० अली शास्त्रोमिद जोजो भारत आए। अपने स्वागत भाषण के अवसर पर उन्होंने बताया कि उनके देश की सारी रीति-नीति पाच आधारभूत सिद्धान्तो से प्रेरित है। उन्हें वे 'पाञ्चशिला' कहते है। और ये है जनता की प्रभुसत्ता, मानववाद, ईश्वर में विश्वास तथा धार्मिक स्वतन्त्रता, इण्डोनेशिया की राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय-समृद्धि।

इस भाषण के उत्तर में नेहरूजी ने तिब्बत सम्बन्धी चीन-भारत समझौते की बात करते हुए अपने उन पाँच सिद्धातो का उल्लेख किया और घोषित किया कि ये वास्तविक विश्व-शान्ति और सहयोग की 'आधार-शिला' बन सकते है। ये पाँच सिद्धान्त अभी तक 'पचसूत्र' कहलाते थे, अब उन्हें सहज ही 'पचशील' नाम मिल गया।

ऐप्रिल १९५४ में चीन के प्रधान मन्त्री चो-एन-लाइ भी भारत आये थे। चो और नेहरू ने अपनी महत्वपूर्ण राजनीतिक वार्ताओं के बाद यह स्वीकार करते हुए कि दोना राष्ट्रों की प्रशासनिक और आर्थिक-पद्धतियों में अन्तर है, तो भी वे एक-दूसरे के मित्र बने रह सकते है, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार और सह-अस्तित्व के आवश्यक सिद्धान्तो के रूप में उन पाँच सिद्धान्तो की व्यापक घोषणा की, और यो 'पचशील' शब्द और उसके भाव पर इतिहास की एक और मोहर लग गई।

चो-एन-लाई

हाल ही मे पचशील की व्याख्या करते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "हम सब के साथ सहयोग और मैत्री का स्वागत करते है। हम सब प्रकार के विचारो का आदर करते हैं। परन्तु अपना रास्ता चुनने का हमारा अधिकार सुरक्षित है। यही 'पचशील' का मूल-तत्व है।"

पचशील का विस्तार—पचशील का पाँचवाँ नियम सह-अस्तित्व, आज दुनिया को शान्ति का रास्ता दिखा रहा है। विभिन्न विचारधाराओं की इस दुनिया में सह-अस्तित्व के अतिरिक्त कोई चारा ही नही। ससार के विचारशील और प्रगतिशील लोगो को श्री जवाहरलाल नेहरू ने दुनिया को जीवित रखने का एक वास्तविक रास्ता दिखाया है। इस सिद्धान्त को मान कर साम्यवादी रूस और पूंजीवादी अमेरिका शान्तिपूर्वक जिन्दा रह सकते हैं। उन्हें एक दूसरे से डरने की कोई जरूरत नही। पण्डित नेहरू ने दुनिया से कहा है कि हाइड्रोजन बम, दूरमार गोलो और स्पूतनिक के युग में सैनिक गठजोड़ बेकार है। ससार में सुरक्षा की वास्तविक व्यवस्था आपसी विश्वास और भरोसे से ही हो सकती है। यदि दुनिया के सब देश पचशील का सिद्धान्त मान लें तो सैनिक गठजोडो की आवश्यकता ही न रहे। अब तक दुनिया के ११ देश 'पचशील' में अपनी आस्था प्रगट कर चुके हैं। इन देशो के नाम ये हैं—इण्डोनेशिया, उत्तरी वीतनाम, योगोस्लेविया, मिस्र, ...

दूसरे देशो ने कई बार भारत के विचारो की मान्यता नहीं दी। परन्तु दुनिया को उसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू के जीवनी लेखक फ्रैंक मोरेस ने लिखा है, "ऐसा मालूम होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलो में जवाहरलाल अपने समकालीन राजनीतिज्ञो से एक छलाग आगे सोचता है। शायद इसलिए अन्य राजनीतिज्ञ समझते हैं कि वह उनके साथ कदम मिलाकर नहीं चल सकता।"

बात दुरुस्त है। १९४६ में फिलस्तीन के सवाल पर दुनिया में बडा तनाव था। सयुक्त राष्ट्र सघ में कुछ लोग फिलस्तीन को यहूदी तथा अरब प्रदेशो में बाँटने पर तुले हुए थे और कुछ फिलस्तीन को एक इकाई के रूप में रखना चाहते थे। भारत की ओर से सुझाव रखा गया कि फिलस्तीन में सघीय ढग की एक सरकार हो। केन्द्र में अरबो का बहुमत हो। परन्तु सघ के दोनो भाग—अरब तथा यहूदी प्रदेश—आन्तरिक मामलों में पूरे रूप से स्वतन्त्र हो। आखिर जब बँटवारे का निश्चय होने लगा तब फिलस्तीन को एक रखने के पक्षपातियों ने भारतीय सुझाव को मान्यता दिए जाने का आग्रह किया। परन्तु अब तीर हाथ से निकल चुका था। सयुक्त राष्ट्र सघ की महासभा दो तिहाई बहुमत से बँटवारे के पक्ष में निर्णय दे चुकी थी।

इसी तरह १९५० में कोरिया में जब अमरीकन ३८ समानान्तर रेखा को पार करने लगे तो भारत ने अमरीका को चेतावनी दी कि यदि उन्होने ऐसा किया, तो चीन की कम्युनिस्ट सरकार खुले रूप से युद्ध में शामिल हो जाएगी। अमरीका ने इस चेतावनी को चीन की एक गीदड़भभकी समझा। ३ साल बाद जब लगभग १ लाख अतिरिक्त अमेरिकन सैनिक हताहत हो चुके थे, तो अमरीका को उसी ३८ समानान्तर रेखा पर युद्ध-विराम करना पडा जिसके बारे में श्री जवाहरलाल नेहरू ने पहले सुझाव दिया था। ये दो उदाहरण जवाहरलाल नेहरू की दूरदर्शिता के उज्ज्वल प्रमाण हैं।

पचशील

भारत की विदेशी नीति का आधार 'पचशील' के पाँच नियम हैं। 'पचशील' के सिद्धातो का सर्वप्रथम १९५४ में तिब्बत के बारे में भारत और चीन के एक समझौते में आमुख के रूप में निरूपण हुआ था। तिब्बत की स्थिति के बारे में भारत और चीन में कुछ मतभेद था। दोनो राष्ट्रो ने इस मतभेद को पारस्परिक मैत्री तथा सहयोग से सुलझा लिया। इस समझौते में भारत-चीन सम्बन्धो के बारे में हुए मूल सिद्धान्त निर्दिष्ट किए गए थे। बाद में इन्ही सिद्धान्तो को 'पचशील' का नाम मिला और ऐतिहासिक महत्व भी। ये पाँच सिद्धान्त निम्नलिखित हैं —

(१) एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और प्रभु-सत्ता का सम्मान करना,
(२) एक दूसरे के विरुद्ध आक्रामक कार्रवाई न करना,
(३) एक दूसरे के अन्दरूनी मामलो में हस्तक्षेप न करना,
(४) समानता और परस्पर लाभ की नीति का पालन करना,
(५) शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति में विश्वास रखना।

यो कहने को तो ये सिद्धान्त दो पडोसी राष्ट्रो के व्यापार-व्यवहार समझौते का अग थे, परन्तु इनमें विश्व-शान्ति और विश्व-सहयोग का मार्ग, मूर्त और प्रशस्त करने के वास्तविक तत्व भी विद्यमान हैं। इसीलिए उन्हें इतना अपूर्व गौरव मिला है।

इस समझौते के कुछ दिन बाद इण्डोनेशिया के प्रधान मन्त्री डा० अली शास्त्रोमिद जोजो भारत आए। अपने स्वागत भाषण के अवसर पर उन्होंने बताया कि उनके देश की सारी रीति-नीति पाच आधारभूत सिद्धान्तो से प्रेरित है। उन्हें वे 'पाञ्चशिला' कहते हैं। और वे हैं जनता की प्रमुखता, मानववाद, ईश्वर में विश्वास तथा धार्मिक स्वतन्त्रता, इण्डोनेशिया की राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय-समृद्धि।

इस भाषण के उत्तर में नेहरूजी ने तिब्बत सम्बन्धी चीन-भारत समझौते की बात करते हुए अपने उन पाँच सिद्धान्तों का उल्लेख किया और घोषित किया कि वे वास्तविक विश्व-शान्ति और सहयोग की 'आधार-शिला' बन सकते हैं। वे पाँच सिद्धान्त अभी तक 'पचसूत्र' कहलाते थे, अब उन्हें सहज ही 'पंचशील' नाम मिल गया।

ऐप्रिल १९५४ में चीन के प्रधान मन्त्री चो-एन-लाइ भी भारत आये थे। चो और नेहरू ने अपनी महत्वपूर्ण राजनीतिक वार्ताओं के बाद यह स्वीकार करते हुए कि दोनों राष्ट्रों की प्रशासनिक और आर्थिक-पद्धतियों में अन्तर है, तो भी वे एक-दूसरे के मित्र बने रह सकते हैं, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार और सह-अस्तित्व के आवश्यक सिद्धान्तों के रूप में उन पाँच सिद्धान्तो की व्यापक घोषणा की, और यों 'पंचशील' शब्द और उसके भाव पर इतिहास की एक और मोहर लग गई।

चो-एन-लाई

हाल ही में पंचशील की व्याख्या करते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "हम सब के साथ सहयोग और मैत्री का स्वागत करते हैं। हम सब प्रकार के विचारों का आदर करते हैं। परन्तु अपना रास्ता चुनने का हमारा अधिकार सुरक्षित है। यही 'पंचशील' का मूल-तत्व है।"

पंचशील का विस्तार—पंचशील का पाँचवाँ नियम सह-अस्तित्व, आज दुनिया को शान्ति का रास्ता दिखा रहा है। विभिन्न विचारधाराओं की इस दुनिया में सह-अस्तित्व के अतिरिक्त कोई चारा ही नहीं। संसार के विचारशील और प्रगतिशील लोगों को श्री जवाहरलाल नेहरू ने दुनिया को जीवित रखने का एक वास्तविक रास्ता दिखाया है। इस सिद्धान्त को मान कर समाजवादी रूस और पूंजीवादी अमेरिका शान्तिपूर्वक जिन्दा रह सकते हैं। उन्हें एक दूसरे से डरने की कोई जरूरत नहीं। पण्डित नेहरू ने दुनिया से कहा है कि हाइड्रोजन बम, दूरमार तोपों और स्पूतनिक के युग में सैनिक गठजोड़ बेकार हैं। संसार में सुरक्षा की वास्तविक व्यवस्था आपसी विश्वास और भरोसे से ही हो सकती है। यदि दुनिया के सब देश पंचशील का सिद्धान्त मान लें तो सैनिक गठजोड़ों की आवश्यकता ही न रहे। अब तक दुनिया के ११ देश 'पंचशील' में अपनी आस्था प्रगट कर चुके हैं। इन देशों के नाम ये हैं—इण्डोनेशिया, उत्तरी वीतनाम, योगोस्लैविया, मिस्र, कम्बोडिया,

चीन, रूस, पोलैण्ड, लाओस, नेपाल और चेकोस्लोवाकिया। यूगोस्लेविया के प्रधान मार्शल टीटो और मिस्र के प्रधान कर्नल नासिर जब भारत आए थे, तो उन्होंने भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के साथ

मार्शल टीटो

कर्नल नासिर

सम्मिलित घोषणा में पंचशील के सिद्धान्त को स्वीकार किया था। पंचशील का विशेष लाभ यह हुआ है कि दुनिया में शान्ति में प्रगट रूप से आस्था व्यक्त करने वाले देशों की संख्या में बड़ी वृद्धि हुई है।

भारत और एशिया

एशिया कई शताब्दियों से योरोप के शोषण का शिकार रहा है। योरोपियन जातियों ने एशिया के प्रायः सभी देशों में एक न एक रूप से अपना दबदबा बिठा रखा था। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जापान के उदय ने एशियाई देशों में आत्म-विश्वास की भावना का संचार किया। उन्होंने जान लिया कि वे किसी भी रूप में योरोपियनों से कम नहीं। परिणामस्वरूप एशिया भर में आजादी की आग धधकने लगी। १९४७ में भारत की आजादी से एशियाई देशों में स्वतन्त्रता आन्दोलन को बल मिला।

मार्च १९४७ में भारत की स्वतन्त्रता से पांच मास पूर्व, दिल्ली में इण्डियन कौंसिल आफ वर्ल्ड अफेयर्स के तत्वावधान में सर्व एशिया सम्मेलन हुआ। जापान को छोड़कर इसमें एशिया के प्रायः सभी देश शामिल हुए। मध्य एशिया के कई सोवियत रिपब्लिकों ने भी इसमें भाग लिया। इस सम्मेलन का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि दुनिया को पता चल गया कि एशिया जाग्रत है और अपनी आजादी की रक्षा के लिए कटिबद्ध। सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा —

"सारे एशिया में तेज हवाएँ चल रही हैं। हमें उनसे डरने की कोई जरूरत नहीं। हम उनका स्वागत करते हैं क्योंकि उनकी सहायता से हम अपने सपनों के एशिया का निर्माण करेंगे। हमें अपने इन सपनों में आस्था और विश्वास होना चाहिए। सबसे बढ़कर हमें मानव की उस आत्मा में विश्वास होना चाहिए जिसका एशिया युगों-युगों से प्रतीक रहा है।"

यह एक आह्वान था एशिया के शेर का। इस कान्फ्रेंस के बाद दो वर्षों के बीच एशिया में पाँच देश स्वतन्त्र हुए—भारत, पाकिस्तान, बर्मा, लंका और फिलिपाईन। बदले हुए हालात में जनवरी १९४८ में श्री जवाहरलाल नेहरू ने दिल्ली में एक और एशियाई सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में इंडोनेशिया के संकट पर विचार किया जाना था। हॉलैण्ड ने इंडोनेशिया के नवजात जनतन्त्र को गुलाम बनाना चाहा था। जवाहरलाल इण्डोनेशिया में औपनिवेशिक सत्ता की स्थापना कैसे सहन कर सकता था। एशिया के १९ देशों ने इस सम्मेलन में भाग लिया। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड ने अपने अपने प्रेक्षक भेजे। इस सम्मेलन में भाषण देते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने बताया कि "हम एशिया के राष्ट्र यहाँ इस बात पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए हैं कि संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् को किस प्रकार इण्डोनेशिया का संकट निपटाने में सहायता दी जाए।"

सम्मेलन ने इण्डोनेशिया में डच फौजी कार्यवाही का विरोध किया। इसके अतिरिक्त श्री नेहरू का यह सुझाव स्वीकृत हुआ कि एशिया के देश आपस में विचार-विमर्श तथा सहयोग का कोई स्थायी माध्यम बनाएँ। इस सम्मेलन का अच्छा लाभ हुआ। १९४९ की समाप्ति से पूर्व ही हेग में एक गोलमेज कान्फ्रेंस हुई जिसके परिणामस्वरूप इण्डोनेशिया आजाद हुआ।

बाण्डुग सम्मेलन—अप्रैल १९५४ में एशियाई राष्ट्रों का एक और सम्मेलन इण्डोनेशिया में बाण्डुग के स्थान पर हुआ था। इसलिए इसे बाण्डुग सम्मेलन कहा जाता है। इसको भारत, बर्मा, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान और लंका पाँच कोलम्बो शक्तियों ने आमन्त्रित किया था। इस सम्मेलन के सम्मुख मुख्य विषय ये थे—संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा चीन की स्वीकृति, हिन्द-चीनी में शान्ति और ट्यूनिशिया व मराको की औपनिवेशिक चंगुल से मुक्ति के उपाय सोचना।

बाण्डुग सम्मेलन से पूर्व दो तीन वर्षों से पश्चिमी राष्ट्र एशियाई देशों की एकता भंग करने में कुछ हद तक सफल हो चुके थे। पाकिस्तान को फौजी मदद देकर अमेरिका ने एशियाई भाईचारे को एक तरह से छिन्न-भिन्न कर दिया था। पश्चिमी ताकतों के संरक्षण में यूनान, टर्की, इरान, इराक का एक फौजी गठजोड़ बना दिया गया था। इस गठजोड़ में पाकिस्तान भी शामिल हो गया और उसने बगदाद पैक्ट का रूप धारण किया। प्रगट रूप से यह गठजोड़ रूसी साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए किया गया। परन्तु वास्तव में इससे एशिया का राजनीतिक सन्तुलन बिगड़ गया। पाकिस्तान की फौजी ताकत बढ़ जाने से निश्चय ही भारत को खतरा हुआ क्योंकि पाकिस्तान भारत के प्रति अपनी दुश्मनी को छिपा कर नहीं रखता। पंडित नेहरू इस परिस्थिति से भली भाँति परिचित थे। पाकिस्तान को अमेरिकन फौजी सहायता दिए जाने पर उन्होंने कहा कि विश्व युद्ध की सम्भावना को हमारे घर के द्वार तक ला दिया गया है। एशिया में हथियारों की होड़ शुरू कराकर पश्चिमी राष्ट्र एक बार फिर यहाँ अपने पाँव जमाना चाहते हैं।

बाण्डुग सम्मेलन में २९ एशियाई राष्ट्र सम्मिलित हुए। उनमें एशिया के बड़े-बड़े नेता थे—भारत के श्री जवाहरलाल नेहरू, मिस्र के कर्नल नासिर, चीन के प्रधान मंत्री चौ-एन-लाई, फिलिपाइन्स के कार्लस रमुलो, थाईलैण्ड के राजकुमार वान और इण्डोनेशिया के प्रधान सुकार्नो। सम्मेलन इस परिणाम पर पहुँचा कि दुनिया में शान्ति का सीधा-सादा रास्ता जातियों का सह-अस्तित्व है। १० सिद्धान्तों की एक शान्ति घोषणा की गई। इन १० सिद्धान्तों में 'पंचशील' के पाँच नियम भी शामिल थे।

विश्व-शान्ति में भारत का योग

दुनिया में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने का एकमात्र माध्यम संयुक्त राष्ट्र संघ है। भारत इस बात को अच्छी भाँति जानता है। अतः भारत ने सदा ही संयुक्त राष्ट्र संघ को अपना भरपूर सहयोग दिया है। संसार में लड़ाई रोकने के लिए भारत ने जो मुख्य प्रयत्न किए हैं, उनके बारे में हम आपको संक्षेप में बताएँगे।

कोरिया—कोरिया में जब लड़ाई शुरू हुई तो भारत ने उत्तर कोरिया के आक्रमण का विरोध किया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने कोरिया में सैनिक हस्तक्षेप किया, तो भारत ने संयुक्त राष्ट्रीय सेना की मदद के लिए एक अस्पताली दस्ता भेजा। तदोपरान्त कोरिया में युद्ध विराम कराने में भारत के सद्प्रयत्न सफल हुए। संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने कोरिया में युद्ध समाप्त करने के बारे में भारतीय प्रस्ताव स्वीकार किया जिसके परिणामस्वरूप जुलाई, १९५३ में कोरिया में रक्तपात समाप्त हुआ। कोरिया में शान्ति स्थापना का काम भी भारत को सौंपा गया। जनरल थमैय्या के नेतृत्व में भारतीय सेनाएँ कोरिया गईं और उन्होंने चीनी तथा कोरियाई युद्धबन्दियों की अदला-बदली के काम की देख भाल की। इस काम के लिए जो कमीशन नियुक्त हुआ, भारत को उसका अध्यक्ष चुना गया।

इण्डोनेशिया—इण्डोनेशिया के बारे में हम ऊपर बता चुके हैं कि किस प्रकार भारत ने इण्डोनेशिया की आजादी के पक्ष में विश्व के लोकमत को संगठित किया और इण्डोनेशिया को आजादी मिली।

हिन्दचीनी—कोरिया की भाँति हिन्दचीनी में भी लड़ाई समाप्त कराने में भारत ने प्रमुख भाग लिया। भारत के सुझाव पर हिन्दचीनी के सवाल पर विचार करने के लिये

का अध्यक्ष भी भारत चुना गया। युद्ध-विराम रेखा के परिपालन के लिए भारतीय सेनाएँ हिन्दचीनो गई हुई हैं।

मिस्र—१९५६ में इंग्लैण्ड, फ्रांस और इसराईल ने मिस्र पर एक साथ हमला कर दिया। भारत अन्य सहयोगी एशियाई-अरब राष्ट्रो के साथ संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा मे एक प्रस्ताव रखा जिसमें मांग की गई कि इंग्लैण्ड, फ्रांस और इसराईल की सेनाएँ तुरन्त मिस्र की धरती से हट जाएँ। यह प्रस्ताव स्वीकार हुआ। मिस्र से विदेशी फौजों के निकास के काम की देख-भाल के लिए अन्य देशों के साथ भारत ने भी अपनी फौजें भेजीं। मिस्र में भारतीय सेना ने अपने व्यवहार से बड़ा नाम पाया है।

चीन—भारत का सदा यह मत रहा है कि जब तक चीन की वास्तविक सरकार को संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रतिनिधित्व नहीं मिलता, एशिया की समस्याओं को सफलतापूर्वक सुलझाना असम्भव है। भारत ने चीन की कम्युनिस्ट सरकार को मान्यता दे दी है। भारत स्थित भगौड़ा फार्मूसा अमेरिकापक्षी सरकार को चीन की सरकार नहीं मानता।

संयुक्त राष्ट्र संघ के नए सदस्य—भारत की सदा यह नीति रही है कि दुनिया के प्रत्येक राष्ट्र को संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बनने का अधिकार है। परन्तु पूर्वी तथा पश्चिमी गुटों के आपसी मतभेद के कारण बहुत से राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता से वंचित थे। भारत के प्रयासों के परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र संघ के कई नए सदस्य बने हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों की संख्या ७० से बढ़कर ८१ हो गई है।

जापान—जापान को अमेरिका, इंग्लैण्ड इत्यादि मित्र राष्ट्रों ने सन्धि की जो शर्तें दी हैं, वे बड़ी अपमान-जनक हैं। भारत ने जापान के साथ की गई इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया। उसने जापान से युद्ध की क्षतिपूर्ति लेने से इनकार कर दिया। इससे जापान में भारत के प्रति बड़ी सद्भावना उत्पन्न हुई है। भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने १९५७ में जापान की सद्भावना यात्रा की थी।

पराधीन जातियों के लिए संघर्ष—पराधीन जातियों की आजादी के लिए भारत संयुक्त राष्ट्र संघ में निरन्तर प्रयास करता रहता है। उसने ट्यूनिशिया, मराक्को, अल्जीरिया, कीनिया और साईप्रस की आजादी का समर्थन किया। दक्षिणी अफ्रीका में नसली भेदभाव की नीति का विरोध किया। भारत के ही प्रयास से अंग्रेजों ने ब्रिटिश टोगोलैण्ड को औपनिवेशिक स्वराज्य देने का निश्चय किया है। अब ब्रिटिश टोगोलैण्ड घाना का नाम से एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में बृटिश राष्ट्रमंडल का सदस्य है। भारत ने मलाया की आजादी का समर्थन किया। इस समय मलाया, ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में एक स्वतन्त्र देश है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के व्यय के लिए भारत काफी रकम देता है। संयुक्त राष्ट्र के व्यय झेलने वाले राष्ट्रों में भारत का स्थान छठा है। १९५५ में भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ के खर्च के लिए लगभग ६० लाख रुपए दिए थे।

सामाजिक तथा आर्थिक परिषद और भारत

भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ के राजनीतिक क्षेत्र में ही महत्वपूर्ण काम नहीं किया। संघ की विशिष्ट समितियों में भारत का सहयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

सामाजिक तथा आर्थिक परिषद् के अन्तर्गत स्थापित प्रायः सभी विशिष्ट समितियों का सदस्य है; जैसे, इकैफे (Economic Commission for Asia and Far East) डब्ल्यू० एच० ओ०, यूनेस्को, आई० एल० ओ०, एफ० ए० ओ० इत्यादि। परिषद के खाद्य तथा कृषि संगठन (FAO) के संचालक एक भारतीय श्री बी० आर० सेन हैं। यूनेस्को का एक वार्षिक अधिवेशन १९५६ के अन्त में स्वर्गीय मौलाना अबुलकलाम आजाद के सभापतित्व में दिल्ली में हुआ था। विश्व स्वास्थ्य संगठन में भी भारत सक्रिय भाग लेता है। सच तो यह है कि संयुक्त राष्ट्र संघ का कोई ऐसा संगठन नहीं जिसे भारत का सहयोग प्राप्त न हो।

अभ्यास के प्रश्न

(१) भारत की विदेश नीति के बारे में आप क्या जानते हैं? यह कहाँ तक सफल रही है?

(२) पंचशील का क्या अर्थ है? पंचशील के सिद्धान्त का जन्म कैसे हुआ?

(३) एशिया की जागृति के लिए भारत ने क्या प्रयास किए हैं? एशिया की जागृति किस रूप में व्यक्त हुई?

(४) पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने एशियाई देशों के उत्थान के लिए क्या काम किया है? विस्तार से लिखो।

(५) बाण्डुग सम्मेलन क्या था? इसमें कौन-कौन से राष्ट्र शामिल हुए? इसका क्या लाभ हुआ?

(६) विश्व-शान्ति के लिए भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ को क्या सहयोग दिया है?

(७) पिछले १० वर्षों में भारत ने दुनिया में वैमनस्य और तनाव दूर करने के लिए क्या-क्या प्रयत्न किए हैं? उन प्रयत्नों का क्या फल हुआ है?